GE - 05

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

मानव भूगोल

GE-05

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

मानव भूगोल

इकाई सं.		इकाई	पृष्ठ सं.
इकाई - 1	:	मानव भूगोल की परिभाषा, उद्देश्य, विषय क्षेत्र तथा अन्य सामाजिक विषयों से सम्बन्ध	7–26
इकाई - 2	:	मानव भूगोल के तथ्य तथा तत्व : जीन ब्रून्स तथा एल्सवर्थ हन्टिंगटन के अनुसार	27–45
इकाई - 3	:	मानव भूगोल के सिद्धान्त	46–64
इकाई - 4	:	मानव भूगोल में भूगोलवेत्ताओं का योगदान	65–85
इकाई - 5	:	विश्व के प्रमुख पर्यावरणीय प्रदेशों में मानव सामंजस्य	86–117
इकाई - 6	:	मानव भूगोल की चिन्तनशालाएँ : नियतिवाद, सम्भववाद, नव-नियतिवाद तथा प्रसम्भाव्यवाद	118–136
इकाई - 7	:	मानव भूगोल और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ	137–158
इकाई - 8	:	मानव के प्रमुख व्यवसाय : भोजन संग्रहण, पशुचारण तथा कृषि अर्थव्यवस्था	159–187
इकाई - 9	:	मानव प्रजातियाँ	188–211
इकाई -10	:	विश्व के प्रमुख मानव समूहन	212–230
इकाई -11	:	प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय मानव प्रवास	231–255
इकाई -12	:	जनांककीय चक्र	256–274
इकाई -13	:	ग्रामीण अधिवास	275–300
इकाई -14	:	नगरीकरण- विकास, कारण एवं परिणाम; नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण	301–326
इकाई -15	:	जनजातीय समाज द्वारा आवास तथा अर्थव्यवस्था से समानुकूलन के रूप : एस्किमो, बुशमैन, पिग्मी, गौण्ड तथा नागा	327–356

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय

कोटा (राजस्थान)

संयोजक / समन्वयक एवं सदस्य

सलाहकार

प्रोफेसर(डॉ.) एस.सी. कलवार

पूर्व प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर(राज.)

सदस्य सचिव / समन्वयक

डॉ. अशोक शर्मा

सह आचार्य, राजनीति विज्ञान

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

1. **प्रोफेसर(डॉ.) संतोष शुक्ला**
   प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
   एच.एस. गौड़ विश्वविद्यालय,सागर (मध्य प्रदेश)
2. **डॉ. बी.एल. शर्मा**
   विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
   राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
3. **प्रोफेसर(डॉ.) एन. एल. गुप्ता**
   पूर्व प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
   मोहनलाल सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
4. **डॉ. मनोज गौतम**
   वरिष्ठ व्याख्याता, भूगोल विभाग
   राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
5. **डॉ. जे.के. जैन**
   पूर्व एसोसियेट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
   जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)

संपादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

1. **डॉ. जे.के. जैन**
   पूर्व एसो.प्रो. एवं विभागाध्यक्ष,भूगोल विभाग
   जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर(राज.)
2. **डॉ. पी. आर. चौहान**
   पूर्व असिस्टेन्ट प्रोफेसर, भूगोल विभाग
   जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर(राज.)
3. **डॉ. हमीद अहमद**
   विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
   राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,झालावाड़(राज.)
4. **लेखक**
   डॉ. मोहर सिंह यादव
   पूर्व प्राचार्य,
   राजकीय स्नातकोत्तर म.वि. अलवर(राज.)
5. **डॉ. महेश कुमार गौड़**
   वरिष्ठ व्याख्याता, भूगोल विभाग
   राजकीय बाँगड़ स्नातकोत्तर म.वि.
6. **डॉ. प्रबोध पारीक**
   वरिष्ठ व्याख्याता, भूगोल विभाग
   राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ब्यावर(राज.)
7. **डॉ. के.पी. शर्मा**
   पूर्व विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग
   राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ब्यावर(राज.)
8. **डॉ. सतीश चन्द्र मिश्रा**
   वरिष्ठ व्याख्याता, भूगोल
   राजकीय महाविद्यालय,पोकरण, जैसलमर(राज.)
9. **डॉ. बृजलाल भादू**
   व्याख्याता, भूगोल
   महिला स्नातकोत्तर म.वि, जोधपुर(राज.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. डॉ. बी..के. शर्मा
निदेशक
संकाय विभाग

योगेन्द्र गोयल
प्रभारी
पाठ्यसामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी,

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Production: Dec. 2012 ISBN No-13/978-81-8496-218-5

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

परिचयात्मक

मानव भूगोल का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है । यूरोपीय देशों, पूर्ववर्ती सोवियत संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा भारत के विश्वविद्यालयों में इसके अध्ययन में अधिकाधिक रुची ली जा रही है । विश्व के विभिन्न देशों में वहाँ की जनसंख्या की आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक उन्नति के लिए संसाधन नियोजन में इसके ज्ञान का प्रयोग किया जा रहा है ।

विगत 40 वर्षों में मानव भूगोल की अवधारणाओं तथा इसके अध्ययन क्षेत्र का वैज्ञानिक विकास हुआ है । मानव भूगोल वह विज्ञान है जिसमें पृथ्वीतल पर मानवीय तथ्यों के स्थानिक वितरण अर्थात् विभिन्न प्रदेशों के मानव समुदायों द्वारा किए गए वातावरण समायोजन और क्षेत्र संगठन द्वारा सृजित सांस्कृतिक भूदृश्य का अध्ययन प्रादेशिक स्तर पर किया जाता है । इस प्रकार पृथ्वी के विभिन्न प्रदेशों में मानव समुदायों के क्रियाकलापों और जीवन-व्यवस्थापन का अध्ययन करने वाला यह एक मानव-कल्याणकारी विज्ञान है ।

ज्ञातव्य है कि मानव भूगोल मात्र 'पारिस्थितिकी' का विज्ञान नहीं है बल्कि यह 'मानव पारिस्थितिकी' का विज्ञान है । पारिस्थितिकी में केवल प्राकृतिक वातावरण की शक्तियाँ, प्रक्रियाएँ व तत्व सम्मिलित होते हैं जबकि मानव पारिस्थितिकी में सांस्कृतिक वातावरण की भी शक्तियाँ, प्रक्रिया एवं तत्व सम्मिलित होते हैं । मानव और वातावरण में परस्पर पारिस्थितिक व कार्यात्मक सम्बन्ध होते हैं जिनकी क्रिया- प्रतिक्रिया के फ्लस्वरूप ही मानव प्राकृतिक वातावरण का रूपान्तरण कर सांस्कृतिक वातावरण के सृजनकर्ता के रूप में उभरता है । अत: मानव क्षोल में मनुष्य की स्थिति केन्द्रीय है ।

यह कोई सिद्धान्त कई बात नहीं है कि एक समान प्राकृतिक वातावरण प्रदेशों में रहने वाले समस्त मानव समुदायों में सांस्कृतिक उन्नति का स्तर भी समान हो । सांस्कृतिक भूदृश्य निर्माण में तो मानव समुदाय की सृजनात्मक कल्पना, संकल्प शक्ति, अविष्कार और मान्यताएँ कार्य करती हैं । तदनुरूप सांस्कृतिक और आर्थिक विकास के स्तर भी भिन्न होते हैं । इस दृष्टि से मानव भूगोल प्राकृतिक प्रदेशों का नहीं वरन् मानव-भौगोलिक प्रदेशों का आधार बनता है जिनमें प्राकृतिक और सांस्कृतिक दोनों वातावरण में समरूपता लक्षित होती है । मानव भूगोल एक संयुक्त विज्ञान है । इसका सम्बन्ध प्रमुखत: छ: प्राकृतिक विज्ञान - गणित व सांख्यिकी, भौमिकी, ऋतु व जलवायुविज्ञान, मृदाविज्ञान, पादप-व-प्राणि-पारिस्थिति की एवं जलविज्ञान, तथा छ: सांस्कृतिक विज्ञान - मानवविज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास व पुरातत्वविज्ञान, सैन्यविज्ञान एवं राजनीतिविज्ञान व भू-राजनीति से है । यद्यपि ये सभी विषय मूल रूप से स्वतन्त्र विज्ञान के क्षेत्र में आते हैं तथापि मानव-पारिस्थितिक-समायोजन की दृष्टि से वे व्यावहारिक रूप में मानव भूगोल में अध्ययन किए जाते हैं ।

वैसे तो बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही मानव भूगोल में 'अस्थाई पृथ्वी और चंचल मानव के पारस्परिक परिवर्तनशील सम्बन्धों के अध्ययन' की अवधारणा विकसित हो चुकी थी जब अमेरिकी भूगोल -विदुषी कुमारी सैम्पुल ने सन् 1911 में अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'इनफ्ल्युसेस ऑफ

जिआग्रैफिक इन्वायरेनमेन्ट' का प्रकाशन किया था तथापि सूचना, संचार व तकनीकी क्रान्ति के वर्तमान युग में इसमें 'समय व दूरी के संकुचन' की एक नई अवधारणा और जुड़ गई है जिस कारण मानव-वातावरण के 'सतत परिवर्तनशील सम्बन्धों' की व्याख्या जटिलतर हो गई है । 'प्रकृति की दासता' अथवा 'प्रकृति पर विजय' जैसी अतिवादी अवधारणाओं का स्थान भी अब 'प्रकृति से समाकलन' अथवा 'प्रकृति का रूपान्तरण' जैसी प्रगतिशील अवधारणाएँ ले चुकी हैं । अस्तु, मानव भूगोलवेत्ताओं को अपने साहित्य सृजन में इन आयामों व उभरती चुनौतियों को स्वीकार करना होगा ।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना यद्यपि वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के स्नातक स्तरीय पाठ्यक्रमानुसार की गई है तथापि इसमें विभिन्न भारतीय विश्वविद्यालयों व विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली द्वारा निर्धारित आदर्श पाठ्यक्रम का भी यथेष्ट समावेश किया है । ग्रन्थ रचना में जिन साहित्य मनीषियों ने अपना यज्ञानुष्ठान किया है विश्वविद्यालय उनका आभारी है । ग्रन्ध स्तांकन सुधी पाठकों का स्वत्वाधिकार है ।

इकाई 1 : मानव भूगोल की परिभाषा, उद्देश्य, विषय क्षेत्र तथा अन्य सामाजिक विज्ञानों से सम्बन्ध (Definition , Objectives and Scope of Human Geography and its Relationship with Other Social Sciences)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 परिभाषाएँ

1.3 विभिन्न परिभाषाओं का विश्लेषण

- 1.3.1 कुमारी सेम्पूल की परिभाषा की व्याख्या
- 1.3.2 ब्लाश की परिभाषा की व्याख्या
- 1.3.3 ब्रून्स की परिभाषा की व्याख्या
- 1.3.4 हन्टिंगटन की परिभाषा की व्याख्या

1.4 मानव भूगोल के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा

1.5 मानव भूगोल के उद्देश्य

1.6 मानव भूगोल का विषय क्षेत्र

1.7 मानव भूगोल का अन्य सामाजिक विज्ञानों से सम्बन्ध

1.8 सारांश

1.9 शब्दावली

1.10 सन्दर्भ ग्रंथ

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप समझ सकेगें :-

- मानव भूगोल का अर्थ
- मानव भूगोल का ऐतिहासिक विकास,
- मानव भूगोल के उद्देश्य,
- प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण में अंतर,
- मानव भूगोल का विषय क्षेत्र,
- मानव भूगोल की विषय सामग्री का ज्ञान,
- मानव भूगोल का अन्य सामाजिक विज्ञानों से सम्बन्ध ।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

भूगोल को हम ज्ञान की प्राचीनतम शाखा में सम्मिलित कर सकते है क्योंकि प्रकृति के रहस्यों को जानने की उत्कंठा मनुष्य में प्रारम्भ से ही रही है । प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं का अपने जीवनयापन के लिए उपयोग करने की सहज वृत्ति मनुष्य में प्रारम्भ हुई । समय के साथ जानकारी का क्षेत्र विस्तृत होता गया । इस जानकारी को प्रारम्भ में वर्णनात्मक रूप दिया गया । बाद में इसमें मानचित्रों को सम्मिलित किया गया, यही भूगोल का प्रारम्भिक रूप था । धीरे-धीरे इसमें सामाजिक विज्ञानों को जोड़ा जाने लगा । यही से भूगोल में मानव भूगोल की पृष्ठ भूमि प्रारम्भ हुई । भूगोल में प्राकृतिक विज्ञानों के साथ-साथ सामाजिक विज्ञानों को भी बराबर महत्व दिया गया । हम्बोल्ट और रिटर नामक विद्वानों ने भूगोल को क्रमबद्ध और व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत कर आधुनिक भूगोल की नींव रखी । इन विद्वानों के पश्चात् भूगोल दो भागों में बंट गण - प्राकृतिक वातावरण का अध्ययन और मानवीय क्रियाकलापों का अध्ययन । इसी समय जर्मन विद्वान् फ्रेडरिक रेटजेल ने "Anthropogeographie" नामक ग्रंथ प्रकाशित कर मानव भूगोल की जड़ें मजबूत कीं । वास्तव में रेटजल को ही मानव भूगोल का जन्मदाता माना जाता है ।

मानव भूगोल को सामाजिक विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है । इस विज्ञान में हम भौतिक दशाओं के साथ मानवीय कार्यों तथा सामाजिक तथ्यों के पारिस्पारिक सम्बन्धों का विश्लेषण करते हैं । मानव भूगोल अभी- भी अपनी शैशवावस्था में ही है, इसका विकास धीरे-धीरे हो रहा है । फ्रांसीसी विद्वान विडाल डी ला ब्लाश ने इसे भौगोलिक विज्ञान के सम्मानित तने का एक नवीन अंकुर माना है । उन्होंने आगे लिखा है कि मानव विचारों के विकास की अभिव्यंजना है, न कि भौगोलिक ज्ञान के विस्तार और खोज का कोई तात्कालिक परिणाम "Human Geography is a recent sprout from the venerable trunk of geographical science .... It offers a new conception of interrelationship between earth and man"

Vidal de la Blache , Principles of Human Geography

बीसवीं शताब्दी में मानव भूगोल का सबसे अधिक विकास हुआ है । इसमें जर्मनी, फ्रांस, अमरीकी एवं ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं ने महत्वपूर्ण योगदान दिया । ये विद्वान् निम्न प्रकार से हैं : -

जर्मन भूगोलवेत्ता :

1. इमेनुअल कान्ट,
2. वान हम्बोल्ट,
3. कार्ल रिटर,
4. फ्रेडरिक रेटजल,
5. रिचथोफेन ।

फ्रांसिसी भूगोलवेत्ता :

1. विडाल डी ला ब्लाश
2. जीन ब्रूक
3. डिमांजिया,
4. ब्लेंचर्ड,
5. देफोंते,
6. जीन गौट मैन,
7. मेक्समिले सौर ।

अमरीकी भूगोलवेत्ता :

1. कुमारी एलन सेम्पुल
2. इजाया बोमेन,
3. कार्ल साअर,
4. ग्रिफिथ टेलर,
5. एल्सवर्थ हन्टिंगटन ।

ब्रिटिश भूगोलवेत्ता :

1. ब्रायन,
2. रॉक्सबी,
3. हेराल्ड पार्क,
4. फ्ल्योर,
5. इसा बेला न्यूबिगिन
6. डेरियल फोर्ड ।

मानव भूगोल, भूगोल की एक नवीनतम शाखा है । प्रारम्भ में प्राकृतिक वातावरण की शक्तियों को ही सर्वाधिक महत्व दिया गया । यहाँ तक कि जर्मन विद्वान फ्रेडरिक रेटजेल (Feiderich Ratzel) ने भी प्रारम्भ में प्राकृतिक वातावरण की अपेक्षा मानवीय पक्ष को कम महत्व प्रदान किया । मानव भूगोल को वैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करने का श्रेय फ्रांसीसी विद्वान् विडाल डी ला ब्लाश को जाता है जिन्होंने मानव को एक भौगोलिक कारक (Man as a Geographical Factor) के रूप में स्थापित किया ।

फ्रेडरिक रेटजेल (1844 - 1904) ने डार्विन की प्रसिद्ध पुस्तक ' ओरिजन ऑफ स्पिसिज ' से प्रभावित होकर अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'ऐन्थ्रोपोज्योग्राफी' में पहली बार मानवीय तथ्यों तथा वातावरण के अन्तर्सम्बन्धों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया अत उस रूप में ' मानव? का जन्मदाता माना जाता है । रेटजेल ने पार्थिव एकता का अनुभव करते हुए मानवीय क्रियाकलापों को भूगोलवेत्ता की दृष्टि से अध्ययन किया । रेटजेल से लेकर वर्तमान समय तक विभिन्न देशों के विद्वानों ने मानव भूगोल की परिभाषा देने का प्रयत्न किया है ।

1.2 परिभाषा

रेटजेल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'ऐन्थ्रोपोज्योग्राफी' में पहली बार भूगोल को मानवीय भूगोल के नाम से पुकारा । इस पुस्तक में दी गई परिभाषा इस प्रकार है "मानव भूगोल के दृश्य सर्वत्र वातावरण से सम्बन्धित होते है, तथा वातावरण स्वयं भौतिक दशाओं का एक योग होता है ।"

रेटजेल की शिष्या अमेरिकन भूगोलवेता कुमारी ई. सी. सेम्पुल ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'इन्फ़्लूऐन्सेज ऑफ ज्योग्राफिक एनवायरन्मेन्ट' में मानव भूगोल की निम्नलिखित परिभाषा दी है "मानव भूगोल अस्थायी पृथ्वी और चंचल मानव के परिस्परिक परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है । " '

विख्यात फ्रांसीसी विद्‌वान विडाल डी ला ब्लाश ने अपने ग्रंथ 'प्रिन्सीपल्स ऑफ ह्यूमन ज्योग्राफी में बताया कि मानव भूगोल पृथ्वी और मानव के परिस्परिक सम्बन्धों को एक नया विचार देता है, तथा इसमें पृथ्वी को नियंत्रित करने वाले भौतिक नियमों तथा पृथ्वी पर निवास करने वाले जीवों के परिस्परिक सम्बन्धों का अधिक संयुक्त ज्ञान समाविष्ट होता है' ।"फ्रांसिसी भूगोलवेत्ता जीन ब्रून्स (Jeans Brunhes) ने अपने ग्रंथ 'ह्यूमन ज्योग्राफी' मे मानव भूगोल की परिभाषा निम्न प्रकार कि दी है ।

"वे सभी दृश्य जिनमें मानवीय क्रियाऐं कार्य करती हैं, पृथ्वी तल पर विशेष वर्ग के दृश्य होते है और इस प्रकार के भौगोलिक तथ्यों के अध्ययन को हम मानव भूगोल कहते हैं । '"

अमेरिकन भूगोलवेता एल्सवर्थ हन्टिगटन ने अपनी पुस्तक 'मानव भूगोल के सिद्धांत' में मानव भूगोल की परिभाषा निम्न प्रकार दी है -

---

1. Semple, E.C. : "Human Geography is a study of the changing relationship between the unresting man and the unstable earth."

   - influenes of Geographic Environment, New York, 1911.

2. Vidal de la Blache : "Human Geography offers a new conception of the inter-relationships between earth and man....... A more synthetic knowledge of physical laws governing our earth and of the relations between the living beings which inhabit it."

   - Principles of Human Geography, 1911.

3. Brunhes, J. : Human Geography is "The ensemble of all these facts in which human activity has a part to play - a complex group of facts in finitely variable and varied, always containted within the limits of physical geography, but having always the easily discernible characteristics of being related more or less directly to man."

   - Human Geography, Paris, 1932, and London, 1952

'मानव भूगोल में भौगोलिक वातावरण तथा मानवीय क्रियाओं और गुणों के परिस्परिक सम्बन्धों के मानव भूगोल की परिभाषा, वितरण और स्वरूप का अध्ययन होता है । ' फ्रांसिसी विद्वान डिमांजिया ने मानव भूगोल को मानवीय वर्गों व समाजों तथा प्राकृतिक वातावरण के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन बताया है ।'

अमेरिकन विद्वान सी.एल. व्हाइट एण्ड जी.टी रेनर के अनुसार भूगोल प्रमुखत: मानव पारिस्थितिकी की (Human Ecology) है, जिसमें पृथ्वी की पृष्ठभूमि में मानव समाजों का अध्ययन होता है ।' डी.एच. डेविस के अनुसार मानव भूगोल में केवल प्राकृतिक वातावरण और क्रियाकलापों के बीच सम्बन्ध का ही नहीं वरन् पृथ्वी के तल जीवों का भी अध्ययन किया जाता है ।

एस.एन.डिकेन्स तथा एफ.आर.पिट्स ने मानव भूगोल में मानव और उसके कार्यों को समाविष्ट किया है । "Human geography looks upon as the study of man and his works (Introduction to human geography, 1963)"

फेलमैन (Fellman) एवं गेटिस (Getis) के अनुसार "मानव भूगोल मानव जनसंख्या का स्थानिक विश्लेषण उनकी संस्कृति, उनके क्रिया कलापों, व्यवहार उनके परस्पर सम्बन्धों और भौतिक दृश्य भूमि पर प्रभाव का विवरण प्रस्तुत करता है । " इस परिभाषा में मानव की सभी क्रियाओं व पर्यावरण के मध्य बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध बताया गया है ।

अमेरिकन भूगोल वेता एच. बैरोज (H.Barrows) ने भूगोल को मानव पारिस्थितिकी (Human Ecology) का विज्ञान बताया है । इसमें मानव व उसके सामाजिक तथा भौतिक पर्यावरण के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है ।

1.3 विभिन्न परिभाषाओं का विश्लेषण

जर्मन विद्वान फ्रेडरिक रेटजेल की परिभाषा में मानवीय दृश्यों को वातावरण से सम्बन्धित बताया है । रेटजेल ने पहली बार सांस्कृतिक दृश्य भूमि की संकल्पना को स्पष्ट किया था

---

4. Human Geography may be defined as the study of the nature and distribution of the relationship between Geographical environment and human activities and qualities.

   -Huntigton & Shaw, 1953, Principles of Human Geography

5. Human Geography is the study of human groups and societies in their relationships to physical environment.

   -Demangeon (Principles de Geographic Humanae, (1942)

6. Human Geography is primarily human ecology……. It studies man's adjustments to the natural environment. The varied and peculiar ways in which he confirms or adpts his life either wholly or in part.

   -C.L. White and G.T. Renner- "Human Ecology"

उसने यह भी बताया कि वातावरण के तत्व भौतिक दशाओं का योग होते है अर्थात् इस विचारधारा में पार्थिव एकता की झलक मिलती है ।

कुमारी सेम्पुल की परिभाषा में पृथ्वी को अस्थिर एवं मानव को चंचल कहा गया है अर्थात इससे यह स्पष्ट होता है कि मानव भूगोल का स्वरूप पृथ्वी और मानव की विशेष प्रकृति के कारण परिवर्तित होता रहता है । यह धारणा वास्तव में क्रियाशीलता के सिद्धान्त की ओर संकेत करती है ।

ब्लाश ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक मानव भूगोल के सिद्धान्त में अपना अध्ययन जनसंख्या से प्रारम्भ किया है । उन्होंने मनुष्य को एक भौगोलिक कारक (Man as a Geographical Factor) के रूप में स्वीकार किया है तथा मानव के सम्बन्धों की नवीन धारणा प्रस्तुत की । भौतिक नियमों और पृथ्वी पर निवास करने वाले जीवों का संयुक्त ज्ञान के रूप में उसने सार्वभौमिक एकता पर अधिक बल दिया है ।

1.3.1 कुमारी सेम्पुल की परिभाषा की व्याख्या

कुमारी सेम्पुल की परिभाषा में पृथ्वी को अस्थिर रख मानव को चंचल कहा गया है । इस परिभाषा में तीन मुख्य बातों पर जोर दिया गया है ।

(अ) क्रियाशील मनुष्य (Unresting Man)

(ब) अस्थिर पृथ्वी (Unstable Man)

(स) परिवर्तनशील सम्बन्ध (Changing Relationship)

(अ) **क्रियाशील मनुष्य :** मनुष्य जब पृथ्वी पर रहता है तो वह विकास की विभिन्न अवस्थाओं (बाल्य, युवा, प्रौढ़ावस्था) में विभिन्न क्रियाकलाप करता रहता है । स्वभावजन्य जिज्ञासा के कारण वह नित्यप्रति नई-नई बातें एवं नए-नए कार्य करता रहता है । वह शान्त होकर पृथ्वी पर नहीं बैठता, अर्थात् मानव चंचल प्रवृत्ति का है । आखेट अवस्था से कृषि, उद्योग, व्यापार वाणिज्य के विकास की कहानी उसकी क्रियाशीलता का ही परिणाम है ।

(ब) **अस्थिर पृथ्वी :** जिस पृथ्वी पर मनुष्य निवास करता है वह भी स्थिर नहीं है । पृथ्वी निरन्तर सूर्य के चारों और चक्कर लगा रही है तथा अपने अक्ष पर भी घूमती है, जिसके परिणामस्वरूप दिन-रात, सुबह-शाम, ऋतु परिवर्तन आदि घटनाएँ घटित ज्वालामुखी, अनावृतिकरण की घटनाएँ घटित होती रहती हैं, अर्थात् पृथ्वी का रूप स्थिर एवं स्थाई नहीं रह पाता है ।

(स) **परिवर्तनशील सम्बन्ध :** मानव एवं पृथ्वी दोनों की प्रकृति अस्थिर होने के कारण इनके आपसी सम्बन्धों में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहता है । नदियों का जल पहले केवल पीने के काम आता था, आज बांध बना कर सिंचाई, जल-विद्युत आदि कार्यों के लिए प्रयुक्त होने लगा है । प्राकृतिक रूप से उपलब्ध विभिन्न खनिजों, कृषि से उत्पन्न उत्पादनों से विभिन्न उद्योग धन्धों को कच्चा माल उपलब्ध होने लगा है । विस्तृत समुद्री भाग जो कभी बाधा समझे जाते थे, आज यातायात के साधनों के रूप में प्रयुक्त

होने लगे हैं । जलवायु की दृष्टि से जो क्षेत्र कृषि उत्पादन के अयोग्य समझे जाते थे आज वहाँ विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाने लगी है । ये सब उदाहरण पृथ्वी व मनुष्य के परिवर्तित सम्बन्धों को दर्शाने के लिए पर्याप्त हैं ।

1.3.2 ब्लाश की परिभाषा की व्याख्या

ब्लाश ने अपनी परिभाषा में मानव भूगोल की प्रकृति और आत्मा से परिचय कराया है । उनके अनुसार मानव भूगोल विभिन्न खोजों के भौगोलिक वर्णन मात्र का विज्ञान नहीं है और न ही यह प्रत्यक्ष दर्शन पर आधारित वर्णन मात्र है, बल्कि यह विज्ञान यह जानने का प्रयत्न करता है कि विभिन्न खोजों के द्वारा मानव के दृष्टिकोण एवं विचारों में क्या प्रगति हुई है? मनुष्य की कार्यपद्धति या कार्यशैली पर विचारों के विकास का प्रभाव पड़ता है । विभिन्न प्रदेशों की जानकारी के आधार पर वह उनमें समानता या असमानता ढूंढने का प्रयत्न करता है । उसका दृष्टिकोण व्यापक हो जाता है, अत : वह अपने आस-पास के वातावरण का अच्छी तरह से मूल्यांकन कर सकता है, तथा उनमें एकता स्थापित कर सकता है, जिससे अन्तर्सम्बन्धों का अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त हो सके । वैज्ञानिक प्रगति के साथ मनुष्य ने धार्मिक विचारों व प्रकृति की मेहरबानी की अपेक्षा विभिन्न भौगोलिक घटनाओं का वैज्ञानिक हल ढूंढने का प्रयास किया है । जैसे वर्षा का होना इन्द्रदेव परिवर्तित होने की घटना है । विभिन्न संसाधनों की खोज व उनके विधि उपयोग की जानकारी भी विकसित विचारों का ही परिणाम है ।

सारांश यह है कि अनेक भौगोलिक परिस्थितियों का संयुक्त प्रभाव होता है, इन्हीं ब्लाश का अध्ययन मानव भूगोल है । दूसरे शब्दों में यह क्रमिक विकास है ।

प्रथम : मानव भूगोल की घटनाएँ पार्थित एकता से सम्बन्धित हैं, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है । ये घटनाएँ वातावरण से सम्बन्धित हैं तथा पृथ्वी के प्रत्येक भाग में सम्मिलित रूप से भौतिक दशाओं की उत्पत्ति करती हैं । दूसरी विशेषता यह है कि भौगोलिक खोजों और बुद्धि के विकास से ही मानव विचारों का विकास हुआ है । इन विकसित विचारों ने ही मानव भूगोल को जन्म दिया है ।

तीसरी विशेषता यह है कि इस परिभाषा में भौतिक परिस्थितियों के साथ-साथ जीवधारियों के सम्बन्धों पर भी बल दिया गया है, अर्थात् मनुष्य एवं प्रकृति में अन्तर्सम्बन्धों को समझने का प्रयास किया है ।

1.3.3 ब्रून्स की परिभाषा की व्याख्या

मानव भूगोल की परिभाषा देते समय ब्रून्स महोदय ने पहले भूगोल के अध्ययन का क्षेत्र बताया है । उनके अनुसार भूगोल के अध्ययन का क्षेत्र पृथ्वी के धरातल का वह स्थान है जहाँ वायुमण्डल और ठोस धरातल दोनों मिलते हैं । इसी क्षेत्र में प्राकृतिक वातावरण अपने पूर्ण वैभव में होता है । यहाँ सभी जीवधारी निवास करते हैं और इसी क्षेत्र में भौतिक एवं मानव भूगोल का साम्राज्य है । दूसरी विशेषता इस परिभाषा की यह है, कि इसमें यह बताया गया है कि धरातल पर घटने वाली विभिन्न घटनाओं पर मानव का प्रभाव नहीं है, क्योंकि ये घटनाएँ मानव के उपस्थित नहीं रहने पर भी घटती रहती हैं, किन्तु कुछ घटनाओं पर मानव का स्पष्ट

प्रभाव होता है । तीसरी विशेषता यह है, कि ब्रून्स ने मानवीय क्रियाकलापों पर अधिक जोर दिया है । ब्रून्स चूंकि ब्लाश के विषय हैं, अत : सम्भवादी प्रवृति के कारण मानवीय पक्ष के प्रति उनका रूझान स्वाभाविक है ।

1.3.4 हन्टिगटन की परिभाषा की 'व्याख्या

हनिगटन ने अपनी परिभाषा में भौगोलिक वातावरण और मनुष्य के कार्यकलाप एवं पारस्परिक सम्बन्ध के स्वरूप और वितरण का अध्ययन बताया है । उन्होंने बताया कि धरातल पर अनेक प्रकार की प्रजातियों पाई जाती हैं, जिनकी शारीरिक संरचना, कदकाठी, बालों की संरचना, रहन -सहन, खानपान, रीति-रिवाज आदि दूसरी प्रजातियों से भिन्न होते हैं । इन भिन्नताओं के कुछ कारण जैविक और कुछ के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक होते हैं । पर्वत नदियाँ जलवायु वनस्पति मानव पर अपना प्रभाव डालती है, जिसके कारण मानव की क्रियाएँ जनसंख्या घनत्व, अधिवास आर्थिक क्रियाएं आदि भिन्न-भिन्न हो जाती हैं । मानव विश्लेषण क्यों और कहाँ? का अध्ययन करना मानव भूगोल का विषय है । हन्टिगटन एक अमेरिकन भूगोलवेत्ता हैं, उनकी विचारधारा नियतिवाद के नजदीक है, अत: वे मानव भूगोल में प्राकृतिक परिस्थितियों जैसे स्थिति, जलवायु, मिट्टी, खनिज, जलवायु, आदि को मानव के विभिन्न क्रियाकलापों जैसे आखेट, फलएत्रण, कृषि, पशुपालन, उद्योग व्यापार आदि को प्रभावित करते हुए महत्व देते हैं । डिमाजिया ने मानव भूगोल को मानवीय वर्गो एवं प्राकृतिक वातावरण के पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या बतलाया हैं ।

अमेरिकन भूगोलवेत्ता वाइट एण्ड रेनर के अनुसार मानव भूगोल पृथ्वी की पृष्ठभूमि में समाज की पारिस्थिति की (Ecology) का अध्ययन है, अर्थात Ecology Study of Society । दूसरे शब्दों में मनुष्य चूंकि पृथ्वी पर निवास करता है अत: पृथ्वी को उसके घर के रूप में अध्ययन करते है । अमेरिकी विद्वान एच. बैरोज के विचारों में भी यही धारणा स्पष्ट होती हैं ।

अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता हैं कि मानव भूगोल पृथ्वी तथा मानव के पारस्परिक अन्तर्सम्बन्धों का विज्ञान है । इसके अध्ययन के दो पहलू है पहला प्रकृति दूसरा मानव । विभिन्न विद्वानों की उपर्युक्त परिभाषाओं से यही तथ्य स्पष्ट होता है कि मनुष्य और पृथ्वी के पारस्परिक सम्बन्ध अनादि काल से चले आ रहे हैं । कुछ विद्वान जो नियतिवादी विचारधारा के समर्थक है । प्राकृतिक तथ्यों को मानवीय तथ्यों की तुलना में अधिक महत्व देते है, जबकि सम्भववादी विचारधारा के समर्थक मानव की शक्ति और उसके कार्यो को प्रकृति की तुलना में अधिक महत्व देते है ।

बोध प्रश्न - 1

1. मानव भूगोल का जन्मदाता किसे माना गया है ?
   ....
   ....

2. ‘मानव भूगोल अस्थिर पृथ्वी और चंचल मानव के परिवर्तित संबंधो की व्याख्या है ।‘

....

....

यह कथन निम्नलिखित मे से किस भूगोल वेत्ता का है ?

(अ) विडाल डी ला ब्लाश (ब) कुमारी ई. सी. सेम्पुल

(स) जीन ब्रून्स (द) एलस्वार्थ हंटिगठन

3. निम्नलिखित में से कौन सा कथन सत्य नहीं है?

(अ) मानव भूगोल में मानव और उसके कार्यों को समाविष्ट किया जाता है।

(ब) भौतिक दशाएँ मानवीय क्रियाकलापों का परिणाम हैं ।

(स) अमेरिकन भूगोलवेताओं ने मानव भूगोल को पारिस्थिति की विज्ञान बताया है ।

(द) वाइडल डी ला ब्लाश सम्भववादी विचारधारा के समर्थक रहे है ।

4. निम्नलिखित पुस्तकों में से कौनसी पुस्तक फ्रेडरिक रेटजल द्वारा लिखी गई हैं?

(अ) इन्फ़्लूऐनोज ऑफ जयोग्राफिक एनवायरनमेंट

(ब) प्रिन्सिपल्स ऑफ हयूमन ज्योग्राफी

(स) एम्थ्रोपोज्योग्राफी

(द) कल्वरल ज्योग्राफी

5. किस सिद्धान्त ने मानव भूगोल को 'Human Ecology' बताया हे?

(अ) ट्रिवार्था और हन्टिगटन ने

(ब) ब्लाश व ब्रून्स ने

(स) ब्रून्स व डिमांजिया ने

(द) वाइट व रेनर ने

1.4 मानव भूगोल के ऐतिहासिक विकास की रूप रेखा

भूगोल वस्तुत: मानव जीवन के प्रत्येक पहलू से जुड़ा है जबकि भूगोल मानव एवं प्राकृतिक पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों से उत्पन्न एक विशिष्ट विचारधारा को प्रस्तुत करता है । यद्यपि मानव भूगोल को ज्ञान की ब्रून्स नवीन शाखा माना जाता है, किन्तु इस विषय की जड़ें बहु त प्रचीन काल से जुड़ी हुई हैं । प्राचीन विद्वानों ने सामाजिक प्रगति के पीछे भौगोलिक कारकों को उत्तरदायी माना है ।

विद्वानों ने सामाजिक प्रगति के पीछे भौगोलिक कारकों को उत्तरदायी माना है । थेल्स, एनेक्सीमेण्डर, हिकेटियस, प्लेटो, हिपोक्रेदस, अरस्तु, थियोफ्रेदस, हीरोडोदस आदि यूनानी विद्वानों की रचनाओं में परोक्ष रूप से मानव भूगोल के तथ्यों का वर्णन मिलता है । प्लेटो ने प्राकृतिक वातावरण का मानव के क्रियाकलापों पर पड़ने वाले प्रभाव का उल्लेख किया था ।

थेल्स, एनेक्सीमेण्डर ने जलवायु, वनस्पति एवं मानव समाज पर अपने विचार रखे । हिपोक्रेटस ने एशिया और यूरोप के निवासियों की तुलना की, जिसका आधार प्राकृतिक तथ्यों को भिन्नता था । उसकी मान्यता थी कि एशिया के निवासी सुस्त और आराम पसन्द होते हैं, जबकि यूरोप के निवासी परिश्रमी और वातावरण के अनुकूल आचरण करने वाले होते हैं । अरस्तु ने अपनी राजनीति शास्त्र की पुस्तक में यूरोप और एशिया के लोगों की मानसिक प्रवृति का उल्लेख करते हुए उनकी बहादुरता अथवा दासता में जकड़े रहने कारणों की व्याख्या की । हीरोडोटसे ने अपनी पुस्तक मानव इतिहास में मानवीय पक्षों पर लिखा तथा स्थायी कृषि करने वाली जातियों और घुमक्कड़ जातियों के जीवन में भिन्नता के लिए वातावरणीय शक्तियों के प्रभाव को उत्तरदायी ठहराया ।

स्ट्रेबों ने रोमन साम्राज्य के उत्थान और विस्तार में इटली के भौगोलिक वातावरण भूमि की बनावट, जलवायु, तटीय स्थित को प्रमुख कारण बताया । वर्तमान में बसे क्षेत्र (Ecumene) तथा बिना क्षेत्र (Non- Ecumene) की धारणा के सष्कध में कारणों का विश्लेषण उस समय में ही कर दिया था ।

रोमन साम्राज्य के पतन के बाद भूगोल में अंधा युग प्रारम्भ हुआ जो 15वीं शताब्दी तक रहा । इस काल में धर्म विज्ञान हावी होने के कारण भौगोलिक विकास अवरूद्ध हो गया । अन्वेषण युग और जागृति युग में भौगोलिक दृष्टिकोण पुन : जीवित होने लगा । वास्तव में मानव भूगोल के क्षेत्र में मोनेक्यू नामक दार्शनिक के विचारों के बाद एक परिवर्तन आया । उसने भौतिक वातावरण को मानव चरित्र का निर्माता एवं उसके कार्यों को प्रभावित करने वाला माना । सोलहवीं शताब्दी के फ्रांसिसी विद्वानों जीन बोदिन ने उतर व समशितोष्ण जलवायु के लोगों की मानव प्रवृतियों का उल्लेख किया । सत्रहवीं शताब्दी में बेरिनियस के भूगोल विभाजन में मानव भूगोल को विशेष भूगोल (Special Geography) के रूप में स्वीकार किया गया । 18वीं से 19वीं शताब्दी के बीच कान, रिटर, हम्बोल्ट, फ्रोबेल, रिचथोफेन और रेटजल नामक विद्वानों ने भूगोल को विज्ञान के रूप में प्रतिपादित किया । इसके बाद फ्रांसिसी विद्वान ब्लाश, ब्रून्स, डिमाजिया आदि ने मानव भूगोल के स्वरूप को विकसित किया । अठाहरवीं शताब्दी से उन्नीसर्वी शताब्दी के अन्त तक भूगोल ने वैज्ञानिक धरातल प्राप्त कर लिया था । कान ने यूरोप की उन्नति का पूर्ण श्रेय वातावरण को दिया ।

हम्बोल्ट ने मनुष्यों में पाये जाने वाले शारीरिक अन्तर के लिए प्राकृतिक शक्तियों को उत्तरदायी बताया । रिटर का भी मानव भूगोल में महत्वपूर्ण योगदान रहा उन्होंने पृथ्वी तल का अध्ययन मानव को केन्द्र मानकर किये जाने पर जोर दिया । रेटजेल ने मानव भूगोल शब्द का पहली बार प्रयोग किया । अपनी प्रसिद्ध पुस्तक एन्थ्रोपोज्योग्राफी में मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किए ।

बीसवीं शताब्दी में विडाल डी ला ब्लाश, ब्रून्स, डिमांजियाँ आदि विद्वानों ने मानव भूगोल में समाजवादी विचारधारा को जन्म दिया तथा प्रकृति की तुलना में मानवीय छांट (Huaman Choice) को अधिक महत्व दिया ।

ग्रिफिथ टेलर ने द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् समन्वयवादी नवीन विचारधारा नव निश्चयवाद को प्रोत्साहन दिया । उनकी मान्यता थी कि मनुष्य को किसी प्रदेश के विकास की योजना

प्रकृति के साथ समायोजन या समन्वय करते हुऐ बनानी चाहिये । उसने कहा कि अधिकतम प्रकृति पर विजय व न्यूनतम प्रकृति की दासता को स्वीकार करना नहीं वरन् प्रकृति के साथ सहयोग करना होना चाहिये ।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात सामाजिक विषमता, आर्थिक असमानता, सामाजिक कल्याण आदि को समझने के लिए नई विधियाँ प्रस्तुत की गई, किन्तु बहुत शीघ्र ही मानव की विवेकशील क्षमता के आगे इन विधियों का कोई महत्व नही रहा और मात्रात्मक विधियों के बजाय गुणात्मक विश्लेषण पर अधिक बल दिया जाने लगा । इसके बाद मानव के व्यावहारिक पहलू पर ध्यान केन्द्रित करके मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर जोर दिया जाने लगा ।

पूंजीवाद के प्रभाव ने समाज में बढ़ती आर्थिक असमानता को जन्म दिया जिसके परिणाम स्वरूप मानव भूगोल में कल्याणपरक विचारधारा का जन्म हुआ । मानव की बढ़ती क्रियाशीलता जागरूकता, मानव संसाधन और सृजनात्मकता के परिपेक्ष्य में मानववादी विचारधारा मानव भूगोल का एक प्रमुख, अग बन गई है ।

प्रकृति प्रदत्त संसाधनों के सहयोग से मानव आज अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए उनका अधिकतम विदोहन करके विज्ञान व तकनिक सहयोग से जीवन को सुखी बनाने की चेष्टा कर रहा है । सांस्कृतिक भूदृश्य (Cultural landscape) निर्माण की इस प्रक्रिया में मानव को प्रकृति के साथ अनुकूलन (Adaption), रूपान्तरण (Modification) एव समायोजन (Adjustemnt) करना पड़ता है । ये सभी कारक मानव भूगोल की विचारधारा को विकसित एवं प्रकृति निर्माण की प्रक्रिया के आधारभूत तत्वों का कार्य करते है ।

1.5 मानव भूगोल का उद्देश्य

भूगोल एक कल्याणकारी विज्ञान है अत : वातावरण की पृष्ठभूमि में मानव द्वारा किए गये सांस्कृतिक विकास का अध्ययन करना मानव भूगोल का मूल लक्ष्य है । इसीलिये सम्भवत् वर्तमान समय में अमेरिकन भूगोस्वेत्ता मानव भूगोल के लिये 'सांस्कृतिक भूगोल' शब्द का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त समझते हैं ।

मानव क्षोल में मानव का अध्ययन पृथ्वी को उसका घर मानते हुये किया जाता हैं । यह विचारधारा पारिस्थितिकी विज्ञान की देन है जिसमें जीवों का अध्ययन पर्यावरण के संदर्भ में किया जाता है, किन्तु उसमें मानवीय अध्ययन की अपेक्षा पशु-पक्षियों और प्राकृतिक पर्यावरण का ही अध्ययन किया जाता है । पृथ्वी मनुष्य के घर के रूप में (Earth as a Home of man) की विचारधारा मानव भूगोल की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है । मानव पारिस्थितिकी में केवल अकेले व्यक्ति का ही अध्ययन करते है । अत: मानव भूगोल में चूंकि हम मानव समुदाय (Human- Group) का अध्ययन करते है अत : मानव भूगोल का उद्देश्य मानव समुदाय का पारिस्थितियों के संदर्भ में अध्ययन करना है । मानव जीवन पर प्राकृतिक तथ्यों का ही प्रभाव नहीं पड़ता अपितु सांस्कृतिक तथ्य भी उसकी क्रियाओं पर प्रभाव डालते हैं अत : मानव भूगोल में वातावरण की शक्तियों, तथ्यों और अभिव्यंजनाओं के प्रभावों तथा मानव द्वारा उनमें समय समय पर किये गये परिवर्तनों का भी अध्ययन किया जाता है । भौतिक परिस्थितियों तथा मनुष्य के कार्य कलाप के अहम अन्तर सम्बन्ध का अध्ययन करना मानव भूगोल का मुख्य

उद्देश्य हैं । भौतिक परिस्थितियों वे जो प्रकृति से प्राप्त हुई है दूसरे शब्दों में इसे प्राकृतिक वातावरण कह सकते है । मानव द्वारा विभिन्न क्रियाओं द्वारा इस वातावरण में परिवर्तन उत्पन्न किया जाता है । दूसरी तरफ मानव स्वय प्राकृतिक वातावरण द्वारा प्रभावित होता है और एक विशिष्ट सांस्कृतिक वातावरण को जन्म देता हैं । मानव भूगोल इन दोनों वातावरणों के मध्य प्रक्रियाओं का विवेचनात्मक अध्ययन करता हैं । सरल शब्दों में मानव भूगोल का उद्देश्य भौतिक वातावरण तथा मानव के बीच कार्यात्मक सम्बन्ध (Functional Relationship) को समझना हैं । मानव भूगोल का उद्देश्य प्राकृतिक ब्रून्स मानवीय घटनाओं में सामंजस्य स्थापित करना है उनके बीच की दूरी को कम करना है अर्थात् मानव भूगोल प्रकृति एवं मानव के बीच पुल का कार्य करता हैं ।

कुमारी सेम्पुल के अनुसार मानव भूगोल चूंकि अस्थिर पृथ्वी और चंचल मानव के परिवर्तित सम्बन्धों की व्याख्या है अत: जहां पृथ्वी पर सूर्य शक्ति एवं अनावृतिकरण के विभिन्न साधन बहता जल, हिमनद, भूमिगत जल, हवा, सखी लहरें आदि पृथ्वी के भौतिक स्वरूप को परिवर्तित करती रहती है उसी प्रकार मानव स्वयं भी अपने चंचल स्वभाव के कारण धरातल पर सड़कें, अधिवास, कल- कारखाने, यातायात के लिये बस अड्डे, पोताश्रय तथा वायु अड्डे का निर्माण करके पृथ्वी के भौतिक स्वरूप को निरन्तर परिवर्तित करता रहता है । मानव भूगोल का उद्देश्य प्रकृति में होने वाले इन घटनाक्रमों में सामंजस्य बिठाना है ।

पृथ्वी के विभिन्न भागों में भिन्न जलवायु दशाओं में मनुष्य द्वारा किये गये प्राकृतिक अनुकूलन (Adaption), रूपान्तरण (Modification) एवं समायोजन (Adjustment) का प्रादेशिक अध्ययन करना भी मानव भूगोल का एक प्रमुख उद्देश्य है । विभिन्न प्रदेशों के मानव जीवन का तुलनात्मक अध्ययन करने पर ही मानव जीवन को सुखी बनाने की कल्पना की जा सकती है ।

मानव भूगोल का एक उद्देश्य पार्थिव एकता (Terrestrial Unity) का अध्ययन करना भी है पार्थिव एकता का अर्थ है प्राकृतिक एवं मानवीय तथ्यों के बीच एक अटूट सम्बन्ध है । अर्थात् ये सभी तत्व एक दूसरे से जुडे हुए है और किसी भी घटना में इनका सम्मिलित रूप से प्रभाव पड़ता है । उदाहरण के लिए स्थिति का जलवायु से, जलवायु का वनस्पति से, वनस्पति का मिट्टी की सरंचना से सम्बन्ध होता है । इसी प्रकार भूमि, जलवायु और वनस्पति का प्रभाव कृषि पर पड़ता हैं । कृषि अन्तत : पशु जगत और मानव को प्रभावित करती हैं । मानव की आर्थिक व सांस्कृतिक प्रगति पार्थिव एकता के अनुकूल समन्वय का परिणाम हैं । पार्थिव एकता का सर्वप्रथम अनुभव हम्बोल्ट और रिटर के कार्यों मे मिलता हैं । जर्मन विद्वान रेटजेल ने सर्वप्रथम इसे सिद्धान्त का रूप दिया । फ्रांसीसी विद्वान ब्लाश ने भी भौगोलिक जगत में पार्थिव एकता की झलक देखी थी ।

1.6 मानव भूगोल का विषय क्षेत्र

मानव भूगोल की विषय वस्तु को जानने से पहले हमें यह जानना आवश्यक है कि विज्ञान प्रकृति और मानव के किन पहलुओं का किस प्रकार से और क्यों अध्ययन करता है । मानव जनसंख्या के विभिन्न पहलुओं, प्राकृतिक संसाधनों, सांस्कृतिक भूदृश्यों, मान्यताओं और इन

सबके कार्यात्मक सम्बन्धों का अध्ययन मानव की प्रगति के लिए किया जाता है अत : इस विषय के क्षेत्र को हम छ : भागों में बांट सकते हैं ।

1. जनसंख्या ।
2. प्राकृतिक संसाधन ।
3. सांस्कृतिक भूदृश्यों ।
4. मानव वातावरण समायोजन ।
5. विभिन्न प्रदेशों के आर्थिक सामाजिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध ।
6. कालानुसार विकास की दशा का अध्ययन ।

मानव का अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए प्रकृति से निरन्तर संघर्ष मानव इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना रही है, अत : परिवर्तनशील जगत को मानव भूगोल के क्षेत्र की सीमाओं का निर्धारण करना थोडा कठिन कार्य हैं । फिर भी अनेक विद्वानों ने मानव भूगोल के क्षेत्र तथा विषय वस्तु के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं ।

फिन्च और ट्रिवार्था ने मानव भूगोल को निर्दिष्ट क्षेत्र भूमि की उपयोगिता का अध्ययन माना है । एक क्षेत्र का भौगोलिक अध्ययन करने के लिए वहां की प्राकृतिक और सांस्कृतिक दशाओं में निकट सम्बन्ध को जानना आवश्यक होता हैं ।

मानव भूगोल के क्षेत्र निर्धारण में अमेरिकन विद्वान एल्सवर्थ हन्टिगटन के विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण है । हन्टिगटन ने एक ओर भौतिक दशाओं (स्थिति, धरातल, जलराशियाँ, मिट्टियाँ तथा खनिज तथा जलवायु) का उल्लेख किया है दूसरी और मानव अभिव्यंजना के अन्तर्गत मानव की विभिन्न आवश्यकताएँ, मुख्य व्यवसाय, कार्यकुशलता, उच्च आवश्यकताओं का उल्लेख किया है जो भौतिक दशाओं से निरन्तर प्रभावित होती है । जीवन के भेद के अन्तर्गत उसने वनस्पति एवं जन्तु के साथ मानव को सम्मिलित किया है जो स्वयं भौतिक दशाओं के साथ जन्तुओं और वनस्पति से भी प्रभावित होता है । हन्टिगटन ने मानव की शक्ति को प्रधानता दी है, अत : मानवीय अभिव्यंजना में मानवीय क्रियाकलापों द्वारा भौतिक दशाओं के प्रभाव और प्रति प्रतिक्रिया को व्यक्त किया गया है ।

आज मानव का प्राकृतिक दशाओं पर प्रभुत्व बढ़ गया है जिससे उसकी सांस्कृतिक उन्नति हुई है । सभ्यता और संस्कृति के परिणाम स्वरूप उसकी अभिलाषाओं आकांक्षाओं और क्रियाकलापों द्वारा भौतिक दशाओं के प्रभाव और प्रति प्रतिक्रिया को व्यक्त किया गया है ।

ब्रून्स ने मानव भूगोल के क्षेत्र को स्पष्ट करते हुए मूल तथ्यों को दो आधारों पर विभाजित किया है ।

1. सभ्यता के विकास के अनुसार ।
2. सांस्कृतिक तथ्यों के आधार पर यथार्थ विभाजन ।

सभ्यता के विकास के आधार पर मानव भूगोल के तथ्यों को निम्नलिखित उपविभागों में वृगीकृत किया गया है ।

(अ) अनिवार्य आवश्यकताओं का भूगोल

(ब) भूमि विदोहन सम्बन्धी भूगोल

(स) सामाजिक भूगोल

(द) राजनैतिक एवं ऐतिहासिक भूगोल

सांस्कृतिक तथ्यों के आधार पर ब्रून्स ने मानव भूगोल के तथ्यों का वर्गीकरण निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया है

1. भूमि के अनुत्पादक कार्य (Unproductive Occupation of Soil)
   (अ) घर (ब) मार्ग
2. पौधों और पशुओं पर विजय (Conquest of plants and animals)
   (अ) कृषि (ब) पशुपालन
3. भूमि के विध्वंसात्मक कार्य (Destructive Occupation of Soil)

   ब्लाश ने मानव भूगोल के अध्ययन को निम्नलिखित अध्यायों में विभक्त किया है -

1. **जनसंख्या :** इसका वितरण, घनत्व, प्रमुख जनसमूह, जीविका के साधन और जनसंख्या घनत्व में सम्बन्ध, जनसंख्या वृद्धि के कारण ।
2. **सांस्कृतिक तत्व :** वातावरण, पौधों., पशुओं और मनुष्यों का वातावरण अनुकूलन, औजार और कच्चे माल, जीविका के साधन, मकान निर्माण के पदार्थ, मानवीय बस्तियों और सभ्यताओं का विकास ।
3. **परिवहन और भ्रमण :** मानव और पशु परिवहन तथा गाड़ियाँ, सड़कें रेलें और महासागरीय परिवहन । इनके अतिरिक्त ब्लाश ने मानव प्रजातियों RACES) और नगरों (Urban Centres) का भी उल्लेख किया है ।

   डिमांजिया के अनुसार, मानव भूगोल का अध्ययन क्षेत्र निम्न प्रकार है-

1. प्राकृतिक प्रदेशों में मानव जीवन ।
2. उद्योग, जैसे आखेट, मछलीपालन, कृषि, पशुपालन, कारखाने और व्यापार
3. मानवीय निवास और प्रवास
4. मानवीय बस्तियाँ

अमेरिकन विद्वान व्हाइट एवं रेनर ने मानव भूगोल के अध्ययन में समायोजन को अधिक महत्व दिया है । समायोजन के मुख्य तीन भेद बताये हैं -

1. आर्थिक समायोजन : जिसमें उद्योगों का अध्ययन होता है ।
2. सामाजिक और सांस्कृतिक समायोजन : इसमें जनसंख्या, भू-स्वामित्व, सामाजिक वर्ग, जातियों के वर्ग, मानव निवास, वेशभूषा, घर, कला, और धार्मिक विश्वास आदि सम्मिलित किये जाते है ।
3. राजनीतिक समायोजन इसमें स्थानीय, प्रान्तीय और राष्ट्रीय शासन तथा अन्तर्राष्ट्रीय संघ आदि होते है ।

ये विद्वान यह भी मानते है कि भूगोल विश्व की अनेक जटिल समस्याओं के निराकरण करने की क्षमता रखता है । इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए सामान्यत: निम्नलिखित क्रियाएँ आवश्यक हैं

1. विश्व की सामाजिक घटनाओं का सर्वे करना,

2. मानव के पर्यावरण के भौतिक एवं जैविक तत्वों का वर्गीकरण करना,

3. इन दोनों तत्वों का मानवीय घटनाओं पर पारस्परिक प्रभाव ।

भिन्न-भिन्न विद्वानों ने अपने मतानुसार मानव भूगोल के क्षेत्र को जांचने का कार्य किया हैं किन्तु अभी भी यह अपनी शैशव अवस्था में ही है । हाडस्टन का कथन इस संदर्भ में उल्लेखनीय है उनके अनुसार "मानव भूगोल की विषय सूची को व्यवस्थित करने और उसमें औपचारिक सिद्धान्त बनाये के प्रयत्नों को स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं हैं । ' ' मानव भूगोल के क्षेत्र में वास्तव में उन सभी तत्वों का समावेश होना चाहिये जो प्रत्यक्ष अथवा परोस रूप में मानव तथा पर्यावरण से सम्बन्ध रखते हैं ।

बोध प्रश्न-2

1. यूनानी विद्वान निम्नलिखित में से कौन सी विचारधारा से जुड़े थे?

(अ) भौतिकवादी विचारधारा (ब) मानववादी विचारधारा

(स) नियतिवादी विचारधारा (द) प्रगतिवादी विचारधारा

(2) मानव भूगोल में निम्नलिखित में से किसका अध्ययन किया जाता है?

(अ) आदिम समाज का (ब) एकाकी मानव का

(स) पशु पक्षियों का (द) मानव समुदाय का

(3) हन्टिगटन द्वारा वर्णित किन्हीं दो प्राथमिक व्यवसायों के नाम लिखिये ।

....

....

(4) ब्रून्स द्वारा दिए गये मानव भूगोल के तथ्यों में पौधों और पशुओं पर विजय में किन दो गौण तथ्यों को सम्मिलित किया गया है ?

....

....

(5) विडाल डी ला ब्लाश ने अपने ग्रंथ मानव भूगोल के सिद्धान्त में अपना अध्ययन निम्नलिखित तथ्यों में से किससे प्रारम्भ किया है?

(अ) जलवायु (ब) यातायात के साधन

(स) जनसंख्या (द) रीतिरिवाज

1.7 मानव भूगोल का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध

मानव भूगोल एक अन्तरा अन्तर्विषयक (Inter disciplinary) विज्ञान है । मानव भूगोल में वस्तुत: प्राकृतिक और मानवीय तथ्यों की परस्पर सम्बद्धता का अध्ययन किया जाता है, अत : प्राकृतिक विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान के सभी विषयों को इसमें सम्मिलित किया जा सकता है । पृथ्वी के अस्थिर होने के कारण पर्यावरण के तत्वों में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है तथा प्राकृतिक पर्यावरण में परिवर्तन होने पर उसकी प्रतिक्रिया मानव पर होना स्वाभाविक है । भूगोल विषय का भौतिक भूगोल और मानव भूगोल के रूप में विभाजन अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से किया जा सकता है । वस्तुत : भौतिक भूगोल एवं मानव भूगोल के सम्मिलित

अध्ययन में ही भूगोल की आत्मा व्याप्त है । हमें यह नही भूलना चाहिए कि मानव भूगोल की रचना केवल मानवीय आधारों पर नहीं की जा सकती, उसमें प्राकृतिक पर्यावरण के अंगों तथा प्रभावों का पूर्ण योगदान रहता है ।

मानव भूगोल में हम उसका अन्य सामाजिक विज्ञान जैसे इतिहास ,राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, समाज शास्त्र, मानव जाति शास्त्र, सैन्य शास्त्र आदि से सम्बन्ध को समझने का प्रयत्न करेंगे।

चित्र - 1.1 : मानव भूगोल का अन्य विज्ञानों से संबंध

मानव भूगोल और इतिहास

भूगोल और इतिहास का सम्बन्ध चोली दामन का रहा है, आज जो भूगोल है वह समय के साथ कल इतिहास बन जायेगा क्योकि भूगोल का सम्बन्ध जहाँ स्थान (place) से है, इतिहास का सम्बन्ध समय (Time) से है । इसीलिये कुमारी सेम्पुल ने कहा है "History is Geography set into motion” रिटर महोदय ने भी इतिहास और भूगोल की अविभाज्यता पर जोर दिया है, क्योंकि इनके पारस्परिक सम्बन्ध को जाने बिना हम इतिहास को भलीभाँति नही समझ सकते । उदाहरण के लिए महाराणा प्रताप के इतिहास तथा उसकी शौर्य गाथाओं को समझने के लिए मेवाड़ के भूगोल को जानना आवश्यक है । भौगोलिक परिवर्तन से किस प्रकार किसी प्रदेश विशेष का इतिहास बदल जाता है, इन्दिरा गांधी नहर परियोजना का निर्माण इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है । राजस्थान की मरुभूमि में रेगिस्तानी शुक जलवायु के कारण कंटीली झाड़ियों व सूखा सहन करने वाली वनस्पति के अतिरिक्त भूमि वीरान पड़ी थी किन्तु नहर के आगमन से वही क्षेत्र आज गेहूं ,जौ, चना, मक्का, कपास आदि की भरपूर फसल से लहलहाने लगा है । दूसरे शब्दों में मरूभूमि का इतिहास ही परिवर्तित हो गया है अत: कहा जा सकता है कि मानव भूगोल और इतिहास विषय ब्रून्स दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्धित है ।

मानव भूगोल एवं अर्थशास्त्र

मानव भूगोल में मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विभिन्न आर्थिक क्रियाऐं करता है । कृषि, पशुपालन, वन उद्योग, निर्माण उद्योग, परिवहन और वाणिज्य दोनों शास्त्रों की सामान्य अध्ययन, की विषय-वस्तु है अत: इनकी एकरूपता के कारण दोनों विषयों में परस्पर

सम्बन्ध है । किसी भी प्रदेश के आर्थिक विकास की योजना वहां के प्राकृतिक संसाधनों की जानकारी के बिना सम्भव नही हैं । अर्थशास्त्र मानव भूगोल का एक महत्वपूर्ण पहलू है । अर्थशास्त्र की विभिन्न क्रियाएँ कृषि, उद्योग व्यापार और वाणिज्य आदि भूगोल से इतनी अधिक प्रभावित होती है कि विषय की जटिलता को देखते हुए मानव भूगोल की विभिन्न शाखाएँ जैसे कृषि भूगोल, औद्योगिक भूगोल, यातायात भूगोल, वाणिज्य भूगोल आदि विकसित हो गई है । अत : स्पष्ट है कि मानव भूगोल और अर्थशास्त्र एक दूसरे से सम्बन्धित हैं ।

मानव भूगोल और राजनीतिशास्त्र

राजनीति शास्त्र में हम राज्य उसका संगठन, सीमाएं, साम्राज्य एवं साम्राज्य विस्तार, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों आदि का अध्ययन करते हैं जिन पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से भौगोलिक परिस्थितियो का प्रभाव पड़ता है । अर्थात एक देश की राजनीति वहाँ के भूगोल की महान शक्तियों संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, आदि यूरोपिय शक्तियों की नजर इन तेल स्त्रोतों पर टिकी हुई है । किसी भी देश की भौगोलिक स्थिति के कारण वहां का राजनैतिक महत्व बढ़ जाता है । ग्रेट ब्रिटेन की विश्व में केन्द्रीय वे सामुद्रिक स्थिति होने के कारण ही वह विश्व के विभिन्न देशों में अपने उपनिवेश स्थापित कर पाया तथा उसके साम्राज्य का कभी सूर्यास्त नहीं होता जैसी कहावत चरितार्थ हो पाई । पाकिस्तान की अधिकांश नदियों का उद्गम स्त्रोत कश्मीर में होने के कारण पाकिस्तान की सदैव से कश्मीर को अधिग्रहित करने की लालसा रही है । हिन्द महासागर के डियागों गारसिया की सामरिक स्थिति का महत्व भी सर्व विदित है । राजनीति शास्त्र और मानव भूगोल एक दूसरे से इतने अधिक सम्बन्धित हैं कि भू-राजनीति (Geo politics) नामक एक नए विषय का जन्म हो गया है ।

मानव भूगोल और समाजशास्त्र

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । सभ्यता के इतिहास के प्रारम्भ से ही वह समूह में रहकर जीवन व्यापन करता आया है । समाज शास्त्र में मनुष्य की सामाजिक स्थिति, रीति रिवाज, खानपान, वेशभूषा, धर्म, प्रथाओं आदि का अध्ययन किया जाता हैं, । मानव भूगोल में भी हम मानव की सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्रियाओं के अन्तर्गत इन्ही विषयों का अध्ययन करते हैं । मानव भूगोल और समाजशास्त्र की विषयवस्तु के आधार पर कुछ यूरोपीय विद्वान इसे मानव भूगोल न कहकर सामाजिक भूगोल कहना उचित समझते हैं । क्षेत्रीय सामाजिक समानताओं और विषमताओं के लिए भौगोलिक पीरस्थितिया उत्तरदायी होती हैं, अत : मानव भूगोल और समाजशास्त्र विषय एक दूसरे से सम्बन्धित कहे जा सकते हैं ।

मानव भूगोल तथा मानवशास्त्र

मानव शास्त्र वह विज्ञान है जिसमें मनुष्य की जाति उसकी शारीरिक संरचना कदकाठी, रंग, बालों की रचना, खोपडी की रचना आदि जैविक लक्षणों का अध्ययन होता है । मानव भूगोल में भी हम विश्व के विभिन्न भागों में पाई जाने वाली जातियों का इन्ही आधारों पर अध्ययन करते है । सामान्य मानव शास्त्र (General Anthorpology) में भौतिक एवं सामाजिक मानव शास्त्र के सभी पहलुओं का अध्ययन होता है जिसमें शारीरिक एव मानसिक गुणों से लेकर जातिय संस्कृति को भी सम्मिलित किया जाता है, मानव भूगोल में भी हम विभिन्न जातियों के

लक्षणों पर पर्यावरण का अध्ययन करते है अत : मानव शास्त्र और मानव भूगोल एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं ।

मानव भूगोल और सैन्यशास्त्र

किसी देश की भौगोलिक सीमाओं प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का अध्ययन सैन्यशास्त्र और मानव भूगोल दोनों मे 'ही किया जाता है । अत : दोनों विषयों में घनिष्ठ सम्बन्ध है । युद्ध अभ्यास में युद्ध के अन्तर्गत आने वाले प्राकृतिक अवरोधों, जंगल, दलदल, पहाड़ी, दुर्गम स्थान, दर्रो, पर्वत, चोटियों, नदियों आदि का ज्ञान सैनिक को दिया जाता है । धरातल के ढाल, घाटियों आदि को समोच्च रेखाओं का अध्ययन मानचित्र की सहायता से सिखाया जाता है । वर्तमान समय में युद्ध स्थल के साथ वायु और जल की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं अत : सैनिकों को वायु छाया चित्रों, सूदूर संवेदन तकनीकों के माध्यम से जलवायु और महासागरों की दशा आदि का प्रशिक्षण भी सैनिकों को दिया जाता है अत: ये दोनों ही विज्ञान परस्पर सम्बन्धित हैं ।

1.8 सारांश (Summary)

मानव भूगोल वास्तव में भौगोलिक ज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा है जिसमें पहली बार प्राकृतिक शक्तियों के साथ मानवीय क्रिया कलापों को भी समान महत्व दिया गया है । यद्यपि ईसा पूर्व 600 - 3007 में विद्वानों ने मानवीय तथ्यों की तुलना में प्राकृतिक शक्तियों को महत्वपूर्ण माना और इस प्रकार भूगोल में नियतिवादी विचारधारा का उद्भव हुआ । रेटजेल सम्प्रदाय की शिष्या कुमारी सेम्पुल ने तो मानव को प्रकृति का दास तक कह दिया । उसके अनुसार मानव भूगोल अस्थिर पृथ्वी और चंचल मानव के पारस्परिक परिवर्तित सम्बन्धों का अध्ययन है ।

भूगोल में जर्मन विद्वानों की विचारधारा वातावरण निश्चयवाद (Environmental Determinism) से सम्बन्धित रही है । उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में फ्रांसिसी विद्वानों ने मानव भूगोल में सम्भववादी विचारधारा को जन्म दिया जिसमें मानव को एक भौगोलिक कारक स्वीकार किया गया है । ब्लाश, ब्रून्स, डिमांजिया इसी विचारधारा से जुड़े हैं ।

मानव भूगोल का क्षेत्र बड़ा व्यापक है इसमें जहाँ एक ओर प्राकृतिक शक्तियों का अध्ययन किया जाता है वहाँ दूसरी और मानवीय क्रियाकलापों का भी अध्ययन किया जाता है । स्थिति, धरातल, मिट्टी, जलराशियाँ व जलवायु के साथ जनसंख्या, अधिवास, मार्ग, व्यवसाय, सामाजिक रीति रिवाज, जातियाँ व सांस्कृतिक लक्षण आदि मानव भूगोल के क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकते हैं ।

मानव भूगोल का मूल उद्देश्य प्राकृतिक एवं मानवीय गतिविधियों को सामंजस्य स्थापित करना मानव भूगोल वस्तुत: प्राकृतिक परिस्थितियों तथा मानव गतिविधियों के बीच की खाई को पाटने हेतु पुल का काम करता है ।

अत : मानव भूगोल का सम्बन्ध प्राकृतिक विज्ञानों के साथ साथ सभी सामाजिक विज्ञान जैसे, इतिहास, अर्थशास्त्र, मानव शास्त्र, राजनीति शास्त्र, सैन्य शास्त्र आदि से है ।वर्तमान परिस्थितियो में ग्लोबल वार्मिग, पर्यावरण प्रदूषण पारिस्थितिकी की अवमूल्यन आदि समस्याओं को प्राकृतिक एवं मानवीय संदर्भ की दृष्टि से मानव भूगोल ने अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है ।

बोध प्रश्न - 3

1. मानव के घर के रूप में पृथ्वी (Earth as home of man) की विचारधारा निम्नलिखित विज्ञानों में किस से ली गई है?
   (अ) भौतिक शास्त्र से (ब) समाज शास्त्र से
   (स) पारिस्थितिकी विज्ञान से (द) दर्शनशास्त्र से
2. मानव भूगोल का मूल उद्देश्य क्या है?
   ....
   ....
3. ब्रून्स के मानव भूगोल सम्बन्धी तथ्यों के यथार्थवादी विभाजन का क्या आधार है?
   (अ) प्राकृतिक तथ्य (ब) सामाजिक तथ्य
   (स) आर्थिक तथ्य (द) सांस्कृतिक तथ्य
4. हन्टिगटन ने मानव भूगोल के तथ्यों के वर्गीकरण में जीवन के भेद शीर्षक में किन तीन तत्वों को सम्मिलित किया है ?
   ....
   ....
5. मानव भूगोल निम्नलिखित में से किस विज्ञान से सम्बन्धित नही है?
   (अ) समाजशास्त्र (ब) अर्थशास्त्र
   (स) गणितशास्त्र (द) राजनीतिशास्त्र

1.9 शब्दावली (Glossary)

- **पारिस्थितिकी (Ecology) :** प्रकृति का मनुष्य के घर (habitat) के रूप में ज्ञान ।
- **पार्थिव एकता (Terrestrial Unity) :** विश्व के जड़ चेतन तत्वों की सम्बद्धता ।
- **सांस्कृतिक दृश्यभूमि (Eultural Landscape) :** मानवनिर्मित भू-दृश्य जैसे अधिवास सड़कें, पुल, कल-कारखाने आदि ।
- **नियतिवाद (Determinism) :** वह मत जो प्राकृतिक शक्तियों में विश्वास रखता है ।
- **सम्भववाद (possibilism) :** वह मत जो मानवीय क्रियाकलापों में विश्वास रखता है ।
- **मानवीय छांट (Human Choice) :** मनुष्य की निर्णय क्षमता
- **नव निश्चयवाद (Neo-Determinism) :** वह मत जो प्राकृतिक और मानवीय दोनों । तत्वों को समान महत्व देता है।

1.10 संदर्भ ग्रंथ Reference Books

1. एस डी. कौशिक : मानव भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ 1999
2. बलवीरसिंह नेगी : **मानव एवं आर्थिक भूगोल,** केदारनाथ रामनाथ, मेरठ 1978
3. श्रीनाथ मेहरोत्रा व डा जे पी. सक्सेना : **मानव भूगोल,** लक्ष्मीनारायण अग्रवाल 1973

4. विश्वनाथ तिवाड़ी एवं रामशिरोमणी पाण्डेय : **आर्थिक एवं मानव भूगोल,** शिवलाल अग्रवाल एण्ड कं. आगरा 1979
5. वी एस चौहान : **मानव एवं आर्थिक भूगोल,** एस चन्द एण्ड क. लि., नई दिल्ली
6. Majid Hussain : **Human Geography** , Rawat publications , Jaipur 2004
7. एस डी. कौशिक : **भौगोलिक विचारधारा एवं विधितंत्र,** रस्तोगी प्रकाशन मेरठ, 1984
8. एस. एम. जैन : **भौगोलिक विचारधारा एवं विधितंत्र,** साहित्य भवन, आगरा, 1987,
9. सी बी. मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन, आगरा, 1985.

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. जर्मन विद्वान फ्रेडरिक रेटजल	2. ब
3. ब	4. स
5. द	

बोध प्रश्न - 2

1. स	2. द
3. आखेट, लकड़ी काटना	4. कृषि एवं पशु पालन
5. स	

बोध प्रश्न - 3

1. स	2. प्राकृतिक एव मानवीय घटनाओं में सांमजस्य
3. द	4. वनस्पति, जन्तु एवं मानव
5. स	

1.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. मानव भूगोल की परिभाषा दीजिए तथा उनके क्षेत्र के बारे में विस्तार से बताइये ।
2. 'मानव भूगोल अस्थिर पृथ्वी एवं क्रियाशील मानव के पारस्परिक परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है । ' कैसे?
3. मानव भूगोल का मुख्य उद्देश्य क्या है? मानव भूगोल का अन्य सामाजिक विज्ञानों से सम्बन्ध का वर्णन कीजिए ।

इकाई 2 : मानव भूगोल के मूलभूत तथ्य तथा तत्व : जीन ब्रून्स तथा इल्सवर्थ हन्टिंगटन के अनुसार (Fundamental Facts and Elements of Human Geography According to Jean Brunhes and Ellsworth Huntingtion)

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 मूलभूत तत्व विषय सामग्री के रूप में

2.3 जीन ब्रून्स के अनुसार मानव भूगोल के तत्व

2.4 हन्टिगटन के अनुसार मानव भूगोल के मूल तत्व

2.5 प्राकृतिक दशाएँ एवं मानव अभिव्यंजना

2.6 जीन ब्रून्स एवं हन्टिगटन के तत्वों की तुलना सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 संदर्भ ग्रंथ

2.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप समझ सकेगें :

- मानव भूगोल की विषय वस्तु में मूलभूत तत्वों का महत्व
- जीन ब्रून्स और हन्टिगटन के मूलभूत तत्वों की परख
- उपर्युक्त विद्वानों की विचारधाराओं का तुलनात्मक अध्ययन
- दोनों विद्वानों की विचारधाराओं की समानताएं एवं असमानताओं की समझ
- प्राकृतिक पर्यावरण एवं मानव जीवन के अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या ।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव भूगोल का प्रमुख उद्देश्य प्राकृतिक एवं मानवीय क्रियाकलापों के मध्य समन्वय स्थापित करना है । इसके लिए दोनों पक्षों की अन्तर निर्भरता को समझना आवश्यक हैं । मनुष्य ही मानव भूगोल के अध्ययन का प्रमुख विषय हैं । किन्तु यह भी सत्य है कि मनुष्य चूंकि पृथ्वी पर निवास करता है, अत : अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रकृति के साथ अनुकूलन, समायोजन एवं परिमार्जन भी करता है । उसकी इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप प्राकृतिक पर्यावरण से भिन्न सांस्कृतिक पर्यावरण का स्वरूप दिखलाई देता है । कुछ विद्वान

मानव भूगोल के मूलभूत तत्वों की विवेचना में प्राकृतिक परिस्थितियों की तुलना में मानवीय क्रियाकलापों को अधिक महत्व देने लगे हैं ।

अमेरिकन जलवायुवेत्ता फिंच एवं ट्रिवार्था ने मानव भूगोल के तत्वों के विभाजन में भूमि की उपयोगिता को अधिक महत्व दिया हैं । जबकि ब्लाश और उनके शिष्य का विश्वास मानवीय क्रियाकलापों में अधिक हैं ।

2.2 मूलभूत तत्व विषय सामग्री के रूप में

सामान्य तया मानव भूगोल के तथ्यों को दो भागों में विभाजित किया जाता है प्राकृतिक या भौतिक (Natural or Physical) तथा दूसरे सांस्कृतिक या मनुष्य निर्मित (Cultural or man made) प्राकृतिक तत्वों में ग्लोब पर स्थिति, भूमि की बनावट जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, जलाशय, जीवजन्तु खनिज पदार्थ आदि समन्वित किए जाते हैं जबकि सांस्कृतिक तत्वों में मानव सम्बन्धी तथा जैसे जनसंख्या, अधिवास, बस्तियाँ, मार्ग साहित्य दर्शन, कला, धर्म, साकार आचार -विचार मानव की शारीरिक व मानसिक दशाओं को सम्मिलित किया जाता हैं । प्रसिद्ध मानव भूगोलवेता प्रो. विडाल डी ला ब्लाश ने मानव भूगोल के तत्वों की विवेचना करते हुए निम्नलिखित तीन बातों पर बल दिया है ।

1. जनसंख्या : वितरण, घनत्व, प्रमुख जनसमष्ठियाँ, जीवित साधन, एवं जनसंख्या में सम्बन्ध, वृद्धि के कारण आदि ।
2. सभ्यता के विकास के आधार पर वातावरण तथा मानव के पारस्परिक सम्बन्धों का वर्णन
   (अ) वातावरण एवं मानवीय अनुकूलन
   (ब) कच्चे माल व औजार
   (स) भवन निर्माण सामग्री
   (द) अधिवास
   (य) सभ्यता का विकास

ब्रून्स व हन्टिंगटन द्वारा निर्मित मानव भूगोल के तथ्यों का विस्तृत अध्ययन करने से पूर्व हमें फिन्च एवं ट्रिवार्था एवं अमेरिकन विद्वानों के द्वारा मानव भूगोल के तथ्यों पर भी दृष्टिपात करना चाहिए इन के अनुसार दोनों विद्वानों ने तथ्यों का निम्न प्रकार से विभाजन प्रस्तुत किया है ।

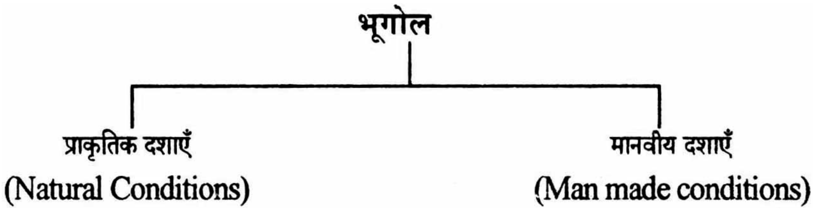

1. जलवायु
   (अ) तापमान
   (i) सबसे गर्म व ठन्डे महीने का

1. जनसंख्या
   (अ) मात्रा व घनत्व
2. मकान और बस्तियाँ

(ii) हिम ऋतु का प्रसार

(ब) वर्षा

(i) वर्षा का योग

(ii) वार्षिक वर्षा का वितरण

(स) जल के प्रकार

4. भूतल की बनावट एवं अपवाह

(अ) भूगर्भिक चट्टानों की प्रकृति एवं गुण

(ब) मुख्य स्थल रूप धरातल एवं ढाल-पर्वत पठार मैदान पहाड़ियाँ

(स) छोटे आकार के स्थल रूप

(द) अपवाह प्रणाली

5. भूमि के संसाधन

(अ) जल स्त्रोत

(ब) वनस्पति एवं पशु जीवन, वन, झाड़ियाँ, घास

(स) मिट्टियाँ

(i) भौतिक एवं रसायनिक दशा

(ii) मिट्टी के खण्ड

(iii) मिट्टियों के प्रकार

(द) खनिज पदार्थ

(अ) मकानों के प्रकार

(ब) बस्तियाँ - बिखरी एवं सघन

3. उत्पादन से सम्बन्धित तथ्य

(अ) कृषि

(i) खेतों के आकार और प्रारूप

(ii) उपज एवं पशु उत्पादन

(iii) कृषि भूमि का वितरण एवं स्वरूप

(iv) कृषि के प्रकार एवं उनका विश्व वितरण

(ब) निर्माण उद्योग

(i) औद्योगिक संस्थान

(ii) कच्चामाल, शक्ति के साधन एवं तैयार माल

(iii) विश्व के औद्योगिक प्रदेश

(स) शोषक उद्योग

(i) लकड़ी काटना

(ii) मछली पकड़ना

(iii) पशुओं का शिकार करना

(iv) खानें खोदना

4. यातायात संबंधी तथ्य

(अ) यात्रा के मार्ग, उनके प्रकार एवं सघनता

(ब) यात्रा के साधन

(स) देशी एवं विदेशी व्यापार

2.3 जीन ब्रून्स के अनुसार मानव भूगोल के तत्व

प्रो. ब्रून्स की मान्यता है कि मनुष्य पृथ्वी पर रहता है अत : वह पृथ्वी पर निर्भर है । अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह प्राकृतिक वातावरण में रहकर विभिन्न प्रकार की क्रियाएं करता है, जिसमें सांस्कृतिक पर्यावरण का निर्माण होता है । सांस्कृतिक पर्यावरण में अधिवास, राजमार्ग, उद्योग धन्धे, यातायात के साधन, व अन्य वैज्ञानिक व तकनीकी विकास को सम्मिलित किया जाता है जिनका निर्माण मानव ने अपने बुद्धि कौशल और चातुर्य से किया है ।

सर्वप्रथम फ्रांस के भूगोलवेत्ता ब्लाश व जीन ब्रून्स ने मानव भूगोल की विषय सामग्री को अलग- अलग भागों में बाँटा ।

ब्रून्स ने मानव भूगोल के तथ्यों का विभाजन निम्नलिखित दो आधारों पर किया ।

1. सभ्यता के विकास (Evolution of Civilization) के आधार पर
2. यथार्थ वर्गीकरण (Positive Classification) के आधार पर

सभ्यता के विकास के आधार पर मानव भूगोल के तत्वों को निम्नलिखित 4 उपविभागों में बांटा गया है ।

(अ) अनिवार्य आवश्यकताओं का भूगोल

(ब) भूमि विदोहन सम्बन्धी भूगोल

(स) सामाजिक भूगोल

(द) राजनैतिक एवं ऐतिहासिक भूगोल

(अ) **अनिवार्य आवश्यकताओं के भूगोल** में ब्रून्स ने मानव की मूलभूत आवश्यकताओं भोजन, वस्त्र, और आवास को सम्मिलित किया है । मानव को भोजन की निरन्तर आवश्यकता पड़ती है अत: दिन में अनेक बार उसे भोजन करना व जल पीना पड़ता है । जल के कष्ट का प्रभाव चरवाहे, घुमक्कड़ जातियों पर विशेष पड़ता है । सभी स्थानों से जल मानव क्रियाओं का मुख्य अधिष्ठाता है मानव अपना भोजन पौधों और पशु पक्षियों से प्राप्त करता है । दिनभर की कड़ी मेहनत के बाद विश्राम के लिए घर की आवश्यकता होती हैं इसके अतिरिक्त प्राकृतिक प्रकोपों व जंगली जीव जन्तुओं के आक्रमण से सुरक्षा की दृष्टि से एवं अपने सामान की सुरक्षा की दृष्टि से भी घर की आवश्यकता होती है । इसलिए विश्राम स्थल या आवास को मानव भूगोल का प्रमुख तत्व माना गया है । इन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति मानव प्राकृतिक सहयोग से करता है । विषम जलवायु दशाओं में सामंजस्य स्थापित करने में मानव को प्रकृति भी सहयोग प्रदान करती है । उपर्युक्त आवश्यकताओं की पूर्ति को हम आर्थिक भूगोल (Economic Geography) भी कह सकते है ।

(ब) **भूमि विदोहन सम्बन्धी भूगोल :** अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात् मद्य ने अपने जीवन को स्थाई सुरक्षित और आरामदायक बनाने के लिए अपने बुद्धि कौशल से कृषि, पशुपालन, खनिज प्राप्ति आदि के उपाय करता है । प्रो. ब्रून्स के अनुसार ये तथ्य अन्य तथ्यों से सर्वथा भिन्न है, अत: इनका अध्ययन कृषि, पशुपालन एवं औद्योगिक भूगोल के रूप में किया जाता है । जिसे हम भूमि विदोहन सम्बन्धी भूगोल भी कह सकते हैं ।

(स) **सामाजिक भूगोल :** आज भी मानव की सबसे प्राचीन और प्राथमिक अभिलाषा अपने परिवार की वृद्धि की है अत: सामूहिक जीवन के कारण उसकी क्रियाएँ विस्तृत रण विषम हो जाती हैं । मानव सदैव से ही समूह में रहता आया है, अत : सामूहिक जीवन के कारण उसकी क्रियाऐं कुछ विशिष्ट और विस्तृत हो जाती है जिन्हें वह अपने विवेक से समन्वय स्थापित करके सुगम बनाता है अर्न्तनिर्भरता के कारण सामाजिकता

बढ़ती है और विपणन व्यवस्था का महत्व बढ़ जाता हैं, जो मानव भूगोल की एक विशेषता है । विपणन व्यवस्था विकसित मानव समूह के पारस्परिक सहयोग एवं निर्भरता के कारण ही सामाजिक भूगोल का महत्व बढ़ा है ।

(द) **राजनीतिक एवं ऐतिहासिक भूगोल :** इन भूगोलों में राजनीति, शासन तथा इतिहास आदि का अध्ययन किया जाता है । भूगोल से ही वस्तुत : इतिहास का जन्म होता है, अत : भौतिक तत्वों और मानवीय तत्वों के आपसी सम्बन्धों की अवहेलना नहीं की जा सकती है । क्योकि कुछ मूलभूत भौगोलिक दशाएं - स्थिति, धरातल, ऊचाई, समुद्र से दूरी, विजित अथवा शासित क्षेत्र और उसका आकार आदि - नगरों, राज्यों और देशों के इतिहास को बड़ा प्रभावित करती है ।

ब्रून्स का यथार्थ वर्गीकरण

ब्रून्स ने यथार्थ वर्गीकरण की कल्पना पृथ्वी तल से ऊपर उठकर भूखण्ड पर पाये जाने वाले मानव समुदाय के असमान वितरण को देखकर की थी । उसने यह अनुभव किया कि प्रतिकूल प्राकृतिक भूआकारों और जलवायु की विषमता के आधार पर कई स्थान जनविहीन हैं जबकि कई स्थानों पर अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों एवं जीविकोपार्जन के साधनों की सुलभता के कारण सघन जनसंख्या पाई जाती है । जैसे सुदूर पूर्व पश्चिमी तथा मध्य यूरोप में अनेक जनसमष्ठियाँ इस बात की पुष्टि करती है । इन क्षेत्रों में मानव निर्मित भूदृश्यों जैसे भवन, सड़क, रेल, गाँव, कस्बा, नगर, खेत खलियान, चरागाह, मैदान, उद्योग, हवाई अड्डे, रेल्वे स्टेशन, बन्दरगाह आदि प्रमुख हैं ।

ब्रून्स ने मानव भूगोल के तथ्यों का सांस्कृतिक तथ्यों के आधार पर वर्गीकरण किया है, जिसे यथार्थ वर्गीकरण की संज्ञा दी गई है । यह वर्गीकरण बहुत सरल ग्राहय रण लोकप्रिय है । इन सांस्कृतिक तथ्यों को तीन प्रमुख एवं प्रत्येक में दो उपविभागों के आधार पर कुल छ : उपविभागों में विभक्त किया गया है, जो निम्नलिखित अनुसार है -

1. भूमि के अनुत्पादक कार्य (Unproductive Occupation of the Land)
   (अ) घर (House) (ब) सड़कें (Roads)
2. पशु और वनस्पति पर विजय (Concept of plants and animal)
   (अ) कृषि (Agricultural) (ब) पशुपालन (Domestication of Animals)
3. भूमि के विनाशात्मक कार्य (Destructive Occupation of the Land)
   (अ) खनिज विदोहन (Mineral Exploitation)
   (ब) वनस्पति एवं पशु विनाश (Destruction of plants and Animals)

1. भूमि के अनुत्पादक कार्य (Unproductive Occupation of the Land)

इस श्रेणी में भूमि के अनुत्पादक व्यवसाय सम्बन्धी तथ्यों को सम्मिलित किया गया है जिसमें घर तथा सडकों का अध्ययन किया जाता है । घर का मुख्य लक्ष्य मानव को आश्रय देना है, अत: इस रूप में झोपड़ी, पक्का मकान, विशाल ऊँची इमारतें चाहे वे एकाकी या बिखरे रूप में हो अथवा संयुक्त रूप से पाई जाती हैं । इसी प्रकार सड़क का स्वरूप भी पगडंडी से लगाकर पक्की सड़क राजमार्ग आदि किसी भी रूप में हो अध्ययन का विषय है । ब्रून्स के अनुसार घर

एवं सड़क का भवन एवं राजमार्ग के रूप में विकास मानव के वैज्ञानिक विकास को दर्शाता है । इसीलिए हम बर्फ के इग्लू से लगाम घास फूस की झोपड़ियों तथा नगरों की गगनचुम्बी अट्टालिकाओं का अध्ययन घर शीर्षक के अन्तर्गत करते है । इसी प्रकार मार्ग शीर्षक में थल, जल और वायु तीनों मण्डलों में अनुसार पाये जाने वाले स्वरूपों का अध्ययन किया जाता है । घर तथा मार्गों का आपस में बहुत गहरा भौगोलिक सम्बन्ध मिलता है । जहाँ जनसंख्या का घनत्व ज्यादा हैं वहाँ यह सम्बन्ध और भी अधिक गहरा हो जाता है ।

2. पशु एवं वनस्पति पर विजय (Concept of plants and animal)

इस तथ्य के अन्तर्गत कृषि एवं पशु पालन को सम्मिलित किया है । प्रारम्भ में मानव अपने भोजन सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति के लिए फल एकत्रण एवं आखेट पर निर्भर था, किन्तु धीरे -धीरे मनुष्य ने अपने बुद्धि कौशल और चतुराई से बीज एकत्र कर खेती करना सीखा, इसी प्रकार पशुओं का शिकार करने के बजाय उन्हें पालतू बनाना सीखा, जिससे खाद्यान्नों तथा दूध, घी, मक्खन, आदि की पूर्ति होने लगी तथा पशुओं को बोझा ढोने के लिए भी काम में लिया जाने लगा । दूसरे शब्दों में मनुष्य ने पौधों और पशुओं को पालतू बना कर उन पर विजय प्राप्त कर ली । पौधे को पालतू बनाने से अर्थ कृषि से है । बोई गई भूमि का रंग, फसल पकने पर खेतों का रंग, हरे भरे विस्तृत चरागाहों में विभिन्न पशुओं के झुन्ड, प्राकृतिक भूदृश्यों में मानव निर्मित सांस्कृतिक भूदृश्यों की छटा में वृद्धि करते प्रतीत होते हैं । इन क्षेत्रों में मानव ने कृषि के लिए विस्तृत खेतों, उद्यानों, सीढ़ीनुमा खेतों आदि के रूप में भूमि का उपयोग किया है । विस्तृत खेती, गहन कृषि, बागानी खेती, फलोत्पादन, वैज्ञानिक कृषि के विभिन्न स्वरूप मनुष्य की पौधों पर विजय को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है । इसी प्रकार विश्व के विभिन्न भागों में पौष्टिक चारे के उत्पादन से विस्तृत चरागाह के रूप में पशुपालन के क्षेत्र दुग्ध, घी, मक्खन, पनीर आदि डेयरी प्रोडक्टस के लिये पशुओं को पालतू बनाकर उपयोग किया जाता है । विश्व के विभिन्न भागों में विशेषकर दुर्गम रख पहाड़ी भागों में पशुओं का उपयोग बोझा होने के लिए यातायात के साधनों के रूप में किया जाता है । अत : यह कहा जा सकता है कि मनुष्य ने पौधों के साथ साथ पशुओं पर भी विजय प्राप्त कर ली है ।

3. भूमि के विनाशात्मक कार्य (Destructive Occupation of the Land)

मनुष्य द्वारा अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ ऐसे कार्य किये जाते हैं जिनसे भूमि का विनाश होता हैं । ब्रून्स ने इस प्रकार के कार्यो में खनन और वनस्पति एवं पशु विनाश को सम्मिलित किया है । आर्थिक क्रियाओं के अन्तर्गत प्राकृतिक संसाधनों का निर्ममता से विदोहन को आर्थिक लूट (Robber Economy) या (Economic Plunder) की संज्ञा दी गई है । मनुष्य अपने अधिवास निर्माण हेतु पहाड़ी क्षेत्रों से पत्थर निकालता है ।

लकड़ी की आवश्यकता पूर्ति के लिए जंगलों को काटता है । विभिन्न खनिज पदार्थो को निकालने के लिए खानें खोदता है । विभिन्न औधोगिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वनस्पति एवं पशुओं का विनाश करता है । ये सभी क्रियाऐं भूमि के विनाशात्मक कार्यो के अन्तर्गत आती है । वनों की अंधाधुन्ध कटाई के फलस्वरूप अनेक जीव जन्तुओं की प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर पहुँच चुकी है । जिन स्थानों पर घने वन हुआ करते थे, आज वहाँ

बंजर वनस्पति का नाम पर कुछ झाड़ियाँ ही नजर आती हैं । घास के विस्तृत मैदान अत्यधिक चराई के कारण अब अनुपजाऊ बंजर भूमि में परिवर्तित हो गये है । आदिम कृषि के लिए जगंलों को जलाना, सुन्दर पंखों की तथा फर आदि की प्राप्ति के लिये पक्षियों का विनाश हाथी दांत व बहुमूल्य खालों आदि के लिए जंगली जानवरों को के अनुसार मारने की क्रियाऐं वन एवं जन्तुओं के विनाश के अन्तर्गत आती हैं । वर्तमान ' की पारिस्थितिकी असन्तुलन, मरूस्थलीकरण, ग्लोबल वार्मिग आदि की गंभीर समस्याऐं भूमि के इन विनाशात्मक कार्यो का ही दुष्परिणाम हैं ।

वर्तमान युग में मनुष्य ने प्रकृति का अविवेकपूर्ण शोषण किया है क्योंकि भौतिकवाद की इस अंधी दौड़ में मनुष्य अपने स्वार्थ एवं लालच के वशीभूत होकर प्रकृति से आवश्यकता से अधिक संसाधनों का विदोहन करने लगा है । उसे आगे आने वाली पीढ़ी की चिन्ता बिल्कुल नहीं है । अत: संरक्षण के अभाव में आगे आने वाली पीढी को मनुष्य की इन करतूतों का खामियाजा भुगतना पड़ेगा । महात्मा गांधी ने कहा है कि प्रकृति में मनुष्य की आवश्यकता पूर्ति हेतु सब कुछ उपलब्ध है किन्तु उसके लालच को च करने के लिये कुछ भी नही है । इस प्रकार उपर्युक्त विभाजन से स्पष्ट है कि ब्रून्स ने मानव का मानव भूगोल के अध्ययन का केन्द्र बिन्दु मानकर यह वर्गीकरण प्रस्तुत किया है । यह वर्गीकरण सरल नहीं कहा जा सकता क्योंकि मानव की उच्च आवश्यकताओं का इसमें कोई स्थान नहीं है जबकि मानव चेतना शील प्राणी होने के कारण हमेशा ज्ञान-विज्ञान साहित्य शिक्षा, मनोरंजन आदि के विकास के लिए प्रयत्न करता-रहता है । इस विभाजन में सांस्कृतिक एवं भौतिक वातावरण की परस्पर निर्भरता पर ध्यान रख गया है । इस विभाजन यह विशेषता है कि इसमें अनावश्यक तत्वों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है इसमें केवल भूगोल की यथार्थ सीमा तक ही अध्ययन को सीमित रखा गया है क्योंकि अन्य तत्वों का अध्ययन आवश्यकतानुसार बाद में किया जा सकता है ।

बोध प्रश्न- 1

1. ब्रून्स का यर्थाथ या धनात्मक वर्गीकरण किन तत्वों पर आधारित है?

   ....

   ....

2. ब्रून्स ने सभ्यता के विकास के आधार पर मानव भूगोल को कितने उपविभागों में विभाजित किया है ।

   ....

   ....

3. भूमि के विदोहन सम्बन्धी भूगोल का सम्बन्ध निम्नलिखित में किस से नहीं है।

   (अ) कृषि भूगोल (ब) पशुपालन भूगोल

   (स) सामाजिक भूगोल (द) औद्योगिक भूगोल

4. भूमि के विनाशकारी कार्यो के अन्तर्गत ब्रून्स द्वारा वर्णित दो उपविभागों के नाम लिखिए ।

   ....

....

5. हन्टिंगटन के अनुसार मानव की कार्य क्षमता में वृद्धि कारक और स्वास्थ्य के अनुकूल जलवायु विश्व के किस भाग में पाई जाती है?

....

....

6. हन्टिंगटन के वर्गीकरण में प्राकृतिक दशाओं में दर्शाये गये तीर किस बात की ओर संकेत करते है ?

....

....

2.4 हन्टिंगटन के अनुसार मानव भूगोल के तत्व

अमेरिकन भूगोलवेत्ता, एल्सवर्थ हन्टिगटन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'मानव भूगोल के सिद्धान्त' ' में सन् 1945 में मानव भूगोल के तत्वों की विवेचना की है । उन्होने मानव भूगोल को भौगोलिक वातावरण तथा मानवीय क्रियाओं व गुणों के परस्पर सम्बन्धों की प्रकृति एवं वितरण का अध्ययन माना है ।

हन्टिंगटन ने अपने वर्गीकरण में तीन बातों पर विशेष बल दिया है ।

1. प्राकृतिक दशाएँ 2. जीवन के स्वरूप 3. मानवीय अभिव्यंजना

प्राकृतिक दशाओं में स्थिति, भूमि की बनावट, जलाशय, मिट्टियां एवं खनिज तथा जलवायु को सम्मिलित किया गया है । जीवन के स्वरूप के अन्तर्गत पौधे, पशु व मनुष्य को सम्मिलित किया गया है । यद्‌यपि पौधों एवं पशुओं पर भी प्राकृतिक परिस्थितियों का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है तथा परोक्ष रूप में पौधे एवं पशु मानव जीवन को प्रभावित करते हैं किन्तु मनुष्य मानव भूगोल की केन्द्रीय इकाई होने के कारण इसमें मानव को सर्वाधिक महत्व दिया गया है ।

हन्टिगटन ने अपने वर्गीकरण में जीवन के तीन स्वरूपों की चर्चा की है - (1) पौधे (plants), (2) पशु (animals), (3) मनुष्य (man) ।

(अ) **पौधे :** मानव जीवन में पेड़-पौधों का विशेष महत्व होता है । ये हमारे पूरक हैं । अत: किसी भी स्थान की पारिस्थितिकी संतुलन में कम-से -कम 33 प्रतिशत पेड़-पौधे या वनस्पति होनी चाहिए । टुण्ड्रा की लवायु में वनस्पति के अभाव के कारण ही मानव जीवन कष्ट साध्य है । इसी प्रकार मरुस्थल में भी पेड़-पौधों के अभाव में जीवनयापन कठिन है । पौधों में विभित्र प्रकार के अनाज, घास आदि सम्मिलित किए जाते हैं । वनस्पति जलवायु का ज्ञान कराती है । जल के भीतर उत्पन्न पौधों का भी मानव पर प्रभाव पड़ता है । इन्हीं पर मछलियां या अन्य समुद्री जीव पनपते हैं, जिन पर मानव आश्रित है ।

(ब) **पशु :** पौधों की भांति पशुओं का भी हमारे जीवन में बहुत अधिक महत्व है । मनुष्य ने पशुओं को पालतू बनाकर उनसे खेत जोतना, यातायात के साधन के रूप में प्रयुक्त करना प्रारम्भ किया है । दूध, ऊन, मांस व' खाल प्राप्ति की दृष्टि से भी पशु मनुष्य

सदैव उपयोगी रहे हैं । पर्वतीय क्षेत्रों में तो घोड़े, खच्चर आदि एकमात्र यातायात के साधन हैं । अण्डों के लिए मुर्गी पालन, शहद व रेशम के लिए क्रमश : मधुमक्खी व रेशम के कीड़ों का पाला जाना, उनकी उपयोगिता को सिद्ध करता है । प्रकृति विजय में भी मानव को पशुओं से सहयोग मिला है ।

(स) **मनुष्य :** यह मानव भूगोल का केन्द्र बिन्दु है । प्रकृति में जितना भी विकास या उन्नति दृष्टिगोचर होती है वह मानव की बुद्धि ओर कार्यकुशलता का ही परिणाम है । मनुष्य चूंकि पशुओं से (मस्तिष्क व चेतना में) भिन्न है, अत: उसका प्रकृति परिवर्तन में महत्वपूर्ण स्थान रहा है । वह प्राकृतिक वातावरण में रहकर निरन्तर अपने जीवन को सुखी एवं सम्पन्न बनाने के लिए प्रयास करता रहता है । मनुष्य एक क्रियाशील प्राणी है, अत: डेविस ने उसे एक भौगोलिक कारक 'Man as a Geographical Factor' के रूप में स्वीकार किया है ।

मनुष्य की कार्यकुशला वंशानुगत एवं पर्यावरणीय कारणों पर निर्भर करती है । कुछ लोग जन्मजात ही आलसी और निकम्मे होते हैं, उन्हें कार्य करने में बहुत जोर पड़ता है, जबकि कुछ लोग बहुत परिश्रमी व फुर्तीले होते हैं । कुछ लोग कार्य करने में तेज होते हैं, किन्तु कार्य करने का ढंग नहीं जानते अर्थात् उनमें कार्यकुशलता का अभाव होता है । कार्यकुशलता वास्तव में स्वास्थ्य एवं कार्य के लिए अनुकूल परिस्थितियों पर भी निर्भर करती है । इनमें सांस्कृतिक तत्वों का भी हाथ होता है । ये सब बातें मिलकर उसके जातीय गुणों का निर्माण करती हे ।

मानव की उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किए गए प्रयत्नों पर वातावरण का भी हाथ रहता है । जीवन के ढंग, कार्यशैली, शिक्षा, संस्कार, साहित्य आदि के विकास हेतु मानव किस ढंग को अपनाता है यह उसके व्यक्गित समझ और चतुराई पर निर्भर करता है । उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति अनिवार्यताओं की पूर्ति के बाद ही सम्भव है । पहले प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति सरलता से हो तभी वह उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रयत्नशील हो सकेगा ।

हन्टिगटन ने मानवीय आवश्यकताओं और कार्यों को चार भागों में बांटा है : -

(1) मानव की पार्थिव आवश्यकताएँ ।

(2) इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किए गए प्रयत्न अर्थात् विभिन्न व्यवसाय ।

(3) शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास तथा सांस्कृतिक उद्दीपन ।

(4) मनुष्य की उच्च आवश्यकताएँ, जो उसके सांस्कृतिक विकास में योग देती हैं ।

मानव अभिव्यंजना के अन्तर्गत मनुष्य की प्राकृतिक आवश्यकताएं, मुख्य व्यवसाय, कार्यकुशलता एवं उच्च आवश्यकताओं पर प्राकृतिक परिस्थितियाँ किस प्रकार प्रभाव डालती हैं तथा मानव की इस प्रभाव के प्रति क्या प्रतिक्रिया होती है? इसका विवेचन किया गया है । इस वर्गीकरण को हन्टिगटन ने निम्नलिखित-चार्ट के रूप में प्रस्तुत किया है ।

निम्नलिखित चार्ट में मुख्य बात ध्यान देने योग्य है कि हन्टिगटन ने भौतिक दशाओं और मानव अभिव्यंजना के बीच जीवन के भेद को प्रदर्शित किया है । इन तीनों तत्वों को तीरों के

माध्यम से मानव भूगोल के मूलभूत जोड़ने का प्रयत्न किया है । जो सार्वभौमिकता के सिद्धान्त की पुष्टि करता है ।

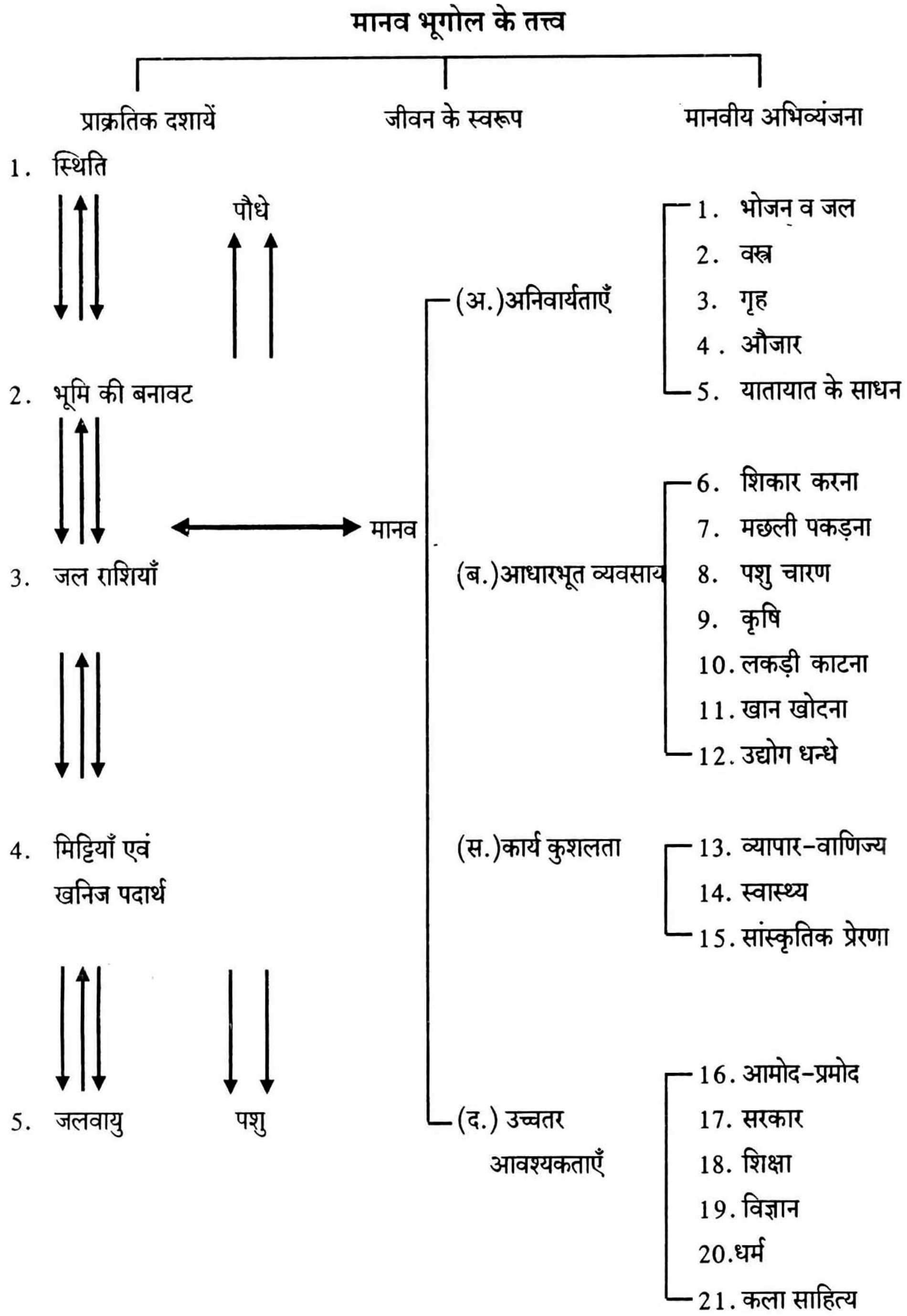

नोट : उपर्युक्त चार्ट में तीरों की दिशाएँ इस बात की ओर संकेत करती हैं कि प्राकृतिक दशाओं के विभिन्न तत्व जैसे स्थिति, भूमि की बनावट, जलराशियाँ, मिट्टी एवं खनिज पदार्थ एवं जलवायु परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते है और इनका प्रभाव मानव की विभिन्न गतिविधियों पर दिखाई देता है।

2.5 प्राकृतिक दशाएं एवं मानव अभिव्यंजना

प्रकृति एवं मानव के अन्योन्याश्रित सम्बन्धों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है, कि मानव भूगोल का क्षेत्र एवं समस्याएं विशाल एव विषमताओं से पूर्ण है और प्रकृति के क्रियाकलाप सूक्ष्म एव सार्वभौमिक है, किन्तु दोनों के आपसी सम्बन्धों की स्पष्ट व्याख्या करना एक जटिल कार्य है । फिर भी इन विषमताओं को कुछ श्रेणियों में वर्गीकृत कर उनको सरल रूप में समझा जा सकता है ।

प्राकृतिक दशाएँ

1. **स्थिति :** हन्टिंगटन का स्थिति से अभिप्राय पृथ्वी को ग्रह के रूप में स्वीकार करना है । पृथ्वी ब्रहमाण्ड के केन्द्र में स्थित है इससे दिशा और दूरी का ज्ञान होता है । पृथ्वी के गोलकार स्वरूप और उसके अपने अक्षपर झुके होने के कारण न केवल ऋतुएँ बदलती है बल्कि दिन व रात बारी-बारी से होते है तथा छोटे बड़े होते हैं । गोलाकार पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है । यह चक्कर 365 1' दिन में च होता है । भूगोल में किसी स्थान की स्थिति का बड़ा महत्व हैं । ग्रेट ब्रिटेन की विश्व मानचित्र पर केन्द्रीय स्थिति होने के कारण ही वह विश्व के विभिन्न महाद्वीपों में अपने उपनिवेश स्थापित कर पाया तथा ब्रिटेन के साम्राज्य का कभी सूर्यास्त नहीं होता जैसी कहावत चरितार्थ हो पाई । वास्तव में पृथ्वी का स्वरूप उसकी आकृति, पृथ्वी का अक्ष पर झुकाव, दैनिक एवं वार्षिक गतियाँ आदि मानव भूगोल की आधारभूत परिस्थितियाँ हैं जिनके अभाव में मानव का अस्तित्व ही नहीं रह पायेगा । पृथ्वी मनुष्य का निवास स्थान है अत : मनुष्य अपने जीवन को सुखी बनाने के लिए अपनी आवश्यकतानुसार इस पर निरन्तर पीरवर्तन करता रहता है । पृथ्वी पर जो परिवर्तन होते हैं उनका प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है । पृथ्वी ही हमें औद्योगिक विकास के लिए प्राकृतिक संसाधन, कच्चा माल, खनिज, शक्ति के साधन आदि उपलब्ध कराती है ।

   पृथ्वी स्वयं भी एक संसाधन है जो विश्व की जनसंख्या का भरण पोषण करती है । पृथ्वी मानवीय क्रियाकलापों का संग्रह -स्थल भी है । अनादिकाल से पृथ्वी पर मानव द्वारा किये गये क्रियाकलापों की अमिट छाप हमें सभ्यता ओर संस्कृति के रूप में पुरातत्ववेत्ताओं द्वारा की गई खोजों के रूप में प्राप्त होती है ।

2. **भूमि की बनावट :** भूमि की बनावट से हन्टिगटन का अभिप्राय स्थल स्वरूप से है जिसे उन्होंने तीन भागों में बाँटा है ।

   (अ) महाद्वीप व महासागर (ब) पर्वत, पठार और मैदान (स) छोटे स्थल स्वरूप

   धरातल की रचनाएँ, उस क्षेत्र की जलवायु, वनस्पति, मिट्टी खनिज एवं मनुष्य के व्यवसाय को प्रभावित करती है, अत: तटवर्ती लोगों का जीवन आंतरिक भागों के लोगों से सर्वथा भिन्न होगा ।

   समतल एव उपजाऊ क्षेत्र के लोगों का जीवन मरूस्थलीय अथवा दुर्गम पहाड़ी, दल दली आदि क्षेत्रों के निवासियों से बिल्कुल भिन्न होगा । यही कारण है कि मानव सभ्यताओं का विकास मिश्र की नीलघाटी, दजला फरात, सिन्ध, यांगटिसीक्याँग नदी घाटियों में ही सम्भव

- भूगोल के मूलभूत हो पाया । मानव निवास के लिए उपयुक्त स्थलस्वरूप मैदान है 1 मैदानों में जीविकोपार्जन के लिए खेती योग्य भूमि, सिचाई की सुविधाएं, निर्माण उद्योग एवं यातायात के साधनों की अनुसार सुलभता रहती है यही कारण है कि विश्व में सर्वाधिक अधिवास मैदानी भागों में ही पाये जाते हैं । मरूस्थलवासी पर्वत या मैदान के निवासियों से रहन -सहन, कार्य-कलाप आदि में बिल्कुल भिन्न होते हैं । दुर्गम क्षेत्रों में सड़के बनाना कष्ट साध्य है तथा व्यय भी अधिक आता है ।

3. **जल राशियों :** मानव के प्रत्येक क्रियाओं में इसके विकास एवं जीवित रहने में जल का बहुत अधिक महत्व है । जल के बिना मानव समतल मैदानी भाग में रहना पसन्द नहीं करता । प्राचीन नदी घाटी सभ्यताओं में मानव की नदी जलस्त्रोत के निकट बसने का आधार भी सम्भवत: जल प्राप्ति रहा होगा । जल की उपलब्धता से मरुस्थल को भी हरे भरे लहलहाते खेतों में बदला जा सकता है । इन्दिरा गांधी नहर के आगमन के बाद थार मरुभूमि की कायापलट होना इस बात का सार्थक उदाहरण है । नदियों द्वारा लाए गये तलछटों से उपजाऊ मैदानों का निर्माण होता है । भारत का उत्तरी मैदान गंगा व अन्य सहायक नदियों की तल छट के कारण ही इतना अधिक उपजाऊ हो पाया है । पृथ्वी के 72 प्रतिशत भाग पर जल का वितरण है जो सागर, महासागर, नदियों, झीलों के रूप में फैला है तथा इनका प्रभाव मानव और उसकी गतिविधियों पर पड़ता है । जल ही जीवन है जिस पर वनस्पति का विकास निर्भर करता है, जो मानव जीवन का आधार हैं । जलाशय मानव को सुरक्षा भी प्रदान करते है । इंगलिश चैनल के द्वारा प्राचीनकाल के अनेक युद्धों में ग्रेट ब्रिटेन की स्थिति सुरक्षित रही । नदियों द्वारा लाए गये तलछटों से जहाँ खारे जल के स्त्रोत मछली के रूप में प्रमुख मानवीय भोजन उपलब्ध कराते हैं । कृषि के अतिरिक्त औद्योगिक जगत में विभिन्न उद्योगो में जल की उपलब्धता उनकी स्थापना में सहायक होती है ।

4. **मिट्टी एवं खनिज :** मानवीय विकास क्रम में मिट्टी का सदैव ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है । मिट्टी मानव के भोजन का मूल आधार है, क्योंकि सभी खाद्यान्न एवं अन्य फसलें मिट्टी की उर्वरता पर निर्भर करती है । प्रेयरीज व स्टेपीज घास के मैदानों की उपजाऊ मिट्टियों के कारण ही गेहूँ , कपास की इतनी अधिक पैदावार सम्भव हो पाई है । किसी स्थान की सभ्यता और संस्कृति भी खनिजों से प्रभावित होती है । इग्लैण्ड की कोयले की सभ्यता और अरब देशों की तेल सभ्यता इसी बात की द्योतक है । कई बार राजनैतिक द्वेषता का कारण भी खनिजों का असमान वितरण होता है । सयुंक्त राज्य अमेरिका में विभिन्न खनिज व शक्ति के सभ साधन कोयला, पेट्रोल जल विद्युत स्तर प्राकृतिक गैस व आणविक शक्ति की प्रचुर उपलब्धि के कारण आज विश्व का आर्थिक दृष्टि से विकसित राष्ट्र बन पाया है । इसके विपरीत रेगिस्तानी क्षेत्रों की अनुपजाऊ मिट्टी के कारण कृषक दरिद्र एवं दु :खी रहते हैं । खनिज पदार्थ तो आधुनिक औद्योगिक विकास का आधार है, अत: विषम जलवायु परिस्थितियों में भी खनिज की उपलब्धता ने मानव को निवास के लिए आकर्षित किया है । आस्ट्रेलिया में पश्चिमी मरूस्थल में कालगुर्ली एवं कूल गाड़ी की खानें इस तथ्य को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त है । कोयला, लोहा, मेंगनीज, पेट्रोलियम

आदि की उपलब्धता के कारण ही संयुक्त राज्य अमेरिका एवं पश्चिमी यूरोपीय देश आज औद्योगिक प्रगति कर पाये है ।

5. **जलवायु :** प्राकृतिक वातावरण का सबसे महत्वपूर्ण तत्व जलवायु है विश्व में मानव निवास हेतु उपर्युक्त भौगोलिक परिस्थितियों में जलवायु ही निर्णायक कारक रहा है और यही कारण है कि मानसूनी जलवायु, और समशीतोष्ण जलवायु प्रदेशों में विश्व की सर्वाधिक जनसंख्या पाई जाती है और इसके विपरीत उष्ण एवं मरुस्थल अर्थात सहारा और टुण्ड्रा आर्कटिक क्षेत्र जनविहीन अथवा विरल आबादी के क्षेत्र हैं । हन्टिंगटन महोदय ने मानव सभ्यता एच संस्कृति के विकास में जलवायु तत्व को सर्वाधिक प्रधानता दी है । पश्चिमी यूरोप में उच्च जीवन स्तर, वैज्ञानिक उन्नति, औद्योगीकरण आदि को अनुकूल जलवायु की उपलब्धता का परिणाम बतलाया हैं । उन्होंने पश्चिमी यूरोप की जलवायु को आदर्श जलवायु के निकट बताया है, हन्टिंगटन के अनुसार धर्म और जातीय गुण जलवायु की उपज है । 20 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम एवं परिवर्तित वायुमण्डलीय शीतोष्ण एवं चक्रवातीय मौसमी दशाएँ उच्च मानसिक एवं शारीरिक दक्षताओं के लिए आदर्श मानी जाती है । जलवायु न केवल स्थिति पर निर्भर करती है अपितु भू-आकारों, जलराशियों, मिट्टी और खनिज आदि अन्य तत्वों को भी प्रभावित करती है ।

जलवायु का वनस्पति पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं । जैसी जलवायु वैसी वनस्पति, अत : भूमध्य रेखीय गर्म व आर्द्र जलवायु की वनस्पति भूमध्य सागरीय प्रदेशों की वनस्पति से बिलकुल भिन्न है । पशु और मानव जीवन पर भी जलवायु का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है । मनुष्य की शारीरिक क्षमता के साथ ही बौद्धिक क्षमता, चातुर्य, स्वास्थ्य आदि भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जलवायु द्वारा ही प्रभावित होते है । शीतोष्ण प्रदेश की स्वास्थ्यप्रद जलवायु ने मानव की कार्य करने की क्षमता व कुशलता में वृद्धि करके उसे उन्नति के शिखर पर पहुंचाया है, तो एशिया की मानसूनी जलवायु ने मनुष्य को आलसी एवं ईश्वर पर भरोसा करने तथा भाग्यवादिता की और प्रवृत किया है ।

मानव अभिव्यंजना : मानवीय अभिव्यंजना को हन्टिगटन ने चार भागों में विभक्त किया है ।

1. प्रारम्भिक आवश्यकता (material Needs) इन्हे अनिवार्यताएँ भी कहा जाता है । इन आवश्यकताओं में भोजन, जल, वस्त्र, ग्रह, औजार और यातायात के साधनों को सम्मिलित किया जाता है ।
2. आधारभूत व्यवसाय (Fundamental Occupation) में वे सभी साधन सम्मिलित होते है जो प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनाये जाते हैं जैसे शिकार, फल एकत्रण, मछली पकड़ना, पशुपालन, कृषि, लकड़ी काटना खान खोदना उद्योग धन्धें आदि ।
3. कार्यकुशलता (Efficiency) के अन्तर्गत स्वास्थ्य और सांस्कृतिक प्रेरणा को सम्मिलित किया गया है ।
4. उच्चतर आवश्यकताएँ (Higher Needs) के अन्तर्गत आमोद-प्रमोद, सरकार, शिक्षा, विज्ञान, धर्म, कला साहित्य दर्शन आदि को लिया जाता है मानव इन आवश्यकताओं की पूर्ति के बारे में तभी प्रयत्नशील होता है जब उसकी प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो

जाती है । भोजन प्राप्ति की चिन्ता दूर होने पर मनुष्य अपने जीवन को आरामदायक व सुखी बनाने की ओर प्रयत्नशील होता है यही से उसके विकास की कहानी प्रारम्भ होती है । मानव अपने आप को अन्य जीवधारियों से श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए शिक्षा, विज्ञान, कला, कौशल, धर्म, दर्शन, राजनीति आदि क्षेत्र में प्रगति करता है तथा भौतिक परिस्थितियों के सहयोग से सांस्कृतिक भू-दृश्य का निर्माण कर अपने बुद्धि कौशल का परिचय देता है ।

मानव अभिव्यंजना से अभिप्राय यह है की मनुष्य जब प्राकृतिक दशाओं मे रहता है तो उसे अपने जीवन यापन के अन्तर्गत कुछ मूलभूत आवश्यकताओं जिन्हें हम अनिवार्यताएं कह सकते हैं कि पूर्त्ति करनी पड़ती है । अनिवार्यताएं या प्राथमिक आवश्यकताओं (Material Needs)की पूर्ति के लिए मनुष्य विभिन्न प्रकार के व्यवसाय करता है जैसे शिकार, मछली पकडना, पशु चारण, कृषि, लकड़ी काटना, खान खोदना, उद्योग व्यापार आदि । इन सब क्रियाओं पर प्राकृतिक दशाओं का प्रभाव पड़ता है अर्थात् यदि मनुष्य आखेट करना चाहे तो उसे जंगली जानवरों की खोज में जाना पड़ेगा । मछली पकड़ने के लिए जलाशय, लकड़ी काटने के लिए घने वन, कृषि के लिए उपजाऊ मिट्टी आदि की आवश्यकता होगी अर्थात् उसके व्यवसायों का निर्धारण प्राकृतिक दशाओं द्वारा ही नियंत्रित होगा । अत : प्राकृतिक परिस्थितियों के अनुकूल मानव द्वारा अपनाए गये विभिन्न क्रियाकलापों को ही मानव अभिव्यंजना कह सकते है । यद्यपि इन क्रियाकलापों के चयन में मानव पूर्णरूप से स्वंतत्र है किन्तु प्रकृति उसे अमुक स्थान पर अमुक कार्य सुगमता पूर्वक करने का मूक संदेश प्रदान करती हैं । जिसे वह अपने विवेक से चयनित करता है । ग्रेट ब्रिटेन के निवासी जब पहली बार संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी भाग न्यू इंग्लैण्ड गये तब वहां की प्राकृतिक दशाओं के अन्तर्गत आखेट, पशुपालन, मछली पकड़ना, खान खोदना, लकड़ी काटना, कृषि, उद्योग आदि की विपुल सम्भावनाएँ थी, अत : वहाँ पर मानव ने अपने विवेक से विभिन्न व्यवसायों का चयन किया । यद्यपि यह बात सत्य है कि अनुकूल दशाओं के अनुसार व्यवसाय चयन में जहां उन्हें सुगमता रही वहीं विपरीत परिस्थितियों में उन्हें अनेक कठिनाईयों का सामनाभी करना पड़ा ।

मध्य अफ्रीका के घने जंगलों में घुमक्कड़ जाति के शिकारी पाये जाते हैं, क्योंकि वहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियों में यही व्यवसाय वातावरण के अनुकूल है । अत्यधिक दलदल, आर्द्रता के कारण, कृषि कार्य सम्भव नही हो पाता जबकि तटवर्ती क्षेत्रों में मानव में मछली पालन को ही अपने व्यवसाय का आधार बताया है । कृषि योग्य भूमि के अभाव में तटीय निवासी प्रारम्भ से ही मछली के लिये समुद्र पर आश्रित रहे हैं ।

उत्तरी पश्चिमी आस्ट्रेलिया, मेक्सिको प्रेयरीज व स्टेपीज घास के मैदानों आदि में उपयुक्त चारागाहों के कारण पशुपालन ही मुख्य व्यवसाय है । जहाँ थोड़ी भी उपजाऊ भूमि उपलब्ध है वहाँ पशुपालन के साथ कृषि कार्य भी होने लगे है । वहाँ मिश्रित कृषि का रूप देखने को मिलता है इसी प्रकार शीतोष्ण प्रदेशीय घने गालों में एक ही प्रकार की लकड़ी एक ही स्थान पर उपलब्ध होने के कारण वहां लकड़ी काटने का व्यवसाय प्रगति कर गया है । संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड आदि में लोहे और कोयले की उपलब्धता के कारण खनन एवं निर्माण उद्योगों को प्रोत्साहन मिला है ।

आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात् मानव अति व्यंजना में हंटिंगटन ने कार्यकुशलता को सम्मिलित किया है जो पैतृक गुणों से सम्बन्धित है । भील जाति के लोग तीर कमान चलाने में बहुत निपुण होते हैं क्योंकि उन्हें यह कला पूर्वजों से विरासत में प्राप्त हुई है । इसी प्रकार समुद्र तटीय लोगों की नाव चलाने की निपुणता और निर्भीकता भी पैतृक गुणों के कारण हैं । मनुष्य की कार्य कुशलता एवं बुद्धि-चातुर्य पैतृक गुणों के साथ-साथ पर्यावरण पर भी निर्भर करती है । प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तु के अनुसार यूरोप के ठन्डे प्रदेश के निवासी बहादुर तो होते है किन्तु वे चिन्तन शील या कुशल नहीं होते इसके विपरीत एशियाई लोग चिन्तन शील व कार्यकुशल होते है परन्तु के अनुसार उनमें साहस एवं उत्साह की कमी पाई जाती है ।
मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्त्ति के पश्चात् कुछ आवश्यकताएं इस प्रकार की होती हैं जिनका सम्बन्ध मनुष्य की सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक विकास से होता है अर्थात शिक्षा, धर्म, राजनीति, दर्शन आदि । इन गुणों के विकास के कारण ही मानव पशु जगत से भिन्न समझा जाता है । आज वही मानव समुदाय उन्नत एवं प्रगतिशील माना जाता है जिसने शिक्षा, विज्ञान, धर्म, कला साहित्य एवं अन्य सांस्कृतिक मूल्यों में उन्नति की है । वहां पर ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, कला आदि सांस्कृतिक मूल्यों की उन्नति सम्भव होती हैं ।
धर्म पर भी पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है । भारत में गंगा को मोक्षदायनी एवं पवित्र नदी माना जाता है । उसके जल को अमृत तुल्य कहा गया है क्योंकि वहां उत्तरी भारत के मैदानी भागों में सिंचाई सुविधाऐं उपलब्ध कर लाखों लोगों की आजीविका व भरण-पोषण का माध्यम बनती हैं । पूजा अर्चना, एवं धार्मिक विचार भी वातावरण से प्रभावित होते है । मुस्लिम धर्म का उद्भव शुष्क क्षेत्र में होने के कारण जल का सदैव अभाव रहा अत : धार्मिक कृत्यों में स्नान करना अनिवार्य नही समझा जाता केवल वजुह करना ही पर्याप्त है, जबकि हिन्दू धर्म में बिना मान किये कोई धार्मिक कृत्य करना उचित नही समझा जाता ।
कला पर भी वातावरण की छाप दिखाई देती है । शुष्क जलवायु वाले देश यूनान में भवन सामग्री में पत्थर की बहुलता पाई जाती है अत : पत्थरों से बने विशाल भवन, पत्थरों पर खुदाई व मूर्तियों के बेजोड़ नमूने यूरोपीय सभ्यता और संस्कृति का गुणगान करते है, जबकि कश्मीर में हाउस बोट और पर्वतीय भागों में लकड़ी के भवन तथा उन पर खुदाई की कला सम्पूर्ण एशिया में प्रसिद्ध है । भारतीय परिवेश की झलक लहलहाते खेत खलिहान, सिंचाई में रहट का उपयोग, यातायात के लिए बैलगाड़ियां आदि के चित्र यहाँ के कृषि दृश्यों को साकार करते है ।
अन्त में उपर्युक्त तथ्यों से यह प्रमाणित होता है कि सांस्कृतिक भू-दृश्यों का निर्माण वास्तव में वहाँ की भौतिक दशाओं को आपसी सामंजस्य और अनुकूलन के द्वारा ही सम्भव है । प्राकृतिक दशाओं का सम्मिलित प्रभाव मनुष्य के क्रियाकलापों पर पड़ता है और विश्व में सर्वत्र प्राकृतिक दशाओं के अनुरूप ही मानव अभिव्यंजना का स्वरूप दिखाई पड़ता हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. हंटिगटन द्वारा लिखित पुस्तक का क्या नाम है?

   ....

....

2. मानव अभिव्यंजना से आप क्या समझते है?

....

....

3. मानव सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में जलवायु का क्या महत्व है?

....

....

4. निम्नलिखित में से कौन सा प्राथमिक व्यवसाय नही है?

(अ) आखेट (ब) लकड़ी काटना

(स) निर्माण उद्योग (द) मछली पकड़ना

5. मिश्रित कृषि को समझाइये ।

....

....

6. मानव की उच्चतर आवश्यकताओं में किन्ही दो आवश्यकताओं के नाम लिखिए?

....

....

2.6 जीन ब्रून्स व हंटिंगटन के तत्वों की तुलना

प्रो. ब्रून्स तथा हन्टिगटन के द्वारा वर्णित मानव भूगोल के तत्वों में मूलभूत अंतर विचाराधारा का है । ब्रून्स चूंकि सम्भववादी विचारधारा के समर्थक हैं, अत : उन्होनें अपने अध्ययन में प्रकृति की तुलना में मानवीय क्रिया-कलापों को अधिक महत्व दिया है । भूमि के अनुपजाऊ कार्यों में घर और मार्गो से अपना अध्ययन प्रारम्भ करने से यह बात पूर्णत : स्पष्ट हो जाती है । घर ऐसी ईकाई है जो प्रकृति प्रदत्त न होकर मानव निर्मित है । इसी प्रकार मार्गो का निर्माण भी मानवीय क्रिया है ।

पौधों और पशुओं पर विजय तथा खनन एवं वन तथा जन्तु विनाश आदि भी मानवीय क्रियाएँ है जिनमें प्रकृति का कोई हाथ नहीं है । जबकि हन्टिगटन नियतिवादी विचारधारा के समर्थक हैं अत: उन्होनें अपने वर्गीकरण में प्राकृतिक दशाओं को सर्वाधिक महत्व दिया है । उन्होंने मानव अभिव्यंजना के अन्तर्गत सभी क्रियाओं को प्राकृतिक दशाओं (स्थिति, धरातल, भूमि की बनावट, जलराशियाँ मिट्टी, खनिज, जलवायु आदि) से नियंत्रित होना बतलाया है ।

हन्टिगटन का वर्गीकरण सरल है उन्होने सबसे पहले भौतिक दशाओं का वर्णन किया है जो मानव की सभी क्रियाओं को प्रभावित करती हैं । मानव अभिव्यंजना में यह बतलाया गया है कि इन भौतिक दशाओं का उपयोग मानव अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किस प्रकार करता है । मानव सभ्यता एवं सांस्कृति के विकास के साथ उसकी आवश्यकताओं व आंकाक्षाओं में वृद्धि होती है, जिसके कारण भरणपोषण के साधनों में वृद्धि हो जाती है और इस

प्रकार सांस्कृतिक पर्यावरण में भी पीरवर्तन आता है, किन्तु यह परिवर्तन भी भौतिक दशाओं द्वारा नियंत्रित होता है ।

ब्रून्स ने यद्यपि मानव सभ्यता के विकास तथा सांस्कृतिक तत्वों पर आधारित वर्गीकरण प्रस्तुत किया है । किन्तु हन्टिगटन की तुलना में यह थोड़ा जटिल है, इसमें मनुष्य की विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन तथ्य तक तत्त्व : ठीक से नहीं किया गया है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अत : समाज में रहकर केवल भरणपोषण के अनुसार सम्बन्धी आवश्यकताओं से ही संतुष्ट नही रहता अपितु उसकी धर्म साहित्य कला विज्ञान दर्शन आदि में भी रूचि रहती है जिसका इन वर्गीकरण में कोई स्थान नही है। यह विभाजन मानव भूगोल यथार्थ की सीमा तक सीमित है इसमें अन्य तत्वो पर कोई ध्यान नही दिया गया है।

बोध प्रश्न -3

1. हन्टिगटन ने जीवन के भेद के अन्तर्गत किन तत्वों को सम्मिलित किया है?
   ....
   ....
2. पार्थिव आवश्यकताएँ या अनिवार्यताएं कौनसी है?
   ....
   ....
3. भूमध्य सागरीय क्षेत्रों में किस प्रकार की भवन निर्माण सामग्री की प्रधानता है।
   ....
   ....
4. Man lives on earth , He depends on earth
   यह कथन निम्न में से किस विद्वान का है?
   (अ) हन्टिगटन (ब) ब्रून्स
   (स) ब्लाश (द) रेटजल
5. पारिस्थितिकी असन्तुलन निम्न में से कौनसी क्रियाओं का परिणाम है?
   (अ) भूमि के विनाशात्मक कार्य (ब) पौधों और पशुओं पर विजय
   (स) घर और राजमार्ग (द) मानव की सामाजिक क्रियाएँ
6. मानव भूगोल में मनुष्य को सुखी रहने के लिए प्रकृति के साथ करना चाहिए ।
   (अ) अनूकूलन (ब) रूपान्तरण
   (स) प्रतिरोध (द) सामंजस्य

2.7 सारांश (Summary)

मानव भूगोल के तत्वों के वर्गीकरण से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न विद्वानों ने इन तथ्यों का विभाजन अलग अलग ढंग से प्रस्तुत किया है । वस्तुत : मानव भूगोल के दो पहलू हैं पहला प्रकृति एवं हरा मानव । मनुष्य चूंकि पृथ्वी पर रहता है अत: उसकी सभी क्रियाओं पर प्राकृतिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है तथा वह उनकी अवहेलना नहीं कर सकता है । ब्रून्स

ने कहा कि - Man Lives on earth, He depends on earth यद्यपि यह कथन भी सत्य है कि प्रकृति मनुष्य के लिए कुछ सीमाओं का निर्धारण करती है किन्तु उन सीमाओं के उपयोग के लिए मनुष्य स्वतंत्र है । उपर्युक्त वर्गीकरणों में दोनों ही विचारधाराओं की झलक मिलती है । हन्टिगटन का वर्गीकरण नियतिवाद विचार धारा के निकट है जबकि ब्रून्स का वर्गीकरण सम्भववादी के निकट है । वस्तुस्थिति यह है कि दोनों ही विचाराधाराओ मे सामंजस्य होना चाहिए । तभी मानव भूगोल के तत्वों की सार्थकता है।

2.8 शब्दावली (Glossary)

- **अनिवार्यताएँ (Necessities) :** पार्थिव आवश्यकताऐ जैसे भोजन, वस्त्र, आवास
- **भूमि विदोहन (Land Exploitation) :** भूमि से खनिज निकालना
- **विपणन (Marketing) :** वस्तुओं का क्रय विक्रय
- **सांस्कृतिक तथ्य (Cultural Facts) :** मानव निर्मित तथ्य
- **बागानी कृषि (Plantation Agricultural)** : बागानी कृषि में उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में किसी एक उत्पादन मुद्रा प्राप्ति हेतु किया जाता है ।
- **आर्थिक लूट (Economic Plunder) :** प्राकृतिक सांसाधनों की अंधाधुन्ध विदोहन ।
- **नियतिवाद (Determinism) :** वह मत जो प्रकृति की शक्तियों में विश्वास करता है ।
- **सम्भववाद (Possibilsm) :** वह मत जो मानव के क्रिया कलापों पर बल देता है ।
- **मानव अभिव्यंजना (Human Response) :** मानव की प्राकृतिक दशाओं के प्रति प्रतिक्रिया ।
- **जैव जगत (Biological World) :** जिसमें समस्त वनस्पति पशु व मानव निवास करते है ।
- **इको तंत्र (Eco-system) :** पर्यावरण में जैविक समुदाय की प्रतिक्रिया का तंत्र ।
- **पारिस्थितिकी (Ecology) :** जीव विज्ञान की एक शाखा जिसमें जीवों का अध्ययन उनके परिवेश के सम्बनधों से किया जाता है ।
- **सामंजस्य (Adjustment) :** नई परिस्थितियों में अपने आप का ढालना ।

2.9 संदर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. एस डी. कौशिक : मानव भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 1999
2. सी बी. मामोरिया : मानव भूगोल, साहित्य भवन आगरा, 1985
3. बलवीरसिंह नेगी : मानव एवं आर्थिक भूगोल, केदारनाथ रामनाथ, मेरठ, 1978
4. श्रीनाथ मेहरोत्रा ; डॉ.जे.पी सक्सेना. मानव भूगोल, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, 1973
5. विश्वनाथ तिवाड़ी; रामशिरोमणी पाण्डेय : आर्थिक एवं मानव भूगोल, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कं. आगरा 1979
6. वी एस चौहान : मानव एवं आर्थिक भूगोल, एस. चन्द एण्ड क. लि., नई दिल्ली

7. Majid Husain :Human Geography , Rawat publications , Jaipur 2004

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. सांस्कृतिक तथ्यों के आधार पर
2. चार भागों में

(1) अनिवार्य आवश्यकताओं का भूगोल

(2) भूमि विदोहन सम्बन्धी भूगोल

(3) सामाजिक भूगोल

(4) राजनैतिक व ऐतिहासिक भूगोल

3. (स)
4. खनिज विदोहन, वनस्पति एव पशु विनाश
5. पश्चिमी यूरोप में
6. एक तत्व की दूसरे से सम्बद्धता

बोध प्रश्न - 2

1. मानव भूगोल के सिद्धान्त
2. भौतिक दशाओं पर मानव द्वारा की गई प्रतिक्रियाँ
3. धर्म और जातीय गुण जलवायु की उपज है।
4. (स)
5. मिश्रित कृषि में फसलों के उत्पादन के साथ पशुपालन भी किया जाता है ।'
6. धर्म, कला, साहित्य

बोध प्रश्न - 3

1. वनस्पति, जन्तु, मानव
2. भोजन, वस्त्र, आश्रय
3. पत्थर
4. (ब)
5. (अ)
6. (द)

2.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. ब्रून्स के अनुसार मानव भूगोल के तत्वों का वर्णन कीजिए ।
2. ब्रून्स के यथार्थ विभाजन अथवा सांस्कृतिक तथ्यों पर आधारित तत्वों की विवेचना कीजिये।
3. हन्टिगटन के द्वारा वर्गीकृत मानव भूगोल के मूल तत्वों का विश्लेषण कीजिए ।
4. ब्रून्स रख हन्टिगटन द्वारा वर्णित मानव भूगोल के मूल तत्वों की परस्पर तुलना कीजिए ।

इकाई 3 - मानव भूगोल के सिद्धान्त (Principles of Human Geography)

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 क्रियाशीलता का सिद्धान्त

3.2.1 भौतिक शक्तियाँ

3.2.2 सांस्कृतिक शक्तियों

3.3 पार्थिव एकता का सिद्धान्त

3.3.1 विभिन्ता में एकता

3.3.2 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में रेटजल के विचार

3.3.3 पार्थिव एकता के सम्बनध में सेम्पुल के विचार

3.3.4 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में हम्बोल्ट के विचार

3.3.5 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में ब्लाश के विचार

3.3.6 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में ब्रून्स के विचार

3.3.7 हन्टिगटन के विचार

3.4 वातावरण समायोजन सिद्धान्त

3.5 मानव भूगोल के सिद्धान्तों का महत्व

3.6 सारांश

3.7 शब्दावली

3.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप समझ सकेगें -

- मानव भूगोल की प्रकृति
- क्रियाशीलता के अन्तर्गत बाध्य एवं आंतरीक शक्तियाँ
- पृथ्वी और मानव की क्रियाशीलता
- प्राकृतिक एवं मानवीय तत्वों कीं सम्बद्धता
- वातावरण अनुकूलन व रूपान्तरण की प्रक्रिया

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव भूगोल के अध्ययन के दो पहलू हैं । पहला प्रकृति एवं दूसरा मानव । मनुष्य चूंकि पृथ्वी पर निवास करता है अत: अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए कृषि भूमि को जोतता है, मकान बनाने के लिए चट्टानें तोड़कर पत्थर प्राप्त करता है, लकड़ी की पूर्त्ति के लिए वृक्षों को काटता है अर्थात् पृथ्वी के भौतिक स्वरूप को निरन्तर परिवर्तित करता रहता है, दूसरी ओर प्रकृति भी उसके क्रियाकलापों को कहीं नियंत्रित करती है, कहीं सहयोग तो कहीं बाधाएँ भी उत्पन्न करती है, अर्थात् प्रकृति एवं मानव एक दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं । मानव एवं प्रकृति के अन्र्तसम्बन्धों की व्याख्या ही मानव भूगोल है ।

मानव भूगोल का उद्देश्य भौतिक परिस्थितियों तथा मनुष्य के कार्यकलापों के मध्य अन्तर्सम्बन्ध का अध्ययन करना है । भौतिक परिस्थितियों के अन्तर्गत हम प्राकृतिक वातावरण अर्थात् स्थिति, धरातल, मिट्टियों खनिज, जल राशियाँ एवं जलवायु आदि तत्वों को सम्मिलित करते हैं जबकि मानवीय क्रियाकलापों में मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक कार्यों को लिया जाता है जिनके द्वारा वह पर्यावरण में रहकर अपने जीवन को सुखी बनाने के लिए अनुकूलन (Adaption), अथवा रूपान्तरण (Modification) करता है । दूसरी ओर मानव स्वयं भी वातावरण की शक्तियों से प्रभावित होता है और एक विशिष्ट सांस्कृतिक वातावरण की रचना करता है । इस प्रकार मानव भूगोल का लक्ष्य प्राकृतिक रख सांस्कृतिक वातावरण से प्रभावित होता है और एक विशिष्ट सांस्कृतिक वातावरण की रचना होती है । इस प्रकार हम देखतेहैं कि मानव भूगोल का लक्ष्य प्राकृतिक रम्य सांस्कृतिक वातावरण के मध्य प्रक्रियाओं का विवेचनात्मक अध्ययन करना है जिसे कुछ भूगोलवेत्ता कार्यात्मक सम्बन्ध (Functional Relationship) की संज्ञा देते हैं ।

सामान्य भूगोल के दो मूल सिद्धान्त हैं -पहला क्रियाशीलता का सिद्धान्त (Principle of Activity) तथा दूसरा सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त (Principle of terrestrial unity) ।

मनुष्य एव प्राकृतिक पर्यावरण की अन्तर्सम्बन्धता को देखते हुए मानव भूगोल में एक और सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है जिसे वातावरण समायोजन सिद्धान्त (Principle of Adjustment with Environment) का नाम दिया गया है ।

उत्तम तीनों सिद्धान्तों - क्रियाशीलता, सार्वभौमिक एकता एवं समायोजन -को अलग अलग रूप में न देखकर सम्मिलित रूप में देखा और समझा जाना चाहिए तभी विषय की सार्थकता को समझा जा सकता है ।

3.2 क्रियाशीलता का सिद्धान्त

बहुत से विद्वान् इस सिद्धान्त को परिवर्तन या विकास का सिद्धान्त भी कहते हैं । 'परिवर्तन प्रकृति का नियम है । ' इस नियम के अनुसार विश्व के सभी जड़ चेतन पदार्थ चाहें वे भौतिक हों या सांस्कृतिक, परिवर्तित होते रहते हैं । उन पदार्थों की स्थिति, आकृति और अवस्था में क्रियाशीलता की क्षमता पाई जाती है । यह क्रियाशीलता उन्नति अथवा अवनति दोनों दिशाओं में सम्भव है । वास्तव में कोई भी वस्तु स्थिर अवस्था में नहीं है ।

प्रो. ब्रून्स ने परिवर्तन शीलता के सिद्धान्त को इन शब्दों में व्यक्त किया है "हमारे चारों ओर जितनी वस्तुएँ हैं वे सब परिवर्तनशील हैं । प्रत्येक वस्तु या तो बढ़ रही है या उसका हास हो रहा है । वास्तव में कुछ भी स्थाई नहीं है । चूंकि भूगोल के भौतिक और मानवीय तथ्य निरन्तर परिवर्तनशील है, अत' इसी दृष्टि से उनका अध्ययन किया जाना चाहिए ।

“Everything around us is in a state of change ; everything is either growing on diminishing nothing is realy stable ....geographical phenomena, both physical and human , are in a state of perpetual change , and must be studied from that point of view”

इस महान परिवर्तन के पीछे जो शक्तियाँ कार्य कर रही हैं ब्रून्स ने उन्हें दो श्रेणियों में विभक्त किया है ।

3.2.1 भौतिक शक्तियाँ

इन शक्तियों में बाह्य एवं आन्तरिक शक्तियाँ, सौर्यशक्ति, पृथ्वी की गतियाँ, गुरूत्वाकर्षण शक्ति एवं जैविक शक्तियाँ सम्मिलित की गई हैं ।

3.2.2 सांस्कृतिक शक्तियों

इन शक्तियों में मानव व उसकी विभिन्न क्रियाओं को सम्मिलित किया गया है । ।

पृथ्वी पर क्रियाशीलता इस बात से स्पष्ट होती है कि पृथ्वी स्वयं अपने अक्ष पर घूमती है तथा अक्ष पर घूमते हुए सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती हैं जिसके परिणाम स्वरूप दैनिक व वार्षिक गतियों के अन्तर्गत दिन रात का होना एवं ऋतु परिवर्तन जैसी घटनाएँ होती हैं । सूर्याभिताप के कारण वायु मण्डल गर्म होता है गर्मी या ठण्डक की मात्रा में परिवर्तन होने से वायु दाब में अन्तर आता -हैं और वायु का संचार होता है जो कभी धीमी गति से चलती है तो कभी प्रचण्ड आँधी या तूफान का रूप धारण कर लेती है । प्रत्येक क्षण बढ़ती हुई वनस्पति की लम्बाई को हम नाप सकते हैं कि सप्ताह या माह में उसकी कितनी वृद्धि हुई है । ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार मनुष्य का जीवन बाल्यावस्था प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था में होकर विकास की निरन्तर होने वाली प्रक्रिया को स्पष्ट करता है । ध्यान देने योग्य बात यह है कि विकास की यह प्रक्रिया प्रकृति के चेतन पदार्थों में ही नहीं अपितु जड़ पदार्थों में भी देखने को मिलती है उदाहरण के लिए नदियाँ पर्वतीय क्षेत्रों से निकलकर अपने जल को मैदान में प्रवाहित करके समुद्र में विलीन कर देती है । नदी के इस बहते जल के साथ पर्वत से चट्टाने टूटकर तलछट के रूप मैदानी भागों में जमती रहती है अर्थात ऊँचे भू-भाग कट-कट कर नीचे हो जाते हैं और गड्डे भरकर समतल मैदान बन जाते हैं ।

एक ओर समुद्र का पानी वाष्प बनकर ऊँचे पर्वतीय भागों में हिम के रूप में ग्लेशियर बन कर जम जाता है तो दूसरी ओर ताप की अधिकता से ग्लेशियर पिघल कर पानी बन जाते हैं और पुन: समुद्र में विलीन हो जाते हैं । इस प्रकार समुद्र का तल भी ऊँचा या नीचा होता रहता है । जलवायु परिवर्तन द्वारा भी आश्चर्यजनक परिवर्तन जगह -जगह पर दिखाई पड़ते हैं । इसी प्रकार भूगर्भिक हलचलों के कारण भूकम्प, ज्वालामुखी उद्गार आदि के द्वारा भी धरातल का

स्वरूप परिवर्तित होता रहता है । विश्व के कतिपय भागों में जनसंख्या बढ़ रही है तो कहीं पर जीव जन्तुओं की संख्या में निरन्तर कमी आने से कुछ जीवों की प्रजातियाँ विलुप्त होती जा रही है । इस प्रकार के विकास और क्रियाशीलता के पीछे कुछ शक्तियाँ अवश्य कार्य करती है । इन शक्तियों का निम्नलिखित शीर्षकों में अध्ययन किया जा सकता है -

1. **पृथ्वी की विवर्तनिक शक्तियों (Tectonic Forces) :** विर्वतनिक शक्तियों को भी दो भागों में बांटा जा सकता है - पहली आंतरिक व दूसरी बाह्य । विर्वतनिक शक्तियों के द्वारा दो प्रकार के परिवर्तन होते हैं पहले वे जो बहुत धीमी गति से होते हैं और उनका प्रभाव हजारों वर्षों बाद दिखाई देता है जैसे पर्वत निर्माण या किसी भू -भाग का ऊपर उठना अथवा नीचे धंसना । दूसरे परिवर्तन अचानक होते हैं और उनका प्रभाव उसी क्षण देखा जा स कल है जैसे ज्वालामुखी या भूकम्प की घटनाएँ ।

   बाह्य शक्तियों का कार्य धरातल पर ऊँचे भागों को अपरदित कर नीचे करना है तथा उस निक्षेप को गड्डों में भरकर भूमि को समतल बनाना है । इन शक्तियों का सम्बन्ध वायुमण्डल और जलवायु से है ।
2. **सूर्यातप (Insolation) :** सूर्य सभी शक्तियों का स्रोत है । पृथ्वी तल पर होने वाली क्रियाशीलता की शक्ति सूर्यातप द्वारा प्राप्त होती है । पृथ्वी के विभिन्न भागों में सूर्यातप की मात्रा भिन्न-भिन्न होने के कारण वायुमण्डल के ताप में भिन्नता आती है जिससे वायुदाब की भिन्नता उत्पन्न होती है । वायुदाब की भिन्नता के कारण पवनों का संचालन होता है और इन्हीं क्रियाओं के परिणामस्वरूप वर्षा की भिन्नता आर्द्रता, ओस, पाला, हिमवृष्टि, चक्रवात, आँधी, तूफान आदि घटनाएँ घटित होती हैं । वर्षा की अधिकता से एक ओर नदी घाटियों में जल बाढ़ के दृश्य उपस्थित करता है जिससे भूमि का पर्याप्त अपरदन होता है तो दूसरी ओर वर्षा की कमी के कारण रेगिस्तान की उत्पत्ति होती है । सूर्यातप के द्वारा न केवल जड़ पदार्थ, अपितु चेतन पदार्थ भी प्रभावित होते हैं । सूर्यातप के प्रभाव से ही चेतन पदार्थ जीवनधारण करता है, उसमें विकास और क्रियाशीलता आती है ।
3. **पृथ्वी के ग्रहीय सम्बन्ध (Plancetary Relation).** हमारी पृथ्वी सौर मण्डलकी एक सदस्य है । पृथ्वी अपने अक्ष पर 24 घण्टे में स्व चक्कर लगाती है इसे पृथ्वी की दैनिक गति कहते हैं । पृथ्वी पर सुबह दोपहर शाम व रात्रि की घटनाएँ इसी गति का परिणाम है । पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमने के साथ-साथ सूर्य के चारों और चक्कर लगाती है इसे पृथ्वी की वार्षिक गति परिभ्रमण (Revolution) कहा जाता है ऋतु परिवर्तन की घटना इसी गति का परिणाम है । पृथ्वी पर ताप पेटियाँ, पवन पेटियाँ आदि की कल्पना ऋतु परिवर्तन के कारण ही सम्भव हो पाती हैं ।
4. **गुरुत्वाकर्षण शक्ति (Gravitational Forces) :** इस शक्ति का कार्य पृथ्वी पर सन्तुलन स्थिरता और नियंत्रण लाना है । इस शक्ति के द्वारा पृथ्वी पर विभिन्न भार के प्रदेशों में सन्तुलन स्थापित होता है जिससे विभित्र घनत्व की चट्टानों में समस्थिति (Isostray) उत्पन्न होती है । इसी शक्ति के कारण प्रत्येक जड़ व चेतन पदार्थ को पृथ्वी अपनी ओर खींचकर उसे वर्षा का रूप प्रदान करती है ऊँचाई पर उड़ने वाली मिट्टी को निचले गर्त में

जमा करती हैं । गुरुत्वाकर्षण बल के कारण ही नदी का जल घाटी में नीचे की ओर प्रवाहित होता है गुरुत्वाकर्षण शक्ति पृथ्वी पर विभिन्न दाब और घनत्व के पदार्थों या प्रदेशों के बीच सन्तुलन की स्थिति उत्पन्न कर देती है जिससे सभी जगह स्थायित्व एवं सन्तुलन स्थापित हो जाता है ।

5. **जैविक शक्तियाँ (Biotic Forces) :** इस शक्ति के अन्तर्गत वनस्पति एवं जीव जन्तुओं की क्रियाओं को लिया जाता है । जैविक विखण्डन में पेड़ पौधों के द्वारा चट्टानों का क्षय होता है तथा जीव-जन्तुओं के द्वारा भी मिट्टी का क्षय होता हैं । वनस्पति की जड़ें मुलायम चट्टानों को तोड़कर दरारे पैदा कर देती है इसी प्रकार कीड़े मकोड़े या अन्य जीव जन्तु भी मिट्टी को खोदकर खोखला बनाते हैं पशु चराई के कारण धरातल का आवरण विखण्डन के लिए पृष्ठ भूमि बना देता है और इस प्रकार जीव जन्तुओं की क्रियाओं द्वारा भौतिक व रासायनिक विखण्डन आसान हो जाता है ।
6. **मानव शक्ति (Human forces) :** मनुष्य भी पृथ्वी पर निरन्तर परिवर्तन उपस्थित करता रहता है अपने निवास व मार्ग के लिए चट्टाने तोड़कर पत्थर प्राप्त करता है वनों को काटकर खेती के लिए भूमि तैयार करता है कहीं नहरे, बांध, सुरंगे आदि बनाता है, लकड़ी की आवश्यकता पूर्ति के लिए वनों का विनाश करता है । समुद्र से मछलियाँ पकड़ कर उनकी संख्या में कमी करता है । सांस्कृतिक भूदृश्य के अन्तर्गत खेत-खलिहान, औद्योगिक संस्थान, अट्टालिकाएँ रेल्वे स्टेशन, बस एवं हवाई अड्डे, लम्बी चौड़ी सड़कें पुल आदि मानव शक्ति का गुणगान करने के पर्याप्त उदाहरण हैं ।

उपर्युक्त सभी शक्तियों द्वारा जो परिर्वतन पृथ्वीतल पर दिखाई देते हैं उनमें बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था व वृद्धावस्था के क्रम के अनुसार विकास होता है और अन्त में नष्ट हो जाता है ।

पृथ्वी तल पर केवल भूमि की बनावट में ही परिवर्तन होते हो ऐसा नहीं है वरन् जलवायु में भी समय समय पर परिवर्तन होते रहे हैं । प्लायोसीन आर मायोसीन युगों में मध्य एशिया की जलवायु आर्द्र थी किन्तु आज शुष्क है ।

यूरोप और अमेरिका की भूमि पर हिम युग में आए परिवर्तन भी इसी बात को ओर संकेत करते हैं । वर्तमान समय में उपजाऊ क्षेत्र भी मरुस्थलीकरण (Desertification) की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप सूखे की चपेट में आने लगे है । पृथ्वी का ताप, जलवायु परिवर्तन के कारण निरन्तर बढ़ता जा रहा है । इसी प्रकार भारतीय मरुस्थल के स्थान पर बहने वाली सरस्वती नदी के कारण पूरा प्रदेश हरा भरा था । इस प्रकार हम देखते है कि पृथ्वी पर प्रत्येक वस्तु पीरवर्तनशीलन है । धरातल पर विकास एवं विनाश की क्रियाएँ निरन्तर होती रहती है । मान जीवन की जमी बातें कभी स्थिर नहीं रहती चूंकि वह विवेकशील प्राणी है अत ' प्राकृतिक शक्तियों का बुद्धिमता पूर्ण प्रयोग करके नित्य प्रति परिवर्तन उपस्तित करता रहता है । दूसरी और पृथ्वी स्वयं भी स्थिर न होकर गतिशील है अतः प्राकृतिक शक्तियों का बुद्धिमता पूर्ण प्रयोग करके नित्य प्रति परिवर्तन उपस्थित करता रहता है । दूसरी और पृथ्वी स्वय भी स्थिर न होकर गतिशील है अतः प्राकृतिक परिस्थितियों एवं मानव के पोरस्पीरक सम्बन्धों में भी निरन्तर परिवर्तन आता रहता है जो स्वाभाविक ही है ।

बोध प्रश्न- 1

1. पृथ्वी के आंतरिक बल के कारण पृथ्वी पर कौनसी घटनाएँ घटित होती हैं?
   ....
   ....
2. जड़ और चेतन पदार्थों में विकास की क्रमिक अवस्थाएँ बताइये ।
   ....
   ....
3. विखण्डन किसे कहते है? ये कितने प्रकार से होता है?
   ....
   ....
4. ऋतु परिवर्तन की घटना का सम्बन्ध पृथ्वी की किस गति से है?
   ....
   ....
5. सांस्कृतिक भू-दृश्य किसे कहते है? यह किस शक्ति का परिणाम है?
   ....
   ....

3.3 पार्थिव एकता का सिद्धान्त (Principle of Terrestrial Unity)

पार्थिव एकता का दूसरा नाम अन्र्त सम्बद्धता (Inter connection) है । इस सिद्धान्त का प्रतिपादन सर्वप्रथम जर्मन विद्‌वान फ्रेडरिक रेटजल की आधार शिला माना था । 19वीं शताब्दी के अंतिम व 20वी शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में ब्लाश महोदय ने इस सिद्धान्त को सुव्यवस्थित विधि से प्रस्तुत किया । उन्होंने कहा ' 'मानव भूगोल के तथ्य पार्थिव भूगोल से सम्बन्धित है जिनकी विवेचना या व्याख्या केवल उन्हीं की सहायता से की जा सकती है । प्रत्येक स्थान पर ये परिवेश से सम्बन्धित है, जो स्वयं कई भौतिक दशाओं' के संयोग का परिणाम है ।

“The phenomena of human geography are related to terrestrial unity by means of which alone can they by explained. They are everywhere related to the environment”

Vidal de la Blache

अपने सिद्धान्त को अधिक स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं कि वनस्पति का सामान्य रूप ही किसी प्रदेश का सर्व प्रधान लक्षण है । उसका नहीं होना ही एक बड़ी विचित्रता है । ऐसी वनस्पति से अपने आकार, रंग, परिमाण और संयोग विधि से उस भूखण्ड का सामान्य व्यक्तित्व प्रकट होता है । स्टेपीज, सवाना, भूमध्य रेखीय सेल्वा आदि नाम सामूहिक एकता के सरूचक हैं जो वनस्पति जगत के अन्तर्गत आते हैं ।

इस सिद्धान्त के अनुसार संसार के सभी जड़ चेतन तथ्य एक दूसरे से सम्बन्धित हैं । ब्लाश ने इसी बात से प्रेरित होकर कहा था "भौगोलिक विकास के अन्दर मुख्य भावना पार्थिव एकता हैं । सम्पूर्ण पृथ्वी एक है और उसके विभिन्न भाग एक दूसरे से बंधे हुए हैं ।"

यह भावना टालमी के कथन "भूगोल एक ऐसा विज्ञान है जो आकाश में पृथ्वी का प्रतिबिम्ब खोजता है " से प्रेरित है । बाद में जलवायु सम्बन्धी विज्ञान ने ब्रह्माण्ड के घूर्णन का ज्ञान प्राप्त कर विचार का समर्थन किया ।

3.3.1 विभिन्नता में एकता

मोटे तौर पर एकप्रदेश की वनस्पति में समरूपता होते हुए भी वृक्षों में गहरा अंतर मिलता है, फिर भी वहाँ जीवों और मानव क्रियाओं में समानता मिलती है । इस सिद्धान्त के विकसित रूप को परिस्थितिकी विज्ञान (Ecology) कहते हैं । पशु और मानव अपनी गतिशीलता एवं मानसिक विकास के कारण अपने आपको पौधों की अपेक्षा अधिक सामंजस्य स्थापित करते हैं । वातावरण विभिन्न जातियों के प्राणियों में परस्पर जीवनदायी अन्त : सम्बन्ध बनाये रखता है । यह विचार या चिन्तन एक नियम जैसा है।

जब हम किसी प्राकृतिक प्रदेश का अध्ययन करते हैं तो वहाँ सामान्य तथा एकसी जलवायु, एक सी वनस्पति, एक सी मिट्टियाँ और मानव क्रियाओं में प्राय: समानता पाई जाती हैं जो इस बात की पुष्टि करती है कि प्राकृतिक तथ्य तो आपस में जुड़े हुए हैं ही साथ ही मानवीय तथ्यों से भी इनका घनिष्ट सम्बन्ध होता है । उदाहरण के लिए वनस्पति का उद्भव वहाँ की भूमि, जलवायु और मिट्टी पर निर्भर करती है जबकि मिट्टी और जलवायु के साथ-साथ वनस्पति का भी योगदान होता है । इसीलिए मिट्टियों का वर्गीकरण प्राय: वनस्पति के आधार पर किया जाता है जैसे मरूस्थलीय मिट्टियाँ, वनों की मिट्टियाँ, घास के मैदानों की मिट्टियों, दलदली मिट्टियाँ आदि । वनस्पति मिट्टियों को ही नहीं वरन् जलवायु को भी प्रभावित करती हैं । ब्लाडीमीर कोपेन और थार्नवेट जैसे जलवायु वेत्ताओं के जलवायु वर्गीकरण के आधार में वनस्पति को ही आधार बनाया गया है । जैसे सवाना तुल्य जलवायु, टेगो तुल्य जलवायु, स्टेपीज तुल्य जलवायु आदि । यह तथ्य प्राकृतिक तथ्यों की एकता या सम्बद्धता को स्पष्ट करता हैं । दूसरी और मानव जीवन पर भी जलवायु के साथ मिट्टी और वनस्पति का भी प्रभाव पड़ता है । इसीलिए कहा गया है कि मनुष्य मिट्टी का पुतला है जैसी मिट्टी वैसा मनुष्य या जैसा खाओगे अन्न वैसा बनेगा मन जैसी कहावतें प्रकृति और मानव के अन्योन्याश्रित सम्बन्धों और सम्बद्धता की और संकेत -करती हैं । भारतीय दर्शन में भी इस बात की पुष्टि होती है हमारा शरीर क्षितिज, जल, पावक, गगन, समीरा पंच तत्वों से मिलकर बना है और मृत्युपरान्त ये सभी तत्व पुन: अपने में विलिन हो जाते हैं ।

प्रकृति में वनस्पति और जन्तु जगत में परिस्थिति अनुकूलन होता है । वातावरण के साथ सामंजस्य बिठाने के लिए वृक्ष अपनी ऊँचाई को कम ज्यादा कर लेते हैं पत्तियों के आकार और रंगरूप में परिवर्तन कर लेते हैं । रेगिस्तान मै पाई जाने वाली वनस्पति में सूखा सहन करने की अद्भुत क्षमता पाई जाती है ।उनकी छाल मोटी होती है तथा पौधों पर कांटे पाये जाते हैं ऐसी

शुष्क वनस्पति को सूखा सहन करने वाली (Xerophytic Plants) की संज्ञा दी जाती है, वनस्पति की भांति जन्तुओं में भी यह अनुकूलन स्पष्ट दिखाई देता है इसीलिए ऊँट कई दिनों तक बिना पानी पिये जीवित रह सकता है । वनस्पति की अपेक्षा पशु अधिक अनुकूलन कर लेते हैं क्योंकि वनस्पति अचल है किन्तु पशु कहीं भी विचरण कर सकते हैं । मनुष्य इन सब में श्रेष्ठ हैं क्योंकि वह अपनी बुद्धि कौशल और चातुर्य से प्रकृति के साथ अनुकूलन करता है । अत: वातावरण का अध्ययन करते समय वनस्पति जन्तु एवं मानव का मिला जुला रूप ही प्रस्तुत किया जाना चाहिए । इस प्रकार हम देखते हैं कि वनस्पति भूगोल ने वनस्पति और पर्यावरण के बीच घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित किया है जो पार्थिव एकता को व्यक्त करता है ।

इसी प्रकार का सम्बन्ध पशु जगत में भी देखने को मिलता है । पशु भी वनस्पति की तरह प्राकृतिक पर्यावरण से प्रभावित होते हैं और पर्यावरण को प्रभावित भी करते हैं । हिंसक पशुओं की प्रवृत्ति क्रूर शक्तियुक्त और तीष्ण दृष्टि वाली होती है जबकि अहिंसक पशु नम्र, तीव्र दौड़ने वाले और सामूहिक जीवन व्यतीत करने वाले होते हैं । भूमध्य रेखीय वनों में हाथी, बन्दर आदि ऐसे पशु मिलते हैं जो वृक्षों पर उछलकूद कर सकते हैं लम्बी घास के मैदानों में हिरण, बारहसिंगा, गीदड़, लोमड़ी आदि जन्तु मिलते हैं । मरूस्थलों में ऊँट टुण्ड्रा में रेण्डियर समूददार पशु, भालू छोटी घास के मैदानों में गाय, भैंस, घोड़े, भेड़-बकरियाँ आदि मिलते हैं ।

वातावरण के साथ-साथ मानव की सांस्कृतिक प्रगति का भी प्रभाव वहाँ की वनस्पति पर मानव जीवन पर दिखाई देता है । कृषि प्रधान क्षेत्रों में पशु अनाज पर आश्रित होने लगते हैं इसी प्रकार पेड़, पौधों के विकास में पशु-पक्षियों का योगदान रहता है, वे बीज एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं । मानव संस्कृति का प्रभाव इस रूप में भी देखा जा सकता है कि मनुष्य ने कुछ पौधों को अपनाया कुछ को बिलकुल नष्ट कर दिया । इसी प्रकार कई जन्तुओं की प्रजाति का अत्यधिक शिकार मानव संस्कृति पर दिखाई देता है । प्राचीन अवशेषों से किसी स्थान विशेष की जलवायु वनस्पति और पशु जगत का ज्ञान भलि-भांति हो जाता है । जिन स्थानों पर मानव को प्राकृतिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है वहाँ के लोग कठोर प्रकृति के हो जाते हैं । सार्वभौमिक एकता जीवों के परस्पर अन्तर निर्भरता से भी सिद्ध होती है उदाहरण के लिए थलचर और जलचर जीव भिन्न प्रकृति के होते हुए भी एक दूसरे से सम्बद्ध है । जीवों का विकास जल से ही हुआ है बाद में ये तट और स्थल पर रहने लग गये । हेल और सील मछलियाँ वास्तव में थलचर हैं । जलचर जीव भी प्रत्यक्ष रूप से भोजन के लिए थलीय पदार्थों पर आश्रित रहते हैं । अब हम सांस्कृतिक भू-दृश्यों में की झलक देखने का प्रयत्न करेंगे इनके लिए हम निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं ।

पहला उदाहरण प्राचीन नदी घाटी सम्यताओं से लिया जा सकता है जहाँ उपजाऊ मिट्टी और कृषि के लिए पानी की उपलब्धता ने मानव को नदी घाटियों में बसने के लिए विवश कर दिया इस अर्थ में मिट्टी, जल और मानव की एकता स्थापित हो जाती है । वर्तमान युग में मनुष्य ने कृषि अर्थव्यवस्था से औद्योगिकरण और व्यापारीकरण की ओर विकास किया है अत : अब बे नगर वहां बसे है जहाँ जल खनिज पदार्थ कृषि व परिवहन की सुविधाएँ उपलब्ध हैं, असमान भूभाग जैसे पर्वत पठार ढालू भूमि सदैव से ही मानव अधिवास के लिए उपयुक्त नहीं समझी गई । वर्तमान समय में उद्योगों से खनिजों का महत्व बढ़ जाने के कारण विश्व के बड़े

औद्योगिक नगर पिट्सबर्ग, यंग्सटाउन, मेग्नीटोगोरस्क, जमशेदपुर, भिलाई, दुर्गापुर, राउरकेला आदि नगर खनिज प्राप्ति स्थनों के निकट बसे हुए हैं ।

दूसरा उदाहरण परिवहन के साधनों का है बड़े सागर जो पहले यातायात में बाधक थे आज विश्व के प्रमुख जलमार्ग केन्द्र बन गये हैं इन सागरों के किनारे बन्दरगाह विकास के कारण व्यापार बहुत सुगम हो गया है । जिस प्रदेश में जिस व्यवसाय की सुविधाएं होती है वही वह व्यवसाय विकसित हो जाता है । इसलिए एक ही प्रदेश में विभिन्न व्यवसाय जैसे पशुपालन, कृषि, उद्योग धन्धे आदि एक साथ विकसित हो जाते हैं ।

इन साधनों से दूरदराज के देशों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित हो गये हैं । यद्यपि यातायात के विभिन्न साधन रेल, सड़क, वायुयान, जलयान आदि प्राकृतिक परिस्थितियों से प्रभावित हैं, किन्तु आज ये सभी साधन मानव विकास के पर्याय बन चुके हैं और पार्थिव एकता को सिद्ध करते हैं । वातावरण का अध्ययन करते समय इनका मिला जुला अध्ययन करना आवश्यक है । सभी प्रकार की भौगोलिक उन्नति में मुख्य विचार पार्थिव एकता है । समस्त पृथ्वी एक ईकाई है जहाँ दृश्य एक निश्चित क्रम से होते हैं । इनमें स्थानीय भिन्नता होते हुए भी एकता है अत : इनको समझने के लिए पार्थिव एकता में विश्वास होना आवश्यक है ।

3.3.2 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में रेटजल के विचार

भूगोलजगत के पार्थिव एकता की विचारधारा को प्रस्तुत करन वाले भूगोलवेताओं में सर्वप्रथम जर्मन विद्वान फ्रेडरिक रेटजेल का नाम आता है । उन्होंने सम्पूर्ण विश्व को उसके वैयक्तिक अवयवो के रूप में नही देखा बल्कि विभिन्न अवयवों को सम्मिलित अथवा समष्टि रूप में देखने का प्रयास किया । उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'एन्थ्रोपोज्याग्राफी ' में बताया कि पृथ्वी पर मानव का विभाजन प्राकृतिक शक्तियों द्वारा प्रभावित या नियंत्रित है । उन्होंने पृथ्वी पर मानव का विभाजन प्राकृतिक शक्तियों द्वारा प्रभावित या नियंत्रित है । उन्होंने पृथ्वी को सर्म्पूण रूप से माना और उसमें एकता का अनुभव किया है । उनके अनुसार "मानव का सम्पूर्ण जीवन, उसकी विभिन्न क्रियाए मानव समुदाय एव मानव समाज सभी का अध्ययन सुव्यवस्थित एव बुद्धिमतापूर्ण ढग से किया जाता है । इस अध्ययन में पृथ्वी के विभिन्न तथ्यों के आपसी सम्बन्धों पर बल दिया जाता हैं जिससे भौगोलिक एकता समायी हुई है । "

3.3.3 पार्थिव एकता के संबंध में कुमारी सेम्पुल के विचार

"पृथ्वी की एकता और उसके अवयवों के पारस्परिक सम्बन्धों का सिद्धान्त रेटजल के उस दृष्टिकोण का फल है, जो पर्वत पर खड़े होकर देखने वाले प्राप्त होता है । " सेम्पुल ने रेटजल के विषय में लिखा है, "उन्होंने पर्वतशिखर पर खड़े मानव के दृष्टिकोण से वस्तुओं को देखा और अपनी दृष्टि को दूर क्षितिज पर लगाये रखा । इसी कारण उन्होंने पृथ्वी के किसी एक अवयव नहीं वरन् उसके विभिन्न अवयवों की सम्मिलित क्रिया पर अपनी दृष्टि रखी । फलस्वरूप उन्होंने प्रकृति के भीतर प्रवाहित एकता के दर्शन किए ।

सेम्पुल का कथन इस संदर्भ में उल्लेखनीय है : -

“Man can no longer be scientifically studied apart from the ground he tills, or the land over which he travels , or the seas over which he trades”

कुछ विद्वान पार्थिव एकता में विश्वास नहीं करते । उनकी विचारधारा जीवन संघर्ष से जुड़ी है । प्राणीविज्ञान में कहा जाता है कि बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है, अर्थात् प्रकृति में वही जिन्दा रह सकता है जो सबल होता है । "जीवों जीवस्य जीवनम् " की धारणा डार्विन की उस विचारधारा का परिणाम है जिसमें जीव अकेला या अन्य प्राणियों के साथ वातावरण के बन्धनों से मुक्त होना चाहता है । सभी जीवों में भाव, सहयोग, संगठन प्रतिस्पर्धा आदि होती है । यदि ऐसा नहीं होता तो किसी जीव का विश्व में रह पाना कठिन हो जाता । सीमित संसाधनों के उपयोग के लिए प्रतिस्पर्धा होना स्वाभाविक ही है, क्योंकि इसी के कारण सन्तुलन सम्भव है ।

3.3.4 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में हम्बोल्ट के विचार

पार्थिव एकता के बारे में सर्वप्रथम हम्बोल्ट ने फ्रेडरिक रेटजेल के मत की पुष्टि की । उनके अनुसार, “There is ONE SPIRIT animating the whole of nature from pole to pole but One Life infused in to stones , Plants and animals and even in to man himself”

'सम्पूर्ण विश्व में एक ही आत्मा और एक जीव के दर्शन होते है जिसके कारण विश्व की बाहय विभिन्नता के पीछे व्यापकता तथा एकता (unity) है । उनका कथन है कि "प्रकृति एक तथा अकाट्य है, उसकी विभिन्नताएँ केवल प्रतीयमान होती है, उनमें सत्यता नहीं है ।

3.3.5 पार्थिव एकता के सक-ध में ब्लाश की विचार

19वीं शताब्दी के अंतिम एवं 20वी शताब्दी के प्रारम्भ में ब्लाश महोदय ने इस सिद्धान्त को सुव्यवस्थित ढग से किया । उनके अनुसार "मानव भूगोल के तथ्य पार्थिव एकता से सम्बन्धित है, जिनकी व्याख्या या विवेचना केवल उन्हीं की सहायता से की जा सकती है, प्रत्येक स्थान पर से पर्यावरण से सम्बन्धित हैं, जो स्वयं कई भौतिक दशाओं के संयोग का परिणाम है । "

ब्लाश ने अपनी मृत्यु से पूर्व 'विश्व का भूगोल ' (Geographical Universelle) नामक ग्रंथ लिखने की एक योजना बनाई जिसमें 23 खण्ड हैं जिसमें मारटोनी एवं डिमाजिया नामक फ्रांसिसी विद्वानों का भी सहयोग हैं । इस ग्रन्थ में भी ब्लाश ने अन्त तक विकसित समन्वयकारी चिन्तन की धारणा को बनाए रखा । यह धारणा पार्थिव एकता की ओर इंगित करती है ।

3.3.6 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में ब्रून्स के विचार

प्रो. ब्रून्स का कथन है कि भूगोल के विभित्र तथ्यों का अध्ययन अलग - अलग नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि वास्तव में इनका पृथक अस्तित्व न होकर ये एक दूसरे से जुड़े हुए हैं ।

प्रत्येक भौगोलिक तथ्य का अध्ययन उसके अन्तर्सम्बन्ध (Inter connection) को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए क्योंकि तथ्यों का एकांकी अध्ययन करने से मानव भूगोल के उद्देश्य की पूर्ति नहीं की जा सकती । ब्रून्स ने आगे कहा है ' 'विभिन्न शक्तियाँ एक दूसरे को निश्चित दिशाओं में ही प्रभावित नहीं करती, और न ही कुछ विशेष दशाओं में एक दूसरे के प्रति शक्ति अन्य शक्तियों से एवं उनके द्वारा उत्पन्न दशाओं से अनेक प्रकार की अगणित अन्तःक्रियाओं के कारण घनिष्ठ रूप से आपस में बंधी हुई है । " किसी प्रदेश की स्थिति, भौतिक स्वरूप, संरचना अथवा जलवायु किसी जातिया उसके सामाजिक सगठन के एतिहासिक विकास को समझते है । इस सम्बन्ध में ब्रून्स ने इगलैण्ड और जापान का उदाहरण इसे अन्य देशों पर भी लागू करने का प्रयत्न किया । जहाँ दों तथ्यों के बीच विभाजन तो हो सकता है किन्तु उनके बीच दीवार नहीं खींच सकते । पृथ्वी तल को स्वतंत्र एवं अलग -अलग खण्डों में विभाजित नहीं किया जा सकता । (There are no water tight compartment on the earth erust, there may be partition, but no walls)

3.3.7 पार्थिव एकता के सम्बन्ध में हन्टिगटन के विचार

अमरीकी विद्वान् हन्टिगटन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Principles of Human Geography' के प्रारम्भिक अध्ययन में ही स्पष्ट कर दिया है कि भौतिक दशाओं और मानव-अभिव्यंजना में परस्पर सम्बन्ध है । इस बात को उन्होंने चार्ट के रूप में प्रस्तुत किया है । इस चाट से निम्न तथ्य प्राप्त होते है -

1. भौतिक दशाओं के विभिन्न तथ्य जैसे पृथ्वी की ग्लोब पर स्थिति, धरातल व मिट्टी व खनिज, जलाशय व जलवायु सभी आपस में एक दूसरे से जुड़े हुए हैं । एक के बिना दूसरे का कोई अस्तित्व नहीं है, अत : उन्हें व्यक्तिगत रूप की अपेक्षा अन्य तथ्यों के साथ ही समझा जा सकता है ।
2. भौतिक वातावरण का प्रभाव मानव की गतिविधियों पर पड़ता है । यह परोक्ष रूप से पशुओं और वनस्पति दोनों को भी प्रभावित करता है । वस्तुत : ये दोनों तत्व प्रकृति पर निर्भर हैं।
3. मानव एक क्रियाशील प्राणी होने के कारण भौतिक वातावरण, पशु एवं वनस्पति जगत में परिवर्तन करता है ।
4. प्रकृति और मानव एक दूसरे के पूरक हैं । इनमें एक तरह का सन्तुलन है जो पार्थिव +एकता को स्पष्ट करता है । भारतीय समाजशास्त्री डा, राधाकमल मुखर्जी का विचार इस सन्दर्भ में अत्यन्त ग्रहणीय है ' 'मानव समुदाय प्रकृति के साथ एक स्थाई संतुलन में ही नहीं बंध है, वरन् वह इनके अपरोक्ष प्रभावों से भी बंधा है । प्राणीजगत से उसका सम्बन्ध विविधता से गुंधा है । जो पौधे मनुष्य उगाता है, जो पशु पालता है और कीड़े वहाँ मिलते हैं, वे सभी उसी प्रदेश के वासी होते हैं ।

बोध प्रश्न -2

1. पार्थिव एकता किसे कहते हैं? उदाहरण सहित समझाइये ।

....
....

2. शीतोष्ण प्रदेशों में पाई जाने वाली घास को विश्व के विभिन्न भागों में किस नाम से जाना जाता है?

....
....

3. पारिस्थिति विज्ञान किसे कहते है? इसकों किस का अध्ययन किया जाता है?

....
....

4. पृथ्वी का ताप किन कारकों से निरन्तर बढ़ता जा रहा है?

....
....

5. 'परिवर्तन प्रकृति का नियम हैं ' यह कथन मानव भूगोल के किस सिद्धान्त से सम्बन्धित है? और क्यों?

....
....

6. मानव भूगोल के प्रमुख सिद्धान्तों के नाम लिखिए ।

....
....

3.4 वातावरण समायोजन सिद्धान्त (Principle of Environmental Adjustment)

वातावरण समायोजन भूगोल विषय का एक महत्वपूर्ण पहलू है । मनुष्य जब पृथ्वी पर निवास करता है तो वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ आर्थिक क्रियाएँ करता है । जैसे आखेट, पशुपालन, कृषि उद्योग, व्यापार आदि इसी प्रकार समूह में रहकर वह सामाजिक जीवन व्यतीत करता है । अपनी वस्तुओं, औजार, आभूषण व अन्य कीमती सामान को सुरक्षित रखने के लिए अधिवास का निर्माण करता है, आवागमन के लिए यातायात के साधनों का विकास करता है । इन सभी क्रियाओं में प्रकृति कभी उसे सहयोग प्रदान करती है तो कहीं बाधाएँ भी खड़ी कर देती है मनुष्य को इन बाधाओं को दूर करने के लिए प्रकृति से समायोजन करना पड़ता है । यह समायोजन भी दो तरह से किया जाता है । पहला अपने आप को प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल ढाल लेना जिसे अनुकूलन (Adaption) कहते हैं तथा दूसरा रूपान्तरण (Modification) अर्थात् प्राकृतिक पर्यावरण को अपने अनुकूल बनाने के लिए उसका रूप परिवर्तित कर देना या प्राकृतिक तथ्यों का परिमार्जन करना । इस कार्य के लिए एक विशिष्ट

जीवन पद्धति अपनाई जाती है । अत: कुछ विद्वान इसे वातावरण समायोजन न कहकर विशिष्ट जीवन पद्धति सिद्धान्त भी कहते हैं ।

समायोजन को समझने के लिए उसके विभिन्न पहलुओं से परिचित होना आवश्यक है । अनुकूलन जो समायोजन का ही अंग है दो प्रकार का हो सकता है पहला आंतरिक व दूसरा बाह्य । इसी प्रकार आंतरिक अनुकूलन भी मनुष्य की इच्छा और अनिच्छा पर निर्भर करता है । आंतरिक अनुकूलन में कुछ परिवर्तन मनुष्य के नहीं चाहने पर भी स्वत: हो जाते हैं । उदाहरण के लिए गौर रंग के व्यक्ति का निरन्तर धूप के सम्पर्क में रहने पर आने वाली पीढ़ियों में काले रंग का होते जाना एक सामान्य बात है । इसी प्रकार रूपान्तरण की प्रक्रिया भी प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक दोनों ही वातावरणों में सम्भव हैं । रूपान्तरण वास्तव में मानव के वैज्ञानिक विकास और प्रगति का परिचायक है । यद्यपि रूपान्तरण या प्राकृतिक परिस्थितियों का परिमार्जन मनुष्य ने प्रकृति से ही सीखा है एक उदाहरण से यह तथ्य स्पष्ट हो जाएगा ।

तपते मरूस्थल में किसी वृक्ष की छाया में मानव ने जब गर्मी से राहत अनुभव की तब उसे वृक्षों या वनस्पति की आर्द्रता से ताप मुक्ति का बोध हुआ गीली घास से गुजरती हवा ने जब उसे और अधिक संतोष प्रदान किया तब उसने पंखे की हवा को शीतल करने के लिए कूलर (घास युक्त) का निर्माण किया । वर्तमान युग में मशीनीकरण के कारण वातानुकूलित कमरों में शीतलता का अहसास उसके वैज्ञानिक प्रगति का परिचायक है । इसी प्रकार सर्दी से बचने के लिए अलाव तापना, हीटर आदि का प्रयोग भी वातावरण का रूपान्तरण (Modification) ही कहा जाएगा । यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि अनुकूलन में जहाँ सर्दी से बचाव के लिए हम गर्म वस्त्रों का प्रयोग करते हैं वहाँ रूपान्तरण में हीटर के द्वारा कमरे को तापक्रम में ही वृद्धि करके शीतलता से बचाव करते हैं । अत: वैज्ञानिक उपकरण हीटर से ऊर्जा प्राप्त कर कमरे के तापक्रम में परिवर्तन करना रूपान्तरण है ।

समायोजन को निम्नलिखित चार्ट के द्वारा भलीभांति समझा जा सकता है ।

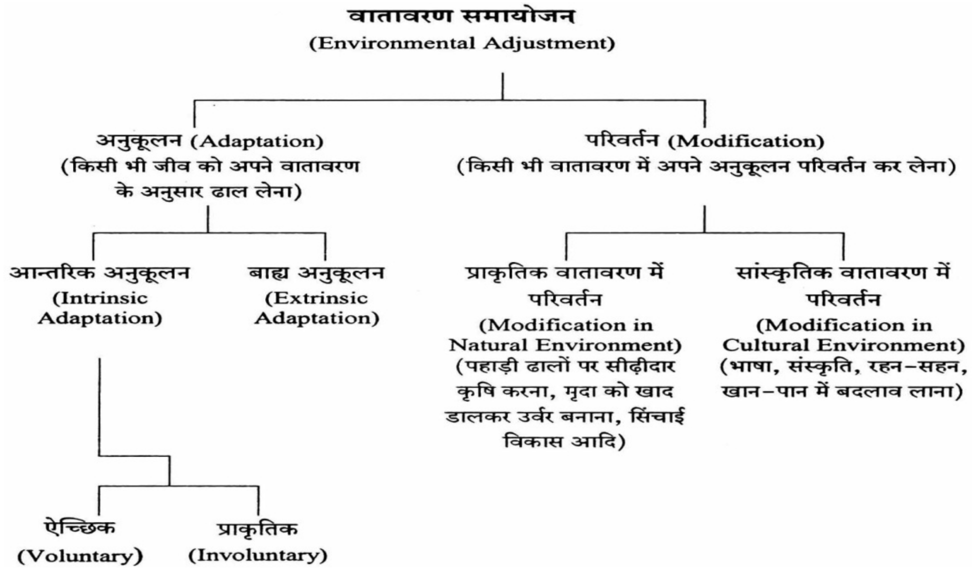

उपर्युक्त चार्ट के सन्दर्भ में अब हम एक उदाहरण लेते हैं जिससे यह स्पष्ट होगा कि एक परिवार जब अपने प्रदेश को छोड़ कर किसी भिन्न प्रकार के पर्यावरण में रहना प्रारम्भ करता है

तो उसे पर्यावरण समायोजन के लिए किस प्रकार अनुकूलन अथवा परिमार्जन करना पड़ता है । कल्पना कीजिए उत्तर भारत का एक परिवार इंग्लैण्ड जाकर बस जाता है तो उसे सर्वप्रथम अपने प्रदेश की जलवायु की तुलना में इंगलैण्ड की जलवायु ठण्डी प्रतीत होगी अत: वह सर्दी से बचाव के लिए गर्म वस्त्रों का प्रयोग करेगा । घर को गर्म करने के लिए रूप हीटर का प्रयोग करने लगेगा । शरीर को गर्म रखने के लिए कभी-कभी मदिरापान भी करना पड़ सकता है । ये सब तथ्य तो प्राकृतिक अनुकूलन से सम्बन्ध रखते हैं । सांस्कृतिक व सामाजिक तथ्यों में उस परिवार को अपने निकट पड़ौसियों से वार्तालप के लिए अपनी भाषा में अंग्रेजी भाषा के कुछ शब्दों का प्रयोग, पहनावे में धोती, कुर्ता या साड़ी के स्थान पर पेन -शर्ट अथवा स्कर्ट मिड्डी आदि को भी अपनाना पड़ सकता है । सार्वजनिक समारोह, भोज आदि में पाश्चात्य तरीकों को सम्मिलित करना पड़ेगा, जबकि भारतीय परिवेश में रहते समय उसका काम अपनी मातृभाषा हिन्दी, में राम राम या जै रामजी की अथवा नमस्कार आदि से काम चल जाता था इसी प्रकार धोती कुर्ता, साड़ी-ब्लाउज वेशभूषा उनकी सामाजिक संस्कृति के अनुकूल थी । इंगलैण्ड में काफी समय गुजारने के पश्चात् उसके सांस्कृतिक परिवेश में भी बहु त परिवर्तन आ जाएगा । धीरे-धीरे वह परिवार वहाँ के साहित्य, धर्म, दर्शन व कला आदि से प्रभावित होकर अपनी कार्य शैली में परिवर्तन लाने लगेगा । पाश्चात्य शैली में संगीत व नृत्य आदि सीखने लगेगा और इस प्रकार रहन-सहन व खान-पान में भी उसी पर्यावरण के अनुकूल अपने आपको ढालने का प्रयत्न करेगा । उसकी त्वचा का रंग जलवायु के प्रभाव के कारण गोरा होने लगेगा और यह परिवर्तन आने वाली पीढ़ी में दिखाई देगा । अब हम इन परिवर्तनों का वातावरण समायोजन के सन्दर्भ में विश्लेषण करते हैं ।

परिवार का गर्म वस्त्रों का उपयोग करना भोजन में ऐसे पदार्थों को सम्मिलित करना जिससे शरीर में ऊर्जा बनी रहे बाह्य एव आन्तरिक अनुकूलन के उदाहरण हैं । जलवायु के कारण त्वचा का गोरा होना और भावी पीढ़ी में इस गुण का हस्तान्तरण अनैच्छिक अनुकूलन है जबकि अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग, अभिवादन के का में बदलाव या पहनावे में परिवर्तन एच्छिक अनुकूलन कहा जाएगा । इसी प्रकार कमरे को गर्म रखने के लिए हीटर का प्रयोग प्राकृतिक वातावरण रूपान्तरण के अन्तर्गत समझा जाएगा । सांस्कृतिक रूपान्तरण के अन्तर्गत पाश्चात्य शैली का संगीत, नृत्य, साहित्य, धर्म, दर्शन, कला आदि के परिवर्तन को लिया जा सकता है ।

उपर्युक्त उदाहरण व्यक्तिगत समायोजन का है किन्तु भूगोल से हम मानव का समूह के रूप में अध्ययन करते हैं अत : हमें यह भी समझना होगा कि सामूहिक स्तर पर एक मानव समूह पर्यावरण से किस प्रकार समायोजन करता है । इस सन्दर्भ में हम देखते हैं कि टुण्ड्रा प्रदेश की एस्किमों जातियाँ खाल अथवा चमड़े के वस्त्र पहनती हैं कच्चे माँस का सेवन करती हैं रेणडियर का दूध व माँस खाती है सील मछली की चर्बी का प्रयोग 'इग्लू को गर्म करने में करती है रेडियर और कुत्ते स्लेज गाड़ी खींचने के काम आते हैं आदि ये लोग खेती नहीं करते क्योंकि फसलों के पकने के लिए पर्याप्त तापक्रम नहीं मिलता । अत: अपना जीवन निर्वाह आखेट पर आधारित पदार्थों से ही करते हैं । यह अनुकूलन का अनुपम उदाहरण है । घर को गर्म रखने के लिए सील मछली की चर्बी जलाना वातावरण रूपान्तरण का उदाहरण कहा जा सकता है ।

सूखे प्रदेशों में कृषि की शुष्क खेती पद्धति (Dry Farming Technique) अपनाना, सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण, खेती में रसायनिक खादों का प्रयोग, सीढीनुमा खेत बनाना आदि क्रियाएँ कृषि जगत में अनुकूल तथा हरित ग्रह (Green House) पद्धति से फसलों का उत्पादन वातावरण रूपान्तरण का उदाहरण कहा जा सकता है ।

कृषि अनुपयुक्त क्षेत्रों में मानव ने खनिज विदोहन व शक्ति के साधनों की खोज के द्वारा औद्योगिक बस्तियों का निर्माण कर मरूस्थलों में भी मानव अधिवास को सम्भव बनाया हैं । दुर्गम पहाडी क्षेत्रों में सुरंगे निकालकर यातायात की सुविधाएँ उपलबध करवाकर निर्जन क्षेत्रों में जनसंख्या को आकर्षित किया है । निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्राकृतिक विषमताओं व विपरीत भौगोलिक परिस्थितियों में भी मानव विषमताओं व विपरीत भौगोलिक परिस्थितियों में भी मानव निवास की सम्भावनाएँ खोज कर मनुष्य ने परिमार्जन का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया है । पर्यावरण अनुकूलन और परिमार्जन में मनुष्य की छाँट (Human Choice) का विशेष हाथ रहा हैं प्राकृतिक वातावरण में छाँट के साथ यह तथ्य सांस्कृतिक वातावरण पर भी समान रूप से लागु होता हैं ।

गर्मी में सूती कपड़ा पहनना प्राकृतिक अनुकूलन हैं किन्तु प्ली कपड़े का प्रयोग कुर्ता पायजामा धोती लूंगी आदि किस रूप में होगा यह सांस्कृतिक छांट का विषय है जिस पर जाति धर्म व रीति रिवाजों का गहरा असर होता है । किसी प्रदेश के सांस्कृतिक भू-दृश्य (Cultural Landscape) निर्माण मानव शक्ति का परिणाम है ।

बोध प्रश्न - 3

1. अधिवास किसे कहते हैं? मनुष्य को अधिवास की आवश्यकता क्यों होती है?

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

2. उष्णकटिबंधीय जलवायु की प्रमुख फसलों के नाम बताइये ।

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

3. सांस्कृतिक पर्यावरण का प्रभाव मनुष्य की किन गतिविधियों पड़ता है?

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

4. वातावरण अनुकूलन और वातावरण रूपान्तरण में क्या अंतर है?

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

5. वातावरण समायोजन किसे कहते हैं? मनुष्य किस प्रकार वातावरण समायोजन करता है?

   ………………………………………………………………………………………………

   ………………………………………………………………………………………………

6.	ऐच्छिक अनुकूलन और अनैछिक अनुकूलन में क्या अंतर है? उदाहरण से स्पष्ट कीजिए । …………………………………………………………………………………………………… ……………………………………………………………………………………………………

3.5 मानव भूगोल के सिद्धान्तों का महत्त्व

वातावरण के प्राकृतिक एवं मानवीय पक्ष परिवर्तनशील हैं भौगोलिक जगत में ये दोनों पक्ष आपस में जुड़े हुए है । मानव भूगोल में मनुष्य और प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों की विवेचना की जाती है । भूगोल तथ्यों के संदर्भ में देखा जाता है एक तथ्य की दूसरे पर निर्भरता उस तथ्य की समानता असमानता आदि का विश्लेषण समग्र रूप में (Synotic View) किया जाता है । भूगोल की इस प्रकृति के कारण मानव भूगोल में निम्नलिखित सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है ।

1. क्रियाशीलता का सिद्धान्त
2. पार्थिव एकता का सिद्धान्त
3. वातावरण समायोजन सिद्धान्त

मानव भूगोल में उपर्युक्त तीनों सिद्धान्तों का बड़ा महत्व हैं क्रियाशीलता के सिद्धान्त से हमें पृथ्वी पर होने वाले परिवर्तन तथा इन परिवर्तन के पीछे जिन आंतरिक व बाह्य शक्तियों का हाथ होता है का पता चलता है साथ ही क्रियाशीलता के कारण मानव एवं प्रकृति के परिवर्तित सम्बन्धों को समझने में सहायता मिलती है ।

सार्वभौमिक एकता के सिद्धान्त से यह स्पष्ट होता है कि विश्व एक इकाई है, जिसके भिन्न-भिन्न भाग परस्पर रूप से संगठित है । कुछ विद्‌वान सार्वभौमिक एकता को अन्तर्सम्बन्धीय सिद्धान्त भी नाम देते हैं इसीलिए यह सिद्धान्त हमे यह सिखाता है कि छोटी से छोटी भौगोलिक ईकाई का अध्ययन समष्टि रूप सें ही करना चाहिए ।

मानव भूगोल का तीसरा सिद्धान्त वातावरण समायोजन से सम्बन्धित है । इससे हमे प्रकृति एवं मानव के परस्पर अनुकूलन और समायोजन का ज्ञान प्राप्त होता है । विश्व के विभिन्न भागों में पाई जाने वाली प्राकृतिक परिस्थितियों के साथ मानव ने किस प्रकार समायोजन का अपने जीवन को सुखी और सरल बनाया है? यह सिद्धान्त हमें अपने जीवन को पीरस्थितियों के अनुकूल ढालने का गुण सिखाता है जो वास्तव में सफल जीवन की कुंजी या मूल मंत्र है ।

3.6 सारांश (Summary)

प्रकृत्ति एवं मानव के परस्पर निरन्तर बदलते अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या करना मानव भूगोल का मूल उद्देश्य है । मानव भूगोल की प्रकृति को समझने के लिए हमे निम्नलिखित तीन सिद्धानतो 'का अध्ययन करना होगा ।

1. क्रियाशीलता का सिद्धान्त या परिवर्तन का सिद्धान्त
2. पार्थिव एकता का सिद्धान्त या अन्तर्सम्बद्धता का सिद्धान्त
3. वातावरण समायोजन सिद्धान्त

उपर्युक्त तीनों सिद्धान्तों का पृथक रूप में न देखकर समग्र रूप में देखा जाना चाहिए, क्योंकि क्रियाशीलता व पार्थिव एकता प्राकृतिक पर्यावरण के अलग-अलग पहलू नहीं है तथा मानव स्वयं भी पर्यावरण का ही अंग है अत: उसके जीवन में समायोजन भी प्राकृतिक तथ्यों का एक अंग है ।

क्रियाशीलता के सिद्धान्त के अन्तर्गत दो प्रकार की शक्तियों को सम्मिलित किया जाता है ।

पहली भौतिक शकितयो जैसे बाह्य (जै आंतरिक शक्तियाँ, सौर्यशक्ति, पृथ्वी की गतियाँ, गुरूत्वाकर्षण शक्ति एवं जैविक शक्तियाँ आदि ।

दूसरी शक्तियों को सांस्कृतिक शक्तियाँ कहा गया है जिसमें मानव की क्रियाएँ सम्मिलित की जाती भौतिक शक्तियों एवं सांस्कृतिक शक्तियों के द्वारा भूतल का स्वरूप निरन्तर परिवर्तित होता रहता है । यही क्रियाशीलता है । पार्थिव एकता का सम्बन्ध विश्व में व्याप्त प्राकृतिक एवं मानवीय तथ्यों की परस्पर सम्बद्धता से हैं जो भूगोल की आत्मा है ।

तथ्यों को उनके स्वतंत्र अस्तित्व में न देखकर अन्य तथ्यों के परिपेक्ष में सम्बद्धता के दृष्टिकोण से देखनें की विशेषता केवल भूगोल विषय में ही देखने को मिलती है जो उसे अन्य सामाजिक एवं प्राकृतिक विज्ञान विषयों से पृथक करती है ।

ब्लाश एवं ब्रून्स दोनों ने ही पार्थिव एकता पर अधिक बल दिया है ।मानव भूगोल का तीसरा एवं बहुत महत्वपूर्ण सिद्धान्त पर्यावरण समायोजन है ।

विश्व की विभिन्न प्राकृतिक परिस्थितियों में रह कर मानव जाति ने किस प्रकार वातावरण से समायोजन स्थापित कर अपने जीवन को सरल और आरामदायक बनाया है, यह ज्ञात करना इस सिद्धान्त का मूल लक्ष्य है । वातावरण रूपान्तरण का नाम दिया है । वर्तमान युग में मानव की वैज्ञानिक प्रगति के कारण विश्व के विभिन्न विकसित प्रदेशों में वातावरण का अनुकूलन कम व रूपान्तरण ज्यादा हुआ है ।

मनुष्य ने एक भौगोलिक कारक (Man as a geographical factor) के रूप में विषम परिस्थितियों में कृषि सम्भावनाएँ, दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों में सुरगें निकाल कर यातायात की सुलभताएँ उत्पन्न करने खनिज विदोहन द्वारा औद्योगिक विकास द्वारा मरूस्थलों में भी मानव अधिवास की सम्भावनाएँ उत्पन्न की हैं यहाँ तक कि उपग्रहों द्वारा अन्य ग्रहों की खोज आदि उपलब्धियाँ उसकी गौरव गाथा को बखान करती है और प्रकृति पर विजय जैसी धारणा को जन्म देती है किन्तु मानव भूगोल का उद्देश्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करना नहीं अपितु उसके साथ सहयोग करना होना चाहिए ।

3.7 शब्दावली (Glossary)

- **समायोजन (Adjustment) :** परिस्थितियों के अनुसार सांमजस्य करना
- **अनुकूलन (Adaption) :** परिस्थितियों के अनुकूल आचरण करना
- **रूपान्तरण या परिमार्जन (Modification)** वातावरण का रूप बदलना
- **विवर्तनिक (Tectonic) :** भूहलचल से सम्बन्धित
- **सूर्यातप (Insolation) :** सूर्य की लघुरश्मियों से प्राप्त होने वाला ताप

- **मरुस्थलीकरण (Desertification) :** वह प्रक्रिया जिसमें वनस्पति विनाश से वायुमण्डल में शुष्कता में वृद्धि हो ।
- **स्टेपीज (Stepees) :** शीतोष्णप्रदेशीय छोटी घास
- **सवाना (Savana) :** उष्ण कटिबंधीय लम्बी घास
- **सेल्वा (Selva) :** भूमध्यरेखीय वनस्पति की एक प्रजाति
- **पारिस्थितिकीविज्ञान (Ecology) :** जीवों का पर्यावरण के संदर्भ में अध्ययन
- **टैगा (Taiga) :** कोणधारी वनों का प्रदेश
- **शुष्क वनस्पति (Xerophytic Vegetation)** : सूखा सहन करने वाली वनस्पति
- **शुष्क खेती (Dry Farming) :** कृषि की एक विशिष्ट पद्धति जिसमें सिंचाई की आवश्यकता नही होती ।
- **समग्र दृष्टि (Synoptic View) :** सभी वस्तुओं को एक साथ देखने का दृष्टिकोण अथवा विहंगम दृश्यावलोकन ।

3.8 संदर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. एस. डी. कौशिक. **मानव भूगोल,** रस्तौगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 1999
2. बलबीर सिंह नेगी : **मानव एवं आर्थिक भूगोल,** केदान नाथ रामनाथ मेरठ, 1978
3. एक एस जैन. **भौगोलिक चिन्तन एवं विधि तंत्र,** साहित्य भवन आगरा, 1987
4. एस. एम जैन. **मानव एवं पर्यावरण साहित्य भवन,** आगरा, 1991
5. डॉ वी एम. चौहान **मानव एवं आर्थिक भूगोल,** एस. चन्द एण्ड क. लि., नई दिल्ली
6. विश्वनाथ तिवाडी; रामशिरोमणी पाण्डेय **आर्थिक एवं मानव भूगोल का स्वरूप,** शिवलाल अग्रवाल एण्ड क. आगरा - 3, 1979
7. श्रीनाथ मेहरोत्रा; जितेन्द्र प्रसाद सक्सेना : **मानव भूगोल,** लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा - 3, 1973
8. सी बी मामोरिया : मानव भूगोल, साहित्यभवन, आगरा, 1985

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न- 1

1. पृथ्वी के आंतरिक बल के कारण धरातल पर भूकम्प व ज्वालामुखी की घटनाएँ होती है।
2. जड़ चेतन पदार्थों की विकास की क्रमिक अवस्थाए बाल्यकाल, प्रौढ़ावस्था एवं वृद्धावस्था होती है ।
3. ताप वर्षा के प्रभाव से. चट्टानों का अपने स्थान पर टूटना विखण्डन कहलाता है । विखण्डन भौतिक, रासायनिक व जैविक प्रकार का होता है ।
4. ऋतु परिवर्तन की घटना का सम्बन्ध पृथ्वी का वार्षिक गति से है ।
5. सांस्कृतिक भूदश्य में अधिवस, सड़क, पुल, कल -कारखाने आदि को लिया जाता है । ये भूदश्य मानवीय शक्ति का परिणाम हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. पार्थिव एकता का अर्थ है संसार के जड़ चेतन तत्व एक दूसरे से सम्बन्धित हैं । उदाहरण, जैसे - स्थिति, जलवायु, वनस्पति, मानव सब एक दूसरे से जुड़े हैं ।
2. विश्व को शितोष्ण प्रदेशिय घास को रूप में स्टेपीज व संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रेयरीज नाम से जाना जाता है ।
3. पारिस्थितिकी विज्ञान में जीवों का पर्यावरण के संदर्भ में अध्यन किया जाता है ।
4. पृथ्वी का ताप निरन्तर औद्योगीकरण से बढी कार्बन डाइ आक्साइड, हरित प्रभाव व सी.एफ.सी गैसों की वृद्धि के कारण बढ़ता जा रहा है ।
5. यह कथन क्रियाशीलता के सिद्धान्त से सम्बन्धित है । क्योंकि पृथ्वी की आंतरिक व बाह्य शक्तियों के कारण धरातल पर परिवर्तन होते रहते है ।
6. (1) क्रियाशीलता का सिद्धान्त (2) पार्थिव एकता का सिद्धान्त (3) वातावरण समयोजन सिद्धान्त,

बोध प्रश्न - 3

1. मानव द्वारा निर्मित अपने निवास के लिए बनाए गये गृह को अधिवास करते हैं । आश्रय, सुरक्षा व आवश्यक सामग्री को रखने के लिए अधिकवास सामग्री कहते हैं । आश्रय, सुरक्षा व आवश्यक सामग्री को रखन के लिए अधिकवास की आवश्यकता होती है ।
2. उष्णकटिबंधीय फसलों में चावल, गन्ना, चाय, कहवा, कोको, रबर, नारियल व गर्म मसालों को सम्मिलित किया जाता है ।
3. सांस्कृतिक पर्यावरण का प्रभाव मानव के रहन-सहन पर पड़ता है ।
4. वातावरण अनुकूल का अर्थ है अपने आप को वातावरण के अनुसार ढालना जबकि रूपान्तरण में वातावरण का रूप बदल जाता है अर्थात् आप वातावरण को अपने अनुकूल बना लेते हैं ।
5. समायोजन का अर्थ है वातावरण के अनुसार अपने आप को ढालना । यह प्रक्रिया अनुकूलन और रूपान्तर दो तरह से की जा सकती है ।
6. ऐच्छिक अनुकूलन हम स्वयं अपनी इच्छा से करते हैं, जैसे सर्दी में गरम कपड़ों का प्रयोग । अनैच्छिक अनुकूलन में हमारे नहीं चाहने पर भी वह घटित होता हैं, जैसे - धूम में चमड़ी का रंग काला हो जाना ।

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. भूगोल के सिद्धान्तों को संक्षेप में समझाइए ।
2. 'परिवर्तन प्रकृति का नियम है ', इस संदर्भ में क्रियाशीलता के सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।
3. पार्थिव एकता से आप क्या समझते हैं? भौगोलिक तथ्यों में पार्थिव एकता को स्पष्ट कीजिए ।
4. वातावरण समायोजन सिद्धान्त की सोदाहरण व्याख्या कीजिए ।

इकाई 4 : मानव भूगोल के विकास में भूगोलवेत्ताओं का योगदान (Contribution of Geographers in the Development of Human Geography)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 मानव भूगोल के विकास में जर्मन भूगोलवेत्ताओं का योगदान

4.2.1 इमैनुएल काण्ट (Imanuel Kant)

4.2.2 वॉन हम्बोल्ट (A.V. Humboldt)

4.2.3 कार्ल रिटर (Carl Ritter)

4.2.4 फ्रेडरिक रेटजेल (Fredric Ratezel)

4.3 मानव भूगोल के विकास में फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं का योगदान

4.3.1 विडाल डी ला ब्लाश (Vidal de la Blache)

4.3.2 जीन्स ब्रूंश (Jeans Brunhes)

4.3.3 एलबर्ट डिमांजिये (Albert Demangean)

4.3.4 पैरी दैफ्रोंत (Peri Deffantaines)

4.4 मानव भूगोल के विकास में अमेरीकी भूगोलवेत्तओं का योगदान

4.4.1 ग्रिफिथ टेलर (Grifith Taylor)

4.4.2 एल्सवर्थ हंटिगटन (E.Huntington)

4.4.3 कार्ल सावर (Carl O.Sauer)

4.4.4 कु. सेम्पुल (E.C.Semple)

4.4.5 ईसा बोमेन (Isaiah Bowman)

4.5 मानव भूगोल के विकास में ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं का योगदान

ए एफ- मार्टिन (A.F.Martin)

एच.जे. फ्ल्यूर (H.J.Fleure)

पी.एम. राक्स्बी (P.M. Roxby)

4.6 मानव भूगोल के विकास में रूसी भूगोलवेत्ताओं का योगदान

4.7 सारांश

4.8 शब्दावली

4.9 सन्दर्भ ग्रंथ

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन से आप समझ सकेंगे : -

- मानव भूगोल के विकास में विभिन्न भूगोलवेत्ताओं का योगदान,
- वातावरण और मानव के पारस्परिक सम्बन्धों में वातावरण का प्रभाव,
- मानव का अपने वातावरण से अनुकूलन एवं रूपान्तरण द्वारा समायोजन,
- प्रकृति द्वारा निश्चित की गई सीमाओं के अन्दर मानवीय छांट (choice),
- मानव भूगोल के विकास सम्बन्धी विभिन्न विचारधाराएँ -निश्चयवाद, सम्भववाद, नव - निश्चयवाद आदि ।

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव भूगोल का विकासक्रम विभिन्न युगों के विचारों को ग्रहण करते हुए वर्तमान स्थिति तक पहुंचा हैं । चार्ल्स डारविन की 'जैव प्रजातियों की उत्पत्ति ' (origin of species : 1859) के प्रकाशन के साथ ही पृथ्वी पर जीवों के महत्व तथा वातावरण की ओर सभी विद्वानों का ध्यान आकृष्ट हुआ और मानव तथा वातावरण के सम्बन्धों के अध्ययन को सर्वप्रथम माना जाने लगा । 1 9वीं शताब्दी में जर्मनी में इस पक्ष को उभारा गया । 20वी शताब्दी के आरम्भिक 35 वर्षों में इस विचारधारा को फ्रांसीसी विद्वानों ने प्रधानता दी । इसके बाद अमेरिकन तथा ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं ने दोनो पक्षों को समन्वित कर मानव भूगोल में एक नई विचारधारा को आगे बढ़ाया । इस प्रकार मानव वातावरण संबंध द्वारा मानव भूगोल के विकास में तीन विचारधाराओं का प्रतिपादन हुआ :

1. **वातावरण - निश्चयवाद (Environmental Determinism) :** जो मानव भूगोल की जर्मन विचारधारा का मुख्य पक्ष हैं ।
2. **सम्भववाद (Possibilism) :** जो मानव भूगोल की फ्रांसीसी विचारधारा का मुख्य आधार हैं।
3. **नव-निश्चयवाद या वैज्ञानिक निश्चयवाद (Neo-determinism or Scientific determinism) :** जो अमेरिकन तथा ब्रिटिश विचारधाराओं का प्रमुख पक्ष है ।

4.2 मानव भूगोल के विकास में जर्मन भूगोलवेत्ताओं का योगदान (Contribution of German Geographers in the Development of Human Geography)

मानव भूगोल के विकास में जर्मन भूगोलवेत्ताओं के विचार सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहे हैं । यद्यपि जर्मन विचारधारा मानव भूगोल में निश्चयवाद के साथ जुड़ी है तथापि यह भी सत्य है कि जर्मन में भूगोल की आधारशिला मनुष्य के महत्व को स्वीकारते हुए ही रखी गई थी, विशेषत: हम्बोल्ट और: रिटर महोदय ने पृथ्वी सतह के विभिन्न तथ्यों को उनके सही अस्तित्व के रूप में देखा था और वे मानव को भूगोल के अध्ययन का केन्द्र मानते थे। उनके अनुसार मनुष्य प्रकृति के साथ मिलकर अपनी क्रिया-कलापों (Activities) द्वारा स्थानिक संश्लिष्टों (Spatial

complex) को जन्म देता हैं । उन्होंने पृथ्वी सतह के अध्ययन में दो दृष्टिकोणों का प्रतिपादन किया प्रथम प्राकृतिक दर्शन और द्वितीय नैतिक दर्शन। अत: उनके अनुसार प्राकृतिक तथा मानवीय दोनों तथ्यों का संश्लिष्ट अध्ययन ही मानव भूगोल है।

वातावरण एवं निश्चयवाद दोनों शब्दों का एक ही अर्थ है, जिसके अनुसार मनुष्य पर्यावरण (प्राकृतिक पर्यावरण) की विशिष्ट देन होता है और समस्त मानवीय क्रियाएँ भौतिक दशाओं द्वारा नियन्त्रित होती हैं । भौतिक दशाओं के अनुसार ही मनुष्य के शारीरिक गठन उसके भोजन, वस्त्र, आश्रय, सामाजिक, सांस्कृतिक क्रियाओं आदि का निर्धारण होता हैं । इसमें प्रकृति की प्रबलता पर बल दिया गया है और मनुष्य को प्रकृति का अनुगामी या सेवक सिद्ध करने का प्रयास किया गया है । इस विचारधारा को पर्यावरणवाद अथवा नियतिवाद भी कहा जाता है ।

वातावरण-निश्चयवाद का जन्म तथा पोषण जर्मनी में हुआ था। जर्मन विचारधारा में प्रकृति के छः परिमण्डलों का उल्लेख मिलता है- थल मण्डल, जल मण्डल, वायु मण्डल, वनस्पति मण्डल पशु मण्डल तथा मानव समुदाय और उसकी भौतिक तथा आध्यात्मिक संस्कृति। हम्बोल्ट तथा रिटर जैसे महान् जर्मन भूगोलवेत्ताओं ने पृथ्वी को मनुष्य का आवास स्थल मानकर उसका अध्ययन किया है अर्थात् मानव परिस्थिति (Human Ecology) ही इस विचारधारा का मूल आधार हैं । इस प्रकार मानव भूगोल के विकास-में विभिन्न जर्मन भूगोलवेत्ताओं का योगदान निम्नानुसार हैं:-

4.2.1 इमैनुएल काण्ट (Imanuel Kant : 1724-1804)

18वीं शताब्दी से ही काण्ट के समय में मानव और वातावरण के सम्बन्धों पर विचार होने लगा था। काण्ट ने वातावरण के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए बताया कि न्यू हॉलेण्ड के समुद्रतट के निवासियों के नेत्र आधे बन्द रहते थे, इसका कारण वातावरण में असंख्य मक्खियों का उनकी आखों की ओर उड़ते रहना था। गर्म प्रदेशों के निवासी सामान्यत: सुस्त होते हैं । यह दशा ध्रुव उत्तर के निवासियों में भी पायी जाती हैं । परन्तु गर्म देशों के निवासियों को अच्छी जलवायु के कारण भोजन सरलता से मिल जाता है जबकि टुण्ड्रा के निवासियों को इसके लिए कठिन परिश्रम करना पड़ता हैं । काण्ट की प्रसिद्ध पुस्तक "भौतिक भूगोल' ' में मानव भूगोल के पार्थिक एकता का स्पष्ट आभास मिलता है । इस पुस्तक में वनस्पति, जीव-जन्तुओं और मनुष्य के वातावरण की समीक्षा की गई हैं जिसमें प्रकृति का मानव के इतिहास पर प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता हैं ।

19वीं शताब्दी में हम्बोल्ट, रिटर और रेटजेल आदि ने इसका विकास किया। अमरीकी विदुषी कु. सेम्पुल, जर्मन भूगोलवेत्ता रेटजेल के विचारों से प्रभावित थी उसने अपने ग्रंथ 'भौगोलिक वातावरण के प्रभाव' में वातावरण के तत्वों द्वारा मानव के प्राय: सभी पक्षों पर गहरे प्रभाव दर्षाए हैं । परन्तु रेटजेल अथवा कु. सेम्पुल ने अपने ग्रन्थों में यह बात कहीं नहीं कही कि मानव अपने वातावरण का दास है बल्कि उन्होंने वातावरण को मानव की क्रियाओं पर प्रभाव डालने वाली एक महत्वपूर्ण शक्ति बताया। उन्होंने जनसंख्या वितरण, प्रवास तथा सांस्कृतिक प्रसारों के महत्व को भी स्वीकारा।

4.2.2 अलेक्जेण्डर वान हम्बोल्ट (A.V.humboldt:1769-1859)

अलैग्जेंडर वॉन हम्बोल्ट

हम्बोल्ट काण्ट के विचारों से सहमत थे । काण्ट के सार्वभौमिक दर्शन विज्ञान के विचारों ने उसे भूगोलवेत्ता बना दिया था। हम्बोल्ट ने अपनी लम्बी-लम्बी यात्राओं से एकत्रित तथ्यों तथा प्रेक्षणोंका एक युक्तिसंगत विश्लेषण प्रस्तुत किया। हम्बोल्ट को जेब भूगोल का संस्थापक माना जाता है । उन्होने ही सर्वप्रथम विश्व की वनस्पति, फसलों की ऊंचाई तथा तापमान से संबंध को स्पष्ट किया। उन्होने प्राकृतिक तथा मानवीय तथ्यो का शुद्धतापूर्वक उल्लेख किया अर्थात भूगोल का कोई भी तथ्य उनकी दृष्टि से छुपा नहीं था । हम्बोल्ट प्रकृति की एकता (unity of nature)तथा प्राकृतिक कारणत्व (Casuality) मे विश्वासरखता था। 'कॉसमॉस' (Cosmos) नामक एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ (1 845- 1862) जो पांच खण्डों में प्रकाशित हु आ, हम्बोल्ट की एक महत्वपूर्ण कृति गिनी जाती हैं । उसने इसमें पृथ्वी के निर्जीव तथा जीवधारियों के बीच पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण किया है । हम्बोल्ट की यह विचारधारा मानव भूगोल की एक प्रमुख देन है । '

हम्बोल्ट को यह विश्वास था कि मानव प्रजातियों में शारीरिक लक्षणों के अन्तर इस कारण से होते हैं कि मानव पर उसके निवास क्षेत्र की प्राकृतिक दशाओं का प्रभाव पड़ता है और मनुष्य भी प्राकृतिक शक्तियों के प्रभाव को बदलने या अनुकूल बनाने की कोशिश करता है । परन्तु पेड़-पौधों तथा जीव-जन्तुओं की अपेक्षा मनुष्य अपने निवास क्षेत्र की मिट्टी, जलवायु तथा ऋतु परिवर्तन से अधिक प्रभावित होता है क्योंकि वह अपने बुद्धिबल से प्राकृतिक शक्तियों के नियन्त्रण को कम कर देता है ।

हम्बोल्ट ने वातावरण निश्चयवाद के अन्तर्गत वातावरण के विस्तार तथा जलवायु दशाओं के प्रभाव की समस्या को स्पष्ट वैज्ञानिक ढंग से देखा। उसने इस बात का अनुभव किया था कि वातावरण का प्रभाव मानव पर पड़ता है । इसमें कोई सन्देह नहीं कि पर्वतीय प्रदेशों के निवासी मैदानी निवासियों से भिन्न होते हैं । हम्बोल्ट ने अपने सर्वकालिक ग्रन्थ 'कॉसमॉस' में पूर्वकालीन सभ्यताओं के विकास में भूमध्य सागर के प्रभाव को दर्शाते हु ए लिखा है कि समुद्री प्रभाव का स्पष्ट दर्शन फोएनिशिएन (Phoenicians) लोगों की बढ़ती हु ई शक्ति में होता है और उनके बाद हैलेनिक राष्ट्रों की शक्ति के उत्थान में भी दिखाई दिया ।

हम्बोल्ट प्राकृतिक शक्तियों के प्रभाव को मानता था और यह भी जानता था कि मनुष्य में बुद्धिबल तथा क्षमता भी आश्चर्यजनक होती है जिसके द्वारा वह अपने आपको सभी प्रकार की जलवायु में रहने योग्य बना लेता है परन्तु बुद्धिबल तथा क्षमता के होते हु ए भी मनुष्य सभी क्षेत्रों में पार्थिव जीवन (Terrestrial Life) से भी नितान्त सम्बन्धित हैं ।

---

1. 'The Geography of Organic Beings- Plant and Animals - is concerned with delineation of the organic phenomonas of our terrestrial globe- Comos, Vol. I by Humboldt.

4.2.3 कार्ल रिटर (Carl Ritter : 17 79- 1859)

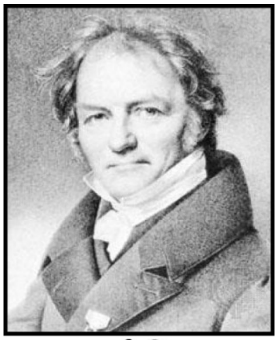

कार्ल रिटर

कार्ल रिटर एक प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक थे । रिटर की मानव केन्द्रित (Anthropocentric) विचारधारा से उसका विकास हु आ था । फिर भी रिटर नेकेवल प्रकृति को ही मुख्य नहीं माना था बल्कि मानव और पृथ्वीकी पारस्परिक क्रियाओं को भी महत्वपूर्ण समझा था । उसने अपनेग्रंथ यूरोप (Europe) मे विभिन्न प्रदेशों के वर्णनों को दो भागो मे बांटा था पहले भाग मे ऐतिहासिक भूमिका और दूसरे भाग में प्रकृति द्वारा डाले हु ए महत्वपूर्ण प्रभावों को दर्शाया गया था । इसके बाद के सभी लेखों में रिटर ने 'मानव और प्रकृति की पारस्परिक प्रतिक्रिया ' के विचार को भी प्रधानता दी थी । उसने यूरोप की कटी -फटी समुद्रतटीय रेखा के महत्व को और समुद्रतट के निवासियों पर समुद्री वातावरण का गहरा प्रभाव देखा था ।

रिटर की भौगोलिक विचारधारा हम्बोल्ट से प्रभावित थी किन्तु रिटर ने भूगोल की प्रादेशिक विधि को अपनाया जिसमें भौतिक तथा मानवीय कारणों के संश्लेषण पर बल दिया । इसकी सबसे प्रसिद्ध भौगोलिक ग्रन्थमाला अर्डकुण्डे (Erdkunde) है जिसमें 19 ग्रंथ हैं । इसके प्रथम खण्ड में अफ्रीका और दूसरे खण्ड में एशिया महाद्वीप का वर्णन प्रादेशिक विधि के आधार पर किया गया । हम्बोल्ट तथा रिटर की विचारधारा में समानता होते हु ए भी काफी अन्तर था । रिटर की विचारधारा के निम्नांकित प्रमुख तथ्यों ने मानव भूगोल के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया :-

1. रिटर के विचार विकासवादी रहे हैं जो ज्यूने से मिलते -जुलते थे । वह किसी क्षेत्र की भू-रचना, जलवायु, पादपों तथा मनुष्यों में अन्तर्सम्बन्ध को मानता था ।
2. रिटर पर्यावरण निश्चयवाद को मानता था । उसने मानव तथा प्रकृति की परस्पर प्रतिक्रिया को प्रधानता देते हु ए बताया कि समुद्रतट के निवासियों पर समुद्र का गहरा प्रभाव देखा
3. रिटर की ग्रंथ माला अर्डकुण्डे का मुख्य उद्देश्य प्रादेशिक व्यक्तित्व तथा पूर्णता की संकल्पना को स्पष्ट करना था । उसके कथन 'From the individual facts towards whole ‘में प्रकृति एवं मानवीय तथ्यों की सम्बद्धपूर्णता को पुष्ट करना था । अत : विभिन्न भौगोलिक व्यक्तित्व वाली इकाइयों के पारस्परिक सक-धो की व्याख्या करके रिटर ने अन्तत : पृथ्वी की एकता को स्पष्ट करना ही मानव भूगोल का उद्देश्य माना है ।
4. रिटर का मत था कि पृथ्वी तथा उसके निवासियों में घनिष्ठ सम्बन्ध हैं । दोनों में से किसी एक को भी अलग से प्रस्तुत नहीं किया जा सकता । रिटर भी हम्बोल्ट की तरह प्राकृतिक एकता में विश्वास रखता था ।

4.2.4 फ्रेडरिक रेटजेल (Fredric Ratzel : 1844- 1904)

रेटजेल को मानव भूगोल का वास्तविक जन्मदाता कहा जाता है । उसके ग्रन्थों में सर्व विख्यात ग्रन्थ एन्थ्रोपोज्योग्राफी(Anthropogeography) तीन ग्रंथ है । उनमें भौगोलिक तथ्यों की तुलना की गई है और प्राकृतिक घटनाओ का एक विश्व दृश्य प्रस्तुत किया गया है । एन्थ्रोपोज्योग्राफी के प्रकाशन के पश्चात ही इन दोनों शब्दों को मिलाकर अंग्रेजी भाषा की शब्दावली मे मानव भूगोल नाम का समावेश हुआ है।

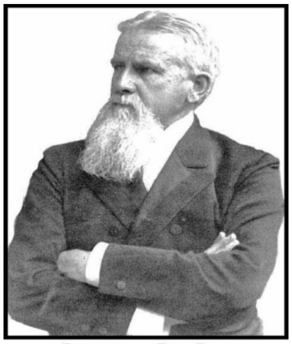

फ्रेडरिक रेटजेल

वातावरण - मानव के पारस्परिक सम्बन्धों में रेटजेल ने वातावरण निश्चयवाद को ही अधिक प्रभावी माना था । उन्होंने विश्व के विभिन्न प्रदेशों में मनुष्य के रहन -सहन, आर्थिक व्यवसाय और सामाजिक संस्कृति को वातावरण की ही देन माना था इसलिए वह वातावरण - निश्चयवाद सिद्धान्त का प्रतिपादक कहलाता हैं । उसके एन्थ्रोपोज्योग्राफी ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में यह स्पष्ट किया गया था कि पृथ्वी पर मानव वितरण अधिकतर प्राकृतिक शक्तियों द्वारा ही नियन्त्रित होता है ओर दूसरे खण्ड में जनसंख्या के वितरण का वर्णन किया गया था ।

रेटजेल को प्रकृतिवाद का प्रणेता भी कहा जाता है क्योंकि रेटजेल ने मानव भूगोल के विकास में सबसे अधिक योगदान किया है । वस्तुत : रेटजेल प्राकृतिक वातावरण तथा मनुष्य के अन्तर्सम्बन्धों को उभारना चाहते थे । उन्होंने इसे जनसंख्या के क्रमबद्ध वितरण के माध्यम से मानव भूगोल नामक भूगोल की नई शाखा के प्रतिपादन की आवश्यकता महसूस की । उन्होंने इस बात पर बल दिया कि यदि भूगोलवेत्ताओं को समसामयिक ज्ञान के साथ चलना है तो भूगोल में पृथ्वी पर मानव के वर्णन का समन्वित अध्ययन आवश्यक है । बिस्मार्क के युग में रहते हुए रेटजेल ने राजनीतिक प्रदेशों के सिद्धान्त को विकसित किया । इस प्रकार भूगोल में मानव भूगोल का श्रीगणेश हुआ ।

रेटजेल ने माना कि मनुष्य अपने वातावरण की शक्तियों से नियन्त्रित होकर इनके अनुकूल बनता रहता है । इसकी रचनाओं में वातावरणीय निश्चयवाद की गहरी छाप दिखाई देती है । परन्तु रेटजेल ने सांस्कृतिक वातावरण के प्रभाव को भी नहीं नकारा था । उसकी एन्थ्रोपोज्योग्राफी पुस्तक के दूसरे खण्ड में जनसंख्या वितरण और घनत्व पर, बस्तियों के रूपों पर, प्रवसन पर और सांस्कृतिक लक्षणों के प्रसार पर बल दिया गया है ।

बोध प्रश्न - 1

1. मानव भूगोल के वास्तविक जन्मदाता कौन थे ?

....

....

2. 'एन्थ्रोपोज्योग्राफी ' शब्द से आप क्या समझते हैं?

....

....

3.	निश्चयवाद क्या है? इस विचारधारा के प्रणेता कौन थे?
	....
	....
4.	अर्डकुण्डे किस संकल्पना को स्पष्ट करता है ?
	....
	....

4.3 मानव भूगोल के में फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं का योगदान (Contribution of French Geographers in the Development of Human Geography)

मानव भूगोल के विकास में फ्रांसीसी विद्वानों का महत्वपूर्ण स्थान हैं । विडल डी ला ब्लाश, जीन ब्रूहन्स, अल्बर्ट डिमांजिया एवं मेक्सीमिलिएन सार आदि ने अपने महान् कार्यो से यह प्रमाणित किया कि मानव भूगोल एक स्वतन्त्र शाखा हैं । मानव भूगोल का सम्बन्ध मनुष्य की क्रियाओं द्वारा पृथ्वी की सतह पर स्थापित होने वाले तथ्यों से हैं । इन तथ्यों का अध्ययन ही मानव भूगोल है ।

जर्मन विद्वान रेटजेल ने मानव भूगोल एवं राजनीतिक भूगोल की विचारधारा को प्रस्तुत किया था और प्रकृति के मनुष्य पर पड़ने वाले प्रभावों को मापने की बात भी कही थी किन्तु प्रसिद्ध समाजवादी फ्रांसीसी विचारक दुर्खिम और विडाल डी ब्लाश ने कड़ी आलोचना की । ब्लाश ने रेटजेल के भौगोलिक निश्चयवाद के स्थान पर भौगोलिक सम्भववाद का प्रतिपादन किया और यहीं से मानव भूगोल में सम्भववाद की विचारधारा को पोषण मिला ।

सम्भववाद - सम्भववाद से तात्पर्य है कि वातावरण कुछ सम्भावनाएँ प्रस्तुत करता है । और मानव अपनी छांट (Choice) के द्वारा उनका उपयोग चाहे तो कर सकता है, और न चाहे तो नही कर सकता है । सम्भववाद की विचारधारा का जन्म और विकास फांस में हुआ था । इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग लुसिएन फ्रेब्रे ने 1922 में किया था । उसके अनुसार प्रकृति में कहीं भी अनिवार्यता नहीं है बल्कि सर्वत्र सम्भावनाएँ (Possibilities) विद्यमान है । मनुष्य इन सम्भावनाओं का स्वामी है और इनका उपयोग अपने निर्णय के अनुसार करता है । मनुष्य पर्यावरण का एक सक्रिय तथा प्रबल कारक है जो अपने कार्यों द्वारा प्राकृतिक दशाओं में परिवर्तन तथा परिमार्जन करके सांस्कृतिक उद्देश्यों का निर्माण करता है । अत : प्रकृति द्वारा सम्भावनाएँ प्रस्तुत की जाती हैं और इन सम्भावनाओं के भीतर मनुष्य अपनी आवश्यकता, रुचि व क्षमता के अनुसार छांट करता है । इस मानवीय छांट के अनुसार किसी क्षेत्र या प्रदेश के साथ वहां का मानव समाज अपना सामंजस्य स्थापित करता है ।

ब्लाश अनुयायियों में ब्रूहन्स, डिमांजिया तथा फ्रेब्रे के नाम उल्लेखनीय हैं । इन सभी ने सम्भववाद मानव भूगोल के विकास में की पुष्टि की हैं । इन्होंने प्रादेशिक अध्ययन के द्वारा फ्रांस तथा विश्व के अन्य देशों में भी मानव द्वारा निर्मित सांस्कृतिक वातावरण के विस्तृत विवरण में yah दर्शाया है कि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति के लिए मानवीय छांट

महत्वपूर्ण होती है । फ्रेब्रे ने बताया कि मानव प्रकृति द्वारा प्रस्तुत की गई सम्भावनाओं का स्वामी होता है तथा उनके प्रयोग का निर्णायक होता है ।

4.3.1 विडाल डी ला ब्लाश (Vidal de la Blache: 1845-1918)

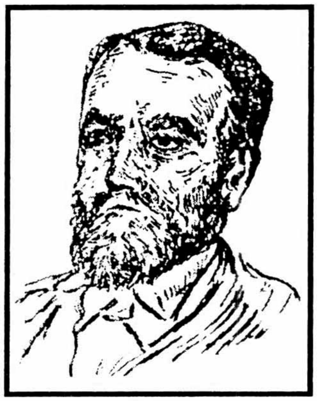
विडाल-डी-ला-ब्लाश

विडाल डी ला ब्लाश एक फ्रांसीसी विद्वान् था जिसको मानव भूगोल एवं सम्भववाद का संस्थापक माना जाता है । ब्लाश का सबसे विख्यात ग्रंथ 'ज्योग्राफी युनिवर्सल' है जिसमें सम्पूर्ण विश्व का प्रादेशिक भूगोल लिखा गया है । उन्होंने प्रादेशिक अध्ययन पर बल देते हुए स्पष्ट किया है कि इसके अन्तर्गत किसी प्रदेश के भौगोलिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक तथा आर्थिक तथ्यों के प्रभावों को स्पष्ट करना ही मानव भूगोल के विकास का आधार है । ब्लाश एक सम्भववादी भूगोलवेत्ता था उसने बताया कि मानव स्वयं क्रियाशील प्राणी है जो अपने वातावरण का प्रयोग स्वय के अनुसार एवं विकास के स्तर के आधार पर करता हे । प्रकृति सम्भावनाएँ प्रस्तुत करती है और मानव अपनी क्षमता और आवश्यकतानुसार उसका उपयोग कर सकता है । उनके अनुसार प्रकृति परामर्शदात्री के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है ।

मानव भूगोल के विकास को आगे बढ़ाते हुए ब्लाश ने कहा कि वातावरण में मानव द्वारा किए गए परिवर्तन प्रत्येक क्षेत्र में विद्यमान हैं । मानव अपने प्रदेश की भूरचना (terrain), जलवायु, वनस्पति, मिट्टी आदि में परिवर्तन करता है । उदाहरणार्थ - पहाड़ों पर खेती करने के लिए उपयुक्त भूमि नहीं होती, फिर भी मानव अपनी सूझ -बूझ से सीढ़ीदार खेत बना लेता हैं । जिन क्षेत्रों में गर्म जलवायु होती है और ऊंचे तापमान रहते हैं वहां प्रशीतकों (refrigerators) और वाताकूलन (Air Conditioning) द्वारा अपनी रुचि के अनुसार तापमान कम कर लेता है । शीतप्रधान क्षेत्रों में अत्यन्त ठण्डी जलवायु के प्रकोप से बचने के लिए तापक (Heater) द्वारा मकान गर्म कर लेता है । इस प्रकार अनउपजाऊ मिट्टी को खाद व उर्वरक द्वारा अधिक उपजाऊ बना लेता है ।

ब्लाश ने सन् 1921 में 'मानव भूगोल के सिद्धान्त ' नामक पुस्तक का प्रकाशन किया । उसमें जनसंख्या, मानव अधिवास, उनके प्रकारों एवं उनका वितरण आदि का उल्लेख मिलता है । ब्लाश के अनुसार मानव भूगोल एक प्राकृतिक विज्ञान है, सामाजिक नहीं । मनुष्य प्रकृति का संबंध प्रकृति का सामाजिकरण है । ब्लाश के मानव भूगोल में धरातल का सोंधापन दिखता है क्योंकि वे क्रमश : जनसंख्या के रूपान्तरणीय प्रभावों जैसे - कृषि एवं पशुपालन आदि का वर्णन करते हैं । उनके अनुसार धरातल पर मानवीय जलोढ़ (Human alluvium) का नियन्त्रण होता है ।

सम्भववाद की संकल्पना ब्लाश निश्चयवाद की कमजोरी को समझ चुके थे वे मानते थे कि प्राकृतिक परिस्थितियों को मनुष्य की सामाजिक परिस्थितियों के विरोधस्वरूप मानना गलत हे । यह भी गलत है कि वे दोनों एक दूसरे पर हावी होना चाहते हैं । उनके अनुसार प्राकृतिक

अथवा क्षमता के अनुसार उनका प्रयोग करके अपने निवास का गठन करता है । यही सम्भववाद का आधार है । उल्लेखनीय है कि मनुष्य प्रकृति के साथ मात्र व्यक्ति के रूप में संबंध स्थापित नहीं करता बल्कि उस समूह की परम्परा एवं उद्देश्य को लेकर प्रकृति से सम्बन्धित होता है, जिसका कि वह सदस्य है । मनुष्य के उद्देश्य एवं उसके जीवन निर्वाह के ढंग सतत परिवर्तनशील होते हैं । अत : सम्भववाद के अध्ययन में इतिहास का ज्ञान आवश्यक है और इसी को आधार बनाकर मानव भूगोल के विकास को आगे बढ़ाया ।

4.3.2 जीन्स ब्रूहन्स (Jeans Brunhes 1868-1930)

मानव भूगोल का दूसरा विख्यात लेखक ब्रूहन्स था जिस पर ब्लाश के मानव भूगोल के विकास को आगे बढाया। ब्रूहन्स की प्रमुख कृतियों का 'मानव भूगोल' 'ज्योग्राफी' ह्यूमन दिला फ्रांस; अर्थात फ्रांस का मानव भूगोल' नामक पुस्तकें उल्लेखनीय हैं । 'फ्रांस का मानव भूगोल नमक इस पुस्तक को प्रथम खण्ड प्रादेशिक भूगोल से प्रभावित था ।

जीन ब्रूंहन्स

ब्रूहन्स यद्‌यपि ब्लाश के विचारों से सहमत था किन्तु उन्होंने ब्लाश से थोड़ा हटकर मानव भूगोल को एक नई दिशा का योगदान दिया । मानव भूगोल को एक संगठित विषय के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय ब्रूहन्स को ही जाता है । ब्रूहन्स का कथन था कि प्रारम्भिक तथा आधारभूत मानव भूगोल में मनुष्य की भौतिक उपलब्धियों का वर्णन होना चाहिए क्योंकि इसी से प्रजातियों एवं मानव समूहों का भूगोल बनता है । पुन : ये प्रजातियां एवं मानव समूह अपनी विशिष्ट क्रियाओं से भौतिक उपलब्धियों का सृजन करते हैं । उसने मानव भूगोल के आधारभूत तथ्यों को तीन समूहों - भूमि का अनुत्पादक प्रयोग, वनस्पति एवं पशुजगत तथा विनाशक अर्थव्यवस्था में बांटा । उसके अनुसार मानव भूगोल के विकास के क्षेत्र निम्नांकित हैं-

1. **प्रथम वर्ग के आवश्यक तथ्य :** मिट्टी का अनुत्पादक प्रयोग इसके दो तथ्य है, घर तथा सड़कें जिनको निम्नांकित अध्यायों में बांटा गया है -
   (i) मकानों के भेद, सड़कें, मानवीय बस्तियां, नगरीय समूह,
   (ii) नगरीय संचार
   (iii) नगर की रूपाकृति नगर का संचार,
   (iv) संचार का सामान्य भूगोल ।
2. **दूसरे वर्ग के आवश्यक तथ्य :** वनस्पति तथा जन्तुजगत पर मानव की विजय, कृषि तथा पशुपालन । इसको भी आगे वर्गीकृत किया है -कृषि की फसलें, घुमक्कड़ी पशुचारण, पशुओं का मौसमी स्थानान्तरण तथा प्रवास एवं मानवीय प्रवसन ।
3. तीसरे वर्ग के आवश्यक तथ्यों में मिट्टियों का विनाशकारी उपयोग तथा खनिजों के शोषण को सम्मिलित किया है ।

4. तीन आवश्यक वर्ग के अतिरिक्त चौथे वर्ग में मानव भूगोल और प्रादेशिक भूगोल, मानव प्रजातियां, सामाजिक भूगोल तथा राजनीतिक ऐतिहासिक भूगोल रखा

अमेरिकन भूगोलवेत्ता ईसा बोमेन ने ब्रूहन्स के मानव भूगोल का अंग्रेजी में अनुवाद करवाया और उसके ग्रन्थ 'नया संसार ' का प्रकाशन भी फ्रांसीसी भाषा में करवा कर मानव भूगोल के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया ।

4.3.3 अलबर्ट डिमांजिया (Albert Demangean : 1927 - 1940)

डिमांजिया फ्रांस में मानव भूगोल के विकास में अग्रणीय थे । इनकी सर्वप्रथम पुस्तक 'ला पिकार्डी ' थी जो 1905 में प्रकाशित हुई थी । यह पुस्तक प्रादेशिक भूगोल का सम्पूर्ण अध्ययन मानी जाती है ।

डिमांजिया ब्लाश के विचारों से प्रभावित थे और मानव भूगोल के प्रणेता थे । उनके अनेक लेख यह सिद्ध करते हैं कि वे मानव भूगोल के विकास के लिए निरन्तर कार्य करते रहे । उनकी मृत्यु के पश्चात् 'मानव भूगोल की समस्याएँ ' शीर्षक से एक स्मृति -ग्रन्थ प्रकाशित हुआ था । इस ग्रन्थ में 1902 से 1941 तक के उनके लेखों का संग्रह किया गया । इस ग्रन्थ से स्पष्ट होता है कि मानव भूगोल में मानव समूहों का उनके भौगोलिक पर्यावरण के सम्बन्ध में अध्ययन किया जाता है । उन्होंने प्राकृतिक वातावरण की संकल्पना में परिमार्जन किया था । उनके अनुसार मनुष्य जिस वातावरण के अपने कार्यों से परिमार्जित कर लेता है उसी परिमार्जित वातावरण के सम्बन्ध में मनुष्य का अध्ययन मानव भूगोल है ।

डिमांजिया ने 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध में यह पूर्वानुमान किया था कि मानव भूगोल के विकास में निम्नांकित तथ्यों का समावेश होना आवश्यक है जैसे सुदूर पूर्व देशों में जनाधिक्य का, रंगभेद का, शुष्क प्रदेशों में सिंचाई के साधनों का, नगरीकरण का और विपणन केन्द्रों का अध्ययन उल्लेखनीय है ।

4.3.4 पैरी दैफोंते (Peri Deffantaines)

मानव भूगोल के विकासक्रम में दैफोंते ने अपने विचारों को हार्डी द्वारा लिखित ' औपनिवेशिक भूगोल ' नामक पुस्तक में व्यक्त किये थे । उसके अनुसार मानव भूगोल में दो पक्ष होते हैं । एक पक्ष में किसी क्षेत्र के निवासियों का अपने वातावरण से संघर्ष का चित्रण रहता है और दूसरे पक्ष में इस संघर्ष के परिणामों का विश्लेषण होता है । इस प्रकार एक और मरुस्थलों, पर्वतों, वनों, समुद्रों, नदियों आदि के विरूद्ध मानव का संघर्ष चलता है और दूसरी और मानवीय बस्तियों, परिवहन तथा उपनिवेशवाद का भौगोलिक अध्ययन किया जाता है ।

दैफोंते ने मानव निवास के प्रदेशों के दो भेद बतलाए थे : -

1. वे प्रदेश जिनमें मानव की अर्थव्यवस्था का एक व्यक्तिगत प्रतिरूप होता है और दूसरा
2. वे प्रदेश जिनमें दीर्घकालीन सम्पर्क से जो वर्तमान जीवन बना है, वह बहुत जटिल प्रभावों का परिणाम है ।

दैफान्ते ब्रूहन्स के विचारों से प्रभावित थे तथा मानव भूगोल के क्षेत्र में इनका महत्वपूर्ण योगदान भूगोलवेत्ताओं का योगदान वे ब्रूहन्स के पार्थिव एकता के सिद्धान्त तथा परिवर्तन के सिद्धान्त को मानव भूगोल के आधारभूत सिद्धान्त मानते थे ।

बोध प्रश्न - 2

1. फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं का मानव भूगोल के विकास में मुख्य योगदान क्या था?
   ....
   ....
2. सम्भववाद विचारधारा क्या है? इसके प्रणेता कौन थे?
   ....
   ....
3. अलबर्ट डिमांजिया के भौगोलिक विचार क्या थे?
   ....
   ....

4.4. मानव भूगोल के विकास में अमेरीकी भूगोलवेत्ताओं का योगदान (Contribution of American Geographers in the Development of Human Geography)

आजकल अमेरीकी तथा ब्रिटिश भूगोलवेत्ता वातावरणवाद की एक नई विचारधारा के समर्थक हैं । इसमें प्रकृति के निश्चयवाद तथा सम्भववाद दोनों का समन्वय किया गया है । इस विचारधारा में इस बात पर बल दिया गया है कि प्रत्येक प्रदेश में प्राकृतिक शक्तियों के द्‌वारा कुछ सीमाएँ निश्चित की जाती हैं और उन सीमाओं के अन्दर मानव अपनी छांट का प्रयोग करता है अर्थात् प्रकृति के साथ सामंजस्य करता है और इस विचारधारा को ही नव -निश्चयवाद विचारधारा कहा गया है ।

नव -निश्चयवाद के मुख्य अमेरीकी समर्थक निम्नांकित हैं : -

4.4.1 ग्रिफिथ टेलर (Grifith Taylor)

ये अमेरीकी प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता थे जिन्होंने नव -निश्चयवाद का समर्थन करते हुए अपने निश्चयवाद को वैज्ञानिक निश्चयवाद या 'रुको और जाओ ' निश्चयवाद बताया है । इनका निश्चयवाद पुराने निश्चयवाद से भिन्न है तथा इसमें मानवीय छांट का महत्व भी प्रत्येक दशा में शामिल रहता है । उन्होंने इस बात पर बल दिया कि वातावरण द्‌वारा किए गए प्रमुख नियन्त्रण की उपेक्षा नहीं की जा सकती है । उदाहरणार्थ- कनाडा तथा साईबेरिया के विस्तृत टुण्ड्रा प्रदेशों, सहारा और आस्ट्रेलिया के निर्जन मरुस्थलों, अन्टार्कटिका के हिमाच्छादित महाद्‌वीप में मनुष्य को प्रकृति की आज्ञा माननी पड़ती है । ये प्रदेश अभी अनेक दशाब्दियों तक पिछड़े रहेंगे । संयुक्त राज्य अमेरीका या यूरोप के समान उन्नति का ऊँचा स्तर टुण्ड्रा अथवा मरुस्थल में नहीं बनाया जा सकता है । हां इतना अवश्य है कि प्रकृति बहुत अंशों में

प्लान निश्चित करती है और उस प्लान में मानव द्वारा ही संस्कृति प्रगति करती है । फिर भी प्रकृति का प्रभाव तो रहता ही है और मनुष्य प्रकृति की इस सीमाओं के भीतर ही टेक्नोलॉजी द्वारा आर्थिक -सांस्कृतिक उन्नति करता है ।

तात्पर्य यह है कि न तो प्रकृति का मनुष्य पर नियन्त्रण है और न ही मनुष्य प्रकृति का विजेता है । दोनो का एक दूसरे का क्रियात्मक सम्बन्ध है और यह भी तय है कि मानव अपनी उन्नति के लिए प्रकृति का सहयोग प्राप्त करे । यही नव -निश्चयवाद का मूल मंत्र है ।

ग्रिफिथ टेलर के नव -निश्चयवाद में बीच का मार्ग अपनाया गया है जो वास्तव में सम्भववाद का एक रूपान्तरण है । इसको ओ. एच. के. स्पेट (O.H.K.Spate) ने सम्भववाद शब्द के बजाय प्रसम्भाव्यवाद शब्द को अधिक सार्थक माना है अर्थात् वातावरण द्वारा प्रस्तुत की गई बहुत सी सम्भावनाऐं (Possibilities) होती हैं और इसमें कुछ अधिक प्रसम्भाव्य (More Probable) होते हैं ।

जार्ज टैथम ने इसे क्रियात्मक सम्भववाद (Pragmatic Possibilism) की संज्ञा दी है क्योंकि इसमें मानवीय छांट (choice) को भी स्थान दिया गया है ।

नव -निश्चयवाद विचारधारा के अनुसार प्रकृति मनुष्य के सम्मुख कुछ सीमाएँ निर्धारित करती है जिसके भीतर मनुष्य अपनी क्षमता, रुचि एवं छांट के अनुसार कार्य कर सकता हैं किन्तु इन सीमाओं का उल्लंघन नहीं कर पाता ।

ग्रिफिथ टेलर के अतिरिक्त अन्य भूगोलवेत्ताओं ने नव -निश्चयवाद को मान्यता दी है । इनमें अमेरिकन भूगोलवेत्ता हंटिंगटन और सावर तथा ब्रिटिश भूगोलवेत्ता हरबर्ट्सन, राक्सबी और फ्ल्यूर के नाम उल्लेखनीय हैं ।

4.4.2 एल्सवर्थ हंटिंगटन (E.Huntigten : 1876- 1947)

हंटिंगटन

हंटिंग्टन अमेरिकन भूगोलवेत्ता थे जिन्होंने भूगोल पर लगभग 30 पुस्तके लिखीं। मानव भूगोल पर उन्होने प्रसिद्ध पुस्तक “Principles of Human Geography ” लिखी है । इस पुस्तक मे स्पष्ट होता है की हंटिंग्टन नियतिवादी विचारक थे । उनकी मान्यता थी मनुष्य प्रकृति के नियमों से नियंत्रित है वे मनुष्य की उत्पत्ति एशिया से मानते थे तथा जलवायु को मनुष्य की क्रियाओं का प्रमुख कारण कहते थे । उनके अनुसार “मानव भूगोल भौगोलिक परिवेश। मानवीय क्रियाओं एवं गुणों को अन्तसर्रम्बन्धों की प्रकृति एवं उनके वितरण का अध्ययन करता है ।

हंटिंगटन का नियतिवाद : उनका मत था कि मानव प्रकृति के नियमों के अधीन है । मनुष्य के सामाजिक क्रियाकलाप भी प्रकृति के नियमों से संचालित होते हैं । जलवायु पर्यावरण का प्रमुख तत्व है जिसके कारण स्थानान्तरण होते हैं ।

---

1. Spate O.H.K., The compass of Geography, Canberra, 1953.

समशीतोष्ण कटिबन्ध की जलवायु में ऐसे तत्व हैं जिससे मनुष्य अधिक कुशल बन जाता है । जबकि इसके विपरीत उष्ण कटिबंधीय जलवायु में नैतिक पतन होते हैं, इच्छा शक्ति मर जाती है, साहस और जोखिम के गुण क्षीण हो जाते है । किन्तु मानवीय क्रियाओं का भी उसने अध्ययन किया था और सफलता के अवसर को प्रगति की अवस्था पर निर्भर माना था इसलिए उसको नव -निश्चयवाद का ही समर्थक माना गया हैं ।

4.4.3 कार्ल सावर (Carl O.Sauer : 1889- 1975)

कार्ल सावर वर्तमान सदी के एक प्रभावशाली अमेरिकी भूगोलवेत्ता थे । मानव भूगोल के विकास में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है । उन्होंने आधुनिक युग के नवनिश्चयवाद को स्वीकारते हुए प्रकृति तथा मानव के बीच समायोजन को ही प्रमुख स्थान दिया है । 'सांस्कृतिक भूगोल ' नामक उनकी पुस्तक 1947 में प्रकाशित हुई थी ।

कार्ल सावर ने सम्भववाद की प्रतिष्ठापना संयुक्त राज्य अमेरिका में की । उनके साथ सन् 1932 (सेम्पुल) एवं सर 1934 (डेविस) तक निश्चयवाद विचारधारा का जोर था । उन्होंने अपने सारगर्भित लेखों के माध्यम से मानव के प्रभाव को स्पष्ट किया । मनुष्य प्रकृति के साथ रहते हुए भी अपनी बुद्धि तकनीक एवं क्रियाशीलता से प्रकृति की अनेक बाधाओं से अपने आपको मुक्त कर लेता है । उसका मत था कि मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का किसी उद्देश्य हेतु प्रयोग करता है । इसकी सीमाएँ अवश्य है किन्तु प्रकृति मानव को दिशा निर्देश नहीं देती । उन्होंने रिटर की कारोलाजी की संकल्पना का प्रयोग 'मानव भूगोल में किया । दूसरे शब्दों में जर्मन विचारकों के निश्चयवादी विचारों का उत्तर उसी शैली में सम्भववाद से दिया ।

ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं में वूलरिज तथा ईस्ट का मत है कि "निश्चय शब्द के ऊपर केवल वे नौसिखिये भूगोलवेत्ता खींचातानी करते हैं, जो अपने ही शब्दजाल में फंसते रहते हैं । हमको तो केवल यह बात समझनी आवश्यक है कि भूगोल में थोड़ी बहुत मात्रा में निश्चयवाद का रहना अनिवार्य है । '", उन्होंने स्पष्ट किया कि मानव और स्थल की प्रतिक्रियाएँ पारस्परिक होती हैं, यह बात सत्य हैं ।

नव-निश्चयवाद उस पुराने निश्चयवाद से भिन्न इसलिए है कि इसमें मानवीय छांट के महत्व का विचार प्रत्येक दशा में रहता हैं । अब चूंकि मानवीय छांट को अपने उद्देश्य के अनुसार निश्चित किया जाता है इसलिए जार्ज टैथम ने इस नव -निश्चयवाद को व्यावहारिक सम्भववाद कहा हैं ।

4.4.4 कु. एलेन चर्चिल सेम्पुल (E.C.Semple : 1 863- 1932)

कु. सेम्पुल अमेरिकी भूगोलवेत्ता थीं जो रेटजेल कीं विचारधाराओं से काफी प्रभावित थीं ।

---

1. Wooldridge, S.W. and East, W.G. : Sprit and Purpose of Geography, London, 1951, p. 33
2. Tatham, G : Environmentlism and possiblism in G. Taylor, 1975, p. 116.

रेटजेल की निश्चयवादी विचारधारा को पुष्ट करते हुए उनके विचारों को सर्वप्रथम अंग्रेजी भाषा में विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किया । इन विचारों क सेम्पुल ने अपनी विश्वविख्यात पुस्तक 'भौगोलिक वातावरण के प्रभाव'(influences of geographical environment) मे विस्तार से किया है । जो 1911 मे प्रकाशित हुई थी। उसने अपनी पुस्तक मे मानव भूगोल को 'अस्थायी पृथ्वी और गतिशील मानव के पारस्परिक संबंध " का अध्ययन बताया है उसने निश्चयवाद की पुष्टि करते हुए लिखा है कि "मानव धरातल की उपज है । पृथ्वी ने उसका पालन -पोषण किया है, उसके लिए कर्त्तव्य निश्चित किए है और उसके विचारों को निश्चित दिशाओं की और मोड़ा है । मनुष्य के सामने ऐसी कठिनाइयां भी प्रस्तुत की हैं जिनके द्वारा उसके शरीर को बल तथा बुद्धि को तीव्रता मिली है । '" इन विचारों के कारण सेम्पुल विवादों में भी पड़ी, किन्तु भूगोल में उसके विचारों का स्वागत हुआ ।

कुमारी सेम्पुल

सेम्पुल ने मानव भूगोल के तात्कालिक विचारों को आगे बढ़ाया । रेटजेल ने मनुष्य की क्रियाओं पर प्राकृतिक वातावरण की बात कही थी किन्तु सेम्पुल ने इस विचारधारा को प्रसिद्ध दार्शनिक नीटशे की शैली में आगे बढ़ाया । सेम्पुल के अनुसार प्रकृति मनुष्य के शरीर , भोजन, वस्त्र, मकान तथा क्रिया-कलापों को प्रभावित करती है । मानव के विचार, भावनाएँ यहां तक कि उसके धार्मिक विचार भी प्रकृति से प्रभावित होते हैं । प्रकृति से समीपता रखने के कारण मानव समुदाय में जैसे - कृषक समुदाय में धर्म वातावरण से जुड़ जाता है । पशुओं तथा वृक्षों के प्रति धार्मिक मान्यताएँ समाहित हो जाती हैं । बरगद तथा पीपल के वृक्षों में देवी-देवताओं को मानने जैसे अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं ।

सेम्पुल यह मानती थी कि मनुष्य प्रकृति का दास है । वह प्रकृति के नियमों से नियन्त्रित होता है । उसकी इच्छा शक्ति, बुद्धि, विचार भी प्रकृति से प्रभावित रहते हैं । इस प्रकार सेम्पुल निश्चयवादी विचारधारा में रेटजेल से आगे थी । वह भौगोलिक नियन्त्रक कारकों का मानव पर पड़ने वाले प्रभाव को खुलकर स्वीकार करती थी और उसकी पुष्टि उदाहरणों से करती थी जबकि रेटजेल किंचित् संकोच के साथ इन विचारों का प्रतिपादन करते हैं ।

सेम्पुल निश्चयवाद की पिटी लकीर भी नहीं थी क्योंकि कालान्तर में वह निश्चयवाद की पूर्ण समर्थक नहीं रही । उसने केंटुकि पर्वत के अतल -सेक्सन निवासियों के अध्ययन में प्रजाति के प्रभाव को निश्चयवाद से ऊपर माना है । उसका कथन था कि 'मानव भूगोल को गणित के कड़े नियमों से जकड़ा हुआ विज्ञान नहीं माना जा सकता ' अत : अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन के साथ -साथ उसने वातावरण नियन्त्रण के स्थान पर वातावरण प्रभाव को उचित ठहराया ।

---

1. Sample,E.C. Influences of Geographical environment, 1911, pp-2
2. Bowman, I. Geography in Relation to social sciences, 1934, p.37

4.4.5 ईसा बोमेन (Isaiah Bowman : 1878-1950)

बोमेन के मतानुसार मनुष्य का विकास केवल भौतिक वातावरण द्वारा नहीं होता । भौतिक वातावरण तो केवल मनुष्य के सामने परिस्थितियां प्रस्तुत करता है, जिसका उपयोग वह अपने बढ़ते हुए ज्ञान के अनुसार करता है । जैसे - अमेरिका महाद्वीप में आलू तथा मक्का की पैदावार ने इस महाद्वीप का ढांचा ही परिर्वतित कर दिया है । उनके अनुसार "विकासोन्मुख मानव समाज के स्वरूप और प्रकृति को भौतिक वातावरण निश्चित नहीं किया करता । वातावरण तो मानव - समाज के विकास पर कुछ अनुबन्ध डालता है । ज्यों -ज्यों मानव के ज्ञान, चिंतन और सामूहिक कार्यो में उन्नति होती जाती है त्यों-त्यों वातावरण में नये -नये तथ्यों की खोज होती रहती है तथा पुराने तथ्य नया महत्व प्राप्त करते जाते हैं । ' "

विज्ञान ने भौगोलिक वातावरण को बहुत कुछ प्रभावहीन कर दिया है । बोमेन ने एक स्थान पर लिखा है कि आधुनिक भूगोल निश्चयवाद से पूर्णतया गतियुक्त है तथा मानवीय एवं वातावरणजनित परिस्थितियों के संयोग द्वारा क्रियाशीलता के प्रकारों के अध्ययन की ओर प्रवृत्त है । अमेरिका में मानव भूगोल की विचारधारा अधिकतर ईसा बोमेन के विचारों के अनुसार प्रवृत्त हुई है और बोमेन को वर्तमान भूगोलवेत्ताओं में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है ।

बोध प्रश्न - 3

1. ग्रिफिथ टेलर ने नव-निश्चयवाद (Neo-Determinism) को क्या नाम दिया?

………………………………………………………………………………………………..

………………………………………………………………………………………………..

2. नव -निश्चयवाद में किस विचार को महत्व दिया गया है?

………………………………………………………………………………………………..

………………………………………………………………………………………………..

3. ओ. एच. के. स्पेट ने सम्भववाद शब्द के बजाय किस शब्द को अधिक सार्थक माना?

………………………………………………………………………………………………..

………………………………………………………………………………………………..

4. जार्ज टैथम ने नव - निश्चयवाद को क्रियात्मक सम्भववाद (Pragmatic possiilism) क्यों कहा ?

………………………………………………………………………………………………..

………………………………………………………………………………………………..

4.5 मानव भूगोल के विकास में ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं का योगदान (Contribution of British Geographers in the Development of Human Geography)

ब्रिटेन में मानव भूगोल का विकास जर्मनी तथा फ्रांस की भांति एक अलग विज्ञान के रूप में नहीं हुआ बल्कि मानव भूगोल की विभिन्न शाखाओं जैसे - आर्थिक भूगोल, नगरीय भूगोल, राजनीतिक भूगोल आदि रूप में हुआ। मानव भूगोल के विकास में निम्न ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं का प्रमुख योगदान रहा है

4.5.1 ए. एफ. मार्टिन (A.F.Martin)

मार्टिन ने निश्चयवाद का एक अलग ढंग से अध्ययन किया है । उन्होंने इस समस्या को कारण तथा प्रभाव (Causes and effect) द्वारा समझने की चेष्टा की है । वे मानव भूगोल में निश्चयवाद सम्भववाद की अपेक्षा 'कारण त था प्रभाव ' की कसौटी पर अधिक खरे सिद्ध होते हैं । अतएव वे निश्चयवाद को ही सैद्धान्तिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से मान्यता देने के पक्ष में हैं । ' बहुधा कारण तथा प्रभाव के बीच अनेक उपकरण तथा उपप्रभाव होते हैं । उदाहरणार्थ - चांदनी रातें अंधेरी रातों की अपेक्षा अधिक शीतल त था आनन्ददायक होती हैं । अत : कहा जा सकता है कि चन्द्रमा इस शीतलता का कारण है तथा उसका प्रभाव है शीतल रात्रि । परन्तु चन्द्रमा शीतलता कैसे पैदा कर देता है? इसका पता नहीं चलता । अत : चन्द्रमा व शीतल रात्रियों के प्रभाव को सम्बन्धित नहीं किया जा सकता जब तक कि उपकारण तथा उपप्रभाव (sub causes-sub effects) ज्ञात नहीं हो ।

मार्टिन की मान्यता है कि ज्यों -ज्यों हमारे भौतिक त था जैविक ज्ञान में वृद्धि होती जायगी त्यों -त्यों मानव तथा वातावरण के पारस्परिक सम्बन्धों को भलीभांति समझने में सफलता मिलती जायगी । इससे निश्चयवादी विचारधारा पुन : अधिकाधिक सफलता की ओर उन्मुख होगी ।

4.5.2 एच. जे. फल्यूर (H.J.Fleur : 1877 - 1968)

फ्ल्यूर एक ब्रिटिश भूगोलवेत्ता होने के साथ -साथ मानव विज्ञानी (Anthropologist) भी था । वह डार्विन की विकासवादी विचारधारा से प्रभावित. था और मानवीय अध्ययनों की एकता पर बल देता था । उसके अनुसार मानवीय समस्याओं का अध्ययन करने के लिए केवल स्थान का ही नहीं बल्कि समय और प्रकार पर भी विचार करना आवश्यक होता है । फ्ल्यूर ने अपनी इस विचारधारा क प्रतिपादन बड़े विस्तार से अपनी पुस्तकों की ग्रन्थमाला ' काल के प थ (Corridors of Times) ' में प्रकाशित किया था । उसके ग्रन्थों में वानर और मानव

---

1. Fleur, H.J and Peake H.J. Corridors of Time, Vol. I-X, London, 1951

उसके ग्रन्थों में वानर और मानव से लेकर काल और स्थान तक में सभ्यताओं के उद्भव और प्रसार का वर्णन उनके वातावरण की परिस्थिति की पृष्ठ भूमि में किया गया है अर्थात् फ्ल्यूर ने संस्कृति के प्रसार तथा पृथक क्षेत्रों में समान्तर विकास, दोनों ही बातों पर जोर दिया था ।

फ्ल्यूर ने 'पश्चिमी यूरोप में मानव ' नामक एक पुस्तक भी लिखी थी जिसमें मानव प्रदेशों की संकल्पना का प्रतिपादन किया है । फ्ल्यूर यह नहीं मानता था कि मानव केवल परिस्थितियो का दास है या किसी प्रदेश की मानवीय दशाओं को केवल परिस्थितियां ही निर्माण करती हैं बल्कि वह मानव के कार्यो को भी महत्व देता था ।

4.5.3 पी एम. रॉक्सबी (P.M.Roxby : 188 0- 1947)

रॉक्सबी एक अग्रगामी ब्रिटिश भूगोलवेत्ता था । उसने मानव प्रदेशों की संकल्पना को विस्तृत रूप दिया था । उसके मतानुसार मानव भूगोल में दो समरूप (similar) प्राकृतिक प्रदेश अपने स्थानिक सम्बन्धों (Spatial Relations) के कारण भिन्न हो जाते हैं ।

रॉक्सबी का एक निबन्ध ' 'मानव भूगोल के विषय क्षेत्र और लक्ष्य " सन 1938 में प्रकाशित हुआ । उसका मत था कि समय बीतने के साथ -साथ समरूप प्राकृतिक प्रदेश परिवर्तित हो जाते हैं । इसलिए मानव वर्गो को वातावरण सामंजस्य के द्वारा स्वयं इन परिवर्तनों का सामना कर लेना चाहिए वरन् उसका हास होगा । प्रादेशिकता (regionalism) पर भी उसके लेख प्रकाशित हुए । उनमें उसने दर्शाया कि एक जैसे प्राकृतिक प्रदेशों में मानवीय क्रियाओं पर एक जैसे प्रभाव होते हैं और उनमें मानवीव विकास भी मिलता -जुलता होता है । उसने ज्योग्राफीकल एसोसिएसन के संस्थापक सदस्य रहते हुए भी मानव भूगोल के विकास में महत्वपूर्ण कार्य किए । रॉक्सबी की विचारधारा आज भी मानव भूगोल में गतिक तत्व (Dynamic elements) बनी हुई हैं ।

बोध प्रश्न - 4

1. फ्ल्यूर ने अपनी ग्रन्थमाला 'काल के पथ ' (Corridors of Times) में किस विचारधारा पर अधिक जोर दिया हे?

   ……………………………………………………………………………………………………..

   ……………………………………………………………………………………………………..

2. पी एम. राक्सबी ने मानव भूगोल के विकास में किस विचारधारा का प्रतिपादन किया है?

   ……………………………………………………………………………………………………..

   ……………………………………………………………………………………………………..

4.6. मानव भूगोल के विकास में रूसी भूगोलवेत्ताओं का योगदान (Contribution of Russian Geographers in the Development of Human Geography)

भूगोल विषय का यह दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि कतिपय कारणों से विश्व के विशालतम भू-भाग के भौगोलिक विवरण का न्यूनतम समावेश होता रहा। सर्व प्रथम जर्मन भूगोलविद् बुशिंग ने अपनी पुस्तक 'न्यू -ज्योग्राफी ' में रूस का विस्तृत भूगोल लिखा । जिसका रूसी भाषा में अनुवाद हुआ । उनका सुझाव था कि सोवियत रूस को प्राकृतिक प्रदेशों में विभक्त किया जाग भूगोलवेत्ता चाहिए । तदनुसार भूगोल के क्षेत्र में कुछ कार्य हुए किन्तु मानव भूगोल के विकास में रूसी भूगोलविदों का योगदान लगभग नगण्य ही रहा है ।

रूसी क्रान्ति (1917) के बाद आई सत्ता परिवर्तन की सजा से बचने के लिए सभी विचारकों ने अपने भौगोलिक कार्यो को कार्ल मार्क्स की विचारधारा के अनुरूप परिमार्जित किया क्योंकि मार्क्स आर्थिक निश्चयवाद के प्रणेता थे । वे पर्यावरण निश्चयवाद के विरूद्ध थे, जो भूगोल में प्रचलित था । इस प्रकार स्वतन्त्र विचार अभिव्यक्ति पर रोक लगी थी । अत : रूसी भूगोलविद् अमेरिका तथा ब्रिटिश भूगोलविदो से अलग - थलग पड़ गए । सभी कार्य रूसी भाषा में ही होते थे । अत : ज्ञानार्जन कठिन हो गया । इसका परिणाम यह हुआ कि 20वीं सदी में कोई भी भौगोलिक संकल्पना रूस में न तो जन्मी और न ही बाहर से आ सकी । रूसी भूगोलविदो में एम वी. लोमोनोसोव (1765) के कार्य उल्लेखनीय रहे हैं । उसकी विचारधारा जर्मन भूगोलवेत्ता हम्बोल्ट की पूर्ववर्ती थी । लोमोनोसोव ने अपनी विचारधारा में दो संकल्पनाओं को मुख्यत : प्रयुक्त किया था जो मानव भूगोल के विकास में एक कदम थीं ।

1. वह पृथ्वी पर होने वाली विकास की प्रक्रियाओं में सार्वनिकता (universality of process) को मानता था ।
2. वह प्राकृतिक घटनाओं में कार्य -कारण सम्बन्धों (Casual relationship) की विवेचना पर जोर देता था ।

4.7 सारांश (summary)

मानव भूगोल का नया युग जर्मन विद्वानों से प्रारम्भ हुआ । 18वीं शताब्दी के मध्य से 20वी शताब्दी के आरम्भ तक जर्मन भूगोलवेत्ताओं ने मानव भूगोल को एक विज्ञान के रूप में विकसित करते हुए वातावरण निश्चयवाद विचारधारा का प्रतिपादन किया । इन विद्वानों में कांट (Kant), रिटर (Ritter), हम्बोल्ट (Humboldt), रेटजेल (Ratzel) आदि के कार्य विशेष उल्लेखनीय रहे है ।

जर्मनी के अलावा फ्रांस में भी मानव भूगोल के क्षेत्र में काफी विकास हुआ । 1 9वीं तथा 2 0वीं सदी में फ्रांस में विडाल डी ला ब्लाश (Vidal de la Blache), जीन्स ब्रूहन्स (Jeans Brunches), डिमांजिये (Demangeon) आदि भूगोलवेत्ताओं ने सम्भववाद नाम की नई विचारधारा को विश्व के सामने रखा ।

जर्मनी तथा फ्रांस के बाहर अन्य देशों में विशेषकर अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन में इस विषय पर काफी कार्य हुए जिनमें अमेरिका की कु. सेम्पुल, हंटिंग्टन, ग्रिफिथ टेलर तथा ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं में फ्ल्यूर, रॉक्सबी तथा मार्टिन आदि विद्वानों ने मानव भूगोल के विकास में योग दिया । इन विद्वानों ने निश्चयवाद तथा सम्भववाद के बीच का मार्ग तलाशते हुए नव - निश्चयवाद विचारधारा का पोषण किया । कुछ भूगोलवेत्ता मानव को प्रकृति का दास मानते हैं, कुछ उसे निष्क्रिय मानते हैं तो कुछ उसे क्रियाशील मानते है, जो अपनी आवश्यकता अनुसार भौतिक वातवरण मे परिवर्तन कर उसके साथ सामंजस्य स्थापित कर लेता है । कुछ का यह मत है कि बिना मानव के प्रकृति का कोई महत्व नहीं है और बिना प्राकृतिक वातावरण के मानव अस्तित्व भी संदिग्ध है । किन्तु अब यह विचारधारा अधिक पुष्ट हुई है कि मानव पर प्रकृति का कुछ नियन्त्रण तो है किन्तु कुछ सीमा तक मानव अपने बुद्धि -बल से उसके प्रभाव को कम कर देता है । मानव अपने अनुकूलन (Adaption) तथा रूपान्तरण (Modification) द्वारा वातावरण का समायोजन करता है और यही वर्तमान नव -निश्चयवाद का सार है ।

अत : संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि " विज्ञान का आदर्श भी समन्वय करना होना चाहिए, न कि संघर्ष करना । भूगोलवेत्ता को भी इस उक्ति को क्रियारूप में लाना चाहिए - न तो प्रकृति पर विजय पाने की कोशिश की जाए और ना ही प्रकृति की दासता स्वीकारी जाय बल्कि प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित किया जाये । "[1]

4.8 शब्दावली (Glossary)

- **अनुकूलन (Adaptation) :** पर्यावरण के अनुसार अपने आप मैं परिवर्तन करके स्वयं को उस पर्यावरण में रहने योग्य बनाना ।
- **मानव पारिस्थितिकी (Human Ecology) :** पारिस्थितिकी विज्ञान की वह शाखा जिसमें मानव समुदाय का उसके पर्यावरणीय दशाओं के साथ सम्बन्धों के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाता है साथ ही इसमें पर्यावरण के साथ मानव के अनुकूलन का भी अध्ययन होता है ।
- **निष्चयवाद या नियतिवाद (Determinism) :** मानव भूगोल की प्रमुख विचार धारा जिसके अनुसार मानव जीवन के सभी पक्षों पर भौतिक पर्यावरण का प्रभाव निश्चय ही पड़ता है ।
- **एन्थ्रोपोज्योग्राफी (Anthropogeographie) :** जर्मन भाषा का शब्द एन्थ्रोपो = मानव + ज्योग्राफी = भूगोल । इन दोनों शब्दों को मिलाकर अंग्रेजी भाषा की शब्दावली में मानव भूगोल बना ।

4.9 सन्दर्भ ग्रंथ

1. एस. डी. कौशिक : **भौगोलिक विचार धाराएँ एवं विधितन्त्र,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 1998

---

1. Thatham, G : Environmental and Possibilism, Geography in Twentieth Centuary (Ed. G. Taylor), 1975, p. 162.

2. वी के. श्रीवास्तव : **भौगोलिक चिंतक के आधार,** वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2001 मानव भूगोल के विकास में भूगोलवेत्ताओं का योगदान
3. एस. डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ 2006
4. राव एवं श्रीवास्तव : **मानव भूगोल,** वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2007
5. रामकुमार गुर्जर एवं बी. सी. जाट : **मानव भूगोल,** पंचशील प्रकाशन, जयपुर 2003
6. चतुर्भुज मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2000
7. R.D.Dixit : **Geographical Thought - A Centextual History of ideas**, prentice Hall of India , New Delhi ,1999
8. H.J.Fleure : **Human Geography in Western Europe**, London .1918

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. फ्रेडरिक रेटजेल । (Fredric Retzel)
2. जर्मन भाषा का शब्द जिसका शब्दार्थ मानव भूगोल है ।
3. एक जर्मन विचारधारा, जिसके अनुसार मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष पर प्राकृतिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है । इसके प्रमुख प्रणेता फ्रेडरिक रेटजेल थे ।
4. अर्डकुण्डे प्रादेशिक व्यक्तित्व तथा पूर्णता की संकल्पना को स्पष्ट करता है ।

बोध प्रश्न - 2

1. सम्भववाद विचारधारा ।
2. प्रकृति मैं सर्वत्र सम्भावनाएँ विद्यमान हैं । इसके प्रणेता फ्रांसिसी भूगोलवेत्ता लुसिएन फेब्रे
3. मानव का उसके भौगोलिक पर्यावरण से संबंध होता है । उसने प्राकृतिक वातावरण की संकल्पना में परिमार्जन किया ।

बोध प्रश्न - 3

1. वैज्ञानिक निश्चयवाद (Scientific Determinism) ।
2. मानवीय छांट (Human Choice) ।
3. प्रसम्भाव्यवाद (Probabilism) ।
4. मानवीय छांट को अपने उद्देश्य के अनुसार निश्चित किया जा सकता है ।

बोध प्रश्न - 4

1. समय (time) और प्रकार (types) ।
2. प्राकृतिक प्रदेश पीरवर्तनशील हैं इसलिए मनुष्य को वातावरण के साथ सामंजस्य करना चाहिए ।

4.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वातावरण निश्चयवाद तथा सम्भववाद में भेद समझाइए?
2. मानव भूगोल की जर्मन विचारधारा से आप क्या समझते हैं?

3. हम्बोल्ट तथा रिटर के मानव भूगोल के विकास कार्यो की विवेचना कीजिए?
4. नव -निश्चयवाद से क्या तात्पर्य है? इस मत के दो प्रमुख समर्थकों के विचारों का उल्लेख कीजिए?
5. रेटजेल को मानव भूगोल का जन्मदाता कहा जाता है । इस विषय पर अपने विचार प्रकट कीजिए?
6. " अमेरिका तथा ब्रिटिश भूगोलशास्त्रियों ने मानव भूगोल की कई विचारधाराएँ दी हैं । " यह कथन कहां तक सत्य है?
7. मानव तथा वातावरण की पारस्परिक क्रियाओं में मानवीय छांट का कितना महत्व रहता है? स्पष्ट कीजिए ।

इकाई 5 : विश्व के प्रमुख पर्यावरणीय प्रदेशों में मानव समंजस्य (Human Adjustment in World's Principal Environments)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 प्रमुख पर्यावरणीय प्रदेशों में सामंजस्य तथा समानुकूलन के रूप

5.2.1 विषुवत रेखीय प्रदेश

5.2.2 उष्ण कटिबन्धीय मरूप्रदेश

5.2.3 मानसून प्रदेश

5.2.4 शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश

5.2.5 भूमध्य सागरीय प्रदेश

5.2.6 ध्रुवीय प्रदेश

5.3 सारांश

5.4 शब्दावली

5.5 सन्दर्भ ग्रंथ

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने पर आप समझ सकेंगे कि : -

- विश्व के प्रमुख पर्यावरणीय प्रदेशों एवं उनकी भौगोलिक दशाओं का ज्ञान ।
- विभिन्न पर्यावरणीय प्रदेशों में मानव सामंजस्य एवं समानुकूलन का ज्ञान

5.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION)

मानव एक भौगोलिक कारक है, जिसकी केन्द्रीय स्थिति है । मानव वातावरण के अनुसार अपना तथा अपने कार्यो और क्रियाओं का अनुकूलन करता है, तथा अपनी आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए अपनी शक्ति और रुचि के अनुसार वातावरण में परिवर्तन करता है और वातावरण द्वारा निर्धारित प्रदेशों में मानव सामंजस्य को गई सीमाओं के अन्दर अपनी छाँट का प्रयोग करते हुए, मानवीय सत्ता को बनाये रखने तथा मानवीय प्रगति के लिए वातावरण समायोजन करता है ।

यद्यपि मानव ने अपनी बुद्धि, विवेक, चातुर्य तथा ज्ञान विज्ञान से कृषि, उद्योग, परिवहन, व्यापार आदि के क्षेत्र में आश्चर्यजनक उन्नति की है, परन्तु इतना सब होते हुए भी मनुष्य भौतिक दशाओं पर पूर्णरूपेण विजय नहीं पा सकता । प्रकृति इतनी अधिक बलवान है कि

मनुष्य उसके बन्धनों से अपने आपको मुक्त नहीं कर सकता और प्रकृति द्वारा निर्धारित की गई सीमाओं के भीतर ही मानव को अपनी छाँट करनी पड़ती है ।

पृथ्वी पर सर्वत्र प्राकृतिक परिस्थितियाँ एक समान नहीं है । जहाँ कहीं प्राकृतिक दशाएँ स्व समान मिलती है, वहाँ प्राय: मानव की आर्थिक क्रियाओं में भी समानता मिलती है । जैसे : भूमध्य रेखीय प्रदेश में आखेटकर्म व स्थानान्तरित कृषि होती है । भूमध्य सागरीय प्रदेश में रसीले फलों का उत्पादन अधिक होता है, प्रेरीज प्रदेश पशुपालन व कृषि के लिए विश्व विख्यात है ।

संसार के किसी एक पर्यावरणीय प्रदेश में रहने वाले समस्त मानव वर्ग की सांस्कृतिक उन्नति का स्तर ब्रून्स समान नहीं पाया जाता है । जैसे भूमध्य सागरीय प्रदेश में स्थित अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा कैलीफोर्निया में आर्थिक व वैज्ञानिक उन्नति अधिक हुई है ।

संसार के सभी पर्यावरणीय प्रदेश वर्तमान में परिवर्तित हो रहे हैं । मानव की सृजनात्मक कल्पना, उसकी सकंल्प शक्ति, अविष्कार और जीवन की मान्यताओं ने इन प्रदेशों के परम्परागत व्यवसाय को बहुत कुछ बदल दिया है ।

5.2 प्रमुख पर्यावरणीय प्रदेशों में मानव सामंजस्य तथा समानुकूलन के रूप (Forms of Adjustment and Adaption in Principal Environment)

मानव प्रकृति की एक अनुपम कृति है । भौगोलिक कारकों में इसका स्थान केन्द्रीय है, क्योंकि मानव ही अपने प्राकृतिक वातावरण का निर्माण करता है । वह प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण का उपयोग करता है, उनसे प्रभावित होता है और उनमें परिवर्तन करता है । वही उत्पादन, खेती, पशुपालन, निर्माण-उद्योग, व्यापार और परिवहन आदि करता है, तथा सामाजिक संगठन, राजनीतिक प्रबन्ध और सांस्कृतिक विकास करता है । वह प्राकृतिक संसाधन का उपयोग करके संस्कृति का निर्माण करता है । इस प्रकार मानव एक भौगोलिक कारक है जिसमें अनुकूलन एव सामंजस्य करने की अपार क्षमता निहित है ।

वातावरण के दो अंग हैं - प्रथम, प्राकृतिक जिसके अन्तर्गत प्रादेशिक स्थिति, भूमि की बनावट, जलवायु, मिट्टियाँ, जलराशियाँ, प्राकृतिक वनस्पति, जीव जन्तु एवम् खनिज पदार्थ सम्मिलित किये जाते है तथा द्वितीय, सांस्कृतिक वातावरण जिसमें मानवीय निवास गृह, आवागमन के साधन, सिंचाई के साधन, परिवहन और संचार के साधन, आर्थिक व्यवसाय, श्रम विभाजन, खेत, कारखाने, बैंक बीमा-संस्था तथा साहित्यिक, वैज्ञानिक औद्योगिक और राजनीतिक संस्थाएँ आदि सम्मिलित किये विश्व के प्रमुख पर्यावरणीय जाते है ।

प्राकृतिक एवम् सांस्कृतिक वातावरण के विभिन्न तत्व मनुष्य के भोजन, वस्त्र, निवास, व्यवसाय समाज एवं संस्कृति पर प्रभाव डालते है । मनुष्य अपनी आवश्यकताओं, शक्तियों और रुचियों के अनुसार वातावरण के प्रभाव के कारण अपने रहन-सहन का अनुकूलन करता है और इसके अतिरिक्त वातावरण में कुछ रूपान्तरण (Modification) करता है । मनुष्य की इन क्रियाओं को वातावरण समायोजन (Environmental Adjustment) कहते हैं । सामान्यतया

जिन क्षेत्रों में प्राकृतिक वातावरण की शक्तियाँ अधिक प्रभावशाली नहीं होती वहाँ मानव रूपान्तरण करता है । उदाहरण के लिए, ध्रुवीय प्रदेश में आज भी अनुकूलन का रूप दिखलाई पड़ता है तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण क्षेत्र में मानव ने अपनी बुद्धि, विवेक, तथा चातुर्य से प्राकृतिक वातावरण में रूपान्तरण किया है ।

वातावरण समायोजन दो प्रकार से होता है : अनुकूलन तथा रूपान्तरण । जब मनुष्य अपने आपको वातावरण के अनुकूलन ल ढाल लेता है तो उसे अनुकूलन कहा जाता है । अनुकूलन में मनुष्य की क्रियाएँ दो प्रकार की होती है । (i) आन्तरिक अनुकूलन तथा (ii) बाह्य अनुकूलन । आन्तरिक अनुकूलन भी दो प्रकार का होता है - (i) ऐच्छिक (Voluntary) तथा (ii) अनैच्छिक (Involuntary) । मानव जब वातावरण को अपने अनुकूल बनाता है तो उसे रूपान्तरण कहते हैं । रूपान्तरण भी दो प्रकार का होता है - (i) प्राकृतिक रूपान्तरण तथा (ii) सांस्कृतिक रूपान्तरण ।

संसार के विभिन्न प्रदेशों में वातावरण समायोजन मानव समूहों के द्वारा होता है जैसे टुण्ड्रा प्रदेश के निवासी खाल और समूर के वस्त्र पहनते हैं, कच्चे मांस का भक्षण करते हैं और सील मछली तथा रेण्डियर के शिकार पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं । यहाँ कृषि के लिए भौगोलिक परिस्थितयाँ अनूकूल नहीं है । इस बर्फीले प्रदेश में भोजन वस्त्र इत्यादि आखेट पर निर्भर है । यह कार्य अनुकूलन का है ।

विश्व के सभी पर्यावरण प्रदेशों में वातावरण रूपान्तरण के उदाहरण देखने को मिलते है । ठण्डे प्रदेश के निवासी अपने मकानों के दरवाजे खिड़कियाँ बहु त छोटे बनाते हैं, ताकि उनमें बर्फ की आधी या बहु त ठण्डी हवा प्रवेश न कर सके । तापमान को सहनीय बनाये रखने के लिए उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में गर्मी की ऋतु में मकानों के दरवाजे और खिड़कियों पर पर्दे लटका दिये जाते हैं दूर-दूर स्थित विभिन्न प्रदेशों के बीच सम्बन्ध बनाये रखने के लिए नदियों पर पुल बनाया जाता है । खनिज प्रधान क्षेत्रों के निवासी खनिजों को बाहर निकालकर उद्योगों की स्थापना कर लेते हैं । मरू प्रदेश मे सिंचाई की समुचित व्यवस्था करके इच्छानुसार फसलों का उत्पादन कर लेते हैं । विज्ञान की सहायता से बिना मौसम की कृषि फसलें, सब्जियाँ इत्यादि उगा लेते हैं । यह सब कार्य मनुष्य के द्वारा वातावरण में परिवर्तन करने वाले हैं । संसार के विभिन्न पर्यावरणीय प्रदेशों में वहाँ की जलवायु, तापमान, वर्षा की मात्राओं के द्वारा कृषि फसलों की सीमाएँ निर्धारित होती है जैसे चावल की कृषि के लिए मानसूनी प्रदेश आदर्श माने जाते हैं तथा गेहूँ उत्पादन के लिए आदर्श परिस्थितियाँ प्रेयरी प्रदेशों में पाई जाती है । कहने का तात्पर्य यह है कि मानव समूह द्वारा अनुकूलन व रूपान्तरण की क्रियाएँ अनिवार्य हो जाती है।

एक क्षेत्र कुछ चुने हु ए कारकों के सम्बन्ध में एक समरूप क्षेत्र होता है । ऐसे क्षेत्र में समान आन्तरिक विशेषताएँ पाई जाती है जो की उसे अन्य क्षेत्र मे अलग करती है ,अत : किसी पर्यावरणीय क्षेत्र मे समरूप जलवायु, मृदा तथा प्राकृतिक वनस्पति पाई जाती हैं ये प्राकृतिक तथ्य किसी क्षेत्र के जीवन प्रणाली तथा भू -दृश्य को बहु त अधिक प्रभावित करते हैं । अत : ये प्राकृतिक तथ्य सम्मिलित रूप से किसी विशेष जीवन प्रणाली का निर्धारण करते है ।

संसार को प्रमुख पर्यावरणीय प्रदेशों में बाँटने का श्रेय स्वर्गीय प्रो. हरबर्टसन को है, जिन्होंने 1905 ई. में सर्वप्रथम इस प्रकार का विभाजन प्रस्तुत किया । उनके अनुसार ' 'पर्यावरणीय प्रदेश पृथ्वी के धरातल का वह क्षेत्र है, जहाँ मानव जीवन को प्रभावित करने वाली प्राकृतिक परिस्थितियाँ बहुत कुछ एक सी रहती है " । दूसरे शब्दों में ' 'पर्यावरणीय प्रदेश पृथ्वी का वह भू-भाग होता है, जिनके क्षेत्र भर में भूमि' की रचना, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति और जन्तु वर्ग की प्राय: समान दशाएं होती है जैसे - भूमध्य रेखीय प्रदेश, मानसूनी प्रदेश, भूमध्य सागरीय प्रदेश आदि । ऐसे प्राकृतिक प्रदेशों की स्थिति कूल पर दूर-दूर होते हुए भी उनमें जलवायु, वनस्पति आदि की समानता होती है । उदाहरण के लिए, भूमध्य सागरीय जलवायु के प्रदेशों की स्थित यूरोप में स्पेन, इटली आदि, संयुक्त राज्य में कैलीफोर्निया, दक्षिणी अमेरिका में मध्य चिली तथा आस्ट्रेलिया के द प भाग में है । इन दूर -दूर स्थित प्रदेशों में जलवायु की समानता है । ये पर्यावरणीय प्रदेश हैं ।

प्राकृतिक अथवा पर्यावरणीय प्रदेश चूँकि, प्राकृतिक तथ्यों द्वारा निर्धारित होते हैं अत: इनकी सीमाएँ स्थायी होती हैं । परन्तु दो पर्यावरणीय प्रदेशों के बीच की सीमा एक संक्रमण क्षेत्र (Transitional Zone) होती है अत : यह स्पष्ट रूप से चिह्नित नहीं होती है ।

एक पर्यावरणीय प्रदेश में समान्यतया तीन बातें महत्वपूर्ण होती हैं -

1. प्रदेशों का निर्धारण एक या एक से अधिक स्वतन्त्र भौगोलिक तत्वों का ध्यान में रखकर किया जाता है ।
2. किसी भी प्रदेश में पूर्णरूपेण समरूपता नहीं पायी जाती है ।
3. इन प्रदेशों में भौगोलिक अन्र्तसम्बन्धों के साथ-साथ समानता या असमानता (Differences) का अध्ययन भी महत्वपूर्ण होता है ।

अत : एक निश्चित स्थान का क्षेत्र जो आस -पास के क्षेत्रों से किसी ने किसी प्रकार भिन्न होता है, ब्रून्स निश्चित पर्यावरण की सीमा से बाँधा जा सकता है । विश्व भूगोल के सामान्य भौगोलिक ज्ञान के लिए ऐसे पर्यावरणीय प्रदेशों का अध्ययन आवश्यक होता है ।

बोध प्रश्न - 1

1. पर्यावरण प्रदेश का विभाजन सर्वप्रथम किसने प्रस्तुत किया?

   ………………………………………………………………………………………………..

   ………………………………………………………………………………………………..

2. पर्यावरणीय प्रदेश को परिभाषित कीजिए ।

   ………………………………………………………………………………………………..

   ………………………………………………………………………………………………..

3. पर्यावरणीय प्रदेश के निर्धारण में किन-किन बातों का ध्यान रखा जाता है?

   ………………………………………………………………………………………………..

   ………………………………………………………………………………………………..

5.2.1 विषुवत रेखीय प्रदेश (Equatorial Regions)

स्थिति एवं विस्तार : भूमध्य रेखीय प्रदेश विषुवत रेखा के दोनों ओर 50 अक्षांश के मध्य स्थित है । कही-कहीं ये इन अक्षांशों के पार तक चले गये हैं । प्रमुख विषुवत रेखीय प्रदेश ये है - (1) दक्षिणी अमेरिका में आमेजन नदी प्रदेश, (ii) अफ्रीका के गिनी तट तथा कांगो नदी प्रदेश; और (iii) एशिया में द. पूर्वी द्वीप समूह तथा मलाया । इस प्रदेश को विषुवत रेखीय निम्न प्रदेश (Regions of Equatorial Low Lands) भी कहते हैं (चित्र : 5.1)

जलवायु : भूमध्य रेखीय प्रदेश में बारहों महीने तापमान ऊँचा रहता है और यहाँ शरद नाम की कोई ऋतु नहीं होती है । पूरे वर्ष का औसत तापमान लगभग 27^0 सेन्टीग्रेड रहता है । वार्षिक तापान्तर 2^0 सेण्टीग्रेड से कभी भी अधिक नहीं होता। दैनिक तापमान विभेद 12^0 सेण्टीग्रेड से कम रहता है । सापेक्षिक आर्द्रता 80 प्रतिशत से अधिक रहती है । इन प्रदेशों में वर्षा सालभर होती है और शायद ही कोई महीना शुष्क निकलता हो । फिर भी, वर्ष में दो बार सबसे अधिक वर्षा होती है- एक मार्च में और दूसरी नवम्बर में । तापमान की अधिकता के कारण संवाहनीय धाराएँ चलती है । अतएव यहाँ होने वाली वर्षा संवाहनीय वर्षा (Convectional Rain) है । दोपहर तक आकाश स्वच्छ रहता है और तेज धूप के कारण वाष्पीकरण क्रिया तेजी से होती है । जलवाष्प मिश्रित वायु ऊपर जाकर ठण्डी हो जाती है और तीसरे पहर बिजली कि कड़क के साथ मूसलाधार वर्षा होती है । शाम के समय आकाश साफ हो जाता है । यह क्रम रोज चलता है । इस प्रकार 27^0 सेण्टीग्रेड तापमान और 200 सेण्टीमीटर वार्षिक वर्षा इस पर्यावरणीय प्रदेश क जलवायु सम्बन्धी प्रमुख विशेषता है ।

दक्षिणी एशिया स्थित सिंगापुर तथा ब्राजील में स्थित पारा स्थानों का औसत मासिक तापमान एवं वर्षा के आकड़े क्रमश: सेण्टीग्रेड तथा सेण्टीमीटर मे नीचे दिये जा रहे हैं :-

तालिका-5.1 : सिंगापुर (एशिया) तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
तापमान (0सेन्टीग्रेड)	27	27	27	28	28	27	27	27	27	27	27	27
वर्षा (सेन्टीमीटर)	25	17	19	19	17	17	17	20	17	21	25	27

इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि यहाँ सर्द ऋतु नहीं होती; (2) औसत तापमान 27^0c (3) औसत तापान्तर 27^0C के आसपास रहता है : (3) वार्षिक तापान्तर 1^0 है , (4) वर्षा सालभर होती है , और (5) वर्षा का कुल योग 240 cm से अधिक है ।

पारा (ब्राजील) तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
तापमान (0सेन्टीग्रेड)	25	25	25	25	26	26	25	26	26	26	26	25
वर्षा	31	35	35	31	25	27	15	11	9	8	6	15

(सेन्टीमीटर)												

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि वर्ष भर ऊँचा तापमान न्यून तापान्तर तथा अत्यधिक वर्षा इस प्रदेश की जलवायु की प्रमुख विशेषताएँ हैं (चित्र 5. 2) ।

इस प्रकार यहाँ की जलवायु गर्म, तर व अस्वस्थकर है । अत : इन भागों में मनुष्य किसी प्रकार की उन्नति नहीं कर सकता । इसी कारण इन प्रदेशों को क्षीणकारक प्रदेश (Regions of Debilitation) कहते है ।

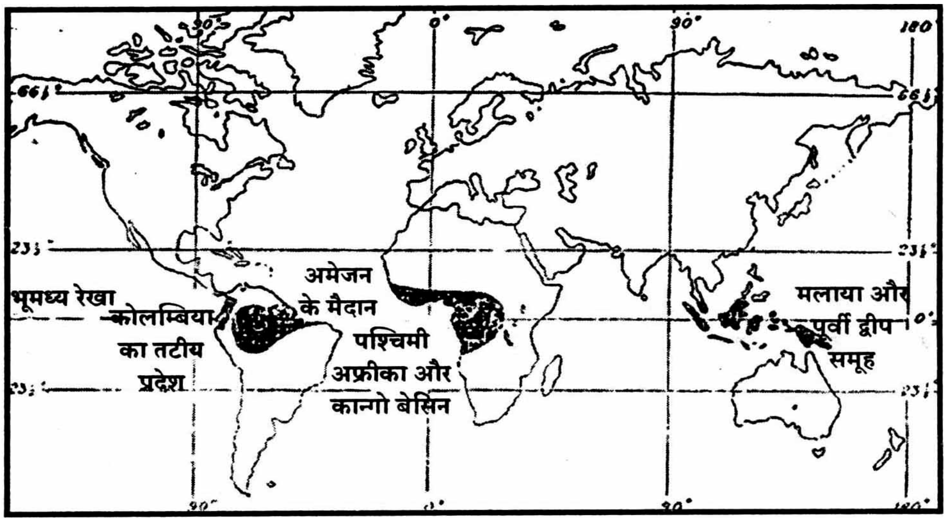

चित्र - 5.1 : विषुवत रेखीय प्रदेश

प्राकृतिक वनस्पति : उच्च तापमान एवम् भारी वर्षा के फलस्वरूप भूमध्य रेखीय प्रदेशों में सघन वन मिलते है । ये वन वर्ष भर हरे भरे एवं इतने सघन होते हैं कि सूर्य की किरणें भी इनमें प्रवेश नहीं कर पाती हैं । इन वनों के वृक्षों की ऊँचाई 40 से 80 मीटर तक होती है । इन वनों के मुख्य वृक्ष महोगनी, गट्टापार्चा, बांस, सिनकोना, आबूनस एबोनी, ताड़, चन्दन, रबड़, वेंत आदि हैं । इन वनों में वृक्षों पर अनेक बेल तथा लताएँ आती हैं । इन वनों का 'सेल्वाज ' भी कहते हैं । आर्थिक दृष्टि से भूमध्य रेखीय वन कम महत्वपूर्ण हैं क्योंकि (i) सघनता के कारण वांछित लकडी को प्राप्त करना कठिन होता है, तथा (ii) एक ही प्रकार के वृक्ष समूह मिलते में नहीं हें ।

जीव-जन्तु : वनस्पति की विविधता के अनुरूप ही यहाँ कई प्रकार के जीव जन्तु पाये जाते है । यहाँ पर पाये जाने वाले जीव जन्तुओं को तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं । प्रथम प्रकार के पशु वे हैं जो पेड़ों की टहनियों पर रहकर अपना जीवन यापन करते हैं, जहाँ उन्हें पर्याप्त सूर्य की रोशनी व गर्मी प्राप्त होती है । पुंछ के बल लटकने वाले बन्दर, नाना प्रकार की रंग-बिरंगी चिड़िया, चमगादड़, कीड़े मकोड़े, छिपकली, गिरगिट, अनेक प्रकार के रंग-बिरंगे पक्षी मेंढक और अजगर इस प्रकार मुख्य पशु है । द्वितीय प्रकार के पशु वे हैं जिनका शरीर बहुत भारी और मोटा होता है और जो घनी वनस्पति में होकर अपना मार्ग निकाल सकते है । हाथी, गैंडा, जंगली सूअर, जिर्राफ, दरियाई घोड़ा,आदि इनके मुख्य उदाहरण है । मांसाहारी पशुओं में जगुआर, स्लोथ, चूमा, शेर और चीते भी मिलते हैं । तृतीय प्रकार के पशु जल में निवास करते

है; जैसे मगर, दरियाई घोड़े, जहरीली मछलियाँ, मेंढक, केकड़े, घड़ियाल और जलसर्प । इनके अतिरिक्त कीड़ों -मकोड़ो मच्छरों आदि की तो भरमार रहती है ।

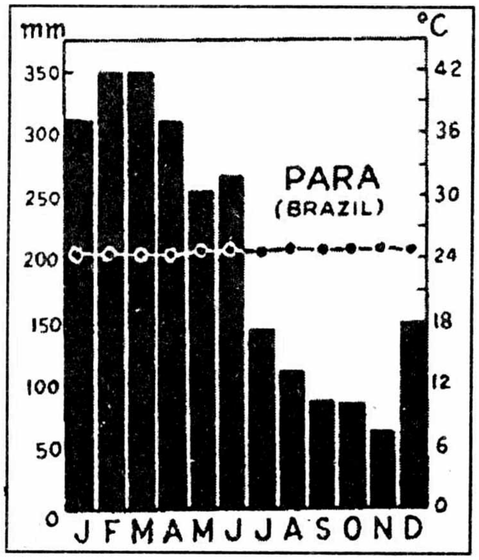

चित्र- 5.2 : भूमध्यरेखीय प्रदेश में स्थित पारा (ब्राजील) द. गोलार्द्ध छा जलवायु

आर्थिक विकास तथा मानवीय प्रत्युत्तर : इन प्रदेशों में गर्म व नम जलवायु होने के कारण मानव विकास बहुत ही निम्नतर श्रेणी का पाया जाता है, क्योंकि यहाँ का निरन्तर गर्मी और आर्द्र जलवायु मनुष्य के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए
अत्यन्त ही हानिकारक होती है तथा कुछ भागों में अनेक प्रकार का बिमारियों का प्रकोप रहता है । इन प्रदेशों में मनुष्य पूर्णरूप से स्वस्थ रहकर परिश्रम नहा कर सकता । यहाँ के निवासियों का आवश्यकताएँ बहुत ही सीमित और खाक- होती जो उष्ण कटिबन्धीय वनों से पूरी हो जा जाती है।

ये प्रदेश जंगल जातियों से आबाद और सभ्यता का दौड़ में बहुत पिछड़े हुए हैं । कांगो बेसिन के पिगमी, आमेजन बेसिन के आमेजन इण्डियन, न्यूगिनी के 'हेड हण्टर ', वोर्नियों के 'टेयाक', प्रदेशों में मानव सामंजस्य मलेशिया के संभाग, इन प्रदेशों के प्रमुख मूल निवासी हैं जिनका जीवन संघर्ष से परिपूर्ण है ।

शीतोष्ण कटिबन्ध के लोगों ने अपनी उष्ण कटिबन्धीय वस्तुओं की आवश्यकतओं के लिए इस प्रदेश के कई भागों में अपनी पूँजी, व्यवस्था, कुशलता और देशी श्रम की सहायता से बागाती कृषि करना आरम्भ किया है । इस प्रकार की खेती के अन्तर्गत नारियल, रबड़, केले, चाय और कहवा के बड़े उपवन इन प्रदेशों में पाये जाते है । रबड़ के उपवन दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों में फैले हैं । रबड़ के उपवन दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में फैले हैं । केले की खेती पश्चिमी द्वीप समूह के जनैको मैक्सिको, मध्य अफ्रीका के पश्चिमी तट कनारी द्वीप, कोलम्बिया, ग्वाटेमाला, पनामा, कोस्टारिका और ब्राजील के पूर्वी तट पर की जाती है । कोको की कृषि अफ्रीका के गोल्डकोस्ट, द. पूर्वी ब्राजील इक्वेडोर, बेनजुएला में अधिक की जाती है । इनके अतिरिक्त चाय, ताड़ तथा अनन्नास की उपज भी इन भूमध्य रेखीय प्रदेश में महत्वपूर्ण है ।

खनिज संसाधन की दृष्टि से भूमध्य रेखीय प्रदेश निर्धन है । केवल मलेशिया में टिन, इण्डोनेशिया में खनिज तेल तथा टिन, काँगो बेसिन में ताँबा, टिन व कीमती पत्थर, गिनी तटवर्ती देशों में, बाक्साइट, आमेजन बेसिन में लौह अयस्क, जायरे में ताँबा व टिन जैसे खनिज मिलते है ।

इन प्रदेशों में सभी जगह प्राय: एक सी ही पैदावार होती है इसलिए यहाँ का देशी व्यापार बहुत उन्नत नहीं है । किन्तु इन प्रदेशों की उपज शीतोष्ण कटिबन्ध वाले देशों को अधिक निर्यात की जाती है । मलेशिया से रबड़, टिन व अनन्नास, लंका से चाय व रबड़, मध्य अफ्रीका से रबड़ और गोंद, ताड का तेल, कोको, हाथी दाँत और दक्षिणी अमेरिका से शक्कर तथा कहवा उत्तरी अमेरिका और यूरोपयी देशों को निर्यात किया जाता है । इन प्रदेशों से वन उत्पाद व बहुमूल्य लकड़ियों का भी निर्यात होता है । उद्योग धन्धों की दृष्टि से ये क्षेत्र बहुत पिछड़े हुए हैं ।

मानाअस (द. अमेरिका), अकारा (गिनीतट) तथा जकार्ता (इण्डोनेशिया) भूमध्य रेखीय प्रदेश के बडे तथा महत्वपूर्ण नगर हैं ।

विकास की पर्याप्त संभावनाओं के कारण भूमध्य रेखीय प्रदेश की आर्थिक व सामाजिक परम्पराएँ वर्तमान समय में बदल रही हैं । स्थानान्तरित कृषि अब बन्द हो रही है तथा स्थायी कृषि का सूत्रपात हो चुका है । बागाती कृषि का विकास एक प्रेरक के रूप में है । वन उत्पादों का व्यावसायिक स्तर पर दोहन प्रारम्भ हो चुका है । आधुनिक तकनीक के माध्यम से खनिज का दोहन किया जा रहा है । निर्माण उद्योग की दृष्टि से इण्डोनेशिया तथा जायरे (अफ्रीका) अग्रणीय है । अफ्रीका की नदियाँ जल प्रपातों से भरी हुई है जहाँ जल विद्युत उत्पादन की अपार सम्भवना है । सब मिलाकर देखा जाये तो ये प्रदेश अभी भी विकास के निचले पावदान पर ही है ।

बोध प्रश्न-2

1. भूमध्य रेखीय प्रदेश की बागाती कृषि के प्रमुख फसलों के नाम बताइए ।

……………………………………………………………………………………………….

……………………………………………………………………………………………….

5.2.2 उष्ण कटिबन्धीय मरु प्रदेश (Tripical Deserts)

स्थिति एवम् विस्तार : उष्ण मरूस्थलीय प्रदेश का विस्तार मोटे तौर पर 15^0 से 30^0 अंक्षाश तक दोनों गोलार्द्ध में मिलता है । प्रमुख मरूस्थल ये हैं - (i) अफ्रीका में सहारा व कालाहारी; (ii) एशिया में अरब, इरान और थार; (iii) उत्तरी अमेरिका में निम्न कैलीफोर्निया, एरीजोना और कोलौरैडो के मरूस्थल (संयुक्त राज्य अमेरिका के द.प. और और मेक्सिको के उत्तर पश्चिम); (iv) द अमेरिका में अटाकामा (उ. चिली तथा दक्षिणी पीरू); तथा (v) आस्ट्रेलिया का मध्य पश्चिमी भाग । ये प्रदेश महाद्वीपों के पश्चिमी भाग में स्थायी वाणिज्य पवन के क्षेत्र में स्थित है । इसका अपवाट उत्तरी अर्फीका का मरूस्थल सहारा है । जो महाद्वीप के पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक विस्तृत है (चित्र 5.3) ।

जलवायु : उष्ण कटिबन्धीय शुष्क रेगिस्तानी प्रदेश की जलवायु वनस्पति जगत एवं प्राणि जगत दोनों के लिए बहुत ही प्रतिकूल हैं । यहाँ दो प्रकार की जलवायु दशाएँ पाई जाती हैं, ग्रीष्मकालीन व शीतकालीन । ग्रीष्मकालीन औसत तापमान 30^0-35^0 सेण्टीग्रेड के बीच रहता है । दोपहर के समय तापमान 40^0 सेण्टीग्रेड से 48^0 सेण्टीग्रेड तक पहुँच जाता है । रात्रिकालीन तापमान में गिरावट होने से आरामदायक स्थिति बन जाती है । शीतकालीन दिन का तापमान 15^0 सेण्टीग्रेड से 21^0 सेण्टीग्रेड बना रहता है, परन्तु रात्रि में तापमान गिर जाता है, जो 10^0 सेण्टीग्रेड के आस पास होता है । रेतीले धरातल के कारण तापमान में विकिरण के कारण कभी-कभी इतनी गिरावट हो जाती है कि तापमान 3^0 सेण्टीग्रेड तक पहुँच जाता है । सामान्यरूप से औसत वार्षिक तापान्तर 17^0 सेण्टीग्रेड से 22^0 सेण्टीग्रेड तक होता है । यह उच्च वार्षिक तापान्तर, खुले आकाश, वनस्पति रहित धरातल, कम आर्द्रता, भूमध्य रेखा से दूरी, रेतीली मिट्टी आदि के कारण होता है । दैनिक तापान्तर (22^0 -28^0 सेण्टीग्रेड) भी काफी ऊँचा होता है । कभी-कभी विशिष्ट दशाओं में दैनिक तापान्तर (40^0 सेण्टीग्रेड तक पहुँच जाता है (तालिका- 5. 2 तथा चित्र- 5. 4) ।

उष्ण रेगिस्तानी प्रदेशों में वर्षा की मात्रा इतनी कम तथा परिवर्तनशील है कि औसत वार्षिक वर्षा का निर्धारण अत्यन्त कठिन हो जाता है । सामान्यतया इन प्रदेशों में 25 सेन्टीमीटर औसत वार्षिक वर्षा होती है । अधिकांश क्षेत्र यहाँ ऐसे है जहाँ कई वर्षो तक वर्षा की एक बूँद भी नही पड़ती । औसत वार्षिक वर्षा सहारा में 12.5 सेण्टीमीटर, आस्ट्रेलिया के विलियम क्रीक में 13 सेन्टीमीटर, एरीजोना के यूमा में 8 सेण्टीमीटर तथा द.प. अफ्रीका के तोलीथ में 6 सेण्टीमीटर होती है । स्पष्ट है कि वर्षा की मात्रा व वितरण दोनो इस प्रदेश में असमान हैं । भारतीय महामरूस्थल भी इसका अपवाद नहीं है । कभी-कभी अतिवृष्टि से बाढ़ की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है । अत्यल्प वर्षा मरूस्थली प्रदेश की जलवायु की प्रमुख विशेषता है । धरातल को सदैव चिलचिलाती धूप का सामना करना पड़ता है । इन प्रदेशों की विषम जलवायु एवम् परिस्थिति के कारण मानवीय जीवन बड़ा ही कठोर होता है, अत : ये भाग सतत् कठिनाइयों वाले प्रदेश (Regions of Everlasting Difficulties) कहलाते है ।

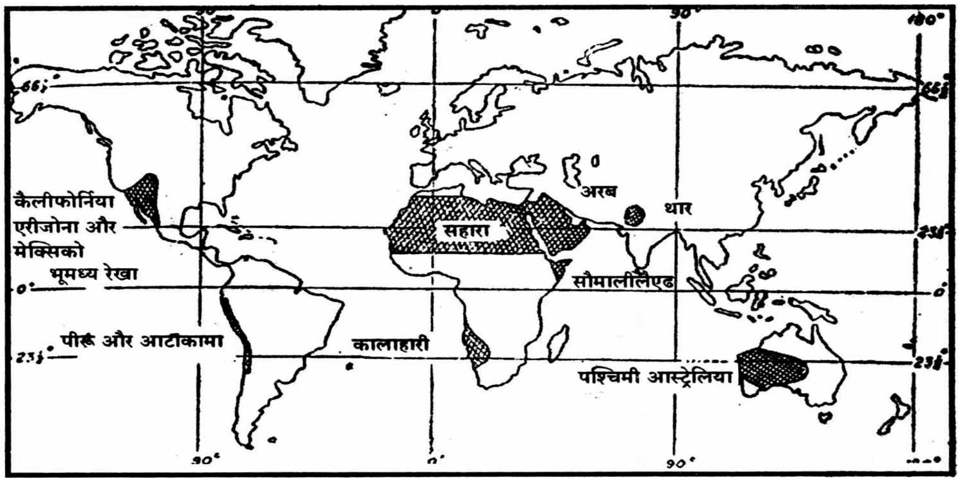

चित्र - 5.3 : उष्ण कटिबन्धीय मरु प्रदेश

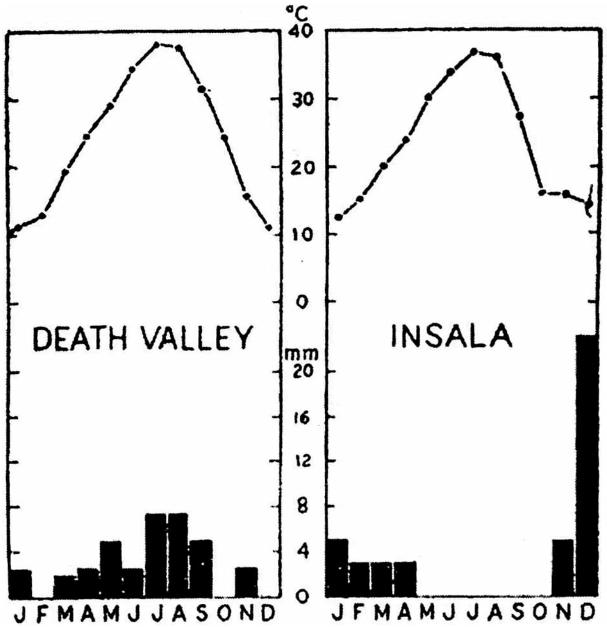

चित्र - 5.4 : उष्ण कटिबन्धीय मरु प्रदेश स्थिति डेथ वैली (कैलीफोर्निया) और इनसाला (सहारा) की जलवायु ।

प्राकृतिक वनस्पति : उष्ण मरूस्थलों की जलवायु प्राकृत्तिक वनस्पति के समुचित विकास के लिए प्राय : अनुमति नहीं देती । यही कारण है कि अधिकांश क्षेत्र या तो वनस्पति विहीन है, जैसे - लिबिया तथा अरब के रेगिस्तान और यदि वनस्पति है भी तो झाड़ियों के रूप में ही । मरूरथलों के शुष्क भागों में उगने वाले पौधों की जड़े बहुत ही लम्बी और मोटी होती है जिससे वे मिट्टी की निम्नतम गहराई से भूतल का भीतरी जल चूँस सके और उन्हें अपने मोटे भागों में संचित रख सके । कुछ पौधों की पत्तियाँ और तने बहुत मोटे तथा इस प्रकार प्राकृतिक रूप से सुरक्षित रहते हैं कि उनमें से पानी बाहर न जा सके और शुष्क जलवायु से उनकी रक्षा करने के लिए उन्हीं में जमा रहे । कुछ वृक्षों के तने काँटे वाले होते हैं । वनस्पतियाँ प्राय झाड़ी के रूप में बिखरी हुई मिलती हैं ।खजूर, बबूल, ताड़, लोबान , खेजड़ी , सेहूड़ नागफनी,आदि मुख्य मरूस्थलीय वनस्पति हैं ।

थार-स्थित जैकोबाबाद के औसत मासिक तापमान सेण्टीग्रेड और वर्षा सेण्टीमीटर मे प्रदर्शित किये गये हैं ।

तालिका - 5.2 : जैकोकाबाद तापमान एवं वर्षा

	ज.	**फ.**	**मा.**	**अ.**	**म.**	**जू.**	**जु.**	**अ.**	**सि.**	**अ.**	**न.**	**दि.**
तापमान (0सेन्टीग्रेड)	13.9	16.7	23.9	29.4	34 4	36.7	35.0	33.3	31.7	26.1	19.4	15.0
वर्षा (सेन्टीमीटर)	0.8	0.8	0.8	0.5	0.2	0.5	2.5	2.8	0.8	-	0.2	0.2

जीवजन्तु : यहाँ के मूल जीव जन्तु यहाँ के पर्यावरण से पूरी तरह समायोजित है । मरूस्थल में यातायात का मुख्य साधन है । इसी कारण इसे मरूस्थल का जहाज भी कहते हैं मरुभूमि में

कई अन्य जीव जन्तु भी मिलते हैं । बारहसिंगा, भेड़िया, खरगोश आदि तेज दौड़ने वाले जीवों में है । इसके अलावा बिल में रहने वाले जीव होते है जो गर्मी से बचने के लिए रहने वाले अनेक जीव- जन्तु पाये जाते है । मरूस्थलों में अनेक कीट पतंगे भी मिलते हैं जो कि पौधों के मौसम में ही नजर आते हैं । इनका जीवन चक्र छोटा होता है ।

आर्थिक विकास तथा मानवीय प्रत्युत्तर : उष्ण मरुस्थल में जल व भोजन की कमी के कारण जनसंख्या बहुत ही विरल है । यहाँ जो लोग भी रहते हैं वे हमेशा पानी व भोजन की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते हैं । शुष्कता के कारण यहाँ पर वनस्पति बहुत कम मिलती है । जो भी वनस्पति यहाँ पर मिलती है वो मानवीय उपभोगों के लिए उपयोगी नहीं है । खजूर ही एक मात्र उपभोग के लिए उपयोगी है पर खजूर मरुद्यानों के निकट ही पाये जाते हैं और इनकी संख्या भी बहुत कम है । अत : मरुस्थल में रहने वाले लोग घुमक्कड़ हैं । ऊँट इनका प्रमुख उपयोगी पालतू जानवर है । ये लोग भेड़-बकरियाँ भी पालते हैं । पशुपालन इनका प्रमुख व्यवसाय है परन्तु ये अन्य व्यवसाय भी करते हैं ।

मरुस्थल में रहने वाले लोग पाँच तरह के होते हैं - आदिवासी शिकारी जैसे बुशमैन, कारवाँ व्यापारी, स्थाई कृषक, खनन क्षेत्रों मे रहने वाले, खाना बदोश या चलबासी । चलबासी मरुस्थल के प्राचीन निवासी हैं । दक्षिण अफ्रीका के वददू तुर्ग ऐसे ही खाना बदोश हैं जो पशु, तम्बू आदि लिए फिरते रहते हैं ।

मरुस्थल की परिस्थितियाँ, (सभी ओर बालू का विस्तार, निर्जनता व शुष्कता) अनेक मानवीय विशेषताओं की जननी है । यहाँ के निवासी निर्भय, आत्मविश्वासी, दृढ़ चरित्र व प्रमत्त होते हैं । मरुस्थली एकरसता इन लोगों को दार्शनिक बना देती है और यही कारण है कि पथ प्रदर्शन के लिए आकाश के तारों के आवश्यक ज्ञान ने इन लोगों को उत्तम गणितज्ञ व ज्योतिषी बना दिया है ।

मरुस्थल में जहाँ पर पानी की आपूर्ति या सिंचाई की सुविधा सालों भर रहती है वहाँ पर कृषि की जाती है तथा लोग स्थाईरूप से निवास करते हैं । नीलघाटी, दजला-फरात तथा निचली सिन्धु नदी घाटी में खाद्य व अखाद्य दोनो ही फसलों की विस्तृत कृषि की जाती है यहाँ पर सामान्यत : खजूर, मकई, ज्वार, बाजरा, कपास तम्बाकू तथा सब्जियों तथा फलों का उत्पादन होता है । मरुद्यानों के निवासी बहुत दिनों तक शान्ति और सुख से रह सकते है लेकिन अकाल पड़ने पर जीविका की खोज में दूर तक निकलना ही पड़ता है ।

मरुस्थलों में मिलने वाले खनिज पदार्थों में शोरा, सोना तथा पेट्रोलियम प्रमुख है ।

इनके अतिरिक्त चाँदी, लोहा, ताँबा (चिली तथा दक्षिणी अफ्रीका में) इत्यादि भी मिलते हैं । इन खनिजों में तेल (पेट्रोलियम) का उत्पादन जहाँ-जहाँ हो रहा है वहाँ का आर्थिक जीवन विशेष रूप से उन्नत है जैसे फारस की खाड़ी के आस -पास (अरब देशों में) विदेशियों के तकनीकी ज्ञान और विशाल पूंजी की सहायता से ये मरूस्थलीय देश बड़े पैमाने पर पैट्रोलियम का उत्पादन करने लगे हैं । स्थान-स्थान पर तेल शोधक कारखाने स्थापित किये गये हैं । सऊदी अरब, कुवैत, इरान, इराक आदि देश आज सुविधा सम्पन्न हो गये हैं । आस्ट्रेलिया के मरुस्थल में सोना का पता लगते ही कई जगह बस गये ।

यातायात के साधनों का पूर्ण विकास अभी भी नहीं हुआ है । सड़क व रेल मार्गो के विकास के लिए भौगोलिक परिस्थितियाँ प्रतिकूल हैं लेकिन जहाँ स्थाई रुप से बस्तियाँ पाई जाती है वहाँ शनै: -शनै: यातायात के साधनों का विकास हो रहा है । यद्यपि कि मरुस्थलों में जनसंख्या बहुत कम पायी जाती है लेकिन भारतीय थार मरुस्थल इसका अपवाद है । यहाँ का निवासी आज कृषक है, व्यापारी है तथा उद्योगशील है । जल की सुविधा ने थार के भाग्य को पूर्ण रूपेण परिवर्तित कर दिया है । यहाँ गेहूँ कपास, सरसों, प्याज, विभिन्न प्रकार की सब्जियों आदि की कृषि होने लगी है । पशुपालन व्यवसाय पल्लवित है तथा जहाँ तहाँ पशु व कृषि पर आधारित उद्योग भी लगाये गये हैं ।

मरुस्थलीय जीवन बहुत ही प्रतिकूलताओं से भरा पड़ा है । जलाभाव यहाँ की प्रमुख समस्या है । यहाँ के निवासियों को पर्यावरण-अनुकूलन में जीवन व्यतीत करना पड़ता है फिर भी विज्ञान व तकनीक ने यहाँ के जीवन स्तर में बहुत बदलाव किया है ।

बोध प्रश्न - 3

1. उष्ण कटिबन्धीय मरुप्रदेश का विस्तार कहाँ-कहाँ पाया जाता है?

………………………………………………………………………………………………….

…………………………………………………………………………………………………..

5.2.3 मानसून प्रदेश (Monsoon Lands)

स्थिति एवम् विस्तार : मानसून प्रदेश उष्ण क्षेत्र में 80 से 280 अक्षांश रेखाओं के बीच, जहाँ मानसूनी या मौसमी जलवायु पायी जाती है, स्थित है । प्रमुख मानसून प्रदेश निम्नांकित हैं - (i) एशिया में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, म्यानमार, मलेशिया, थाईलैण्ड, दक्षिणी चीन; फिलीपीन; तथा (ii) उ आस्ट्रेलिया एवम् उत्तरी पूर्वी ब्राजील । पूर्वी अफ्रीका, मेडागास्कर तथा मध्य अमेरिका के सीमित भागों मे भी यह प्रदेश मिलता है । (चित्र : 55)

जलवायु : इस प्रदेश कीं जलवायु में स्पष्ट रूप से जाड़े व गर्मी की अलग -अलग ऋतुएँ होती हैं तथा इसमें एक अलग वर्षा ऋतु भी होती है । वर्ष के भिन्न-भिन्न महीनों मे अलग -अलग तापमान होता है और दैनिक तथा वार्षिक तापान्तर अधिक रहता है । ग्रीष्मकालीन तापमान 27^0 सेन्टीग्रेड से भी अधिक (35^0-45^0 सेण्टीग्रेड) चला जाता है और शीत कालीन तापमान 10^0 सेन्टीग्रेड तक नीचे चला जाता है ।

मानसूनी वर्षा अनिश्चित, अनियमित तथा असमान वितरित होती है । वार्षिक वर्षा का औसत 100 - 150 सेन्टीमीटर होता है । मेघालय के चेरापूंजी नामक स्थान में तथा उसके आसपास 1000 सेण्टीमीटर से अधिक वर्षा होती है 1 अधिकांश वर्षा जून से सितम्बर के बीच (उत्तरी गोलार्द्ध में जहाँ इस प्रदेश का विस्तार अधिक पाया जाता है) होता है, और यही समय वर्षा ऋतु के नाम से जानी जाती है । जाड़े की ऋतु में चक्रवातीय वर्षा उत्तरी पूर्वी भारत में अल्प मात्रा में होती है । शीतकालीन वर्षा केवल सुदूर दक्षिणी पूर्वी भारत तथा उत्तरी पूर्वी आस्ट्रेलिया में होती है जहाँ इसका वार्षिक औसत 10 से 30 सेण्टीमीटर के मध्य रहता है । मानसून प्रदेश के

दो महत्वपूर्ण नगरों पटना और कोलकाता का औसत मासिक तापमान रख वर्षा के आकड़े क्रमश : सेन्टीग्रेड तथा सेन्टीमीटर में तालिका- 5. 3 में प्रदर्शित किये गये हैं ।

तालिका- 5.3 : पटना - तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
औसत तापमान (0सेन्टीग्रेड)	16	18	25	30	31	30	29	28	28	27	21	17
औसत वर्षा (सेन्टीमीटर)	2	2	1	1	4	20	29	33	22	7	5	0

कोलकाता - तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
औसत तापमान (^{0}सेन्टीग्रेड)	20	23	28	31	31	30	29	29	29	28	24	21
औसत वर्षा (सेन्टीमीटर)	1.4	2.4	.7	4.3	12.1	25.9	30.1	30.6	29.0	6.03	50.3	

इन आकड़ों से स्पष्ट है कि (1) जाड़े और गर्मी की दो अलग -अलग ऋतुएँ हैं, (2) वार्षिक तापान्तर 15^{0} है, (3) जाड़े की ऋतु शुष्क है और गर्मी को ऋतु आर्द्र, अर्थात् वर्षा उन दिनों अधिक है, जब तापमान उच्च है । (चित्र 5. 6)

मानसूनी जलवायु मे 'वर्ष के एक भाग में स्थल का प्रभाव ओर दूसरे भागों में समुद्र का प्रभाव प्रमुख रहता है । यह प्रभाव बहने वाली पवनों की दिशा तथा मात्रा में परिवर्तन ला देता है । शीतकाल में व्यापारिक हवाएँ चलती है जो स्थल से आती है । इससे साधारणतया वर्षा नही होती । गर्मी में स्थली प्रभाव के कारण जब इन पवनों का चलना बन्द हो जाता है और उनकी ओर समुद्र की ओर से पवन चलने लगती है तब उसमें अधिक वर्षा होती है। इस पवन दिशा परिवर्तन से ही मानसूनी जलवायु की प्रमुख विशेषता उत्पन्न होती है ।

चित्र–5.5 : मानसून प्रदेश

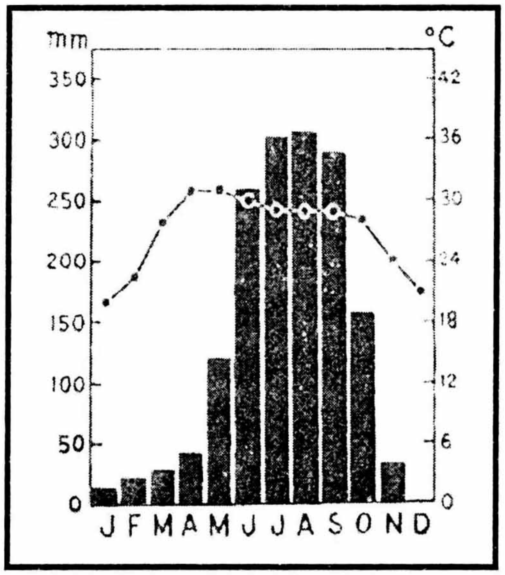

चित्र –5.6 : मानसून प्रदेश में स्थित कोलकाता (उ. गोलार्द्ध) की जलवायु

प्राकृतिक वनस्पति : वर्षा की मात्रा में विभिन्नता के कारण मानसूनी प्रदेश में सर्वत्र एक समान व एक स्वभाव वाली प्राकृतिक वनस्पतियाँ नहीं पाई जाती हैं । वनस्पतियों का वितरण मुख्यतया वर्षा के वितरण पर निर्भर करता है । अस्तु (1) जिन भागों में 200 सेन्टीमीटर से अधिक औसत वार्षिक वर्षा होती है वहाँ घने जंगल पाये जाते है । इन वनों में महोगनी, देवदार, ताड़ और लॉगवुड के वृक्ष प्रमुख हैं । (2) जिन भागों में वर्षा की मात्रा 100 - 200 सेन्टीमीटर होती है वहाँ मुख्यतया चौड़ी पत्ती वाले मानसूनी वृक्ष पाये जाते है । सागवान, शीशम, चन्दन, नीम आदि इन जंगलों के मुख्य वृक्ष है । व्यापारिक रूप से इन वृक्षों का बहुत अधिक महत्व है । इनका उपयोग, रेल की पटरियाँ, रेल के डिब्बे, जहाज, फर्नीचर आदि के निर्माण में होता है । (3) जिन प्रदेशों में वर्षा की मात्रा 50 सेन्टीमीटर व इससे कम होती है वहाँ वृक्ष छोटे व कँटीली झाड़ियों वाले होते हैं, बबूल, खैर आदि ऐसे वृक्ष हैं । (4) अत्यल्प वर्षा प्राप्त करने वाले स्थानों में छोटी-छोटी और विरल कँटीली झाड़ियाँ पाई जाती है । मानसूनी

प्रदेश की अधिकांश वनस्पतियाँ पर्णपाती होती है । ग्रीष्म काल में वाष्पीकरण अधिक होता है जिस कारण मिट्टियों का आवरण जल विहीन हो जाता है और जल की न्यूनता विश्व के प्रमुख पर्यावरणीय सर्वाधिक हो जाती है । वर्षा की इस मौसमी प्रवृत्ति के कारण ही अधिकतर वनस्पति शीतकाल के अन्त में अपने पत्ते गिरा देती हैं ।

जीव जन्तु : मानसूनी प्रदेश में असंख्य जीव जन्तु व कीड़े मकोड़े मच्छर इत्यादि पाये जाते हैं । बंगलों में शेर, चीता, लोमड़ी, भड़िया आदि मांसाहारी पशु तथा हाथी बन्दर, नीलगाय आदि शाकाहारी पशु तथा रंग -बिरंगी चिड़िया, विषैले सर्प और नदियों में अनेक प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं ।

आर्थिक विकास तथा मानवीय प्रत्युत्तर : मानसूनी प्रदेश में मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की अपार क्षमता विद्यमान है । इन प्रदेशों में उपजाऊ मिट्टी पाई जाती है जहाँ जल, वर्षा एवम् सिंचाई की सहायता से धान, गेहूँ गन्ना, जूट, कपास, तम्बाकू, तिलहन, चाय, कहवा, इत्यादि कितनी ही कृषि जन्य वस्तुएं उत्पन्न की जाती है । धान, जूट, चाय व गन्ना इस प्रदेश की विशिष्ट उपज है और उनकी खेती के लिए यह प्रदेश विश्व प्रसिद्ध है । मानव श्रम की सफलता जितनी यहाँ वर्षा भर निर्भर हैं उतनी विश्व में शायद ही किसी अन्य प्रदेश में हो । वर्षा की अनिश्चितता ने मानसूनी' प्रदेश के निवासियों को भाग्यवादी बना दिया है ।

समुद्रतटीय भागों में नारियल, खजूर, ताड़, सुपारी, केले और गर्म मसाले पैदा किये जाते हैं । इनके अतिरिक्त आम, जामुन, कटहल, ऑवला, नीबू अमरूद, नांरगी, नाशपाती, लीची, पपीता, आदि की पैदावार भी पर्याप्त मात्रा में होती है । विश्व में पाई जाने वाली सभी प्रकार की सब्जियाँ मानसून प्रदेश में बहुतायत से ऊगाई जाती हैं । मानसूनी प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में खेती का विशेषीकरण हुआ है यथा द पूर्वी एशिया, दक्षिणी पूर्वी अफ्रीका और मेडागास्कर में चावल, अबीबीनिया और ब्राजील में कहवा, मैक्सिको में मक्का, पाकिस्तान और उत्तरी भारत में गेहूँ र बंगलादेश में जूट, पूर्वी भारत में चाय, दक्षिणी भारत में कपास और तिलहन क्यूबा व उत्तर प्रदेश में गन्ना अधिक पैदा किया जाता मानसूनी प्रदेश खनिज सम्पदा की दृष्टि से सम्पन्न है । वेनजुएला में खनिज तेल, ब्राजील में लौह अयस्क, मैंगनीज, सोना, हीरा, भारत में लौह अयस्क, कोयला, मैगनीज, संगमरमर आस्ट्रेलिया में सोना, मलेशिया व थाईलैण्ड में टिन का भरपूर उत्पादन होता है ।

मानसूनी प्रदेश में यातायात के साधनों और मार्गा में पर्याप्त उन्नति हुई है । भारत में सड़को व रेलमार्गो का जाल बिछा हुआ है । द्रुतगामी परिवहन के साधनों के विकास ने मानसूनी प्रदेश को काफी उन्नतशील बना दिया है ।

मानसूनी प्रदेश में सघन जनसंख्या पाई जाती है जो अधिकतर मैदानी व सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्र में अधिक संकेन्द्रित है । एशियाई मानसूनी क्षेत्र विश्व के अधिकतम जनसंख्या वाले देश है ।यहॉ पर विभित्र कला तथा साहित्य से सम्पन्न अनेक समुदाय के लोग रहते है । यहाँ पर कई पुरानी सांस्कृतिक केन्द्र व बड़े शहर देखने को मिलते हैं । व्यापार व वाणिज्य का भी अच्छा विकास हुआ है । मानसून क्षेत्रों के व्यापार प्रतिरूप में बड़ा परिवर्तन हुआ है । प्रारम्भ में ये विश्व के विकसित देशों को चाय व कहवा जैसे कृषि उत्पाद तथा खनिजों का कच्चे माल के

रूप में निर्यात करता था और यूरोपीय देशों से तैयार माल का आयात करता था, लेकिन अब औद्योगिक विकास ने तसबीर बदल दी है । भारत में वनों पर आधारित उद्योगों जैसे, फर्नीचर, खनिज पर आधारित उद्योगों जैसे, इस्पात, प्रदेशों में मानव साक्लंस्य सोमेन, इंजीनियरिंग के सामान, पशुओं पर आधारित उद्योग जैसे चमड़ा, ऊन , मास, दुग्ध पदार्थ तथा कृषि पर आधारित उद्योगों जैसे जूट उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग आदि का पूर्ण विकास हुआ है ।

यह प्रदेश अपनी उत्तम जलवायु और उपजाऊ भूमि के कारण न केवल अधिक मात्रा में भोज्य पदार्थ ही पैदा करते हैं, बल्कि विश्व के प्रमुख औद्योगिक देशों के लिए कच्चा माल भी बड़ी मात्रा में पैदा करते हैं । उद्योग धन्धों की दृष्टि से संसार के कितने ही प्रदेशों से यह अधिक उन्नतिशील है । यही कारण है कि ये उन्नतिशील प्राचीन सभ्यता के प्रमुख केन्द्र यही थे । आज भी यह प्रदेश काफी सभ्य व सुसंस्कृत हैं ।

कोलकाता, मुम्बई, ढाका आदि बड़े नगर हैं ।

बोध प्रश्न - 4

1. मानसून प्रदेश की जलवायु की विशेषताएँ बताइए ।

 ....

 ....

5.2.4 शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण क्षेत्र (Temperate Grasslands)

स्थिति एवम् विस्तार : शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश का विस्तार प्राय : 45^0 से 60^0 उत्तर एवम् दक्षिण अंक्षाशों के बीच महाद्वीप के आन्तरिक भागों मे पाये जाते हैं । इस प्रदेश में उत्तरी अमेरिका का प्रेयरी, यूरेशिया का स्टेपी प्रदेश, दक्षिण अमेरिका का अर्जेन्टाइना तथा यूरूग्वे (पम्पाज) दक्षिणी अफ्रीका के उच्च पर्वतीय भाग (वेल्ड) आस्ट्रेलिया का दक्षिणी पूर्वी भाग (मरे डार्लिंग बेसिन) तथा न्यूजीलैण्ड (कैण्टरबरी मैदान) सम्मिलित हैं । (चित्र: 5. 7)

जलवायु : महाद्वीपों के भीतरी भाग में स्थित होने और सखी प्रभाव से दूर पड़ जाने के कारण शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश की जलवायु महाद्वीपीय प्रकार की है जिसमें तापमान की अत्यधिक विषमता पायी जाती है । ग्रीष्म कालीन तापमान 26^0 सेन्टीग्रेड तक मिलता है तो शीतकालीन तापमान हिमांक के नीचे तक । अपवाद स्वरूप दक्षिणी गोलार्द्ध के तृण प्रदेश है जहाँ जाड़े में औसतन 10^0 सेन्टीग्रेड तापमान मिलता है । तात्पर्य यह है कि दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित तृण प्रदेशों मे जाड़े की ऋतु मृदु रहती है और तापमान हिमांक से नीचे नही पहुँचता । वार्षिक तापान्तर दक्षिणी गोलार्द्ध में कम (15^0 सेन्टीग्रेड) और उत्तरी गोलार्द्ध में अधिक (कहीं - कहीं 30^0 सेन्टीग्रेड से भी अधिक) मिलता है । उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित इन प्रदेशों के दक्षिणी भाग तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित उत्तरी भाग गर्मी में व्यापारिक पवन के प्रभाव क्षेत्र हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक वर्षा लाते है । शेष भागों में वर्ष भर पछुआ हवाएँ चलती हैं । स्टेपी और प्रेयरी क्षेत्रों में उत्तरी ध्रुव की ओर से आने वाली ठंडी हवाएँ प्रवेश कर जाती है जिससे सर्दी बहुत बढ़ जाती है ।

वर्षा मामूली तौर पर साल भर होती है पर बसन्त के अन्त और ग्रीष्म के प्रारम्भ में अधिक होती है । वार्षिक वर्षा 25 सेन्टीमीटर से लेकर 70 सेन्टीमीटर तक पायी जाती है पर औसत रूप से 50 सेण्टीमीटर से अधिक नहीं होती ।

ग्रीष्मकाल में मानसूनी हवाओं के प्रभाव से वर्षा होने के कारण (उष्ण क्षेत्र के निकटवर्ती भागों में) पूर्व से पश्चिम की आरे वर्षों की मात्रा घटती जाती है तथा वर्षा चक्रवातीय होती है । अधिकतर वर्षा फुहारों के रूप में होती है । जाड़े में (उत्तरी गोलार्द्ध में) तुषारपात होता है । दक्षिणी गोलार्द्ध के इन प्रदेशों में उष्ण समुद्री जलधाराओं का भी प्रभाव पड़ता है जिससे वहाँ 50 सेन्टीमीटर से कम वार्षिक वर्षा नहीं होती ।

तालिका 5. 4 में उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित शिकांगो और दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित ब्यूनॉस आयर्स के औसत मासिक तापमान एव वर्ष सम्बन्धी ऑकड़े क्रमश : सेण्टीग्रेड और सेण्टीमीटर में दिये गये हैं ।

तालिका- 5. 4 : शिकागो (U.S.A) तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
औसत तापमान (0सेन्टीग्रेड)	-3	-3	3	8	14	20	23	23	19	13	5	-1
औसत वर्षा (सेन्टीमीटर)	5	5	6	7	9	9	9	8	8	7	6	5

ब्यूनॉस एयर्स (Argentine) तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
तापमान (0सेन्टीग्रेड)	23	23	21	17	13	11	10	11	14	16	19	22
वर्षा (सेन्टीमीटर)	8	6	12	8	7	7	6	6	8	9	7	7

इन आँकड़ो से स्पष्ट है कि (1) गर्मी में तापमान 23^0 तक रहता है और जाड़े में उत्तरी गोलार्द्ध में, जहाँ यह ध्रुवीय पवन से प्रभावित है, तापमान हिमांक से नीचे पहुँच जाता है, मगर दक्षिणी गोलार्द्ध में, जहाँ यह सीमित संकीर्ण क्षेत्र में तथा उष्ण क्षेत्र के समीप है तथा उपेक्षाकृत अधिक समुदी प्रभाव में है, तापमान हिंमाक तक न पहुँचकर उससे कुछ अधिक ही रहता है, (2) वार्षिक तापान्तर क्रमश: 24^0 और 13^0 है, (3) वर्षा सालभर होती है, (4) अधिक वर्षा गर्मी मे होती है, (5) कुल वर्षा लगभग 90 सेन्टीमीटर हे । (चित्र 5. 8)

प्राकृतिक वनस्पति : शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश में घासें सर्वप्रमुख वनस्पति समुदाय होती है । इनमें सर्वप्रमुख सदाबहार घासें होती है । शाकीय पौधे (Herbaceous Plants) वृक्ष तथा झाड़ियाँ गौण होती हैं । यूरेशिया के दक्षिणी भाग, अमेरिका के प्रेरीज के दक्षिणी भाग, दक्षिणी अमेरिका के पम्पाज और आस्ट्रेलिया के मरे -डार्लिग बेसिन में छोटी-छोटी घास छोटी जड़ों वाली

और बिना गूदे की होती है । पानी के स्थानों के समीप विलो, पोपलर, ओर एडलर के पौधे उग जाते हैं ।

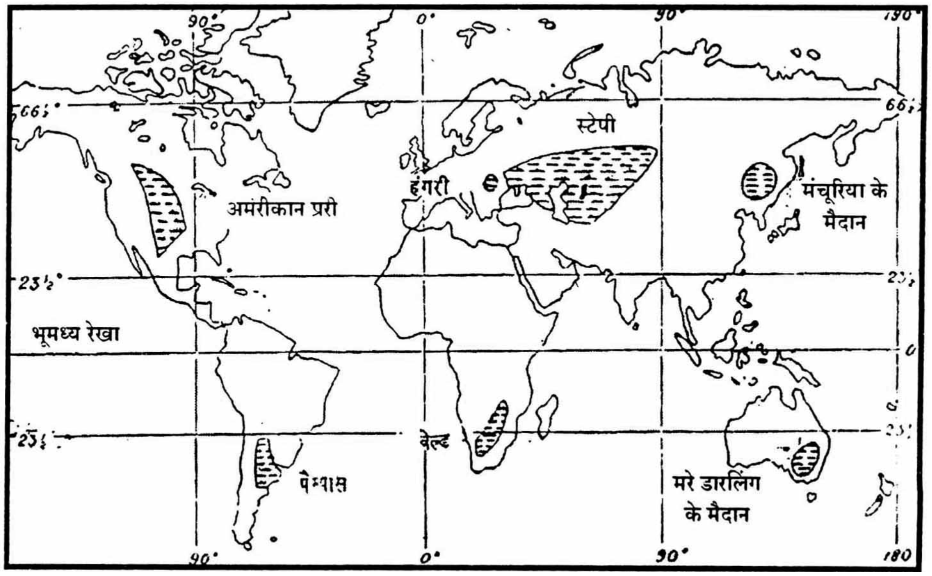

चित्र - 5.7 : शीतोष्ण कटिबंधीय तृण प्रदेश

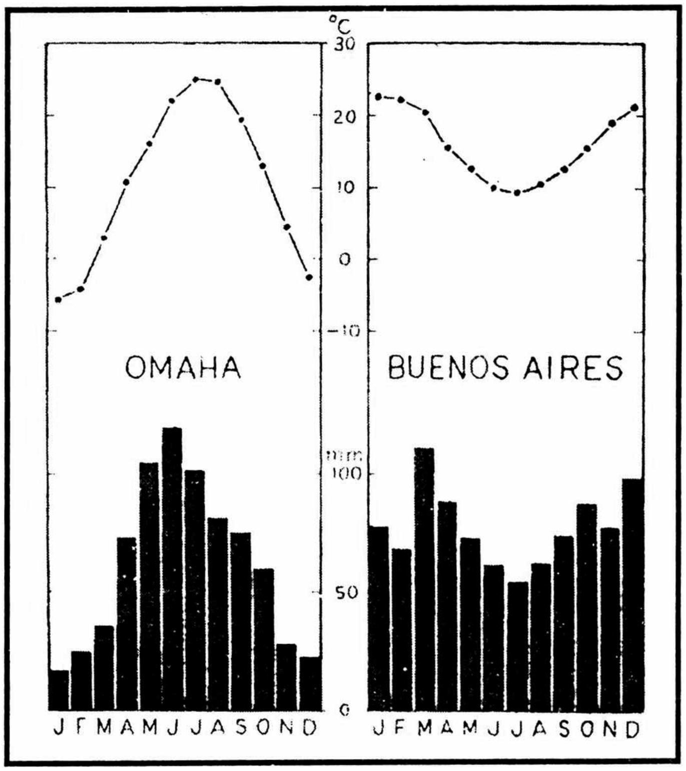

चित्र - 5.8 : शीतोष्ण कटिबंधीय तृण प्रदेश की जलवायु : उत्तरी गोलार्द्ध (अमोहा) तथा दक्षिणी गोलार्द्ध (ब्यूनस आपर्स) में

वन स्टेपीज के यूरोपीय भाग एम ओक मैपिल आदि वृक्षों की बहुलता है जबकि प। साइबेरिया मे वर्च, आस्पेन आदि वृक्षों की प्रधानता है । उत्तरी अमेरिका के तृण प्रदेश मे घासों की लंबाई वर्षा की क्रमानुसार पूर्व से पश्चिम घटती जाती है ।

यहाँ घासों की लम्बाई 60 सेमी से 2.4 मीटर तक होती है दक्षिणी अमेरिका के पम्पाज क्षेत्र मे ब्रिजा , ब्रोमस, पैनीकम , पास्पालम, लोलियम जातियों की घासों की प्रधानता है अफ्रीकी तृण क्षेत्र मे विभिन्न उँचाइयों पर अलग-अलग जातियों की घासों की प्रधानता है । आस्ट्रेलियाई शीतोष्ण घास प्रदेश का विस्तार आस्ट्रेलिया के दक्षिणी , पूर्वी भाग तथा उत्तरी तस्मानिया मे पाया जाता है। न्यूज़ीलैण्ड शीतोष्ण तृण क्षेत्र मे दक्षिणी द्वीप के पूर्वी भाग तथा उत्तरी द्वीप के मध्यवर्ती भाग मे फेस्टुका (Festuca) तथा पोआ (Poa), जिनकल लम्बाई 0. 5 मीटर होती है, किस्म की घासें पाई जाती है । यहाँ पाये जाने वाले पुष्पों में पंखुडिया कम होती हैं । ज्ञातव्य है कि घास मैदान के सभी प्रदेशों के अधिकांश भागों में मौलिक घास आवरण को साफ कर दिया गया है तथा उनमें खाद्यान्नों की आदर्श खेती की जाती है ।

जीव जन्तु : घास के मैदानों में बड़े जीव जन्तुओं का अब प्राय : अभाव पाया जाता है । जीव जन्तु जो कभी यहाँ पाये जाते थे, अब वे नगण्य मात्र है । यूरेशियाई क्षेत्रों में जंगली घोड़े, रोडेण्ट (बिल में रहने वाले) परभक्षी प्राणियों में भेड़िया, ईगल (Eagle) तथा हाक्स (Hawks) प्रमुख है । उत्तरी अमरीकी घास क्षेत्र में हाक्स, ईगल, रैटिलस्नेकस (Rattlesnakes) लोमड़ी, भेड़िया आदि प्राणियों की अपार संख्या थी परन्तु वर्तमान समय में मानव द्वारा प्रेयरी घास क्षेत्रों को साफ करके कृषि फार्मों में बदलने के कारण ये निहायत कम संख्या में मिलते हैं । दक्षिणी अमरीकी पम्पाज क्षेत्र में शाकाहारी प्राणियों में पम्पाज डियर (Pampa Dear) तथा मैरा (Mara) प्रमुख है । हेरानस् (Herons), बतख आदि मौसमी पक्षी हैं, जो अन्य क्षेत्रों से आते है ।

अफ्रीकी वेल्ड क्षेत्र में प्राणि जीवन को मनुष्य ने बड़े पैमाने पर प्रभावित तथा परिमार्जित किया है । प्रारम्भ में गेम (Game), एण्टीलोपूस (Autilopes), जेबरा (शाकाहरी) तथा शेर, चीता, गीदड़ (सभी मांसाहारी) के बड़े झुण्ड पाये जाते थे. परन्तु मानव द्वारा अनवरत हनन के कारण अब ये अदृश्य हो गये हैं । बिलकारी शाकाहरी प्राणियों में स्प्रिंगहेयर, गरबिल आदि अब भी भारी संख्या में पाये जाते हैं । आस्ट्रेलिया के घास के मैदानों में लाल कंगारू, भूरे कंगारू, बालरूज, यूरोपीय खरगोश आदि देशज जन्तु हैं । न्यूजीलैण्ड के घास के मैदानों में मानवीय हस्तक्षेप शाकाहारी जन्तुओं का पूर्णतया अभाव है ।

आर्थिक विकास तथा मानवीय प्रत्युतर : यह घुमक्कड़ चारागाहों का क्षेत्र है । यहाँ के मुख्य निवासी खिरगीज, रेड इण्डियन तथा हटिन्टॉदस है । इन निवासियों की जीवन शैली घास स्थलों से पूर्णरूपेण समायोजित है । इन प्रदेशों में मानव सदियों से पशुपालन करता रहा है । दक्षिणी पूर्वी आस्ट्रेलिया तथा अर्जेण्टाइना भेड़ पालन के लिए विख्यात है । यहाँ अब वैज्ञानिक ढंग से पशुपालन किया जाता है । यहाँ से गाय और सूअर का मांस, ऊन, दूध आदि पदार्थों का अन्य देशों को बड़े पैमाने पर निर्यात किया जाता है । प्रेयरी गाय के मास के लिए व डाऊन्स (आस्ट्रेलिया) दूध व ऊन उत्पादन के लिए सम्पूर्ण संसार में विख्यात है ।

आदिकाल से चला आ रहा परम्परागत व्यवसाय पशुपालन अब वैज्ञानिक ढंग से हो रहा है । जिन भागों में कृषि का विस्तार हुआ है, वहाँ समशीतोष्ण घास के मैदान लुप्त हो गये हैं, जैसे यूरोप और उत्तरी अमेरिका के पूर्वी और मध्यवर्ती भागों में । ऐसे घास के मैदानों पर अब व्यापारिक पशुपालन का विकास हुआ है g जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी भाग, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका और साइबेरिया में । व्यावसायिक पशुपालन वाले घास के मैदानों में विकसित नस्ल के पशु और रोपित घास की प्रधानता पाई जाती है । रूस के साइबेरियाई क्षेत्र में भी ऐसे घास फार्मों का विकास किया गया है । स्पष्ट है कि जीवन पद्धति के निर्धारण में घास की महती भूमिका है । घुम्मकड़ प्रवृत्ति लुप्तता की ओर तथा स्थाई निवास की प्रवृत्ति प्रकाश की ओर सतत् अग्रसर है । इन क्षेत्रों में पर्यावरण परिमार्जन के कारण यहाँ के निवासी गैर-परम्परावादी हो रहे हैं ।

शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश के कुछ भागों में (सिंचाई द्वारा) खेती की जाने लगी है । सिंचाई एवं आधुनिक कृषि वैज्ञानिक यंत्रों तथा उर्वरक इत्यादि के प्रयोग के कारण संसार का सबसे अधिक गेहूँ आज इन्हीं प्रेरीज प्रदेशों से प्राप्त होता है । व्यावसायिक कृषि के कारण ये प्रदेश आज अनाज के भंडार कहे जाते है । गेहूँ के अतिरिक्त मकई, सोयाबीन, जी, जई, राई इत्यादि की फसलें भी यहाँ बहुतायत से होती है । अत्यधिक उन्नति के फलस्वरूप आज यह प्रदेश संसार का प्रसिद्ध कृषि एवम् उद्योग का क्षेत्र हो गया है ।

यातायात की सुविधाओं की दृष्टि से ये प्रदेश बहुत सम्पन्न है । सैकड़ों किलोमीटर दूर से भी ताजा दूध, फल और सब्जी मँगाने में परेशानी का सामना कतई नहीं करना पड़ता । इन क्षेत्रों के बीच से ट्रांस साइबेरियन, कनैडियन पैसेफिक रेलमार्ग निकाले गये हैं ।

शीतोष्ण कटिबन्धीय घास स्थलों में अनेक खनिज पदार्थ पाये जाते हैं । केन क्षेत्र में लोहा, मैंगनीज, कोयला संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रेयरी क्षेत्र में कोयला, खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैस, दक्षिणी अफ्रीका में हीरा, विक्वाटरसरैण्ड में सोना तथा किम्बरलैण्ड हीरे की खनन के लिए विश्व विख्यात है । शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में प्रगतिशील लोग रहते हैं जो यहाँ के आर्थिक स्वरूप में काफी परिवर्तन लाये हैं । यहाँ की आर्थिक क्रिया पशुपालन उत्पाद, कृषि, उद्योग एवं व्यापार पर अवलम्बित है । संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रेयरी क्षेत्र में इस्पात, कृषि उपकरण, कनाडा के हेमिल्टन में लोहा-स्वात उद्योग केन्द्रित है । आस्ट्रेलिया के अर्जेण्टाइना के घास प्रदेशों में दुग्ध रण सम्बधित उद्योग का विकास हुआ है ।

सभ्य किसानों ने यहाँ के प्राचीन निवासियों को पर्वतीय या अधिक सूखे तथा अनउपजाऊ भागों में भगाकर यहाँ कृषि तथा पशुपालन की उन्नति करके इन्हें घनी जनसंख्याओं से परिपूर्ण कर दिया है तथा इन्हें संसार के गेहूँ र दूध, मक्खन, पनीर, मांस, ऊन, चमड़ों, हड्डियों, सींगो, अण्डों तथा सुन्दर स्वस्थ और पुष्ट जीवित पशुओं के बड़े भण्डारों में परिणत कर दिया है ।

ब्यूनॉसआयर्स, विनीपेग तथा मास्को तृण क्षेत्र के प्रतिनिधि कर है ।

प्राकृतिक पर्यावरण का परिमार्जन होने से ये क्षेत्र बहुत कुछ बदल गये है । घासों के व्यापक स्तर पर विनाश के कारण पारिस्थितिकीय असन्तुलन आ गया है, यद्यपि कृषि में विकास के कारण आवश्यक खाद्यान्नों के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है ।

बोध प्रश्न- 5

1. शीतोष्ण कटिबंधीय तृण प्रदेश के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय क्या है ?

……………………………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………………………

5.2.5 भूमध्य सागरीय प्रदेश (Mediterranean Regional)

स्थिति एवम् विस्तार : भूमध्य सागरीय प्रदेश का सबसे विस्तृत क्षेत्र (1) भूमध्य सागर के आस पास (अर्थात् पुर्तगाल, स्पेन, दक्षिणी फ्रान्स , इटली, यूगोस्लाविया, ग्रीस तथा एशिया के टर्की, सीरिया, इजराइल और उत्तरी अफ्रीका के तटीय भाग में) मिलता है, और इस कारण ये प्रदेश ' भूमध्य सागरीय प्रदेश ' कहलाते हैं । अन्य भू-भागों में भी इस जलवायु से प्रभावित होने वाले देश हैं, पर वे सब के सब पश्चिमी तट पर और 30^0 अक्षांश से लेकर 45^0 अक्षांश के बीच दोनों गोलार्द्ध में स्थित हैं । जैसे, मध्य कैलीफोर्निया, उ. अमेरिका में, (3) मध्य चिली (द. अमेरिका में), (4) द. अफीका का द प. कोना तथा (5) आस्ट्रेलिया का दक्षिणी तथा द प. भाग । (चित्र 5. 9)

जलवायु : भूमध्य सागरीय प्रदेश में गर्मी- और जाड़े की दो ऋतु मिलती है । गर्मी में बहुत अधिक गर्मी नहीं पड़ती है । ग्रीष्मकालीन औसत तापमान 20^0 सेन्टीग्रेड से 27^0 सेन्टीग्रेड तक रहता है । शीतकाल में बहुत अधिक ठंडक भी नहीं पड़ती । उन दिनों का औसत तापमान 5^0 सेन्टीग्रेड से 15^0 सेन्टीग्रेड तक मिलता है । वार्षिक तापान्तर 10^0 से 15^0 सेन्टीग्रेड के मध्य रहता है. । तटीय भाग की अपेक्षा आन्तरिक भागों में तापान्तर अधिक पाया जाता है ग्रीष्मकाल में मेघ रहित आकाश होने से सूर्य की किरणें प्रखर रूप से पड़ती है ।

भूमध्य सागरीय प्रदेश में वर्षा जाड़े में होती है, क्योंकि तभी समुद्र की ओर से तटों पर जल भरी हवाएँ पहुँचती हैं इसके विपरीत ग्रीष्म काल में विपरीत दिशाओं से चलने वाली हवाओं (Off shore trades) के प्रभाव के कारण वर्षा नहीं हो पाती । वर्षा पश्चिम से पूर्व की ओर घटती है । वर्षा का वार्षिक औसत साधारण होता है । शुष्क प्रदेशों में 37 सेण्टीमीटर से 50 सेण्टीमीटर और तर प्रदेशों में 65 से 100 सेन्टीमीटर वर्षा हो जाती है, जो स्थानीय प्राकृतिक रचना पर निर्भर करती है । गर्मी में एक तरफ वर्षा नहीं होती दूसरी तरफ वाष्पीकरण अधिक होने से मिट्टी की रही सही नमी भी समाप्त हो जाती है, जिससे ग्रीष्मकाल में वनस्पति की वृद्धि बाधित हो जाती है ।

वर्षा के क्षेत्रीय वितरण में बहुत ही असमानता पायी जाती उदाहरण के लिए कैलीफोर्निया मे द. से उत्तरी तीन नगर सेन डियागो, लॉसएन्जिल्स तथा सैनफ्रांसिस्को में क्रमश: 24, 29 तथा 58 सेण्टीमीटर वर्षा होती है । तालिका में उत्तरी गोलार्द्ध स्थित रोम (इटली) के औसत तापमान और औसत वर्षा क्रमश : सेण्टीग्रेड व सेण्टीमीटर में दर्शायी गई है ।

तालिका - 5. 5 : रोम (इटली) तापमान एवं वर्षा

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.

तापमान (^{0}सेन्टीग्रेड)	7.5	8	10.5	14	18	21.5	24.5	24.5	21	16	12	17.5
वर्षा (सेन्टीमीटर)	8.0	6.6	7.2	6.4	5.5	3.9	1.6	2.5	6.2	12.5	11.0	9.7

इन आंकडों से स्पष्ट है कि (1) सबसे ठंडे महीने का. तापमान 7. 5^0 C और सबसे गर्म महीने का तापमान 24. 5^0 C है अर्थात् वार्षिक तापान्तर 17^0 C है; (2) वर्षा मुख्यत : जाड़े में होती है; और (3) वर्षा का योग 81cm. है । (चित्र 5. 10)

यहाँ गर्मी और जाड़े में स्थानीय पवन चला करते हैं जैसे सिरक्को, सान्ता अन्ना,मिस्ट्रल और बोटा । इन हवाओं का जलवायु व फसल पर विशेष प्रभाव पड़ता है ।

भूमध्य सागरीय जलवायु की विशिष्टता का प्रमुख कारण सूर्य की उतरायण तथा दक्षिणायण स्थिति के कारण वायुदाब की पेटियों में खिसकाव को ही बताया जा सकता है जिस कारण जाड़े में ये प्रदेश पछुआ हवा की पेटी में आ जाते हैं, जिसके फलस्वरूप चक्रवातीय वर्षा होती है । ग्रीष्मकाल में ये अयनवर्ती उच्चवायुदाब के क्षेत्र में आ जाते हैं, फलत : प्रतिचक्रवातीय दशाओं के कारण वर्षा नहीं हो पाती है । सब मिलाकर कह सकते हैं कि भूमध्य सागरीय जलवायु मानव तथा उसके आर्थिक विकास के लिए बहुत ही अनुकूल है ।

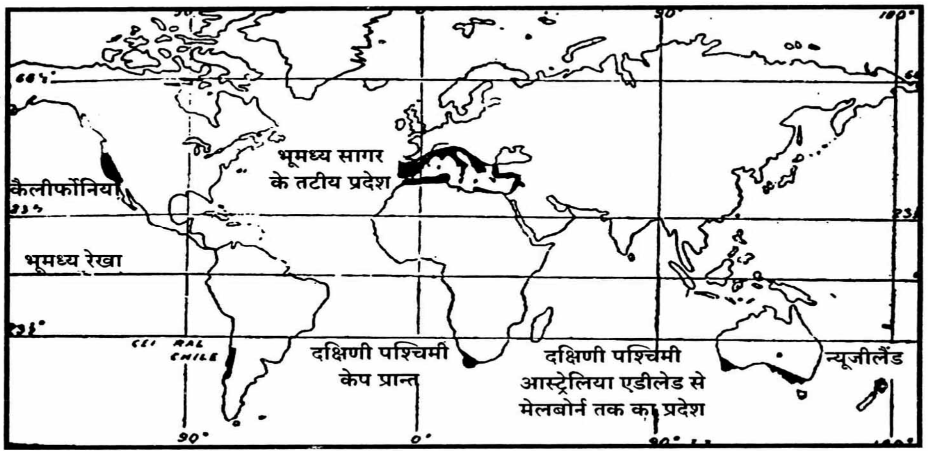

चित्र -5.9 : भूमध्य सागरीय प्रदेश

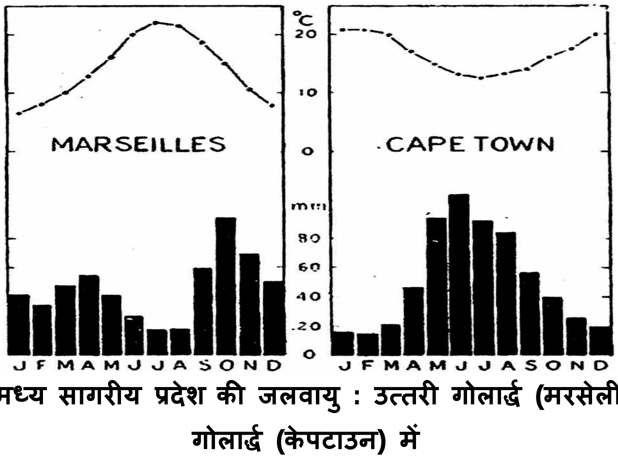

चित्र -5.10 : भूमध्य सागरीय प्रदेश की जलवायु : उत्तरी गोलार्द्ध (मरसेलीज) और दक्षिणी गोलार्द्ध (केपटाउन) में

प्राकृतिक वनस्पति : भूमध्य सागरीय प्रदेश में शरदकालीन तथा बसन्त कालीन वर्षा के जल द्वारा मिट्टी की नमी बड़ जाती है , जिसे बसंतकाल मे वनस्पतियों मे अधिकतम वृद्धि होती है ग्रीष्मकाल में तापमान के बढ़ने तथा वर्षा के अभाव में जल की न्यूनता (Water Deficiency) के कारण वनस्पतियों की वृद्धि का स्थगन हो जाता है । यद्यपि कि भूमध्य सागरीय प्रदेश का विस्तार विभिन्न महाद्वीपो में है तथापि उनकी वनस्पति स्वभाव में पर्याप्त समानता होती है । प्रस्तुत प्रदेश की वनस्पतियों की सरचना इस प्रकार की होती है कि वे ग्रीष्मकालीन शुष्कता को सहन कर सके । पत्तियाँ मोटी तथा कठोर एवम् तनों की छाल मोटी होती है । पादप समुदाय में वृक्ष तथा झाड़ियाँ प्रमुख होती हैं । अधिकांश पादप सदाबहार होते हैं । झाड़ियों के विभिन्न क्षेत्रों में अलग - अलग स्थानीय नाम है जैसे यूरोपीय भाग में मक्वीस (Maquis), कैलिफोर्निया में चैपरल (Chaparal), द. अफ्रीका में फिमबोस (Fymbos) इत्यादि । इन झाड़ियों के अतिरिक्त यंत्र -तंत्र लेवेण्डर, ओट, हजॉली, लारेल तथा छोटे ताड़ आदि की झाड़ियाँ भी मिलती है । इन प्रदेशों में वन सदा हरे -भरे रहते है, क्योंकि शीतकाल में नमी के साथ साधारण सर्दी पड़ती है जिससे पत्तियाँ झड़ती नहीं ग्रीष्म काल की गर्मी तथा शुष्कता से बचने के लिए इन प्रदेशों के वन प्रकृति के साथ सामजस्य बनाए रखते हैं । इस प्रदेश के मुख्य वृक्ष जैतून, शाहबलूत, अंजीर, नीबू नारंगी, मई व शहतूत हैं । जलवायु की विशेषता के कारण ही शाहबलूत के पेड़ में मोटी छाल, जैतून में बड़े-बड़े बाल और मोटा तना, नारंगी में चिकनी और मोटी तह, आह की बेल की लम्बी जड़े और थोर के पेड़ में काँटे तथा मेहदीं में छोटी-छोटी पत्तियाँ होती हैं । इस प्रदेश में अनूकूल जलवायु वाले भागों में नुकीली पत्ती वाले वृक्ष, चीड़, फर, सीडर, साइप्रस, देवदार और जुनीपर आदि तथा ठण्डे एवम् नम भागों में अखरोट, हिकोरी, बालनट और बलूत के वृक्ष भी पाये जाते है । इनके अतिरिक्त चिली प्रदेश में पीनीयन अथवा चिलीपाइन और ऐसपीनों, फी.-. पी आस्ट्रेलिया में जर्रा कारी व यूकिलिप्टस के वृक्ष पाये जाते हैं । यहाँ घासें कम पायी जाती ', क्योंकि घासों की उत्पत्ति तथा विकास के लिए उच्चतम तापमान के साथ वर्षा का संयोग होना चाहिए जो कि भूमध्य सागरीय जलवायु में सभव नहीं है । कैलीफोर्निया तथा आस्ट्रेलिया के कुछ भागों में घासें पायी जाती हैं, परन्तु ग्रीष्मकाल में सूख जाती हैं । यही कारण है कि इन प्रदेशों में पशुचारण बहुत कम होता है तथा दूध देने वाले चौपाये केवल पहाड़ी ढालों पर ही पाते जाते हैं । यह प्रदेश रसीले फलों के लिए सम्पूर्ण संसार में प्रसिद्ध है ।

जीव जन्तु : वानस्पतिक आवरण के असमानता के कारण यहाँ के जीव जन्तुओं में भी पर्याप्त प्रादेशिक विभिन्नता पायी जाती है । कैलीफोर्निया तथा चिली के प्राकृतिक पर्यावरण प्रदेश में जन्तुओं में प्राय: समरूपता पायी जाती है । दक्षिणी कैलीफोर्निया ये रीड़दार जन्तुओं तथा पक्षियों की सैकड़ों जातियाँ पाई जाती है । कैलीफोर्निया तथा चिली में बड़े स्तनधारी जानवरों में प्रमुख है खच्चर, हिरन (Mule Deer) तथा चिलियन ग्वानको अन्य स्तनधारियों में भूमिवासी गिलहरी तथा वृक्षवासीय चूहा प्रमुख है । मानवीय हस्तक्षेप के कारण पहाड़ी शेर, भेड़िया, भूरे रग वाला रीछ अब दुर्लभ जन्तु हो गये हैं । अन्य जीव जन्तुओं में खरगोश, स्योट (Cyote) छिपकली, सांप, चील, बाज आदि पाये जाते हैं । दक्षिणी अफ्रीकी भूमध्य सागरीय प्रदेशों में

यूरोपियों द्वारा कृषि के विकास के लिए यहाँ की मूल वनस्पतियों का सफाया होने से दरियाई गधा तथा बोण्टेबोक (Bontebok) का पूर्णरूपेण विलोपन हो गया है । आस्ट्रेलियाई प्रदेश में थैलीदार जन्तुओं में कंगारूओं की कई जातियाँ पायी जाती है । झाड़ियों तथा घासों में रहने वाले पक्षियों में हनीइटर (Honeyeaters), हिस्टलकर (Whistler), रेन्स (Wrens), रोबिन (Robins) आदि प्रमुख है ।

आर्थिक विकास तथा मानवीय प्रत्युतर : जलवायु की अत्यधिक अनुकूलता के कारण भूमध्य सागरीय प्रदेशों में घनी जनसंख्या पायी जाती है । यहाँ के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि करना है । इस प्राकृतिक प्रदेश के निम्न भूमियों तथा नदी घाटियों में खेती होती है । सिंचाई की सहायता से इन प्रदेशों में तरह -तरह के अन्न और फल पैदा किये जाते हैं ।

यहाँ के निवासी तीन प्रकार की फसलें पैदा करते हैं : (i) गेहूँ व राई जैसी फसलें जो ठंडी छोटी और वर्षा वाली सर्दियों में पैदा हो जाती है; (ii) जैतून, अंजीर अखरोट व अंगुर आदि की फसलें जो लम्बी और शुष्क गर्मियों में पक जाती है और जिन्हें भूमि से ही जल प्राप्त हो जाता है; (iii) तीसरे प्रकार की वे फसलें है जिसके लिए वैज्ञानिक ढग द्वारा सिंचाई की जाती है । यहाँ की मुख्य फसलें गेहूँ जौ, मक्का, धान (इटली) तम्बाखू और सब्जियाँ है । फलों में मई, अंजीर, नाली, नीबू सेव, नाशपाती, आडू खुबानी, शहतूत बादाम इत्यादि विशेष प्रसिद्ध है ।

यहाँ की शुष्क ग्रीष्मऋतु फल सुखाने के लिए पूर्णरूप से अनुकूल है । संसार के प्राय: सभी उन्नतिशील भागों मे यहाँ से फल और मेवे भेजे जाते हैं । कैलीफोर्निया फल निर्यात के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है ।

भूमध्य सागरीय प्रदेशों में फलों पर आधारित कितने ही उद्योग धन्धे विकसित हो गये हैं; जैसे फलों का सत निकालना, मह से शराब बनाना, मह को सुखाकर किशमिश तैयार करना, शहतूत की पत्तियों पर रेशम के कीड़े पालकर रेशम तैयार करना, जैतून से तेल निकालना और तेल से साबुन आदि बनाना । आर्थिक दृष्टिकोण से फल और फलों पर आधारित ये उद्योग - धन्धे बड़े महत्वपूर्ण है । बसन्त काल में यहाँ फूल संग्रह करना भी लोगों का व्यवसाय हो गया है ।

भूमध्य सागरीय देशों में खनिज संसाधन की कमी है । स्पेन में लोहा, सीसा, टंगस्टन, ताँबा तथा पारा मिलता है । टर्की क्रोमियम, सीसा, व जस्ता का मुख्य उत्पादक है । दक्षिणी पश्चिम आस्ट्रेलिया के पर्वतीय क्षेत्रों में जस्ता व सीसा पाया जाता है । फ्रांस में बॉक्साइट, अल्वीरिया में लोहा तथा कैलीफोर्निया में खनिज तेल व सोना पाया जाता है । चिली में कोयला और ताँबा, इटली में गन्धक पारा और संगमरमर तथा न्यूज़ीलैण्ड में सोना मिलता है । इन क्षेत्रों में खनन व्यवसाय प्रमुख है ।

यहाँ पर कृषि पर आधारित उद्योगों यथा शराब उद्योग आटा उद्योग व डब्बा बन्द फलों से सम्बन्धित उद्योगों का अत्यधिक विकास हुआ है । इटली, फ्रांस, स्पेन व पूर्तगाल से फलों के रस का निर्यात किया जाता है । भूमध्य सागरीय क्षेत्र के प्राय' सभी भागों में शराब बनायी जाती है । ज्यादातर शराब का उपयोग स्थानीय उपभोग के लिए होता है, पर थोड़ा बहुत निर्यात भी किया जाता है । यहाँ पर जैतून से सम्बन्धित वनस्पति तेल उद्योग का बहुत अधिक विकास हुआ है । यहाँ पर जैतून के तेल की बहुत मांग है ।

भूमध्य सागरीय क्षेत्र में लोहा व कोयला बहुत कम पाया जाता है, परिणाम स्वरूप लौह -स्पात व इन्जीनियरिंग उद्योग का अधिक विकास नहीं हुआ है । कैलीफोर्निया में कुछ विनिर्माण उद्योगों यथा तेलशोधन, पैट्रोरसायन तथा जहाज निर्माण उद्योगों का विकास हुआ है । भेड़-बकरी पर आधारित ऊन उद्योग का विकास भी यहाँ हुआ है । आस्ट्रेलिया में लकड़ी उद्योग बहुत विकसित हुआ है ।

फ्रांस स्पेन व इटली में रेशमी कपड़े बनाने का व्यवसाय विकसित है । भूमध्य सागरीय प्रदेशों के अधिकांश भागो मे द्रुतगामी परिवहन के साधनो का विकास हुआ है ।भूमध्य सागरीय क्षेत्रों मे लोगो को खाने के लिए गेहूँ जैसे खाद्यान्न, तरह -तरह के रसदार और गूदेदार फल, अंगूर की शराब जैसे पेय पदार्थ आदि प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं, फिर स्वास्थ्यप्रद जलवायु मिलती है और लोग परिश्रमी होते है, अत: इन्हें उन्नति करने, विकसित होने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मिल जाती हैं ।

ये प्रदेश मानव बसाव के लिए बड़े ही अनुकूल रहे हैं । यूनान, क्रीट, इत्यादि पुरानी संस्कृतियाँ इन्हीं प्रदेशों में पनपी थी । आज कैलीफोर्निया और इटली सम्पूर्ण संसार के लोगों के लिए पर्यटन के आकर्षण क्ले बने हुए है । यहाँ की शराब विश्व के सभी देशों में पहुँच चुकी है । यहाँ की आनन्ददायिनी जलवायु ही अत्यधिक उन्नति के लिए जिम्मेदार है । लासऐंजलस इस प्रदेश का प्रतिनिधि नगर है जहाँ विभिन्न धर्मो के अनुयायी निवास करते है ।

बोध प्रश्न - 6

1. भूमध्य सागरीय प्रदेश के निवासियों द्वारा कौन सी कृषि फसलें उगाई जाती है?

   ………………………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………………….

5.2.6 शीत मरूस्थल या टुण्ड्रा प्रदेश (ध्रुवीय प्रदेश)

स्थिति एवं विस्तार : टुण्ड्रा प्रदेश का विस्तार 650 उत्तरी अक्षांश से ध्रुवों तक पाया जाता है । प्रमुख टुण्ड्रा प्रदेश ये हैं - (i) उत्तरी अमेरिका में अलास्का व कनाडा के उत्तरी तट, ग्रीनलैण्ड के तटीय भाग व पास स्थित द्वीप, (ii) यूरोपीय रूस के उत्तरी तटीय क्षेत्र ,(iii) एशिया में साइबेरिया के उत्तरी तटीय क्षेत्र । ग्रीष्म काल में 100 सेण्टीग्रेड की समताप रेखा द्वारा टुण्ड्रा की सीमा निर्धारित होती है । (चित्र 5. 11)

जलवायु : यहाँ संसार का न्यूनतम तापमान पाया जाता है । यहाँ जाड़े की ऋतु अत्यधिक लम्बी होती है और इस ऋतु में रातें बहुत बड़ी तथा दिन छोटे होते है । इन प्रदेशों के कुछ भाग में कुछ दिन ऐसे होते हैं कि सूर्य दिखलायी नहीं पड़ता । भूमि साल में लगभग 10 महीने बर्फ से ढकी रहती है । गर्मी में बर्फ पिघलती है जिससे कहीं-कही भूमि दलदल बन जाती है । इस प्रदेश में तापमान हिमांक से नीचे रहता है । शीतकाल में यहाँ अत्यन्त ठण्डी पूरगा (Purga) और बूरान (Buran) नामक हवाएँ हिमकणों का बौछार करती हुई चलती हैं । ग्रीष्म कालीन तापमान 5^0 सेण्टीग्रेड रहता है । यहाँ वर्षा हिमकणों के रूप में होती है, जिसका औसत 25 सेण्टीमीटर वार्षिक है ।

प्राकृतिक वनस्पति : इन प्रदेशों में इतनी ठंडक पड़ती है कि कोई पडे पौधा नहीं उग पाता । बर्फ- पिघलने पर जहाँ -तहाँ कुछ खुशनुमा फूलों वाले पौधे और झाड़ियाँ उग आती हैं जो ठण्डक बढ़ते ही नष्ट हो जाती है । यहाॅ की प्रमुख प्राकृतिक वनस्पति छोटी -छोटी झाड़ियाँ तथा मोटी काइयाँ हैं । ये झाड़ियाँ और काइयों यहाँ पाये जाने वाले बारहसिंघो के प्रमुख भोजन हैं । कहीं -कहीं छोटी- छोटी घास तथा फूल देने वाली झाड़ियाँ पायी जाती हैं । हॉन्टलवरी, विलो, एल्डर आदि इस प्रकार झाड़ियाँ हैं ।

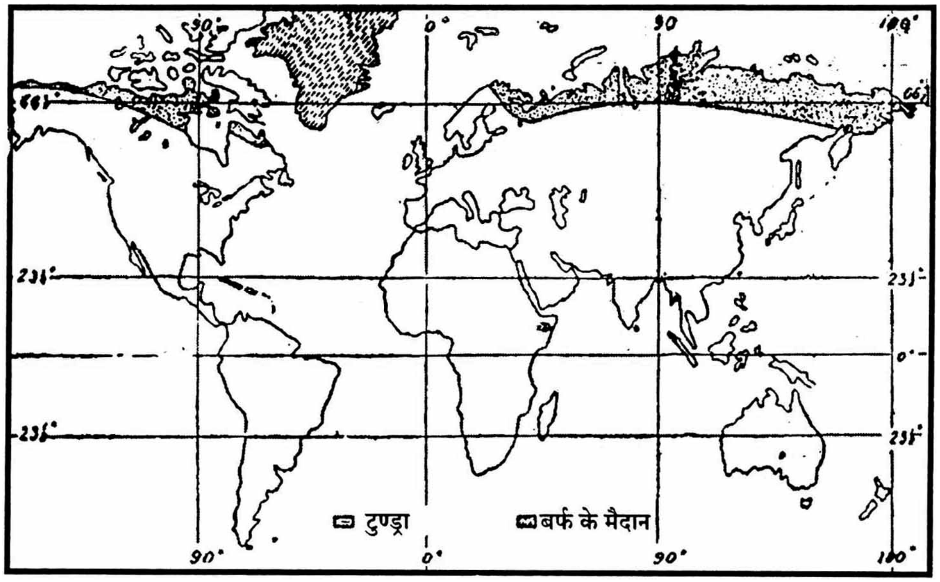

चित्र- 5.11 : शीत मरुस्थल अथवा टुण्ड्रा प्रदेश (ध्रुवीय प्रदेश)

जीवजन्तु : इन प्रदेशों में इस प्रकार के पशु अधिक मिलते हैं जिन्हें तीव्र सर्दी से बचने के लिए प्रकृति उनके शरीर पर लम्बे -लम्बे बालों को प्रदान करती है- जैसे सफेद रीछ, सफेद लोमड़ी, खरगोश, कस्तूरी वैल, कैरीबो, बारहसिंघा आदि । समुद्र में सील, बालरेस आदि मछलियाँ अधिक पाई जाती हैं । ग्रीष्मऋतु में अनेक प्रकार की रंग-बिरंगी चिड़ियाँ, बतख, हंस, सारस, कीड़े-मकोड़े आदि दृष्टिगोचर होने लगते हैं । शीतकाल में ये अधिक दक्षिण की ओर चले जाते हैं ।

आर्थिक विकास तथा मानवीय प्रत्युत्तर :

इस प्रदेश की भूमि कृषि के अयोग्य है, यद्यपि कनाडा तथा साइबेरिया के कुछ भागों में कृत्रिम तरीके से गर्मी पहुँचाकर कुछ अनाज व सब्जियाँ उगाने में सफलता मिली है । यहाँ की आबादी बहुत कम है । खानाबदोश किस्म का जीवन व्यतीत करने के लिए ये लोग प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण बाध्य है । टुण्ड्रा क्षेत्र में एस्कीमो जैसी प्राचीन जाति के लोग मिलते हैं जिनका मुख्य व्यवसाय शिकार व मछली पकड़ना है । एस्कीमो उत्तरी अमेरिका व ग्रीनलैण्ड में मिलते है । स्कैनडिनेविया में लैंप तथा साइबेरिया के टुण्ड्रा क्षेत्र में 'सैमोयेद', 'याकूत ' व 'चुकचीं' जैसी आदिम जातियाँ निवास करती है ।

एस्कीमो के घर बर्फ के बने होते हैं जिन्हें 'इग्लू कहा जाता है । इग्लू की आन्तरिक सतह में सील का चमड़ा लगा रहता है तथा इनका दरवाजा प्राय: बहुत छोटा होता है । साथ ही ये रेण्डियर व करीबू लेप्स और फिन्स यूरोपीय ध्रुवीय प्रदेश के प्राचीन भ्रमणकारी निवासी हैं ।

वर्तमान समय में ये कृषि द्वारा मोटे अन्न - जई व राई पैदा कर लेते हैं । आसपास के जंगलों से लकड़ियाँ भी काट लेते हैं और तीव्र वाहिनी नदियों द्वारा जल विद्युत उत्पन्न करके कागज के कारखाने चला लेते हैं । यंत्र- तंत्र फैले क्षेत्रों पर कुछ गाय, बैल, भेड़ का ऊन और चमड़ा काम में लेते हैं । फिनलैण्ड 'पे कुछ लोहा भी पाया जाता है । इन बातों के कारण लैप्स और फिन लोग एस्कीमो आदि जातियों से अधिक उन्नत अवस्था में हैं ।

ध्रुव प्रदेश के अटल बर्फ वाले प्रदेश, जिसके अन्तर्गत ग्रीनलैण्ड का अधिकांश भल और कनाडा में स्थित .द्वीपो का बड़ा भाग सम्मिलित है , अत्यधिक सर्दी के कारण आर्थिक विकास के लिए बिलकुल ही अनुपयुक्त है।

टुण्ड्रा प्रदेश में हाल में कुछ विकास के कारण यहाँ के निवासियों के जीवन शैली में निम्न परिवर्तन आये हैं -

1. आर्थिक रूप से विकसित लोगों के सम्पर्क में आने के कारण इनकी परम्परा बदली है ।
2. हारपून का स्थान बन्क्र, चमड़े से बने तम्बू के स्थान पर वाटरप्रूफ कपड़े के तम्बू का प्रयोग होने लगा है ।
3. रेण्डियर का शिकार करने के स्थान पर उनका पालन करने लगे हैं ।
4. यहाँ पर वैज्ञानिक तरीके से बने ग्रीनहाउस में सब्जी आदि उगायी जाने लगी है ।
5. टुण्ड्रा निवासी समीपी शहरों मे व्यवसाय की खोज में उद्यत दिखाई पड़ने लगे हैं ।

टुण्ड्रा निवासी चमड़े से बने तम्बू में भी रहते हैं । टुण्ड्रा निवासी मूलत : शिकारी है और ये शिकारी के लिए तीर - धनुष, चाकू, जाल, हारपून आदि का प्रयोग करते हैं ।

यहाँ के निवासी सभ्यता की दौड़ में बहुत पीछे हैं और इन्हें बड़ा संघर्षमय जीवन बिताना पड़ता है । कठिन और प्रतिकूल भौगोलिक वातावरण इन्हें किसी प्रकार की जीवन -उन्नति नहीं करने देते और इन्हें बाध्य होकर "प्रकृति के बहुत समीप" रहना पड़ता है और उसी के अनुसार अपने जीवन को ढालना पड़ता है । इन्हीं कारणों से ध्रुवीय प्रदेश को क्षुधा तथा कष्टप्रद व असाध्य अभावों का प्रदेश' कहते हैं ।

विगत वर्षों में भू-वैज्ञानिकों ने टुण्ड्रा प्रदेश में जहाँ-तहाँ कुछ कच्ची धातुओं का पता लगाकर उन्हें खोद निकालने का उपाय किया है । 70^0 उत्तरी अक्षांश के निकट साइबेरिया के बोरिलस्क नगर के निर्माण से उस क्षेत्र की आर्थिक स्थिति बदली है । नगर-निर्माताओं ने स्थायी बर्फीली जमीन को काफी गहराई तक खोदकर खम्भों का निर्माण किया और उन्हीं खम्भों पर बड़े-बड़े मकानों को खड़ा कर दिया । यहाँ भूमि के अन्दर से खान खोदने की योजना बनाई गई है और आज लाखों टन कच्चा लोहा निकाला जा रहा है । इस ध्रुवीय प्रदेश: में कृत्रिम उपायों द्वारा नगर की सारी सुविधाएँ उपलब्ध कराई गयी हैं । इसी के निकट एक नया नगर तालनाख बसाया जा रहा है ।

कनाडा के टुण्ड्रा प्रदेश में प्रकृति से संघर्ष करने वाली एस्कीमो की संख्या में निरन्तर गिरावट आती जा रही है ।

बोध प्रश्न - 7

1. टुण्ड्रा निवासियों की जीवन शैली में आये परिवर्तनों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए ।

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

5.3 सारांश (Summary)

मानव एक भौगोलिक कारक है और उसी के चारों और प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक वातावरण की क्रियाएँ तथा प्रतिक्रियाएँ होती है । प्राकृतिक वातावरण और सांस्कृतिक वातावरण दोनों के साथ मानव अपना वातावरण समायोजन करता है और अनुकूलन करता है ।

प्रादेशिक अध्ययन के लिए सम्पूर्ण विश्व को कुछ समान लक्षणों के आधार पर कई विभागों में बाँटा जाता है । ऐसे वृहत क्षेत्र को मोटे -रूप से पर्यावरणीय प्रदेश कहते है । पर्यावरणीय प्रदेश की अवधारणा का जन्म 1905 ई. में हुआ था ।

भूमध्य रेखीय प्रदेश की जलवायु गर्म तर व अस्वस्थकर है । यहाँ औसत वार्षिक तापमान 27^0 सेण्टीग्रेड, सापेक्षिक आर्द्रता 80 प्रतिशत, तथा औसत वार्षिक वर्षा 200 सेण्टीमीटर से अधिक होती है । यहाँ होने वाली वर्षा संवाहनीय तथा प्रतिदिन होती है । शीत ऋतु का अभाव पाया जाता है । अनुकूल जलवायु दशा तथा उच्च तापमान एवम् अत्यधिक वर्षा के कारण यहाँ घनी सदाबहार किस्म की वनस्पतियाँ मिलती हैं । इन वनों के मुख्य वृक्ष महोगनी, गट्टापार्चा, बांस, वेंत, सिनकोना, आबूनस, चन्दन, रबड़ आदि हैं । प्रमुख जीव जन्तुओं में हाथी, गैंडा, जंगली सूअर, जिराफ, दरियाई घोड़ा, शेर, चीता, मगर, कीड़े मकोड़े, मच्छर बन्दर, जहरीली मक्खियाँ, मछलियाँ इत्यादि हैं ।

आर्थिक विकास की दृष्टि से भूमध्य रेखीय प्रदेश पिछड़े हुए है । आखेट कर्म के साथ स्थानान्तरित कृषि की जाती है । विगत कुछ वर्षों से बागाती कृषि प्रारम्भ की गई है । कांगो बेसिन में खनन से तांबा, अमेजन बेसिन व इण्डोनेशिया में खनिज तेल व मलेशिया में टिन प्राप्त की जा रही है । इन प्रदेशों में बहुत कम जनसंख्या निवास करती है ।

उष्ण कटिबन्धीय मरूप्रदेश की जलवायु विषम है । यहाँ ग्रीष्मकालीन तापमान 35^0 से 40^0 सेण्टीग्रेड तथा शीतकालीन तापमान 10^0 सेन्टीग्रेड तक होता है । वार्षिक और दैनिक तापान्तर बहुत अधिक होता है । वर्षा का औसत 25 सेन्टीमीटर से कम रहता है । ऊँचा तापमान तथा अत्यल्प वर्षा मरुप्रदेश की जलवायु की प्रमुख विशेषता है । खजूर, बबूल, ताड़, खेजडी, सेहूड़ नागफनी तथा कँटीली झाड़ियाँ इन प्रदेशों की प्रमुख वनस्पति हैं ।

जीव जन्तुओं मे 'बारहसिंघा, भेड़िया, खरगोश, छिपकली, चूहा, सांप, चीटीं, कीट पतंगे प्रमुख है । ऊँट, घोड़े, भेड़-बकरिया पालतु पशु है ।

वर्षा कम होने से यहाँ ज्वार बाजरा बोया जाता है । जहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध है वहाँ गेहूँ र कपास, तिलहन तथा दलहन की फसलें उगायी जाती है । खनिज संसाधनों का दोहन बहुत कम हुआ है । खनिज तेल, सोना, लौह अयस्क, ताँबा हीरा यहाँ के प्रमुख खनिज हैं । यातायात के साधनों का विकास बहुत कम हुआ हैं । प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण जनसंख्या बहुत कम है । ये क्षेत्र औद्योगिक दृष्टि से बहुत पीछे है ।

मानसूनी प्रदेश में ग्रीष्म कालीन तापमान 30^0 सेन्टीग्रेड से अधिक तथा शीतकालीन तापमान 10^0 सेन्टीग्रेड तक नीचे चला जाता है । दैनिक और वार्षिक तापान्तर सदैव अधिक रहता है । शीतकाल प्राय : शुष्क रहता है । और गर्मियों में मानसूनी हवाओं से वर्षा होती है । यहाँ 85 प्रतिशत वर्षा गर्मियों मे होती है । वार्षिक वर्षा का औसत 100 से 150 सेंटीमीटर के मध्य मे रहता है , देवदार, लौगबुड़, सागवान, शीशम, चन्दन, नीम आदि प्रमुख वनस्पति है । सामान्यतया यहाँ पतझड़ पत्ती वाले वृक्ष अधिक मिलते हैं । जंगली जानवरों में हिरन, सूअर, ऊँट पाये जाते है । गाय, बैल, भैंस, भेड़-बकरी आदि प्रमुख पशु पाले जाते हैं ।

मानसूनी प्रदेश कृषि प्रधान क्षेत्र है । यहाँ गेहूँ , चावल, जी, कपास, गन्ना, तिलहन, दलहन, तम्बाखू चाय, कहवा, रबड़ तथा सभी प्रकार की सब्जियां एवं फलों की कृषि बड़े पैमाने पर होती है । खनिज की दृष्टि से सम्पन्न इन प्रदेशों में औद्योगिक विकास तेजी से हो रहा है । यातायात की सुविधाएँ बढ़ रही है । ये प्रदेश जनसंख्या की दृष्टि से बहुत सघन हैं ।

शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश की जलवायु महाद्वीपीय है जिसमें तापमान की अत्यधिक विषमता पायी जाती है । ग्रीष्मकालीन तापमान 26^0 सेन्टीग्रेड तथा शीतकालीन तापमान हिमांक बिन्दु से नीचे तक चला जाता है । वार्षिक वर्षा का औसत 50 सेन्टीमीटर है, जो प्राय : साल भर होती है ।

इन प्रदेशों में छोटी व मुलायम घास अधिक होने से यहाँ दुधारू पशु जैसे गाय, भैंस, भेड़, बकरी अधिक पाली जाती है । यहाँ मध्य यूरोप के घुम्मकड़ जाति के लोगों को खिरगीज कहते है । यहाँ के स्टेपी, पम्पाज, प्रेरीज और डाउन्स के मैदानी भागों में गेहूँ का उत्पादन प्रमुख रूप से होता है । तृण प्रदेश के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि व पशुपालन है । उत्तरी अमेरिका का प्रेरीज प्रदेश संसार का प्रसिद्ध कृषि एवम् उद्योग का क्षेत्र हो गया है । यातायात के विकसित साधनों एवं औद्योगीकरण के कारण यहाँ सघन जनसंख्या पायी जाती है ।

भूमध्य सागरीय प्रदेश आर्थिक क्रियाओं व स्वास्थ्य की दृष्टि से एक आदर्श प्रदेश माना जाता है । यहाँ ग्रीष्मकालीन औसत तापमान 27^0 सेन्टीग्रेड तथा शीतकालीन तापमान 10^0 सेन्टीग्रेड रहता है । सदाबहार किस्म की वनस्पति -मिलती है । यहाँ गेहूँ , चावल, जौ, मक्का एवं विभिन्न प्रकार के फल जैसे - अंगूर, नीबू नारंगी, सेव, नाशपाती, शहतूत आदि की कृषि होती है । यहाँ पशुपालन भी होता है ।

यहाँ ताँबा, लोहा, कोयला, पारा, संगमरमर सोना व खनिज तेल निकाला जाता है । फलों पर आधारित कुटीर उद्योग का अत्यधिक विकास हुआ है । यातायात के विकसित साधन, घनी जनसंख्या, सम्पन्नता आदि के कारण कुछ बड़े पैमाने के उद्योग भी विकसित हैं ।

ध्रुवीय प्रदेश की जलवायु बहुत कठोर है । शीतकालीन तापमान हिमांक बिन्दु से नीचे तथा ग्रीष्मकालीन तापमान का औसत 5^0 सेन्टीग्रेड रहता है । ग्रीष्मकाल में फूल देने वाली झाड़ियाँ तथा घासें उग आती है । सफेद रीछ, ध्रुवीय भालू भेड़िया, खरगोश, बारहसिंघा आदि पशु तथा वालरस, सील आदि मछलियाँ पाई जाती है । रंग बिरंगी चिड़िया, बत्तख, सारस इत्यादि भी यंत्र-तंत्र ग्रीष्म काल में पाये जाते हैं

कृषि यहाँ लगभग नहीं होती । एस्किमो, याकूत, चुकती जैसी आदिम जातियों का जीवन संघर्षमय है । आधुनिक युग में इन जातियों की परम्परागत आदतें बदल रही हैं । यहाँ जनसंख्या बहुत ही कम पाई जाती है ।

5.4 शब्दावली (Glossary)

- **अनुकूलन (Adaptation) :** वह क्रिया या प्रकम जिसके द्‌वारा कोई जीव स्वयं को अपने पर्यावरण के अनुकूल ढालता है ।
- **इग्लू (igloo) :** उत्तरी कनाडा तथा ग्रीनलैण्ड के टुण्ड्रा प्रदेशों में निवास करने वाली एस्किमो का अर्द्धवत्ताकार तथा गुम्बदाकार गृह जो बर्फ के टुकड़ो से बना होता है ।
- **तापान्तर (Range of Temperature) :** किसी स्थान के उच्चतम और न्यूनतम तापमानों का अन्तर । तापान्तर दैनिक, मासिक अथवा वार्षिक होता है ।
- **प्रेरीज (Prairies) :** उत्तर अमेरिका में सपाट तथा वृक्षहीन मध्य अंक्षाशीय (शीतोष्ण) घास का मैदान जिसका विस्तार पश्चिम में राकी पर्वत से लेकर पूर्व में मिशिगन झील तक है । प्रेयरी के समान शीतोष्ण घास क्षेत्र अन्य माहद्‌वीपों में भी पाये जाते हैं जिन्हें यूरेशिया में स्टेप्स (steppes), दक्षिण अमेरिका में पम्पाज (Pampas), अफ्रीका में (Velds) तथा आस्ट्रेलिया में डाउन्स (Downs) कहते हैं । इन क्षेत्रों में घास की लम्बाई 60 सेण्टीमीटर से 2. 4 मीटर तक होती है ।
- **बेसिन (Basin) :** वह क्षेत्र जहाँ तक प्रवाही जल किसी एक नदी में पहुँचता है । इसे नदी बेसिन या अपवाह बेसिन कहते है । जैसे : कांगो बेसिन, आमेजन बेसिन आदि ।
- **मरूद्‌यान (Oasis) :** विस्तृत मरूस्थल के बीच में स्थित किसी जलाशय के चारों ओर का हरा - भरा क्षेत्र जो वनस्पतिविहीन रेगीस्तानी भूमि पर जल की अपस्थिति के कारण ही संभव हो पाता है । इसके चर्तुदिक मानव अधिवास पाये जाते हैं ।
- **सेल्वा (Selva) :** दक्षिण अमेरिका में आमेजन बेसिन के भूमध्यरेखीय वर्षाप्रचुर वनों के लिए प्रयुक्त पुर्तगाली शब्द ।
- **संक्रमण क्षेत्र (Transition Zone) :** दो आसन्न प्राकृतिक या पर्यावरणीय प्रदेशों के बीच का वह क्षेत्र अथवा पेटी जहाँ दोनों प्रदेश की दशाएँ मिलती हैं ।
- **हिमांक बिन्दु (Freezing Point) :** वह तापमान जिस पर कोई तरल पदार्थ ठोस रूप में परिवर्तित होता है । (या जम जात है ।)
- **सिराको (Sirocco) :** सहारा मरुस्थल से उत्पन्न होकर उत्तर दिशा में अग्रसर होने वाली गर्म, शुष्क एवं रेतीली पवन जो भूमध्य सागर को पार करके इटली, स्पेन आदि तटवर्ती देशों में प्रवेश करती है । आकस्मिक रूप से चलने वाली अल्पकालिक पवन है, जिसकी अवधि एक दो दिन होती है । इसे मिश्र में खमसिन, लीबिया में गिबली, द. पूर्वी स्पेन में लिविक कहते हैं ।

5.5 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. एस डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तागी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2006
2. ब्रून्स. डी. मौर्य : **मानव भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2005
3. वी. पी. राव एव वी. के. श्रीवास्तव : **मानव भूगोल,** वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2007
4. सविन्द्र सिंह एवम् श्वेता सिंह : **पर्यावरण भूगोल,** प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2007
5. चतुर्भुज मामोरिया एवं दीपक माहेश्वरी : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2006
6. सुरेश प्रसाद **इन्टर भूगोल,** भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पटना, 1999
7. काजी सईउद्दीन अहमद : **प्रमुख प्राकृतिक विभाग,** फ्रेण्डस् बुक हॉउस, अलीगढ़, 1957
8. B.S.Negi : **Human Geography - An Ecological Approach ,** Kedar Nath Ram Nath , Meerut

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. पर्यावरण प्रदेश का विभाजन सर्वप्रथम प्रो.ए. जे. हरबर्टसन से 1905 ई. में प्रस्तुत किया ।
2. "पर्यावरण प्रदेश पृथ्वी के धरातल का वह क्षेत्र है, जहाँ मानव जीवन को प्रभावित करने वाली प्राकृतिक परिस्थितियाँ बहुत कुछ एक सी रहती हैं ", जैसे - भूमध्य सागरीय प्रदेश, मानसूनी प्रदेश आदि ।
3. पर्यावरण प्रदेशों के निर्धारण में, जलवायु, वनस्पति, धरातलीय स्वरूप तथा मिट्टी आदि का ध्यान रखा जाता है । इसमें जलवायु सबसे अधिक महत्वपूर्ण है ।

बोध प्रश्न - 2

1. चाय, कहवा, रबड़, कोको, नारियल, मिर्च -मसाले, केला इत्यादि ।

बोध प्रश्न - 3

1. अफ्रीका महाद्वीप में सहारा व कालाहारी एशिया में अरब, इरान व थार उत्तरी अमेरिका में कैलीफोर्निया, एरीजोना और कोलरैडो के मरुस्थल दक्षिणी अमेरिका में अटाकामा तथा आस्ट्रेलिया के पश्चिमी मध्य भाग में मरुप्रदेश का विस्तार मिलता है ।

बोध प्रश्न - 4

1. मानसूनी प्रदेश के जलवायु की सर्वप्रमुख विशेषता है पवन दिशा परिवर्तन । 6 महीने हवाएँ सागर से स्थल की ओर और 6 महीने स्थल से सागर की ओर चलती हैं । परिणामस्वरूप इन प्रदेशों में अधिकांश वर्षा ग्रीष्म ऋतु में तब होती है जब हवाएँ सागर से स्थल की ओर चलती है । सामान्यत: वर्षा पर्वतीय होती है । वर्षा की मात्रा सर्वत्र समान नहीं होती । मानसूनी वर्षा अनिश्चित, अनियमित तथा असमान वितरीत होती है । अतिवृष्टि व अनावृष्टि इस प्रदेश की सामान्य घटना है ।

बोध प्रश्न - 5

1. कृषि कर्म व पशुपालन

बोध प्रश्न - 6

1. इन प्रदेशों के निवासी तीन प्रकार की कृषि फसलें पैदा करते हैं (i) गेहूँ और राई जैसी फसलें जो ठंडी, छोटी और हल्की वर्षा वाली सर्दियों में पैदा हो जाती हैं; (ii) जैतून, अंजीर, अखरोट, आह, संतरा, बादाम आदि की फसलें जो लम्बी और शुष्क गर्मियों में पक जाती है; तथा (iii) वे फसलें हैं, जिनके लिए वैज्ञानिक तरीके से सिंचाई की जाती है । ये मुख्य फसलें गेहूँ जी, मक्का, तम्बाकू व सब्जियाँ हैं ।

बोध प्रश्न - 7

1. टुण्ड्रा निवासियों की जीवन शैली में निम्न परिवर्तन हुए हैं ।
   - (i) 'हारपून ' का स्थान बन्दूक, चमड़े से निर्मित तम्बू के स्थान पर वाटरप्रूफ कपड़े के तम्बू का प्रयोग होने लगा है ।
   - (ii) रेण्डियर का शिकार करने के स्थान पर उनका पालन करने लगे हैं ।
   - (iii) यहाँ पर वैज्ञानिक तरीके से बने 'ग्रीन हाउस ' में सब्जी आदि उगायी जाने लगी है ।
   - (iv) टुण्ड्रा निवासी समीपवर्ती शहरों में व्यवसाय की खोज में उद्यत दिखाई पड़ने लगे है ।

5.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. टुण्ड्रा प्रदेशों के निवासियों ने प्राकृतिक पर्यावरण के साथ किस प्रकार अनुकूलन किया है? स्पष्ट कीजिए ।
2. पर्यावरण प्रदेश को परिभाषित करते हुए उसका वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए ।
3. भूमध्य रेखीय वनों का संक्षिप्त विवरण दीजिए ।
4. शीतोष्ण कटिबन्धीय तृण प्रदेश का सविस्तार वर्णन कीजिए ।
5. मरु प्रदेश की जलवायु दशाओं पर प्रकाश डालिए ।
6. मानसून प्रदेश के आर्थिक विकास के लिए उत्तरदायी भौगोलिक कारणों का उल्लेख कीजिए।
7. भूमध्य सागरीय प्रदेश का वर्णन कीजिए ।

इकाई 6 : मानव भूगोल की चिन्तनशालाएँ : नियतिवाद,सम्भववाद, नव- नियतिवाद तथा प्रसम्भाव्यवाद (School of Thought in Human Geography : Determinism Possibilism Neo-determinism and Probabilism)

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 नियतिवाद या निश्चयवाद या प्रकृतिवाद
6.2.1 नियतिवाद की आलोचना
6.3 सम्भववाद
6.3.1 सम्भववाद की आलोचना
6.4 नव-नियतिवाद
6.5 प्रसम्भाव्यवाद
6.6 सारांश
6.7 शब्दावली
6.8 सन्दर्भ ग्रंथ
6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप समझ सकेंगे -

- मानव पर प्राकृतिक वातावरण का प्रभाव
- प्राकृतिक वातावरण में मानव द्वारा संशोधन की क्षमता
- मानव-वातावरण के पारस्परिक सम्बन्ध
- मानव-वातावरण समायोजन अर्थात् समानुकूलन और रूपान्तरण

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

भौगोलिक अध्ययन के इतिहास में मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों का अध्ययन एक मुख्य पक्ष है । इस सम्बन्ध में विद्वानों के अलग -अलग दृष्टिकोण है । कुछ विद्वानों ने पर्यावरण को प्रभावी मानते हुए कहा कि मानव के सभी क्रिया कलाप पर्यावरण से नियन्तित्र होते हैं । इस विचार धारा के प्रमुख पक्षधर जर्मनी के भूगोलवेत्ता रहे हैं । इसके विपरीत भूगोल विदों का एक बड़ा समूह इस विचार धारा की पक्षधर है कि मानव पूर्ण रूप से पर्यावरण से नियन्त्रित

नहीं होता अपितु अपने बुद्धि, कौशल, तकनीकी विकास से पर्यावरण को परिवर्तित करता है तथा उसे अपने अनुकूल बनाता है । अर्थात् इस दृष्टिकोण में मानवीय पक्ष को प्रधानता दी गयी है । मानव प्रधान इस विचार धारा के विकास में फ्रांसीसी भूगोल वेत्ताओं का योगदान विशेष उल्लेखनीय है । अमेरिकी और ब्रिटिश भूगोल वेत्ताओं ने पर्यावरण अथवा मानव की प्रधानता की अवधारणा को अस्वीकार करते हुए दोनों के मध्य सामन्जस्य को महत्वपूर्ण माना अर्थात् इस मध्य मार्गी विचारधारा के अनुसार वास्तव में न तो प्रकृति का ही मनुष्य पर पूर्ण नियंत्रण है, और न ही मनुष्य प्रकृति का विजेता है । इस प्रकार मानव एवं पर्यावरण के मध्य सम्बन्धों के अध्ययन के सन्दर्भ में विभिन्न विचारधाराएं है जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं ।

6.2 नियतिवाद या निश्चयवाद या प्रकृतिवाद (Determinism or Environmentalism)

यह अत्यन्त प्राचीन संकल्पना है जो इस तथ्य पर आधारित है कि मानव के समस्त क्रिया कलाप (भोजन, रहन-सहन, वस्त्र, आचरण, व्यवहार आदि) भौतिक पर्यावरण से नियंत्रित होते हैं प्रकृति के प्रभाव के कारण ही मनुष्य में जातिगत एव सांस्कृतिक विभिन्नताएं पायी जाती हैं । अर्थात् प्रकृति (पर्यावरण) सर्व प्रधान है । प्रकृति की प्रधानता के कारण ही नियतिवादी विचारकों को **'जियोक्रेट' (Geocrates)** कहते हैं ।

यद्यपि नियतिवादी विचारधारा का विकास 18वीं तथा 19वीं शताब्दी में जर्मनी में हुआ परन्तु सर्व प्रथम मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों के अध्ययन का प्रयास यूनान एवं रोम के विद्वानों द्वारा किया गया जिसमें **हिप्पोक्रेट्स, अरस्तू थूसाइडाइडेस, हेरोडोटस, स्ट्राबो** आदि के नाम प्रमुख है । हिप्पोक्रेट्स ने इसा से 420 वर्ष पूर्व अपने ग्रन्थ **"वायु, जल और स्थान" (On Air,Water and Places)** में एशियाई एवं यूरोपीय निवासियों के स्वभाव की भिन्नता को प्रकृति जन्य माना है । इनके अनुसार एशिया के निवासी आराम पसन्द होते हैं जबकि यूरोप के लोग कठिन परिश्रमी होते हैं क्योंकि उन्हें अपेक्षाकृत कठोर वातावरण में रहकर अपने भोजन-वस्त्र की प्राप्ति के लिए अधिक क्रियाशील रहना पड़ता है । इसी प्रकार उन्होंने पर्वतों पर निवास करने वाले छोटे कद के बहादुर लोगों की तुलना सूखे मै दानों में रहने वाले लोगों से की । अरस्तू (384 - 322 ई .पू.) ने अपनी पुस्तक 'राजनीति ' (Politics) में इसी प्रकार का विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि यूरोप के ठण्डे देशों के निवासी बहादुर होते हैं परन्तु उनमें विचारों और तकनीकी कौशल का विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि आभाव होता है परिणाम स्वरूप अन्य क्षेत्रों की तुलना में वे स्वतंत्र कहे जा सकते हैं, तथापि उनमें राजनीतिक संगठन का सर्वथा अभाव मानव भूगोल की रहता है जिससे वे अपने पड़ोसी देशों पर शासन करने में असमर्थ रहते हैं । इसके विपरीत एशिया लोग चिंतनशील एवम कुशल होते है ।परंतु उनमें साहस और उत्साह की कमी पायी जाती है । यूनान की केन्द्रीय स्थिति होने के कारण यहां के निवासियों में उक्त दोनों गुण पाये जाते हैं । '

रोमन भूगोल वेत्ता **स्ट्राबो (Strabo)** ने विभिन्न क्षेत्रों का तुलनात्मक अध्ययन किया है । इनके अनुसार रोम की सम्पन्नता का कारण इटली की आकृति, धरातलीय संरचना, जलवायु

तथा क्षेत्रीय सम्बन्ध थे जिससे शक्तिशाली रोमन साम्राज्य स्थापित हुआ । **जीन बोडिन (J.Bodin)** ने अपनी पुस्तक **'रिपब्लिक ' (Republic)** में उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्रों में तुलना करते हुए लिखा है कि उत्तरी क्षेत्रों के लोग पशुवत, क्रूर तथा उत्साही होते हैं जबकि दक्षिणी क्षेत्रों के निवासी प्रतिशोधी, चालाक परन्तु सत्य को झूठ से पृथक करने वाले होते हैं । इसी प्रकार शीतोष्ण प्रदेशों के निवासी उत्तर के लोगों की अपेक्षा बुद्धिमान और दक्षिण के लोगों से अधिक शक्तिशाली होते हैं तथा उनमें 'शासन करने के सभी गुण निहित होते हैं । **मोन्टेस्क्यू (Moutesquieu)** ने जलवायु तथा मिट्टी को महत्व देते हुए लिखा है कि शीत जलवायु के लोग शारीरिक रूप से मजबूत, अधिक साहसी, स्पष्टवादी, कम अंधविश्वासी व कम चालाक होते हैं जबकि इनकी अपेक्षा उष्ण जलवायु के लोग वृद्ध लोगों की भाँति डरपोक शरीर में दुर्बल, आलसी और निष्क्रिय होते हैं । ' इन्होंने यद्यपि जलवायु की तुलना में मिट्टी के प्रभाव को कम महत्तव पूर्ण माना है परन्तु मिट्टी सरकार के स्वरूप को अधिक प्रभावित करती है । इसीलिए उपजाऊ देशों में प्राय : साम्राज्यवाद अधिक पनपते है तथा ऊसर क्षेत्रों में जनतंत्र पाये जाते हैं । मानव स्वभाव एवं क्रिया कलापों पर धरातलीय चट्टानों के प्रभाव को प्रमुख्ता देते हुए जर्मन विद्वान **किरचाफ (Kirchoff)** ने अपनी पुस्तक **'मानव एवं पृथ्वी (Man and the Earth)** में लिखा है कि बेसाल्ट चट्टानों का प्रभाव मानव प्रकृति पर अत्याधिक परिलक्षित होता है । इनके अनुसार बेसाल्ट प्रदेश के निवासियों पर शासन करना कठिन है वे राजविद्रोही और अधर्मी होते है । ' अरब भूगोल वेत्ताओं के लेखन भी नियतिवाद को प्रभावित करते हैं । **'आवासित जगत् (Habitable world)** को जलवायु कटिबन्धों (Kishwar) में विभक्त कर यह माना कि मानव स्वभाव एवं संस्कृति विभिन्न जलवायु परिस्थितियों के अनुसार होते है । **अलमसूदी (Al-Masudi)** के अनुसार 'जल बाहुल्य क्षेत्र (सीरिया) के लोग प्रसन्नचित व विनोदी स्वभाव के होते हैं जबकि शुष्क प्रदेशों के लोगों का स्वभाव चिड़चिड़ा होता है । उन्मूक्त खुले वातावरण में रहने वाले चरवाहे दृढ़ निश्चयी, शक्तिवान, बुद्धिमान और शारीरिक रूप से मजबूत होते हैं । '

जर्मन भूगोलवेला **काण्ट (Emanuel Kant)** ने मानव -पर्यावरण सम्बन्धों का विस्तृत अध्ययन किया । उनके मतानुसार प्राकृतिक भूगोल का प्रभाव मानव इतिहास पर स्पष्ट रूप से पड़ता है । अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **'भौतिक भूगोल' (Physische Geographic)** में उल्लेख किया है कि 'न्यू हॉलैण्ड' (East Indies) के सखी तट के निवासियों के नेत्र आधे बन्द रहते थे जिसका कारण यह था कि वातावरण में असंख्य मक्खियाँ उनकी आखों पर उड़ती रहती थी । काण्ट के अनुसार गर्म देशों के निवासी सामान्यतया सुस्त और डरपोक होते हैं यह दोनों बातें उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों में भी पायी जाती हैं । कायरता से अंधविश्वासों का

---

1. Taylor, G, "Geography in the Twentieth Century, London, 1957, P. 28.
2. Montesquou, "Spirit of Law" Book XIV.
3. Kirchoft. A. "Man and The Earth" Translated by Sonnenschem 1907, P-195.
4. Al-Masudi, "Tanbin", P. 28.

जन्म होता है और ऐसे प्रदेश राजाओं द्वारा शासित होते है तथा दासता की प्रथा कायम हो जाती है । ओस्तोयाक, सेमोयेड, लैप्स तथा ग्रीनलैण्ड के निवासी गर्म देशों के निवासियों की भांति, कायर, अंधविश्वासी, आलसी तथा अधिक पीने की चाह वाले परन्तु कम ईर्ष्यालु प्रवृत्ति के होते हैं जबकि टुण्ड्रा के निवासियों को भोजन प्राप्ति के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ता है । ' स्थलाकृति के प्रभाव को दर्शाते हुए काट ने लिखा है कि पहाड़ी प्रदेशों के लोग अध्यव्यवसायी, हंस मुख, योद्धा, स्वतंत्रताप्रिय तथा देश प्रेमी होते हैं । जलवायु के प्रभावों का समर्थन करते हुए उन्होनें कहा कि इसका प्रभाव न केवल मानव पर अपितु पशु -पक्षी एवं जीव-जन्तुओं पर भी पड़ता है । मनुष्य व पशु -पक्षी जो दूसरे देशों में प्रवास करने जाते हैं वे कालान्तर में वहाँ के वातावरण से परिवर्तित हो जाते है जैसे भूरे रंग की गिलहरियां साइबेरिया में आकर बादामी रग की हो जाती हैं तथा सफेद रंग की गायें भी शीतकाल में मटमैली (Greyish) हो जाती है । [6]इसी सन्दर्भ में ज्यूने (Zuene) ने कहा कि स्पेन के निवासियों मे सुस्ती, आलस्य और वासना की अधिकता का कारण वहाँ की उष्ण जलवायु है । इसी प्रकार सह तट के समीप रहने वाले इटली के लोगों की बोल-चाल में कण्ठ से बोली जाने वाली ध्वनियां कम होती है जो जर्मनी के उच्च प्रदेश के निवासियों में अधिक होती है । '

नियतिवाद को 19वीं शताब्दी में जर्मन विद्वानों **रिटर एवं हम्बोल्ट** द्वारा विशेष समर्थन प्राप्त हुआ । **कार्ल रिटर (Carl Ritter)** वे अपनी पुस्तक **'अर्ड कुण्डे' (Erdkunde)** में मानव-केन्द्रित उद्गम को अपनाते हुए कहा है कि प्राकृतिक वातावरण का प्रभाव मानव के शारीरिक संगठन, स्वास्थ्य एवं प्रकृति पर पड़ता है । उनके अनुसार तुर्कमान लोगों की आंखे छोटी होने का कारण मरूस्थलीय जलवायु है । रिटर ने अपने ग्रंथ **'यूरोपा' (Europa)** में विभिन्न देशों की ऐतिहासिक भूमिका तथा प्रकृति के प्रभावों की विवेचना की है । उनका मत था कि पृथ्वी तल का अध्ययन मानव को केन्द्र मानकर किया जाए । मानव के महत्व को स्वीकारते हुए रिटर ने उल्लेख किया है कि शक्ति और दृढ़ता, चातुर्य और कल्पना शक्ति, सहिष्णुता और बुद्धि, उद्दण्डता तथा पृथकत्व, स्वार्थी, हठी, स्वेच्छाचारी, उदासीनता और दृढ़ अहंकार, स्थिर विवेकता, यथार्थ, आदर्श प्रेम, कल्पनारहित विचार अभिव्यक्ति, मन्द-मन्द चाल, देश प्रेम तथा इसी प्रकार के अन्य व्यक्तिगत लक्षण डच वासियों के गुण-दोषों को व्यक्त करते हैं । ' रिटर के शिष्यों ने भौगोलिक दशाओं के प्रभाव को मानव की भौतिक संस्कृति और वहां के निवासियों के राजनीतिक भाग्य पर बताया । उनके शिष्य **रियूटर (Reuter)** ने लिखा है कि डच लोगों

---

5. Kant, E. quoted by G Tatham in "Geography fo Twentieth Century, P. 130.
6. Kant, Ibid.
7. Plawe, "Zeitschrift der geselleschaf fur Erdkunde, Berlin, 1937.
8. Ritter, C., "Prinzipien fur die Begrundung der Geogrphie" Berlin, 1849.

में शारीरिक कठोरता, लगातार काम में जुटे रहने की प्रवृत्ति, बुद्धिमानी, सोचने की शक्ति, सहनशीलता, व कठिन परिश्रम करने की लगन है । उनकी यह विशेषताएं वातावरण के फलस्वरूप है । उन्होंने समुद्र और नदियों के साथ परिश्रम और संघर्ष करके भूमि प्राप्त की है । उनके आकाश बादलों से आच्छादित और वर्षायुक्त रहते हैं, भूमि पर उच्चावच का अभाव है, जिसमें रोमांचकारी पहाड़ी-घाटियां नही है, वहां समतल भूमि का एकाकीपन है, उनके प्रदेश में बांध और नहरें बनी हुई है । वे भूतकाल से ही पशुपालन का व्यवसाय करते रहे हैं । एक ओर वे कृषि और साग -सब्जी का उत्पादन करते रहे हैं तो दूसरी और समुद्र नौ संचालन तथा व्यापार करते रहे मानव भूगोल की हैं इस प्रकार के वातावरण से उनकी कार्य विधि में बहुत सी अनोखी बाते पैदा हो गई हैं । लोगों के विचार और व्यवहार करने के तरीके तथा राजनीतिक और बौद्धिक विकास में उनके चारों और के वातावरण के विस्तार और जलवायु की दशाओं का प्रभाव समाया हुआ है । '

हम्बोल्ट ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ **'कॉस्मास' (Cosmos)** में भौतिक वातावरण एवं मानव क्रिया कलापों के मध्य अन्तर्सम्बन्धों का विस्तृत वर्णन किया है । उन्होंने पूर्वकालीन सभ्यताओं के विकास में भूमध्य सागर के प्रभाव का वर्णन करते हुए लिखा है कि **फोनेशियन (Phoenician)** लोगों की बढ़ती हुई शक्ति और **हेलेनिक (Hellenic)** राष्ट्रों का तीव्र गति से विस्तार समुद्री प्रभाव का परिणाम है । यूनानियों, विशेषकर **आयोनियन (Ionians)** लोगों की क्रियाशीलता तथा सखी यात्राओं का विकास भूमध्यसागर की भूरचना के प्रभाव के अनुसार हुआ था । [10]हम्बोल्ट के अनुसार पर्यावरणीय परिस्थितियों में भिन्नता के कारण ही पर्वतीय एवं मैदानी क्षेत्रों के निवासियों की जीवन चर्या, रहन -सहन व शारीरिक लक्षणों में अन्तर पाया जाता है । इसके साथ -साथ उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि मनुष्य में बुद्धिबल और आश्चर्य जनक क्षमता है । जिसके द्वारा वह अपने आप को सभी प्रकार की जलवायु में रहने योग्य बना लेता है, परन्तु बुद्धिबल और क्षमता होते हुए भी मनुष्य सभी क्षेत्रों में पार्थित जीवन (Terrestrial life) से नितान्त जुड़ा हुआ है । इससे स्पष्ट है कि हम्बोल्ट ने प्राकृतिक तत्वों को मानव से अधिक शक्तिशाली माना जो नियतिवाद को परिलक्षित करता है ।

डार्विन (Darwin) ने अपने ग्रंथ **जीवों की उत्पत्ति (Origin of Species)** में प्राकृतिक वातावरण के महत्व को स्पष्ट करते हुए **विकासवादी सिद्धान्त (Theory of evolution)** का प्रतिपादन किया । उनके अनुसार अन्य जीवों की भांति मानव का विकास भी प्राकृतिक वातावरण के आधार पर होता है । इस क्रिया में **प्राकृतिक छांट (Natural Selection)** की क्रिया काम करती है । इस प्रकार डार्विन ने 'वैज्ञानिक नियतिवाद ' का सूत्रपात किया । डार्विन के विचारों से प्रभावित होकर जर्मन जैवशास्त्री **अर्नस्ट हैकल (A.Haeckal)** ने परिस्थितिकी पर विशेष बल दिया । उनके अनुसार सभी जीव अपने वातावरण से अनुकूलन करते हैं । प्राकृतिक

---

9. Ibid.
10. Huboldt, A.V., “Cosmos” Vol. 1
11. Haeckal, A. “Naturliche Schopfungeschichete” 1867.

शक्तियाँ मानव प्रजातियों को प्रभावित करती हैं । उनके रंग, रूप, शारीरिक बनावट आदि में प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप विशिष्टताएं मिलती है । हीकल ने प्राकृतिक घटनाओं तथा मानव की सामाजिक क्रियाओं एवं व्यवहार से सम्बन्धित अपने अध्ययन में यह पाया कि दूसरों का वध करने और आत्महत्या करने जैसे अपराधों की संख्या सखी ज्वार - भाटों और ऋतुओं की गतियों के अनुसार घटती बढ़ती रहती है और इंग्लैण्ड में विवाहों की संख्या का अनाज के मूल्य निर्धारिता से निश्चित सम्बन्ध है । " अत : मानव की अधिकांश क्रियाएं प्राकृतिक वातावरण से प्रभावित होती है ।

ब्रिटिश समाजशास्त्री **'बकल ' (Buckle)** ने अपनी पुस्तक **इंग्लैण्ड में सभ्यता का इतिहास (History of Civilization in England)** के दोनों खण्डों में मानवीय क्रिया -कलापों पर वातावरण के प्रभावों का उल्लेख किया है । उन्होंने ने मानवीय क्रियाओं, व्यवहारों अपराधों आदि के आकड़ों का विश्लेषण कर यह सिद्ध किया कि जलवायु, भोजन, मिट्टी और सामान्य प्राकृतिक दृश्यों ने मानव के विचारों को प्रभावित कर विभिन्न प्रकार की राष्ट्रीय विचारधाराओं को जन्म दिया है । बकल के अनुसार अफ्रीका और एशिया की सभ्यताओं पर मिट्टी कीं उर्वरता का प्रभाव सर्वाधिक रहा जबकि यूरोप की सभ्यता पर जलवायु का प्रभाव अधिक परिलक्षित होता है । "

प्रसिद्ध फ्रांसीसी विद्वान **फ्रेडरिक लीप्ले ' (Frederic Le Play)** ने अपने सिद्धान्त **'स्थान -कार्य -लोग (Place-work-Folk)** में वातावरण को प्रधान मानकर मानव समाज, समुदाय संगठन और क्रिया कलापों पर उसके प्रभावों को शक्तिशाली माना है । उनके अनुसार किसी स्थान का वातावरण उस प्रदेश में किये जाने वाले 'कार्य ' के प्रकार को निश्चित करता है और कार्य के द्वारा सामाजिक संगठन निश्चित किया जाता है । **एडमंड डिमयोलिन्स (Edmun Demolins)** ने अपने ग्रंथ **'सामाजिक भूगोल '** में पर्यावरणीय शक्तियों को स्वीकार करते हुए कहा कि समाज वातावरण द्वारा निर्मित है । " उनके अनुसार मंगोल प्रजाति एशियाई स्टेपीज से एस्किमों एवं लैप्स निवासी टुण्ड्रा से तथा नीग्रो प्रजाति अफ्रीकी जंगलों से प्रभावित है । डिमोलिन्स ने वातावरणीय प्रभाव के सन्दर्भ में कहा है कि यदि धरातल अपनी वर्तमान अवस्था में ही रहे और मानव जाति का इतिहास पुन : प्रारम्भ हो तो वैसा ही होगा जैसे पहले हो चुका है । [14]उन्होंने स्टेपीज जलवायु का उदाहरण देते हुए कहा है कि यह जलवायु का उदाहरण देते हुए कहा है कि यह जलवायु घास के लिए अनुकूल है तथा घास की उपस्थिति समान कार्य पद्धति 'पशुचारण ' को निर्धारित करती है । स्टेपीज प्रदेश घोड़े के लिए एक आदर्श वातावरण

---

12. Buckle, “Histroy of Civilization in England.” 1857, P. 135
13. Demolins, quoted by G. Thatham in “Geography of Twentieth Century” ed. G. Taylor. P. 140.
14. Ibid
15. Ratzel, F., “Anthropogeoraphie” vol. I., 1882
16. Razel, F., “The History of Mankind” P.3.

है तथा घोड़ा ही स्टेपी निवासियों के भोजन एवं परिवहन का साधन है ।मनुष्य का भोजन, वस्त्र एवं उसकी हस्त कला के कार्य पशुओं की आवश्यकतानुसार ढल जाते है । अर्थात् वातावरण मनुष्यों के साथ-साथ पशुपक्षियों के विकास रण कार्यो को प्रभावित करता है।

मानव रण वातावरण के पारस्पारिक सम्बन्धों का वैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए प्रसिद्ध जर्मन विद्वान **रैटजेल ' (Ratzel)** ने भी वातावरण को प्रभावकारी माना है । रैटजेल को नियतिवाद का प्रेणता कहा गया है । उन्होंने तीन खण्डों में प्रकाशित अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ **'एन्थ्रोपोज्योग्राफी ' (Anthropogeography)** में यह स्पष्ट किया है कि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा औद्योगिक क्रिया -कलाप वातावरण की ही देन हैं । जनसंख्या वितरण में भिन्नता वातावरण के कारण है । रैटजेल का मत था कि मानव अपने वातावरण की उपज है तथा प्राकृतिक वातावरण की शक्तियां ही मानव जीवन को ढालती हैं । " रैटजेल के अनुसार हमारी बुद्धि, संस्कृति एवं सभ्यता के विकास की तुलना एक स्वच्छन्द चिड़िया की बजाय एक पौधे के तने से की जा सकती क्योंकि हम सदैव पृथ्वी से बंधे रहते है । तने की टहनियां चाहे आकाश की और जाती हों परन्तु पैर तो सदैव जमीन पर टिके रहते हैं और धूल को धूल में मिलना पड़ता है । [16]भौगोलिक स्थितियों के प्रभाव के सन्दर्भ में रैटजेल का मत था कि समान भौगोलिक स्थितियां रहन -सहन के समान ढ़गों को जन्म देती हैं । ब्रिटिश द्वीपों एवं जापान दोनों की भौगोलिक स्थिति 'द्वीपीय ' (Insular) है, दोनों पर्वतीय एवं शीतोष्ण कटिबन्ध में है । दोनों देशों को आक्रमणकारियों से प्राकृतिक सुरक्षा उपलब्ध है, परिणामत दोनों देशों ने ही तीव्र गति से विकास मानव भूगोल की जारी रखा और महाशक्ति बन गये । रैटजेल ने यह भी स्वीकार किया कि मानव सर्वोच्च जीव है वह स्थितियों को अपनी प्रकृति के अनुसार चयन करके प्राकृतिक वातावरण से अपनी क्षमता के अनुसार समायोजन करता है ।

रैटजेल महोदय की शिष्या एव अमेरिकी भूगोल विद **कु. एलेन चर्चिल सेम्पुल (E.C.Semple)** ने नियातिवाद को और अधिक प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया । अपने प्रसिद्ध ग्रंथ **'भौगोलिक वातावरण के प्रभाव' (Influences of geographic Environment)** में उन्होंने वातावरण के प्रभावी स्वरूप को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए यह कहा कि मानव पृथ्वी तल की उपज है इसका अभिप्राय केवल यह नहीं है कि वह पृथ्वी का बच्चा है और उसकी धूल का कण है वरन् यह भी है कि पृथ्वी माता ने उसका पालन -पोषण किया है । उसके लिए कर्तव्य निश्चित किये है, उसके विचारों को दिशा दी है, उसके समक्ष ऐसी कठिनाइयां प्रस्तुत की जिससे उसके शरीर को बल मिलता है तथा बुद्धि को तीव्रता, उसको नौ संचालन और सिंचाई की समस्याएं दी हैं और साथ ही साथ उसके कान में समस्याओं का हल भी बता दिया है । वह उसकी हड्डी और मांस तथा उसके मस्तिष्क और आत्मा में प्रविष्ट हो गयी है । [17]सेम्पुल का मत था कि मानव का शारीरिक गठन, मानसिक स्थिति और सामाजिक क्रिया-कलापों पर वातावरण की छाप लगी है । उन्होंने उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि प्रकृति ने पर्वतों पर रहने वाले मनुष्यों को लोहे के पैर दिये हैं जिनसे वह ढालों पर चढ़ता उतरता है, सह तट पर रहने वाले लोगों के सीने और भुजाओं का बलशाली विकास किया है जिससे वह अपनी नांव की पतवार चलाता है । नदी

घाटियों के निवासियों को प्रकृति ने उपजाऊ मृदा से बाध दिया है, वह उसके विचारों और आकांक्षाओं को शान्त और नीरस तथा कठिन कार्यो मे जकड़ देती है । पवन प्रताड़ित पठारों पर रहने वाला मनुष्य अपने पशुओं के झुण्ड को एक चारागाह से दूसरे चारागाह पर, एक मरूद्‌यान से दूसरे मरूद्‌यान पर ले जाता है । उसका जीवन बडा कठोर होता है । परन्तु उसको पशु चराने में पर्याप्त समय मिलता है और तब उसकी विचार शक्ति कार्य करती है । लम्बे चौड़े वातावरण में रहने के कारण उसके विचारों में अधिक सरलता आ जाती है तथा वह एकेश्वरवादी होता है । एक ही स्थान में बन्धे नहीं होने के कारण घास के मैदानों या रेगिस्तान के घुमक्कड़ चरवाहे प्राय : आक्रमक होते हैं ।

सेम्पुल ने विभिन्न प्राकृतिक परिस्थितियों में रहने वाले लोगों की विशेषताओं का वर्णन करते हुए कहा कि पर्वतों के निवासी प्रमुख रूप से रूढ़िवादी, साहसी, सरल स्वभाव व संकुचित मानसिकता के होते है क्योंकि उनका वातावरण बाहृय विश्व से जुड़ने का अवसर नहीं देता । इसके विपरीत मैदानों के निवासी सक्रिय, संवेदनशील एव लचीले स्वभाव के होते हैं परन्तु कम साहसी होते हैं । उन्होंने लिखा है कि उत्तरी यूरोप के लोग उत्साही दूरदर्शी, गम्भीर, भावुक की तुलना में विचारवान, लापरवाह की तुलना में सतर्क होते हैं । दक्षिण में उपोष्ण भूमध्य सागरीय क्षेत्रों के निवासी आरामतलब,केवल दबाव और आवश्यकता में कार्य करने वाले प्रसन्नचित, भावुक, कल्पनाशील आदि सभी गुणों से युक्त है । " सेम्पुल ने धार्मिक चिन्तन पर भी पर्यावरणीय प्रभाव को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि धार्मिक चिन्तन भी प्रकृति के नियंत्रण से मुक्त नहीं है । हिमालय-तराई में बौद्ध धर्म का विकास एव उसकी **'निर्वाण '** की संकल्पना का मूल कारक असहनीय उष्ण-आर्द्‌ जलवायु थी । इस प्रकार सेम्पुल ने वातावरण के विभिन्न तत्वों जैसे - भूमि की बनावट, नदी, समुद्र, जलवायु, मिट्टी, खनिज पदार्थ, वनस्पति, जन्तु जगत आदि के प्रभावों को मनुष्य के शरीर, उसके जीविको पार्जन के ढंगों, कृषि, उद्‌योग, परिवहन व्यापार, सामाजिक संगठन, रीति रिवाज एव संस्कृति पर स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है । अस्तु वह ब्रून्स कठोर नियतिवादी थी । वस्तुत : यह काल नियतिवाद का स्वर्णिम काल था ।

नियतिवाद के समर्थकों में अमेरिकी भूगोलवेत्ता **हटिंगटन (Ellsworth Huntington)** का नाम भी प्रमुख है । उन्होंने अपने ग्रन्थों **'मानव भूगोल के सिद्धान्त ' (Principles of Human Geography), 'सभ्यता और जलवायु ' (Civilization and Climate)** तथा **'संस्कृति के मुख्य स्त्रोत ' (Mains Spring of Civilization)** आदि में प्राकृतिक वातावरण के मानव पर नियंत्रण को स्पष्ट करते हुए कहा कि प्राकृतिक शक्तियां मानवीय क्रिया -कलापों, रहन -सहन, सांस्कृतिक तत्वों -जैसे -कला, साहित्य, धर्म शिक्षा आदि को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं । उन्होंने जलवायु को सर्वाधिक महत्तव दिया । उनके अनुसार किसी प्रदेश में सभ्यता की मुख्य

---

17. Semple, E.C., “Influence of Geographic Environment,” 1911, PP. 1-2
18. Opcit. P. 146

उपलब्धियां वहां की विशेष जलवायु से जुड़ी होती है । देशों के इतिहास की धड़कने भिन्न - भिन्न जलवायु एवं परिवर्तनशील प्रकृति का ही परिणाम होती है । हंटिगटन ने विश्व को कठोर और उपयुक्त जलवायु कटिबन्धों में बाटा तथा स्थापित किया कि प्राचीन सभ्यताएँ (मिश्र, मीसोपोटामिया, चीन, सिंधु आदि) उपयुक्त जलवायु की उपजाऊ नदी घाटियों में फली फूली । उन्होंने यह भी माना कि मध्य एशिया के शुष्क जलवायु के क्षेत्रों से चरवाहों के दलों व मंगोलों ने ईरान, इराक, तूरान, तुर्किस्तान, पूर्वी यूरोप व भारत को विजित किया । हंटिंगटन ने यूनान के स्वर्णयुग को, पश्चिमी यूरोप के पुनर्जागरण और लोहा उत्पादन के कमी और अधिकता के क्रम व शेयरों के मूल्यों को भी जलवायु चक्र से सम्बन्धित माना । उनके अनुसार उष्ण कटिबन्ध के लोग आलसी तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के लोग फुर्तीले होते है । अच्छी जलवायु के निवासी परिश्रमी, ईमानदार, आत्मनियंत्रित तथा सत्यभाषी होते हैं । पश्चिमी यूरोप और अमेरिका में विज्ञान और तकनीकी का विकास वहाँ के चक्रवातीय मौसम तथा शीतोष्ण जलवायु दशाओं (आदर्श जलवायु) का परिणाम है । इसके विपरीत उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों के पिछड़ेपन का कारण वहां की उष्ण आर्द्र रण कष्टप्रद जलवायु है । ऐसी कठिन जलवायु में लोग सुस्त, आलसी , निष्क्रिय, संदेहों से भरे तथा डरपोक हो गये थे । अत : हंटिंगटन ने मानव इतिहास तथा धरातल पर सामाजिक, आर्थिक रण सांस्कृतिक भिन्नताओं को प्राकृतिक वातावरण (विशेषकर जलवायु) का परिणाम माना है । जिसमें नियतिवादी विचार धारा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है ।

इनके अतिरिक्त **मेकिण्डर, चिशोल्म, डेविस, बोमेन, रॉबर्ट मिल, गैडीज, सावर, हरबर्टसन** आदि विद्वानों ने भी समाजों के विकास का चयन नियतिवादी दृष्टिकोण से किया । इन विद्वाने ने इस तथ्य को पूर्णत : स्पष्ट किया कि जलवायु से मिट्टी के प्राकृतिक गुण-प्रभावित होते हैं जो अन्तत : वहां की फसलों के प्रारूपों को निर्धारित करती है तथा खाद्यान्नों से लोगों के खान - पान उनका स्वास्थ्य, शारीरिक संगठन एव अभिवृति निर्धारित होती है । मैक केरीसन (Mac Carrison) ने भारत का उदाहरण देते हुए कहा कि भारत के सिक्खों के शरीर का गठन, उनका लम्बा कद, उत्तम कोटि की भौतिक दृढ़ता दक्षिण भारत के तमिलों की तुलना में खाने - पीने व प्रोटीन युक्त भोजन के कारण उत्तम है । [19]इसी प्रकार यूरोप और अमेरिका में प्रवासी चीनी एव जापानी लोगों के भार एवं ऊंचाई मे वृद्धि का होना वातावरणीय प्रभाव को दर्शाता है

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि 20 वीं शताब्दी के आरम्भ तक नियतिवाद का मानव -पर्यावरण अध्ययन पर पर्याप्त प्रभाव रहा । वातावरण को. शक्तिशाली मानते हुए भी हम्बोल्ट, रिटर, रेटजेल आदि विद्वानों के मानव के अस्तित्व को भी स्वीकारा है । अर्थात वातावरण नि: संदेह मानव को प्रभावित करता है परन्तु मानव भी वातावरण में परिवर्तन करता है । बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नियतिवाद की अवधारणा में शिथिलता आयी तथा मनुष्य को प्रकृति की दासता से उपर देखा जाने लगा । कार्ल सावर (Carl Sauer) ने आधुनिक नियतिवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए मनुष्य एव प्रक्रति के बीच समायोजन की बात की है ।

---

19. Castro, J.D. “The Geography of Hunger” London 1952, PP. 60-65

इस प्रकार प्रारम्भिक कठोर नियतिवाद धीरे - धीरे वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के साथ - साथ उदार होता गया तथा मानवीय शक्ति को स्वीकार किया जाने लगा अस्तु सम्भववाद अस्तित्व में आया ।

6.2.1 नियतिवाद की आलोचना

नियतिवाद का प्रभाव यद्यपि 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक भौगोलिक साहित्य पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है । परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् इस विचारधारा की मान्यता में कमी आयी तथा मनुष्य की भूमिका को महत्व मिलने लगा । इस विचारधारा को संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा आदि देशों में एक पक्षीय विचार धारा कहा गया । प्रकृति के सक्रिय योग को अतिश्योक्ति और मानव द्वारा समायोजन के प्रयास को उदासीन व निष्क्रिय कहा जाना एक पक्षीय तर्क है । नियतिवादी विचारकों द्वारा प्रस्तुत तर्क संतुष्टिपूर्ण नहीं है । मानव के अनेक कार्यो से ऐसे कई तथ्यों का ज्ञान होता है जिनका संतोषजनक उत्तर वातावरणीय प्रभावों में नहीं मिलता । मानव ने अभूतपूर्व खोज, शोध, अन्वेषण तथा वैज्ञानिक विधियों द्वारा प्रकृति प्रदत्त प्रतिकूल परिस्थितियों को अपने अनुकूल बना कर निरन्तर विकास किया । अत : नियतिवाद को तर्कसंगत न मानते हुए विद्वानों ने कई बिन्दुओं पर इसकी आलोचना की है जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं -

1. समान भौगोलिक दशाओं में भी भिन्न -भिन्न संस्कृति पायी जाती है । उदाहरणार्थ टुण्ड्रा जलवायु में एस्किमों, लेप्स, चुकची, सैमोयद आदि जन जातियों के रहन-सहन एव क्रिया-कलाप में भिन्नता पायी जाती है । इसी प्रकार में घालय के खासी, गाटो, जैन्तिया की वातत्वरणीय दशाएं मिजोरम की लुशाई जाति से मिलती-जुलती है परन्तु इनके खान -पान, रहन-सहन, शारीरिक रचना, स्वभाव, साक्षरता स्तर आदि सभी विभिन्न है । अत: संस्कृति वातावरण से पूर्ण नियंत्रित नहीं होती है ।
2. समान भौतिक दशाओं में मानव का विकास समान नहीं है, जैसे - कांगो और अमेजन बेसिन में उतना विकास नहीं हुआ जितना इण्डोनेशिया और मलेशिया में दिखाई देता है, अर्थात् विकास हेतु बुद्धि, कौशल एव तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है जो मानवीय पक्ष का द्योतक है ।
3. कृषि कार्य यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से प्रकृति से प्रभावित होते हैं परन्तु उत्तरी उच्च अंक्षाशों में गेहूँ की कृषि, भूमध्य सागरीय क्षेत्रों में गेहूँ जी, जैतून, अंगूर आदि कृषि मरुस्थलीय (राजस्थान) एव बीहड़ क्षेत्रों में सघन कृषि तथा साथ ही साथ उर्वरकों के उपयोग से उत्पादन में वृद्धि मानवीय प्रभाव को परिलक्षित करते हैं ।

---

20. Hartshorne, R., “Perspectives in the Nature of Geography”, Chicago, 1959
21. Kirchoff, A. “Man and The Earth”, P. 37.

4. उद्योगों की स्थापना मानव सम्बन्धी नीतियों से प्रभावित होती रही है न कि केवल प्राकृतिक संसाधनों से । उदाहरणार्थ- कनाडा के दक्षिणी ओन्टारियो में अधिक औद्योगिक विकास का कारण कनाडा की कर नीति है न कि भौतिक वातावरण । इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका में मोटरकार निर्माण केन्द्र डेट्रायट, रबर निर्माण केन्द्र एकरन तथा वायुयान निर्माण केन्द्र लॉस एन्जेलेस में होना किसी भौतिक कारण का प्रभाव नहीं है ।
5. ससार में महानगरों का स्वरूप मनुष्यों ने निश्चित किया है न कि प्राकृतिक वातावरण ने । विश्व के कई महानगरों की अवस्थिति तटीय एव आन्तरिक भागों में होना मानवीय चयन को परिलक्षित करता है । जनसंख्या का वितरण मानवीय कारकों से भी प्रभावित होता है, जैसे- आस्ट्रेलिया में केवल गोरे लोगों का निवास, चीन में पूर्वजों की कब्रों की पूजा के कारण प्रवास न करना आदि ।
6. सभ्यताओं के विकास के लिए केवल उपयुक्त जलवायु ही प्रमुख कारक नहीं है । प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सभ्यताएं विकसित हुई है । प्राचीन कालीन मिश्र की सभ्यता रेगिस्तान तथा इंका सभ्यता एण्डीज के बीहड़ में विकसित हुई । इसी प्रकार अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, आस्ट्रेलिया आदि कई देशों कीं प्राचीन एव आधुनिक जलवायु में कोई परिवर्तन नहीं हुआ परन्तु विकास में अत्यधिक अन्तर पाया गया ।
7. स्पेट (O.H.K.Spate) ने वातावरणीय नियतिवाद को दुराग्रह पूर्ण विचार मानते हुए कहा कि मानव बिना वातावरण का कोई अस्तित्व नहीं है अर्थात् वातावरण अकेला अर्थहीन है ।
8. हार्टशोर्न (Hartshorne) ने भी नियतिवाद को अस्वीकार करते हुए यह तर्क दिया कि यह विचार प्रकृति को मानव से पृथक करता है तथा यह भूगोल की आधरभूत एकता को छिन्न-भिन्न करने का विचार है ।
9. किरचॉफ (Kirchoff) ने प्राकृतिक अवसरों और मानव के कार्यो में कारण-सम्बन्ध का वर्णन करते हुए लिखा है कि मानव कोई स्वचलित यंत्र नहीं है जिसकी स्वयं की कोई इच्छाशक्ति नहीं है । प्रकृति कभी तो उसे वातावरण के अधीन पाती है और कभी उसे वातावरण से उदासीन पाती है । '1

अत: सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि प्रकृति एवं मनुष्य अन्तर्सम्बन्धित है किन्तु कहाँ किसका नियंत्रण कमजोर अथवा समाप्त होता है यह देश एवं काल के साथ मानवीय गुणों के आधार पर ही कहा जा सकता है । अर्थात् नियतिवाद पूर्णत _ सन्देह से घिरी हुई विचार धारा है ।

6.3 सम्भववाद (Possibilism)

सम्भववाद का प्रादुर्भाव 19वीं शताब्दी के अन्त में फ्राँस में हुआ । सम्भववाद शब्द को उपयोग सर्वप्रथम 1922 में फ्रांसीसी इतिहासकार ल्युसियन फेब्रे (Lucian Febvre) ने मानव भूगोल की उस विचार धारा के लिए किया जो मनुष्य की क्रियाओं को महत्व देती है । सम्भववादी

---

22. Febvre, L. “Geographical Introduction to History” 1925.

विचारकों को **वियोक्रेटस (Weocroates)** कहते हैं । अपनी पुस्तक **इतिहास का भौगोलिक परिचय (Geographical introduction in History)** में मानव के प्रभुत्व को स्वीकार करते हुए लिखा है कि कहीं कोई अनिवार्यता नहीं है, सर्वत्र सम्भावनाएं हैं और मानव उसके स्वामी के रूप में इन सम्भावनाओं का निर्णायक है । " प्रकृति मनुष्य को किसी निश्चित मार्ग पर चलने के लिए बाध्य नहीं करती, वह मनुष्य को अनेक अवसर प्रदान करती है जिनके चुनाव के लिए मनुष्य स्वतंत्र होता है । उन्होंने मनुष्य को एक भौगोलिक दूत कहा है जो सदैव पृथ्वी की संरचना की विवेचना में उन परिवर्तनशील भौगोलिक अभिव्यक्तियों के समन्वय ढूंढने में योगदान करता है जिनका अध्ययन करना भूगोल का महत्वपूर्ण कार्य है । मानव पृथ्वी पर उपलब्ध प्राकृतिक परिस्थितियों को अनुकूल बनाने में स्वतंत्र है । अर्थात् मानवीय छांट प्राकृतिक वातावरण की अपेक्षा महत्वपूर्ण होती है ।

फ्रांसीसी विद्वान **वाइडल डी ला ब्लाश (Vidal de La Blach)** सम्भववादी विचारधारा के जनक थे, उन्होंने मनुष्य को सर्वोत्तम भौगोलिक कारक, कर्म प्रधान सर्जक और कृत प्रधान विनाशक माना है, तथा मानव की सूझ-बूझ, उसके चयन, चातुर्य एवं कार्य कलापों को अधिक महत्व प्रदान किया है । ब्लाश के अनुसार प्रकृति कभी भी एक सलाहकार से अधिक नहीं है । वह सीमाएं निर्धारित करती हैं तथा मानव अधिवास हेतु सम्भावनाएँ प्रदान करती है, परन्तु प्रकृति प्रदत्त परिस्थितियों में मानव की क्या प्रतिक्रिया होगी अथवा वह कैसा समायोजन स्थापित करेगा यह उसकी जीवन पद्धति पर निर्भर करता है । ब्लाश ने मानवीय कार्यो की सराहना करते हुए कहा कि मनुष्य ने ही पेड़-पौधों को उनके मूल स्थान से ले जाकर विश्व के विभिन्न भागों में फैलाया तथा उनकी उपज में वृद्धि भी की । उन्होंने फ्रांस का उदाहरण देते हुए कहा कि 1 9वीं सदी में फ्रांस के धरातल पर प्राकृतिक वनस्पति का जो स्वरूप है वह मनुष्य की उपस्थिति का प्रतिफल है । यदि फ्रांस में मनुष्य अस्तित्व में न आया होता तो फ्राँस की प्राकृतिक वनस्पति का स्वरूप कुछ और होता । वस्तुत : मानव कर्मप्रधान और कृतप्रधान दोनों ही है । ब्लाश के शिष्य जी**न ब्रून्स (Jean Brunres)** ने भी सम्भववाद का समर्थन करते हुए कहा है कि प्रकृति आदेशात्मक नहीं है, वह अनुमति बोधक है । अर्थात् प्रकृति मनुष्य को अपने अनुरूप ही कुछ करने का आदेश नहीं देती है, वह मात्र करने की अनुमति प्रदान करती है तथा मानव जो भी अनुक्रिया प्रकृति के प्रति विकास हेतु करता है वह अपने अनुसार अपनी बुद्धि, चातुर्य के बल पर और अपने साधनों से करता है । ब्रून्स ने मानव को एक परिवर्तनकारी और क्रियाशील कारक माना है । उन्होंने कहा कि प्राकृतिक वातावरण द्वारा कुछ सीमाएं निर्धारित की जाती है, मनुष्य यद्यपि इन सीमाओं को साध तो नहीं सकता परन्तु उसमें परिवर्तन कर अपने अनुकूल अवश्य बनाता है । अत : ब्रून्स महोदय ने मानवीय क्षमता को प्रधान माना है तथा साथ ही पर्यावर्णीय सीमाओं को स्वीकारते हुए कहा कि पर्यावरण एक सीमाकारी तथा अवरोधक शक्ति है न कि नियंत्रणकारी ।

फ्रांसिसी भूगोलवेत्ता **'डिमांजिया' (Demangeon)** ने मानव शक्ति को सर्वोपरि मानते हुए

---

23. Bowman, I., “Geography and the Social Science” 1934, PP. 36-37

मानव के परिवर्तन कारी गुणों का उल्लेख किया है । उसके अनुसार मनुष्य ने अपने बुद्धि कौशल से संचार के साधनों का विकास, नदियों पर बाँध एवं पुल का निर्माण, पाताल तोड़ कुएँ तथा भोजन के लिए गये पौधे विकसित किये । अमेरिकी विद्वान **'ईसा बोमेन' (Isaiah Bowman)** ने भी सम्भवाद समर्थन करते हुए कहा कि भौतिक वातावरण कभी भी सभ्यताओं को पूर्ण रूप से नष्ट नहीं कर सकता, वे तो मनुष्य के द्वारा ही छोड़ी या अपनायी जाती है । अर्थात् प्राकृतिक वातावरण मानव समाज के रूप को निश्चित नहीं कर सकता अपितु मानव अपने उसे परिवर्तित करता है । बोमेन ने अपनी पुस्तक The Pioneer Fringe तथा भूगोल और सामाजिक विज्ञान ' (Geography and the Social Science) में मानव के महत्व को स्वीकारते हुए लिखा है कि वातावरण के भौगोलिक तथ्य स्थिर होते हैं तथा मानव वर्ग के सम्पर्क से परिवर्तनशील हो जाते हैं जिस प्रकार मानवता स्वयं भी परिवर्तनशील है । " उनके अनुसार जैसे -जैसे ज्ञान और विज्ञान का विकास और विस्तार होता है, प्राकृतिक वातावरण तथा संसाधनों के उपयोग का स्वरूप एव मात्रा बढ़ती है । कार्ल सावर (Carl Sauer) ने भी मानवीय कौशल तथा क्षमताओं को महत्व देते हुए सम्भववाद का समर्थन किया है । उन्होंने अपनी पुस्तक 'सांस्कृतिक भूगोल ' (Cultural Geography) में प्रकृति तथा मानव के बीच समायोजन को अधिक महत्व किया तथा यह स्पष्ट किया कि पृथ्वी सतह पर विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों का विकास मानव एवं पर्यावरण के मध्य समायोजन का परिणाम है । इस समायोजन में मानव अधिक प्रभावी सिद्ध होता है । उदाहरणार्थ गेहूं एवं चावल का उत्पादन उनके जन्म स्थान से कहीं अधिक अन्य नये क्षेत्रों में होता है जहां समायोजन की मानवीय परिस्थितियां अधिक अनुकूल है । पहाड़ी ढालों पर सीढ़ीदार कृषि, उष्ण जलवायु में प्रशीतकों द्वारा वातानुकूलन, शीत क्षेत्रों में तापक (Heater) का उपयोग, कम वर्षा के क्षेत्रों में नहरों एवं कुओं से सिंचाई, अनुपजाऊ मिट्टी में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग, सडकों, रेलमार्गों, वायुयान का निर्माण, सूचना क्रांति आदि मानवीय प्रभुत्व का जीवित उदाहरण हैं ।

अत : उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि नियतिवादी विचारधारा के विपरीत सम्भववाद में मनुष्य को पर्यावरण से महत्वपूर्ण माना गया तथा उसे पर्यावरण में अपने अनुसार परिवर्तन करने वाला भौगोलिक कारक स्वीकार किया गया ।

6.3.1 सम्भववाद की आलोचना

सम्भववादी विचारधारा को अति मानव केन्द्रित मानते हुए कई विद्वानों ने इसकी आलोचना की जो निम्न प्रकार है -

1. **फेब्रे** ने स्वयं सम्भववादी होते हुए भी यह स्वीकार किया है कि मनुष्य अपने पर्यावरण के प्रभावों से भी पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं रह सकता । मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु काफी हद तक वातावरण पर निर्भर रहता है ।
2. प्रसिद्ध सम्भववादी समर्थक **जीन ब्रून्स** ने एक स्थान पर लिखा है कि क्योंकि मानव पृथ्वी पर निवास करता है, वह पृथ्वी पर निर्भर करता है । अर्थात् मानवीय क्रिया-कलापों पर पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है ।

3. **ग्रिफिथ टेलर** ने सम्भववाद की आलोचना करते हुए कहा कि इसमें मानव को आवश्यकता से अधिक महत्व दिया गया हैं तथा प्राकृतिक वातावरण को तुच्छ समझा गया है, जबकि मानव एव प्रकृति दोनों महत्वपूर्ण है । मानव प्रकृति के साथ समायोजन स्थापित कर विकास की ओर अग्रसर होता है ।
4. **कार्ल सावर** ने आधुनिक निश्चयवाद को स्वीकरते हुए प्रकृति तथा मानव के मध्य समायोजन को ही प्रमुख स्थान दिया है ।
5. बूलरिज तथा ईस्ट ने भी मानव -प्रकृति के सम्बन्धों के सन्दर्भ में लिखा है कि मानव और स्थल की प्रतिक्रियाएँ पारस्परिक होती हैं न कि एक दूसरे पर प्रभावकारी शक्तियों के रूप में ।

अत : स्पष्ट है कि न तो प्राकृतिक शक्तियां ही सर्वप्रभावी है और न ही मानव प्रकृति का विजेता है । अपितु दोनों आपसी सम्बन्ध एवं परिस्पर सामजस्य पर आधारित है ।

6.4 नव -निश्चयवाद (Neo Determinism)

नियतिवाद एव सम्भववाद के अतिवादी स्वरूप को अस्वीकार करते हुए आस्ट्रेलियाई विद्वान **ग्रिफिथ टेलर (Griffith Taylor)** ने मध्यमार्गी विचारधारा का प्रतिपादन किया जिसे नव -निश्चयवाद अथवा नव -नियतिवाद कहते हैं । यह विचार धारा इस तथ्य पर आधारित है कि न तो प्रकृति का मनुष्य पर पूर्ण नियंत्रण है और न ही मनुष्य प्रकृति का विजेता है दोनों का एक दूसरे से क्रियात्मक सम्बन्ध है अर्थात् मानव का विकास प्रकृति के सहयोग में निहित है न कि उसकी विजय में । टेलर ने उसे **रूको और जाओ नियतिवाद (Stop and Go determinism)** कहा तथा यह स्पष्ट किया कि मानव किसी देश की प्रगति को तीव्र या मन्द करने में सक्षम है लेकिन यदि वह बुद्धिमान है तो उसे प्राकृतिक वातावरण के निर्देशों से दूर रहकर ऐसा नहीं करना चाहिए । वह किसी बड़े शहर के यातायात नियंत्रक के समान है जो गति को परिवर्तित तो कर सकता है किन्तु प्रगति को परिवर्तित तो कर सकता है किन्तु प्रगति की दिशा को नहीं और यही वाक्यांश रूको और जाओ नियतिवाद लेखक के भौगोलिक दर्शन को व्यक्त करता है । [24]टेलर का मानना था कि वातावरण के द्वारा किये जाने वाले प्रमुख नियंत्रण की उपेक्षा नहीं की जा सकती तथा मानव प्रकृति की सीमाओं के अन्दर ही सांस्कृतिक प्रगति करता है । उदाहरणार्थ कनाडा और साइबेरिया के टुण्ड्रा क्षेत्र, सहारा मरूस्थल, आस्ट्रेलिया का मरूस्थल, अण्टार्कटिका का हिमाच्छादित महाद्वीप आदि क्षेत्रों में मानव को प्रकृति की आज्ञा माननी पड़ती है, फलस्वरूप यह क्षेत्र कई शताब्दियों तक संयुक्त राज्य अमेरिका तथा यूरोप से पिछडे हुए रहेंगे । इस तथ्य को भी नकारा नहीं जा सकता कि मनुष्य प्रकृति के नियमों का अनुसरण करने के साथ -साथ वातावरण के तत्वों के उपयोग के लिए स्वतंत्र है ।

मानव एव प्रकृति के मध्य शक्ति प्रदर्शन के विपरीत सामंजस्य को महत्व देते हुए **जे. टेथम (G.Tatham)** ने नव -नियतिवाद को **'व्यवहारिक सम्भववाद ' (Pragmatic Possibilism)**

---

24. Taylor, G. “Australia.” P. 445.

की संज्ञा दी है । ब्रिटिश भूगोलवेत्ता **'फ्लूयर ' (Fleure)** ने अपने ग्रन्थ **'समाज एवं विश्व समस्याओं का भौगोलिक अध्ययन ' (The Geographical Study of Society and World Problem)** तथा **'पश्चिमी यूरोप में मानव भूगोल ' (Human Geography in Wostern Europe)** में इसी आधुनिक विचारधारा का समर्थन करते हुए लिखा है कि केवल परिस्थिति का दास नहीं है परन्तु मानवीय पक्ष के अध्ययन में भौतिक तत्वों को भी पूर्ण रूप से भुलाया नहीं जा सकता है । उन्होंने समाज और वातावरण की समस्याओं का वर्णन मानव एव प्रसम्भाव्यवाद वातावरण के समन्वित सम्बन्धों के द्वारा किया है । अत : किसी भी मानवीय कार्य के भौतिक पृष्ठभूमि का मूल्याँकन आवश्यक है । ' वूलिज ' तथा ' ईस्ट ' ने भी कहा कि भूगोल में नियतिवाद किसी सीमा तक रहना अनिवार्य है, क्योंकि यह सत्य है कि मानव एव भूतल की प्रतिक्रियाएं पारस्परिक होती हैं[25] इसी प्रकार **हरबर्टसन (A.J.Herbertson)** ने विश्व के प्राकृतिक प्रदेशों के निर्धारण में भौतिक और मानवीय दोनों तथ्यों को महत्व दिया है तथा यह माना कि प्राकृतिक वातावरण और मानव समाज परस्पर सम्बन्धित होते हैं । इनके अतिरिक्त मार्टिन, राक्सबी आदि ने भी नव - नियतिवाद का समर्थन किया है ।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि नव -नियतिवाद प्रकृति द्वारा निश्चित की गयी सीमाओं में मानव समाज के अनुकूलन, रूपान्तरण और समायोजन की व्याख्या कर उसकी रूचि, शक्ति और आवश्यकता के अनुसार संतुलित मार्ग अनुसरण करने की अवधारणा है । प्रकृति के नियंत्रण को कम किया जा सकता है लेकिन उसके प्रभावों की अनदेखी नहीं की जा सकती है । इस प्रकार मानव और प्रकृति में पारस्पारिक सामजस्य अथवा सहयोग होता है और यही नियतिवाद का मूल मंत्र हैं ।

6.5 प्रसम्भाव्यवाद (Probabilism)

यह मानव -पर्यावरण सम्बन्धों की परिस्कृत व्याख्या है जिसके प्रतिपादक आस्ट्रेलियाई विद्वान **स्पेट (O.H.K.Spate)** महोदय थे, उनके अनुसार वातावरण के साथ मानव सम्बन्धों में प्रत्येक जगह सम्भावनाएँ विद्यमान रहती हैं परन्तु उसमें कुछ सम्भावनाएँ अन्य की अपेक्षा अधिक सम्भाव्य होती है । जिनका चयन कर मनुष्य प्रगति के पथ पर आगे बढ़ता है । " अर्थात् प्रसम्भाव्यवाद वह विचार है जो मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्धों की व्याख्या किसी अतिरेक पर नहीं वरन् संतुलन एव समायोजन के आधार पर करती है । प्रसम्भाव्यवाद मानवीय क्रिया - कलापों के स्कूल व सूक्ष्म परिणामों का प्रेक्षण कर सकता है तथा इसमें पूर्ण अनुभव से प्राप्त ज्ञान के आधार पर सम्भावित परिणामों की स्कूल प्राप्ति के आयाम निश्चित किये जा सकते

---

25. Woolridge, S.W. and East, W.G, “The Spirit and Purpose of Geography”. 1951
26. Spate, O.H.K, “The Compass of Geography” Canberra 1953
27. Hagget, P. “Geography : A Modern Synthesis,” 1978, P. 620

हैं । निश्चयवाद में किसी क्रिया का परिणाम पूर्व निश्चित एव एक ही होता है परन्तु प्रसम्भाव्यवाद ऐसे परिणाओं का प्रेक्षण अनन्य (किन्तु सीमित) सम्भावनाओं के परिप्रेक्ष्य में करता है तथा यह परिणाम **स्थानिक -कालिक (Spatio-Temporal)** आयामों के सन्दर्भ में विवेचित होते हैं । अत : प्रसम्भाव्यवाद का आधार मानव -प्रकृति सम्बन्धों की वर्तमान वास्तविकता तथा इनके मध्य सकारात्मक संतुलन है ।

पीटर हैगेट (Peter Hagget) ने प्रसम्भाव्यवाद को मानव प्रकृति के मध्य समायोजन के रूप में स्वीकारते हुए लिखा है कि प्रसम्भाव्यवाद निश्चयवाद एव सम्भववाद के मध्य समन्वय की स्थिति है जिसमें एक विशेष पर्यावरण या अवस्थिति में विभिन्न सम्भावनाओं के आधार पर विभिन्न भौगोलिक प्रतिरूपों का विकास होता है । " मानव अपने ज्ञान एव बुद्धि कौशल से प्रकृति में उपस्थित प्रसम्भाव्यों से जितने तीव्र गति से अनुकूलन करता है उसके विकास की गति भी उतनी तीव्र गति से बढ़ती है । इसीलिए जहां प्रारम्भ में पर्यावरण के 'नियंत्रण' की बात की जाती थी , बाद मे 'प्रभाव' तथा तत्पश्चात 'अनुकूलन' को मानव- पर्यावरण के संबंधो क आधार माना जाने लगा यही प्रसम्भाव्यवाद का सूत्र है ।

बोध प्रश्न-1

1. नियतिवादी विचारकों को क्या कहते हैं?

   ....

   ....

2. 'कॉसमॉस ' के लेखक कौन थे?

   ....

   ....

3. किस विद्वान् से नियतिवाद का विश्लेषण पारिस्थितिकी के सन्दर्भ में किया?

   ....

   ....

4. 'समाज वातावरण द्वारा निर्मित होता है ' यह कथन किस विद्धान का है?

   ....

   ....

5. नियतिवाद का प्रणेता किसे कहा गया हे?

   ....

   ....

6. प्रसिद्ध ग्रंथ 'एन्थ्रोपोजोग्राफी' के लेखक कौन थे?

   ....

   ....

7. मानव -प्रकृति की उपज है ' यह कथन किसका है?

   ....

....

8. 'सम्भववाद' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किसने किया ?

....

....

9. 'प्रकृति कभी भी एक सलाहकार से अधिक नहीं है ' यह कथन किस विद्वान का है?

....

....

10. सम्भववाद का जनक किसे कहा जाता है?

....

....

11. 'रुको और जाओ नियतिवाद' का प्रतिपादन किसने किया?

....

....

12. प्रसम्भाव्यवाद के जनक कौन थे ?

....

....

6.6 सारांश (Summary)

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि मानव-पर्यावरण अन्तर्सम्बन्ध भूगोल की महत्वपूर्ण विषय वस्तु है । जर्मनी के अधिकांश भूगोलवेत्ताओं ने पर्यावरण को शक्तिशाली मानते हुए नियतिवाद को स्वीकार किया । विज्ञान और तकनीकी के विकास के साथ प्रकृति के नियंत्रण में कमी आयी तथा मानव ने कई क्षेत्रों में प्रकृति को परिवर्तित कर अपने अनुकूल बनाने में सफलता पायी है । मानवीय प्रभुत्व की यह विचारधारा सम्भववाद है । उक्त दोनों विचारों को अतिवादी मानते हुए अमेरिकी एवं आस्ट्रेलियाई विद्वानों ने कहा कि मानव पर्यावरण के मध्य संघर्ष अथवा शक्ति प्रदर्शन का सम्बन्ध नहीं अपितु समायोजन का सम्बन्ध है । प्रकृति द्वारा निर्धारित सीमाओं में मनुष्य अपने बुद्धि, कौशल, चातुर्य आदि से वातावरण से अनुकूलन अथवा उसका रूपान्तरण कर समायोजन स्थापित करता है । प्रकृति द्वारा प्रदत्त सम्भावनाओं (सीमाओं) में मानवीय छाँट स्वतंत्र होती है तथा वह मानव के विकास के स्तर और उसकी आवश्यकताओं पर निर्भर होती है । अत : मानव न तो प्रक्रिया का विजेता है और न ही उसका दास वरन् उसके साथ सहयोग कर विकास की और अग्रसर होता है । प्रकृति की उपेक्षा का परिणाम विनाशकारी होता है । वर्तमान में हरित गृह प्रभाव, ओजोन क्षरण, विश्व तापमान वृद्धि उच्च अक्षांशीय हिम का पिघलना, विभिन्न प्रकार के प्रदूषण आदि इसके ज्वलन्त उदाहरण है ।

6.7 शब्दावली (Glossary)

- **जियोक्रेट (Geocrates) :** नियतिवादी विचारक
- **आवासित जगत् (Habitatable World) :** मानव निवास के लिए उपयुक्त क्षेत्र
- **नियतिवाद या नियतिवाद या निश्चयवाद या प्रवृत्तिवाद :** यह अत्यन्त प्राचीन संकल्पना को इस तथ्य पर आधारित है कि मानव के समस्त क्रियाकलाप भौतिक पर्यावरण से नियंत्रित होते हैं ।
- **कॉस्मास (Cosmos) :** ' हम्बोल्ट का प्रसिद्ध ग्रंथ जिसमें भौतिक वातावरण एवं मानव क्रियाकलापों के म्य अन्तर्सम्बन्धों का विस्तृत वर्णन किया है ।
- **इंका सभ्यता :** एण्डीज के बीहड़ में विकसित हुई सभ्यता ।
- **वियोक्रेटस :** सम्भववादी विचारक ।
- **सम्भववाद :** सम्भववाद में मानव सर्वोत्तम भौगोलिक कारक, कर्म प्रधान सर्जक तथा प्रकृति को एक सलाहकार से अधिक नहीं माना है । प्रकृति मानव की क्या प्रतिक्रिया होगी यह उसकी जीवन पद्धति पर निर्भर करता है ।
- **नव - निश्चयवाद अथवा नव -नियतिवाद :** यह विचारधार इस तथ्य पर आधारित है कि न तो प्रकृति का मनुष्य पर पूर्ण नियन्त्रण है और न ही मनुष्य प्रकृति का विजेता है बल्कि दोनों का एक दूसरे से क्रियात्मक सम्बन्ध है ।
- **प्रसम्भववाद :** प्रसम्भववाद वह विचार है जो मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्धों की व्याख्या किसी अतिरेक पर नहीं वरन् संतुलन एवं समायोजन के आधार पर करता है ।

6.8 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. माजिद हुसैन, **भौगोलिक चिन्तन का इतिहास,** रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2006.
2. एस डी कौशिक, **भौगोलिक विचार धाराएँ एवं विधितंत्र,** रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ, 2003.
3. बी पी राव एवं वी के श्रीवास्तव, **मानव भूगोल,** वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2007
4. एच एम सक्सेना, आर बी. उपाध्याय एवं एल. आर. भल्ला, **मानव एवं पर्यावरण,** कुलदीप पब्लिकेशन, अजमेर, 2000
5. आर के. गुर्जर एवं बी सी. जाट, **मानव भूगोल,** पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004
6. एस डी. कौशक, **मानव भूगोल** रस्तोगी, पब्लिकेशन, मेरठ, 1999.
7. James, P.E. and Martin, GJ., **All possible Words,**1981.
8. R.E. Dickinson,**'The Makers of Modern Geography'** 1969.
9. R. Minchell,**"The Changing Nature OF Geography"** London 1970

6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. जियोक्रेट
2. हम्बोल्ट
3. अर्नस्ट हीकल

4. डिमोलिन्स
5. रैटजेल
6. रैटजेल
7. कुमारी सेम्पुल
8. फेब्रे
9. ला ब्लाश
10. ला ब्लाश
11. ग्रिफिथ टेलर

6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. नियतिवाद एवं सम्भववाद में भेद स्पष्ट करते हुए प्रत्येक विचारधारा के दो प्रमुख समर्थकों के विचारों का विस्तृत उल्लेख कीजिये?
2. नव-नियतिवाद से क्या तात्पर्य है? मानव पर्यावरण के अन्तर्सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में इसकी उदाहरण सहित विवेचना कीजिये?
3. 'प्रकृति आदेश नहीं अपितु अनुमति देती है । ' उदाहरण सहित इस उक्ति की व्याख्या कीजिये?
4. 'कहीं भी आवश्यकताएँ नहीं हैं सर्वत्र सम्भावनाएं है । ' उदाहरण सहित व्याख्या कीजिये?
5. 'प्रसम्भाव्यवाद मानव-पर्यावरण अन्तर्सम्बन्धों की आधुनिक एवं सर्वस्वीकार्य विचारधारा है । ' स्पष्ट कीजिये?

इकाई 7 :मानव भूगोल और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ (Human Geography and Cultural Attainments)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 सांस्कृतिक उपलब्धियों प... र भौगोलिक वातावरण का प्रभाव
7.2.1 प्राकृतिक वातावरण की शक्तियों, प्रक्रियाएँ एवं तत्व
7.2.2 सांस्कृतिक वातावरण की शक्तियाँ, प्रक्रियाएँ एवं तत्व
7.2.3 वातावरण-तत्वों का संयुक्त प्रभाव तथा मानव प्रतिक्रियाएँ
7.3 वातावरण समायोजन और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ
7.3.1 वातावरण अनुकूलन
7.3.2 वातावरण रूपान्तरण
7.3.3 मानवीय चयन
7.3.4 वातावरण समायोजन के प्रादेशिक पक्ष
7.4 सांस्कृतिक सम्पर्क
7.5 सांस्कृतिक विसरण
7.6 सांस्कृतिक विलम्बन
7.7 सारांश
7.8 शब्दावली
7.9 सन्दर्भ ग्रंथ
7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप समझ सकेंगे -

- भौगोलिक वातावरण का अर्थ और प्रकार,
- प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण की शक्तियों, प्रक्रियाओं और तत्वों का सांस्कृतिक उपलब्धियों पर प्रभाव
- वातावरण समायोजन का अर्थ, उसके प्रकार एवं प्रादेशिक पक्ष,
- सांस्कृतिक परिवर्तन के वेग को निर्धारित करने वाली शक्तियों - सांस्कृतिक सम्पर्क तथा सांस्कृतिक विलम्बन - के अर्थ एवं प्रभाव,
- वातावरण रूपान्तरण का अर्थ और रूपान्तरण में मानवीय चयन का स्थान एवं महत्व ।

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव तथा वातावरण सम्बन्धों में भौतिक वातावरण की अपेक्षा मानव-संकल्प ही निर्णयात्मक है । मानव-संकल्प का संचालन समकालिक सामाजिक परम्पराओं, अभिवृत्तियों तथा विधियों द्वारा होता है । संस्कृति में मानव-क्रियाओं के सृजन एवं उनको दिशा प्रदान करने की विलक्षण क्षमता होती है । संस्कृति मानव रथ पर्यावरण के समायोजन का स्तर निर्धारित करती है । मानव अपने संकल्प के अनुसार ही विश्व की रचना करता है । यही कारण है कि विश्व के विभिन्न संस्कृति -मण्डल विषम भौगोलिक वातावरण वाले प्रदेशों में व्याप्त होते हुए भी सांस्कृतिक समरूपता का प्रदर्शन करते हैं ।

मानव एवं वातावरण विषयक इन जटिल सम्बन्धों की स्पष्ट समझ परमावश्यक है । ऐसी समझ विकसित करने के लिए भूगोल के अतिरिक्त अन्य विषयों यथा भू-विज्ञान, मानविकी, समाजविज्ञान आदि का ज्ञान भी आवश्यक है क्योंकि मानव भौतिक-सांस्कृतिक समष्टि की एक इकाई है और व्यष्टि का ज्ञान समष्टि के बिना नहीं हो सकता । भूगोल ही एकमात्र ऐसा विषय है जिसमें एकांगी निर्वचन से बचकर मानव-बोध को समझने का प्रयास किया जाता है । तथ्यों का अध्ययन सफलता या वास्तविक एकता के परिप्रेक्ष्य में करना ही उपादेय है ।

पृथ्वीतल पर मानव एक जटिल मानसिक विकास वाला प्राणी है । उसने अपने मानसिक ज्ञान का उपयोग संस्कृति -सृजन में किया है । इस संस्कृति-सृजन ने ही उसके दृष्टिकोण , क्रिया, प्रतिक्रिया एवं भौतिक वातावरण को सार्थकता प्रदान की है । ऐसे उदाहरण सीमित हैं जहाँ सांस्कृतिक नियमन के बिना-ही भौतिक वातावरण ने मानव को प्रत्यक्षत: प्रभावित किया हो ।

7.2 सांस्कृतिक उपलब्धियों पर भौगोलिक वातावरण का प्रभाव (Impact of Geographical Environment on Cultural Attainments)

भौगोलिक वातावरण वह परिवृत्ति (Set of surroundings) है जो मानव को चारों ओर से घेरे हुए है और उसके जीवन तथा क्रियाओं पर प्रभाव डालती है । इस परिवृत्ति या परिस्थिति में मनुष्य से बाहर के सभी तथ्य (Facts), वस्तुएँ (Objects), स्थितियाँ (situation) और दशाएँ (conditions) सम्मिलित होती हैं जिनकी क्रियाएँ मनुष्य के जीवन - विकास को प्रभावित करती हैं ।

जर्मन वैज्ञानिक फिटिंग (Fitting) ' ने वातावरण का अर्थ 'जीवन के परिस्थिति कारकों का योग (totality of milieu factors of an organism) बतलाया है अर्थात् जीवन की परिस्थिति के समस्त तथ्य मिलकर वातावरण कहलाते हैं । तांसले (Tansley) नामक पादप - परिस्थिति वैज्ञानिक (plant ecologist) ने बताया है कि प्रभावकारी दशाओं का वह सम्पूर्ण योग जिसमें जीव रहते हैं वातावरण कहलाता है ।

अमेरिकी वैज्ञानिक निकोलस (Nicholas) ने भी फिटिंग और तांसले के समान ही वातावरण की परिभाषा की है । अमेरिकी मानवशास्त्री (anthropologist) हर्सकोविट्स (Herskovits) ' के

शब्दों में 'वातावरण उन समस्त बाहरी दशाओं और प्रभावों का योग है जो प्राणी जीवन और विकास पर प्रभाव डालता है । ' कुछ परिस्थिति वैज्ञानिकों (ecologists) ने वातावरण के लिए “environment" शब्द के बजाय 'habitat' या ' milieu ' शब्द का प्रयोग किया है जिसका अभिप्राय भी समग्र परिस्थिति या परिवृत्ति से है ।

भौगोलिक वातावरण के दो भेद हैं - (a) प्राकृतिक, और (b) सांस्कृतिक । इनमें से प्रत्येक के तीन अंग हैं - वातावरण की (i) शक्तियाँ ([0S003), (ii) प्रक्रियाएँ (process), और (iii) तत्व (elements) ।

7.2.1 प्राकृतिक वातावरण की शक्तियाँ, प्रक्रियाएँ एवं तत्व (Forces, Processses and Elements of Natural Environment)

(I) **प्राकृतिक वातावरण की शक्तियाँ (Forces of Natural Environment) :** प्राकृतिक वातावरण की शक्तियों में पृथ्वी तथा अन्य आकाशीय पिण्डों का गुरुत्वाकर्षण, पृथ्वी का दैनिक भ्रमण और वार्षिक परिभ्रमण, पृथ्वी के अभ्यन्तर में गति करने वाली पर्वत - निर्माणकारी शक्तियों, सूर्यताप, वायुमण्डलीय और महासागरीय शक्तियाँ सम्मिलित हैं । इन शक्तियों 'द्वारा पृथ्वी पर अनेक प्रकार की क्रियाएँ होती हैं जिनसे वातावरण के तत्व उत्पन्न होते हैं, जैसे - भूमि की बनावट, जलवायु, मिट्टी, वनस्पति आदि । ये प्राकृतिक तत्व मानव जीवन पर प्रभाव डालते हैं । यद्यपि प्राकृतिक शक्तियों का अध्ययन भौतिक भूगोल में होता है तथापि इन शक्तियों के प्रभाव का अध्ययन मानव भूगोल में होता है ।

(II) **प्राकृतिक वातावरण की प्रक्रियाएँ (Process of Natural Environment) :** प्राकृतिक वातावरण की प्रक्रियाएँ इस प्रकार होती हैं - ताप विकिरण, ताप चालन, ताप संवहन, वायु भ्रमण, जल भ्रमण, अणु सक्रियता, अनाच्छादन, अपक्षय, निक्षेप आदि । इन विधियों से प्राकृतिक वातावरण अपनी क्रियाएँ करता है । इन प्रक्रियाओं का अध्ययन भी भौतिक भूगोल में होता है परन्तु इनके प्रभाव का अध्ययन मानव भूगोल में होता है ।

(III) **प्राकृतिक वातावरण के तत्व (Elements of Natural Environment) :** प्राकृतिक शक्तियों और प्रक्रियाओं के द्वारा जिन प्राकृतिक तत्वों की उत्पत्ति होती है उनके तीन भेद हैं - (i) अमूर्त तत्व जैसे - प्रदेश की ज्यामितीय स्थिति, प्राकृतिक अवस्थिति, प्रदेश का क्षेत्रफल, प्रदेश की आकृति, भौगोलिक अवस्थिति आदि, (ii) मूर्त या भौतिक तत्व जैसे -

---

1. Fitting, A. : Tasks and Aims of Comparative Physiology on a Geographical Basis, June 1922.
2. Tansley, A.G. : Practical Plant Ecology, London, 1926
3. Herskovits, M.J. : Man and His Works, New York 1948

स्थलाकृति, जलवायु, शैल, खनिज, नदियाँ, जलाशय, भूमिगत जल, महासागर आदि, तथा (iii) जैविक तत्व, जैसे - प्राकृतिक वनस्पति, जीवजन्तु, सूक्ष्म जीव आदि ।

7.2.2 सांस्कृतिक वातावरण की शक्तियाँ, प्रक्रियाएँ एवं तत्व(Forces, Processses and Elements of Cultural Environment)

(I) **सांस्कृतिक वातावरण की शक्तियों (Forces of Cultural Environment)) :** समाज एक सजीव और सक्रिय इकाई है । प्रत्येक प्रदेश के सांस्कृतिक वातावरण की शक्ति उस प्रदेश की जनसंख्या है । वास्तव में मानव न तो प्राकृतिक वातावरण का अंग है और न ही सांस्कृतिक वातावरण का । मानव तो एक स्वतन्त्र भौगोलिक कार है जिसका केन्द्रीय स्थान है । उसके चारों ओर ही मानव भूगोल के अन्य कारक क्रियाशील रहते हैं । मानव वह शक्ति है जो सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करती है । इसी रूप में मानव एक संसाधन है । मानव संसाधनों में जनसंख्या की मात्रात्मक व गुणात्मक विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है । मात्रात्मक विशेषताओं में प्रदेश की कुल जनसंख्या, उसकी वृद्धि, वितरण व घनत्व तथा गुणात्मक विशेषताओं में लिंगानुपात, आयु -वर्ग, शिक्षा, श्रम, स्वास्थ्य आदि सम्मिलित किए जाते है ।

(II) **सांस्कृतिक वातावरण की प्रक्रियाएँ (Processses of Cultural Environment) :** ये वे प्रक्रियाएँ हैं जिनके द्वारा मानव -वर्ग अपना सामाजिक समायोजन स्थापित करते हैं । ये प्रक्रियाएँ इस प्रकार हैं - पोषण, सामूहिकरण , पुनरोत्पादन, प्रभुत्व स्थापन, प्रवास, पृथक्करण, समावेश, विशेषीकरण और अनुक्रमण ।

(III) **सांस्कृतिक वातावरण के तत्व (Elements of Cultural Environment) :** सांस्कृतिक तत्वों में मानवनिर्मित वस्तुएँ और भू-दृश्य, व्यवसाय, कला, विज्ञान, यंत्र, उद्योग, तकनीकी, संस्थाएँ, प्रथाएँ आदि आते हैं । मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं - (i) जैविक आवश्यकताओं के प्रतिरूप, जैसे - भोजन, पेय, वस्त्र, वेशभूषा, निवास और बस्तियाँ, (ii) आर्थिक व्यवसाय के प्रतिरूप, जैसे - प्राथमिक व्यवसाय (खाद्य संग्रहण, आखेट, मत्स्यग्रहण), दोहन उद्योग (पशुपालन, कृषि, वन, खनन, उद्योग), विनिर्माण उद्योग, परिवहन, वाणिज्य, सेवा क्षेत्र आदि, (iii) प्राविधिक प्रतिरूप, जैसे - यंत्र और उपकरण, परिवहन और संचार के साधन, (iv) भाषा, साहित्य, धर्म, दर्शन, कला आदि, तथा (v) सामाजिक संगठन (सामुदायिक जीवन, सहकारिता, परिवार प्रणाली, विवाह प्रथा आदि), सामाजिक मानवश्रेणियों,श्रम विभाजन, लोक रीतियाँ, कर्मकाण्ड, मेले,उत्सव, सामाजिक प्रथाएँ, सामाजिक, आदर्श नियम और मान्यताएँ), तथा (vi) सामाजिक संगठन (राज्य का क्षेत्र, साधन, सरकार, शक्तियाँ और कानून), अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध और जनमत क? प्रवाह । ये सभी सामाजिक और सांस्कृतिक तत्व एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में भिन्न होते हैं । ये मनुष्य के सामूहिक और व्यक्तिगत जीवन दोनों को ही प्रभावित करते हैं । इन्हीं से प्रभावित होकर मानव -वर्ग गतिमान रहते हैं (चित्र- 71) ।

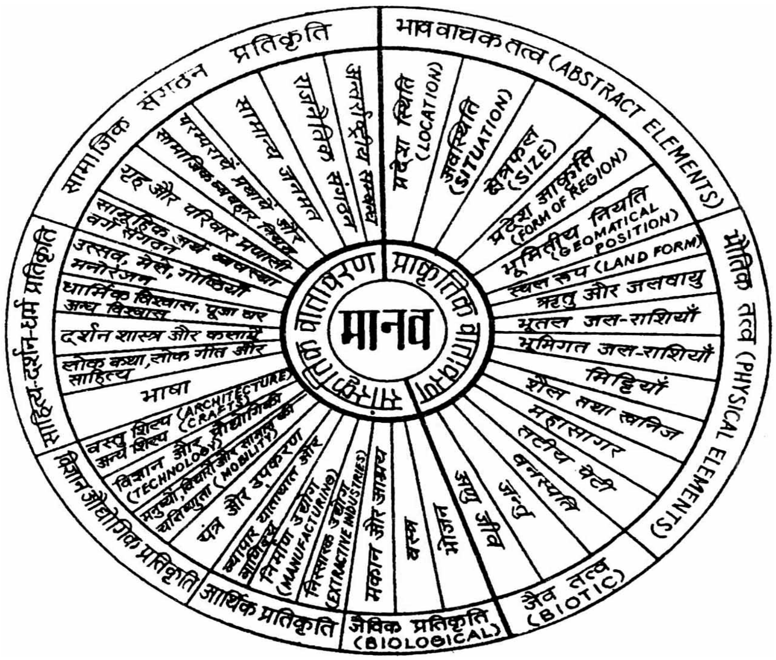

चित्र - 7.1 : मानव-वर्ग पर प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण का संयुक्त प्रभाव तथा मानव द्वारा प्रतिक्रियाएँ

7.2.3 वातावरण -तत्वों का संयुक्त प्रभाव तथा मानव प्रतिक्रियाएँ (Composite Impact of Elements of Environment and Human Responses)

वातावरण के उपर्युक्त सभी तत्व यद्यपि एक -दूसरे से भिन्न होते हैं तथापि उनके मेल से एक संयुक्त परिस्थिति बनती है, जिसमें ये तत्व आपस में एक -दूसरे पर भी प्रभाव डालते हैं और सब संयुक्त रूप से मनुष्य पर प्रभाव डालते हैं । उदाहरण के लिए, उष्णकटिबन्धीय या उपोष्णकटिबन्धीय प्रदेशों में जहाँ ऊँचे पर्वत होते हैं वहाँ ऊँचाई के कारण जलवायु ठण्डी हो जाती है । पर्वतों का प्रभाव जलवायु पर तथा जलवायु का प्रभाव पर्वतों पर पड़ता है । वर्षा, पाला, हिमपात, धूप आदि के द्वारा पर्वतों का अनाच्छादन होता है और जल तथा हिम पर्वतों को काटते रहते हैं । पर्वतीय ढाल और जलवायु दोनों का प्रभाव मिट्टी -निर्माण पर होता है जबकि पर्वतीय ढाल, जलवायु और मिट्टी तीनों तत्व मिलकर कृषि फसलों की सीमाएँ निर्धारित करते हैं । फसलों की उपज तथा फसलों के बोने व काटने का प्रभाव मनुष्य के उत्सवों और श्रम विभाजन पर पड़ता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वातावरण के तत्वों का एक मिलाजुला प्रभाव होता है जिसमें प्रत्येक तत्व अपनी-अपनी अलग क्रिया करता है और सम्मिलित क्रिया भी । कुछ दशाओं में एक तत्व दूसरे तत्व से मिलकर तीसरे तत्व की क्रिया को गति देता है । उदाहरण के लिए, तेज ढाल वाली भू-रचना और अधिक वर्षा दोनों मिलकर भूमि अपरदन की गति को तेज कर देते हैं । कुछ दशाओं में एक तत्व दूसरे तत्व का निराकरण भी कर देता है, जैसे - ढालों पर उगी हुई वनस्पति मिट्टी के कटाव को रोकती है ।

वातावरण के तत्वों की उक्त सभी क्रियाएँ-प्रतिक्रियाएँ उस प्रदेश के पारिस्थितिक अनुक्रम की अवस्था और समय तत्व के अनुसार होती हैं । ये मिलीजुली क्रियाएँ केवल वर्तमान में ही घटित नहीं होतीं बल्कि उन क्रियाओं के प्रभाव और परिणाम युगों-युगों तक संचित होते रहते हैं और इस प्रकार मानव इतिहास पर भौगोलिक प्रभाव की निश्चित छाप निरन्तर लगती रहती है । कुछ विद्वान् समय के इस पहलू को पूरी मान्यता नहीं देते जबकि यह निश्चित तथ्य है कि मानव और वातावरण के पारस्परिक प्रभाव व सम्बन्ध लगातार संचित होते रहते हैं । बहुत-से नए प्रभाव पुराने प्रभाव को बदलते या मिटाते रहते हैं । उदाहरण के लिए, महासागरीय परिवहन में उन्नति होने के बाद लन्दन, न्यूयॉर्क, टोकियो, हैम्बर्ग, कोलकाता, मुम्बई, शंघाई, सिंगापुर आदि नए नगरों ने महत्ता प्राप्त कर ली है जबकि मध्य एशिया के प्राचीन नगर काशगर, यारकन्द, खोतन, बुखारा आदि का महत्व कम हो गया है । यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व उद्योगों की अवस्था भारत या चीन की तुलना में पिछड़ी हुई थी । भारत में ईसा से कई हजार वर्ष पूर्व खेती और दस्तकारी एक हो गई थीं । भारत में अब -से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ही लोग इस्पात बनाने में कुशल थे । इसका उदाहरण दिल्ली में कुतुब मीनार के समीप स्थित लौह -स्तम्भ है जिसमें 1, 600 वर्ष की धूप व वर्षा के बावजूद जंग नहीं लगी । यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के बाद वहाँ के देशों ने मशीन और यंत्र निर्माण में तेजी से उन्नति की है । जब यूरोपवासी प्रवास करके उत्तरी अमेरिका या ऑस्ट्रेलिया में जाकर बसे तब वे अपने साथ अपनी वैज्ञानिक संस्कृति और तकनीकी को भी लेकर गए । इसी कारण इन देशों ने विगत केवल तीन शताब्दियों में ही तेजी से औद्योगिक और तकनीकी प्रगति कर ली है । इस प्रकार मानव और वातावरण के पारस्परिक सम्बन्धों का स्वरूप समय के साथ संचित और परिवर्तित होता रहता है । इसे पारिस्थितिक (ecological) या कालिक (temporal) अनुक्रम कहते हैं ।

बोध प्रश्न - 1

1. भौगोलिक वातावरण से क्या आशय है ?

   ....

   ....

2. प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक वातावरण के अंग कौन-कौन से है ?

   ....

   ....

3. प्राकृतिक वातावरण की शक्तियाँ कौन-कौन-सी हैं?

   ....

   ....

4. प्राकृतिक वातावरण अपनी प्रक्रियाएँ किन विधियों द्वारा सम्पन्न करता है?

   ....

   ....

5. प्राकृतिक वातावरण के मुख्य तत्व कौन -कौन-से हैं?

   ....

……………………………………………………………………………………

6. सांस्कृतिक वातावरण की वास्तविक शक्ति क्या हे?

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

7. सांस्कृतिक वातावरण की वे कौन -सी प्रक्रियाएँ हैं जिनके द्वारा मानव -वर्ग अपना सामाजिक समायोजन करते हैं?

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

8. सांस्कृतिक वातावरण के मुख्य तत्व कौन-कौन-से हैं?

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

9. पारिस्थितिक या कालिक अनुक्रम किसे कहते हैं?

……………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………

7.3 वातावरण समायोजन और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ (Environmental Adjustment and Cultural Attainments)

प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण के उपर्युक्त विभिन्न तत्व मनुष्य के भोजन, वस्त्र, निवास, व्यवसाय और सामाजिक संस्कृति पर प्रभाव डालते हैं । मनुष्य उनके प्रभावों के अनुसार ही (i) अपने रहन -सहन का अनुकूलन , और (ii) वातावरण में रूपान्तरण करता है । इन क्रियाओं को वातावरण समायोजन कहते हैं । मनुष्य वातावरण में परिवर्तन अपनी आवश्यकताओं, शक्तियों और रुचियों के अनुसार करता है (तालिका 7. 1) । वातावरण समायोजन के निम्नलिखित दो पक्ष हैं -

(i) वातावरण अनुकूलन (adaptation), तथा (ii) वातावरण रूपान्तरण (modification) (तालिका 72) ।

तालिका-7.1 : वातावरण रूपान्तरण में मानवीय चयन को निर्धारित करने वाले कारक

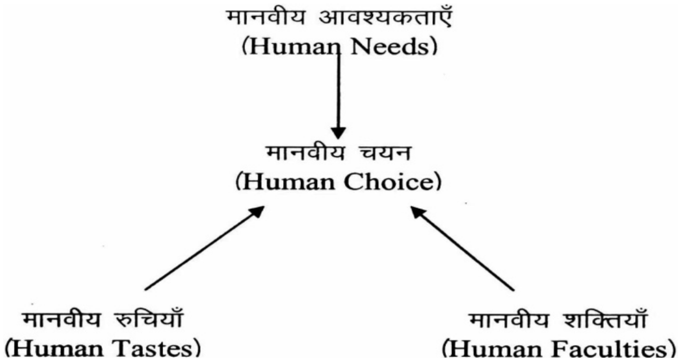

7.3.1 वातावरण अनुकूलन (Environmental Adaptation)

अनुकूलन का तात्पर्य है कि मनुष्य अपने आपको वातावरण के अनुकूल बनाता है । इसे स्व-परिवर्तन भी कह सकते हैं । अनुकूलन में मनुष्य की क्रियाएँ दो प्रकार की होती हैं - (i) आन्तरिक (intrinsic), और (ii) बाह्य (extrinsic) । आन्तरिक अनुकूलन भी दो प्रकार का होता है - (i) ऐच्छिक (Voluntary), तथा (ii) अनैच्छिक (involuntary) या प्राकृतिक । रूपान्तरण भी दो प्रकार का होता है - (i) प्राकृतिक, तथा (ii) सांस्कृतिक ।

कुछ उदाहरणों से अनुकूलन और रूपान्तरण की संकल्पना स्पष्ट हो जाएगी । मान लीजिए कि यूरोप के किसी ठण्डे प्रदेश - जर्मनी या ब्रिटेन से इन्जीनियरों का एक दल भारत में आकर कर्नाटक या तमिलनाडु के किसी गर्म मैदानी प्रदेश में आकर रहने लगता है । यहाँ आने के बाद उसे दक्षिण भारत की जलवायु अपने मातृप्रदेश की जलवायु की अपेक्षा बहु त गर्म महसूस होगी । गर्मी से बचाव के लिए वह यूरोपीय परिवार कुछ कृत्रिम साधनों का प्रयोग करेगा, जैसे - वातानुकूलन और प्रशीतकों का । वे लोग ऊनी वस्त्रों की बजाए सूती वस्त्र पहनने लगेंगे और धूप से बचाव के लिए छाते का प्रयोग करने लगेंगे । दक्षिण भारत में आने के बाद उन्हें अपने दैनिक व्यवहार में स्थानीय तामिल भाषा और स्थानीय रीतिरिवाज भी सीखने पड़ेंगे । यह कार्य उनका ऐच्छिक आन्तरिक समानुकूलन कहा जाएगा । लम्बे समय तक यहाँ निवास करने के बाद उनकी त्वचा श्यामवर्ण की होने लगेगी । यह अनैच्छिक या प्राकृतिक आन्तरिक अनुकूलन कहलाएगा । वे जो तमिल वेशभूषा अपनाएँगे यह उनका बाह्य अनुकूलन होगा । वातानुकूलन और प्रशीतकों का उपयोग वातावरण रूपान्तरण कहलाएगा ।

तालिका- 7.2 : वातावरण समायोजन के विभिन्न पक्ष

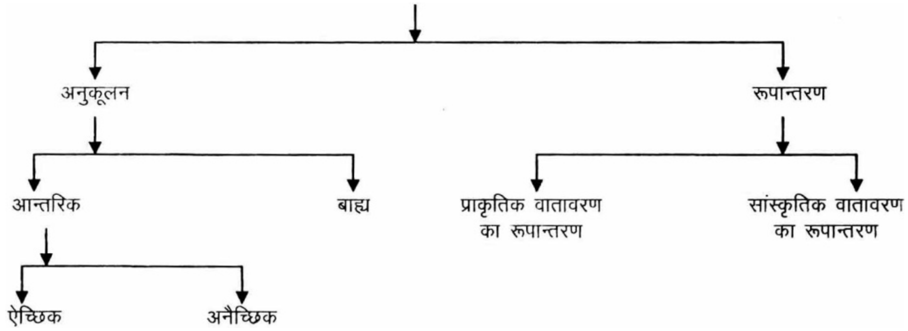

7.3.2 वातावरण रूपान्तरण (Environmental Modification)

रूपान्तरण का अभिप्राय मानव द्वारा प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक वातावरण में परिवर्तन करना है । यह परिवर्तन मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी शक्तियों व रुचियों के अनुसार करता है हालांकि इस कार्य में मनुष्य पूर्णत : स्वतन्त्र नहीं है । वातावरण ने कुछ सीमाएँ निर्धारित कर दी हैं जिनके अनुसार ही मनुष्य को अपने कार्य करने पड़ते हैं । उदाहरणार्थ, टुण्ड्रा के शीतप्रधान क्षेत्र में मनुष्य फसल उगाने में आज तक सफल नहीं हो सका है ।

प्राकृतिक वातावरण में रूपान्तरण के अनेक उदाहरण हैं, जैसे - अनुपजाऊ मिट्टी में खाद डालकर उपजाऊ बनाना, पहाड़ी ढालों को काटकर सीढ़ीनुमा खेत बनाना, शुष्क प्रदेशों में नहरें या कुएँ बनाकर सिंचाई करना, शुष्क प्रदेशों में स्थित सूती वस्त्र कारखानों में कृत्रिम आर्द्रक लगाकर वायुमण्डल में आर्द्रता उत्पन्न करना, ठण्डी जलवायु में स्थित मकानों को गर्म रखकर और उष्ण जलवायु में स्थित मकानों को ठण्डा रखकर तापमान को सहनीय बना लेना इत्यादि ।

रुचि का प्रभाव भी मानवीय चयन पर पड़ता है । उदाहरण के लिए, बंगाल, म्यांमार व दक्षिणी चीन की जलवायु चावल उत्पन्न करने के लिए यद्यपि बड़ी उपयुक्त है तथापि भिन्न -भिन्न किसान अपनी रुचि के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार के चावल बोते हैं और कोई-कोई किसान तो चावल के बजाए गन्ना बोते हैं ।

वातावरण समायोजन के रूपों और क्रियाओं का बड़ा महत्व है । किसी प्रदेश की जनसंख्या ने कितनी आर्थिक व सामाजिक प्रगति की है यह इस बात के प्रभाव पर भी निर्भर करता है कि उस प्रदेश के निवासियों ने वातावरण समायोजन के किन-किन रूपों और प्रक्रियाओं को अपनाया है । जिस प्रकार प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग करके मनुष्य आर्थिक एवं सामाजिक उन्नति करता है उसी प्रकार सांस्कृतिक वातावरण की विभिन्न प्रक्रियाओं का प्रभाव भी मानव प्रगति को त्वरित या मन्दित करता है ।

7.3.3 मानवीय चयन (Human Choice)

जलवायु के बन्धन इतने कठोर हैं कि मनुष्य को उनकी अनुपालना करनी ही पड़ती है, वह केवल अपने चयन में परिवर्तन कर सकता है । तापमान का प्रभाव नहीं बदला जा सकता । मनुष्य अपने विज्ञान व तकनीक का समुचित प्रयोग करने के बाद भी व्यापक क्षेत्रों में तापमान को नियन्त्रित नहीं कर सकता । इसलिए मनुष्य को जलवायु द्वारा निश्चित की गई सीमाओं के अन्दर ही अपना चयन सीमित करना पड़ता है । उदाहरण के लिए, उष्णकटिबन्धीय जलवायु में 21^0 से 27^0 सेन्टीग्रेड तक के तापमान में चावल, गन्ना, कपास, केला, रबर, चाय, कॉफी आदि कोई-भी फसल उगाई जा सकती है । इस स्थिति में मनुष्य वर्षा और मिट्टी का ध्यान रखते हुए अपनी आवश्यकता के अनुसार यह चयन कर लेता है कि वह अपने खेत में इन फसलों में से कौन-सी फसल उगाएगा । इसी प्रकार वातावरण के दूसरे तत्वों, जैसे - मिट्टी, जलापूर्ति, खनिज, वनस्पति आदि के द्वारा भी निधार्रित की गई सीमाओं के अन्दर मनुष्य अपने रहन -सहन के ढंग का चयन करता है । सांस्कृतिक वातावरण के द्वारा भी चयन की सीमाएँ निर्धारित होती हैं । उदाहरण के लिए, भारत के मैदानों में ग्रीष्म ऋतु में सूती वस्त्र पहनने की आवश्यकता तो जलवायु ने निश्चित की है परन्तु विभिन्न राज्यों में किस-किस प्रकार के सूती वस्त्र पहने जाएँ यह बात सांस्कृतिक वातावरण ने तय की है । इसी प्रकार का चयन मकान बनाने के सम्बन्ध में भी देखने को मिलता है । जिन मैदानी भागों में पत्थर और लकड़ी कम मिलती है वहाँ ईंटों से मकान बनाए जाते हैं, परन्तु वहाँ मनुष्य को इस बात का चयन रहता है कि वह अपना मकान एक मंजिल का बनाए या दो मंजिल का, उसका दरवाजा पूर्व की ओर रखे या पश्चिम की ओर ।

सामाजिक संस्थाओं के विषय में भी ऐसा-ही चयन रहता है । कोई मनुष्य किसी-भी व्यवसाय को अपना सकता है बशर्ते कि वह आपराधिक प्रकृति का न हो । कोई मनुष्य किसी-भी धर्म को अंगीकार कर सकता है, किसी-भी विद्‌या को पढ़ सकता है, परन्तु उस प्रदेश के सांस्कृतिक वातावरण द्‌वारा निश्चित की गई सीमाओं का उल्लंघन नहीं कर सकता । उदाहरण के लिए, कोई देशवासी अपने देश के नियमों का उल्लंघन कर किसी शत्रु देश का कार्यालय गुप्त रूप से अपने यहाँ स्थापित नहीं कर सकता । इसी प्रकार ऑस्ट्रेलिया सरकार की अनुमति बिना कोई - भी श्याम प्रजाति का व्यक्ति उनके देश में जाकर नहीं बस सकता ।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि वातावरण द्‌वारा निर्धारित किए गए चयन की सीमाओं के अन्दर मनुष्य अपने व्यवसाय, खानपान, रहन-सहन के ढंग और सामाजिक व्यवहार का चयन करता है । इसी को हम अनुकूलन कहते हैं । इतना ही नहीं बल्कि मनुष्य की शारीरिक रचना में भी वातावरण के अनुसार कुछ प्रादेशिक अनुकूलन होता है, जैसे - ऊँचे पर्वतीय भागों में रहने वाले लोगों को हल्की वायु में रहने की क्षमता बढ़ जाती है । मध्य अफ्रीका, दक्षिणी भारत, ब्राजील आदि के निवासियों को अधिक धूप में काम करना पड़ता है इसलिए उनका रंग सांवला हो जाता है जबकि शीतप्रधान देशों के लोग गौरवर्ण के होते हैं । पर्वतीय भागों के निवासियों का शरीर इकहरा होता है क्योंकि उन्हें बार-बार पर्वतों पर चढ़ने-उतरने का काम जीवनभर करना पड़ता है ।

7.3.4 वातावरण समायोजन के प्रादेशिक पक्ष (Regional Aspects of Environmental Adjustment)

उपर्युक्त सभी उदाहरण व्यक्तिगत समायोजन के हैं । विभिन्न प्रदेशों में वातावरण समायोजन मानव- वर्ग के द्‌वारा भी होता है । उदाहरण के लिए, टुण्ड्रा प्रदेश के निवासी खाल और समूर के वस्त्र पहनते हैं, कच्चा माँस खाते हैं और सील मछली तथा रेनडियर के शिकार पर जीवननिर्वाह करते हैं । वे कृषि नहीं कर सकते क्योंकि वहाँ की जलवायु कृषि के अनुकूल नहीं है । ऐसे बर्फीले प्रदेश में मानव-वर्ग ने अपने भोजन और वस्त्र को आखेट से प्राप्त सामग्री पर आधारित किया है और अपने मकानों को वहाँ मिलने वाली बर्फ या खाल से बनाया है । यह कार्य प्रादेशिक अनुकूलन है । ठण्डे मकान को उष्ण रखने के लिए टुण्ड्रावासी सील मछली की चर्बी जलाते हैं । यह कार्य वातावरण का रूपान्तरण है । वातावरण रूपान्तरण के उदाहरण सभी प्रदेशों में देखने को मिलते हैं, जैसे - उष्ण प्रदेशों में प्रशीतकों का प्रयोग; अधिक वर्षा वाले प्रदेशों में ढालू छत का निर्माण; शुष्क प्रदेशों में सिंचाई के लिए कुओं, तालाबों, नहरों आदि का निर्माण; मिट्टी के अनुपजाऊपन को दूर करने के लिए उर्वरकों का प्रयोग; पर्वतीय ढालों को काटकर सीढ़ीदार खेत बनाना; आवागमन को सुगम बनाने के लिए पुलों व सुरंगों का निर्माण; भूगर्भ से खनिज खोदकर कारखानों की स्थापना इत्यादि ।

बोध प्रश्न - 2

1. वातावरण समायोजन से क्या तात्पर्य हे?

   ....

....

2. वातावरण अनुकूलन से क्या आशय है?

....

....

3. वातावरण अनुकूलन कितने प्रकार का होता है?

....

....

4. वातावरण रूपान्तरण से आप क्या समझते हैं ?

....

....

7.4 सांस्कृतिक सम्पर्क (Cultural Contacts)

मानव गतिशील प्राणी होने के साथ-साथ दूसरों के अनुभवों और ज्ञान से भी लाभ प्राप्त करता है । मानव सभ्यता के आदिकाल से ही मनुष्य यात्राएँ करता रहा है । उसकी यात्राएँ कभी आखेट की तलाश में तो कभी पशुओं के लिए चरागाहों की खोज में निरन्तर होती रही हैं । अत : मानव प्रगति के आरम्भिक युग से आज तक संसार में एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश का सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ता चला आ रहा है । किसी-भी प्रदेश के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता कि जिन औजारों और यंत्रों अथवा भोजन प्राप्त करने के जिन साधनों का वहाँ प्रयोग होता है वे सब केवल उसी प्रदेश में ही उत्पन्न हुए। मनुष्य ने पृथ्वी के किन-किन भागों में सर्वप्रथम ताँबे या लोहे की खानों को खोज निकाला यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, किन्तु सांस्कृतिक सम्पर्क के द्वारा इन धातुओं का प्रयोग संसार के सभी देश सीख गए हैं । संसार के विभिन्न धर्मो, सामाजिक प्रणालियों और साहित्यिक विचारों के विषय में भी हम यही देखते हैं कि चाहे उनका आरम्भ अलग-अलग प्रदेशों में हुआ हो, परन्तु वे सांस्कृतिक सम्पर्क के द्वारा दूसरे प्रदेशों में पहुँच गए । किसी प्रदेश का वातावरण केवल इतना निश्चित करने में प्रभावी होता है कि वहाँ के निवासियों को जो नई प्रणाली ज्ञात हुई है उसे वे अपने प्रयोग में लाएँ अथवा नहीं । सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही पृथ्वी पर ज्ञान का प्रसार सुदूरवर्ती देशों तक होता रहा है । किन्हीं विशेष पौधों की खेती अथवा कुछ धातुओं की खोज या उनके गलाने की प्रक्रिया सर्वप्रथम यद्यपि किसी एक प्रदेश के निवासियों ने सीखी होगी तथापि अब वैसी-ही खेती और धातुओं का प्रसार व प्रयोग दिनों-दिन बढ़ते हुए अन्य क्षेत्रों में फैलता जा रहा है ।

कभी-कभी कृषि के लिए नई भूमि की तलाश अथवा मूल्यवान खनिजों को प्राप्त करने के लिए मनुष्य लम्बी यात्राएँ करते रहे हैं । यूरोप और एशिया में मनुष्य ने जिज्ञासावश लम्बी यात्राएँ करके ध्रुव प्रदेशों और छोटे-छोटे द्वीपों तक को खोज निकाला है । बहुत -से नाविकों ने सम्पूर्ण पृथ्वी के कई चक्कर लगा लिए हैं । नए देश की खोज में यूरोपवासियों ने दोनों अमेरिका पर बस्तियाँ जा बसाई । सोने की खोज में मनुष्य अलास्का के ग्लेशियर प्रदेश, अफ्रीका के कालाहारी और ऑस्ट्रेलिया के मरुस्थलीय प्रदेश तक जा पहुँचा । अधिकाधिक सम्पत्ति अर्जित करने की इच्छा और साम्राज्य विस्तार की बलवती स्पर्द्धा के वशीभूत होकर ही मनुष्य दूसरे देशों

पर आक्रमण करते रहे हैं । ऐसे अनेक उदाहरण बैबिलोनिया, असीरिया, मध्य एशिया, मुस्तेरिया, सिन्धु घाटी, मिस, यूनान तथा रोम साम्राज्यों के मिलते हैं ।

कभी-कभी केवल ज्ञान प्राप्त करने अथवा धार्मिक तीर्थों 'के लिए भी लम्बी-लम्बी यात्राएँ होती रही हैं । इसके उदाहरण चीनी यात्री फाह्यान, हेव्रसांग आदि हैं जो हिमालय पर्वतों को पार करके भारत आए और यहाँ की सम्पदा और धार्मिक ज्ञान से ओतप्रोत होकर मध्य एशिया होते हु ए चीन लौट गए । मध्य एशिया के शक, हू ण, खस, मंगोल इत्यादि कितनी ही जातियाँ सिन्धु घाटी तक आईं । वे या तो भारत में ही बस गईं अथवा अन्य देशों को लौट गईं । अरब देशों से भी कई शताब्दियों तक यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, मध्य एशिया और भारत बहु त -से जनसमूह आते -जाते रहे हैं । परिणामस्वरूप इन जनसमूहों में सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ता गया और एक प्रदेश की संस्कृति का प्रभाव दूसरे प्रदेश की संस्कृतियों पर पड़ता रहा ।

सांस्कृतिक सम्पर्क के चार मुख्य घटक हैं - (i) सम्पर्क करने वाले लोग और उनकी क्षमता, (ii) संस्कृति के अवयव, (iii) संस्कृति के विसरण की दूरी, तथा (iv) घटना या संयोग ।

दो संस्कृतियों का आपस में सम्पर्क होने पर उनका एक -दूसरे पर प्रभाव होता है, किन्तु प्रभाव की मात्रा भिन्न-भिन्न होती है । एक संस्कृति दूसरी संस्कृति पर अपनी गहरी छाप लगा देती है और उसमें बहु त -से परिवर्तन कर देती है जबकि दूसरी संस्कृति का प्रभाव नगण्यप्राय रहता है । इसका उदाहरण ब्रिटेन की संस्कृति का है । उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दियों में ब्रिटिश साम्राज्य क़े सभी औपनिवेशक देशों - भारत, म्यांमार, श्रीलंका, दक्षिण अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा आदि - ने अँग्रेजी वेशभूषा, भाषा तथा रहन-सहन की शैली को बहु त -कुछ अपनाया, परन्तु अँग्रेजों ने इन देशों की संस्कृति को किसी-भी रूप में नहीं अपनाया । जो देश आर्थिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्रों में प्रगति कर लेता है उस देश की सभ्यता और विज्ञान को पिछड़े देश अपना लेते है ।आटवीं से पन्द्रहवीं सदी तक भारतीय सभ्यता और विज्ञान दूसरे देशों में अपनाया जाता रहा । यूनान, रोम और अरब देशों ने भारत से पर्याप्त ज्ञान ग्रहण किया । मध्य एशिया और इण्डोनेशिया ने भी भारतीय दर्शन, ज्ञान तथा सभ्यता को अपनाया । वर्तमान काल में संयुक्त राज्य अमेरिका, पूर्ववर्ती सोवियत संघ, ब्रिटेन ओर जर्मनी की सभ्यता, वैज्ञानिक ज्ञान, तकनीकी, यंत्रों और भाषाओं का प्रसार सम्पूर्ण विश्व में बढ़ता जा रहा है ।

यह आवश्यक नहीं है कि सांस्कृतिक सम्पर्क द्वारा ज्ञान और संस्कृति का प्रसार वातावरण की दृष्टि से अनुकूल क्षेत्रों की ओर ही हो । सी डी. फोर्ड (C.D.Forde) के मतानुसार 'ज्ञान और संस्कृति के प्रसार में दूरी और घटना अथवा संयोग का मुख्य प्रभाव होता है ' ('diffusion of knowledge and cultural does not proceed automatically to areas environmentally best suited to it or to the people most respective , distance and accident play an important part ') । यदि दूरी कम है तो पड़ौसी प्रदेशों का सम्पर्क यद्यपि सरल होता है तथापि यह जरूरी नहीं कि किसी प्रदेश में रहने वाला कोई समुदाय अपने पड़ौसी समुदाय की संस्कृति को अंगीकार कर ही लेगा । उदाहरण के लिए,

अफ्रीका के वनों में रहने वाली बहुत-सी आखेटक जनजातियों ने पड़ौसी कृषक जनजातियों से शताब्दियों तक सम्पर्क में रहने के बावजूद कृषिकर्म कभी नहीं अपनाया ।

ऐसा भी देखा जाता है कि कभी-कभी भिन्न प्राकृतिक वातावरण प्रदेशों में भी सांस्कृतिक सम्पर्क द्वारा एकसमान सामाजिक प्रथाओं का प्रसार हो जाता है जबकि वहाँ के प्राकृतिक वातावरण का कोई सीधा सम्बन्ध उन नई सामाजिक प्रथाओं से नहीं होता । उदाहरण के लिए, दासता की प्रथा ब्रिटिश कोलम्बिया के जंगली तटों पर, अरब के मरुस्थल और काँगो के वनों में पाई जाती है जबकि इन प्रदेशों के प्राकृतिक वातावरण एक -दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं । वस्तुत : सांस्कृतिक सम्पर्क द्वारा सामाजिक और शिल्प सम्बन्धी कार्यो का प्रसार अधिक होता है ।

सम्पर्क के द्वारा पुरानी संस्कृति में नई संस्कृति का या तो पूर्ण अथवा आशिक आत्मसात्करण होता है अथवा अस्वीकृति । आत्मसात्करण में सम्भव है कि नई संस्कृति का कुछ रूप बदल जाए और एक-ही प्रकार का व्यवसाय या शिल्पकला भिन्न-भिन्न प्रदेशों में जाकर वहाँ के जनजीवन पर अलग - अलग प्रभाव डाले । उदाहरण के लिए, धातुओं का आर्थिक प्रयोग करने वाली जातियाँ - लोहार, सुनार आदि - किसी देश में तो समाज के निम्न वर्ग में गिनी जाती हैं जबकि अन्य देशों में उच्च वर्ग में ।

7.5 सांस्कृतिक विसरण (Cultural Diffusion)

किसी नई तकनीक, आविष्कार या प्रक्रिया के प्रसार को विसरण कहते हैं । संसार के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में मानवीय, आर्थिक या सांस्कृतिक विकास के लिए नए-नए परीक्षण, आविष्कार और अन्वेषण हर समय होते रहते हैं । कहीं कृषि पैदावार बढ़ाने के लिए नई किस्म को फसलों व बीजों का विकास किया जाता है; कहीं धातुओं की नई खानों का पता लगाया जाता है; कहीं धातुओं के गलाने -शोधने की नई प्रक्रियाओं का प्रयोग किया जाता है; कहीं विनिर्माण उद्योगों के लिए नए -नए यंत्रों का आविष्कार किया जाता है , कही खनिज तेल के बजाए अणु शक्ति से संचालित विशाल जलपोतों का निर्माण होता है तो कहीं रॉकेट-चालित विमानों का प्रयोग । नए विचारों, परीक्षणों और निष्कर्षो का प्रसार सदा-ही एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्रों में होता रहता है । ऐसी नवीन प्रक्रियाओं (innovation) के प्रसार को विसरण कहते हैं । चूँकि मानव भूगोल में वातावरण सांमजस्य का अध्ययन किया जाता है, भूगोलवेत्ताओं को नवीन प्रक्रियाओं के विसरण का अध्ययन भी अपरिहार्य हो जाता है ।

नए विचारों और नई तकनीकों के प्रसार में जो समय लगता है वह तीन कारकों पर निर्भर करता है - (i) प्राकृतिक वातावरण, (ii) मानवीय ज्ञान का स्तर तथा मानव में नवाचारों को अपनाने की इच्छाशक्ति, तथा (iii) परिवहन व संचार साधनों की प्रकृति ।

नवीन प्रक्रियाओं के विसरण को दो उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है - एक कृषि क्षेत्र से तथा दूसरा उद्योग क्षेत्र से । पहला उदाहरण संयुक्त राज्य अमेरिका में संकर मक्का की

---

4. Forde, C.D : Habitat, Economy and Society, London, 1967, p. 9

कृषि के प्रसार का है । इन नए प्रकार के विकसित बीजों का प्रयोग सर्वप्रथम एक क्षेत्र-विशेष में आरम्भ हुआ था । धीरे-धीरे बहुत -से पड़ौसी कृषकों ने उस नई फसल का उत्पादन आरम्भ कर दिया । इस प्रकार सन् 1933 से 1958 तक के 25 वर्षो में 'पड़ौसी प्रभाव' के द्वारा उस नवीन प्रक्रिया का विसरण सर्वप्रथम आयोवा (Iowa) राज्य में हुआ और उसके बाद विस्कोन्सिन, केण्टुकी, टैक्सास, अलबामा आदि राज्यों में बढ़ता गया । आयोवा में संकर मक्का की कृषि 1933 में प्रारम्भ हुई थी और 1943 तक के केवल 10 वर्षो में शत-प्रतिशत कृषि इसी प्रकार की होने लगी । विस्कोन्सिन में 25 वर्षो के बाद संकर बीज का प्रयोग 96 प्रतिशत तक बढ़ा जबकि अलबामा में 1941 से 1958 तक के 17 वर्षो में 8.2 प्रतिशत तक (चित्र- 7. 2) ।

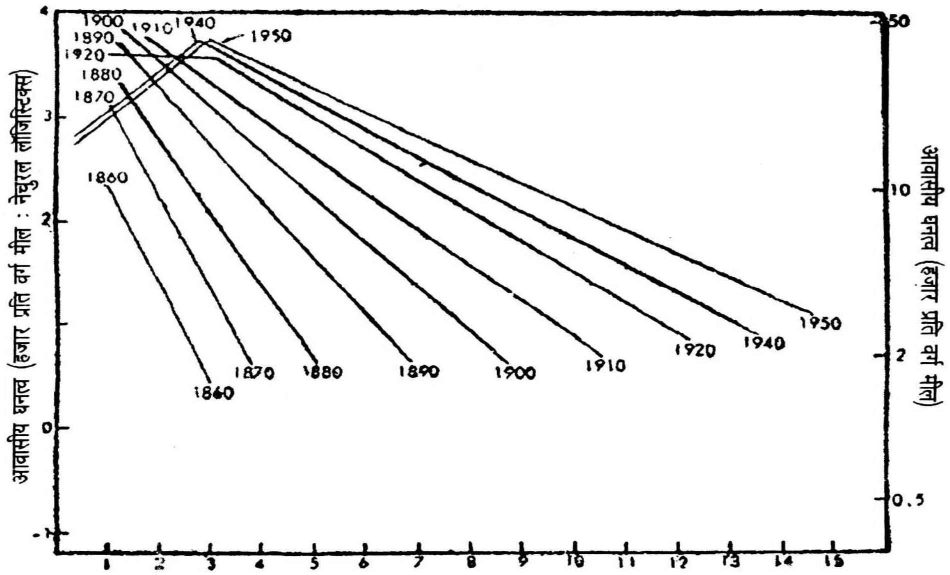

चित्र - 7.2 :

चित्र - 7. 2 : नए विचारों (innovations) के प्रसार को प्रदर्शित करने वाली लॉजिस्टिक वक्र (logistic curve) द्वारा अमेरिका में संकर मक्का की कृषि का प्रतिशत विकास (डिकन एवं पिट्स के अनुसार) ' विसरण का दूसरा उदाहरण दिल्ली के समीपवर्ती नगर गाजियाबाद में कृषि यंत्र, सिंचाई पम्प सैट, डीजल मोटर, ट्रैक्टर ट्रोली आदि निर्माण -उद्योग के प्रसार का है । 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से देश के सभी प्रदेशों में आर्थिक उन्नति का प्रयत्न किया जाने लगा । बड़े -बड़े कारखानों के अलावा छोटे कुटीर उद्योग की स्थापना में भी जनसामान्य ने रुचि लेना प्रारम्भ किया । गाजियाबाद नगर को दो विशेष सुविधाएँ प्राप्त हैं - (i) गाजियाबाद की अवस्थिति ऐसे क्षेत्र में है जिसमें कृषि के सघन उत्पादन पर बल दिया जा रहा है और उसमें कृषि यंत्र, सिंचाई पम्प सैट, डीजल मोटर आदि की माँग बराबर बढ़ती जा रही है, तथा (ii) गाजियाबाद नगर दिल्ली के समीप है जिसके कारण उसको कच्चा माल, परिवहन तथा तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने की सुविधा भी प्राप्त है । इन सुविधाओं के प्रभावस्वरूप गाजियाबाद

में गत तीन दशाब्दियों में नगर के एक सिरे से प्रारम्भ किए गए निर्माण - उद्योग का विसरण भीतरी भाग की ओर होता चला गया (चित्र - 7. 3) ।

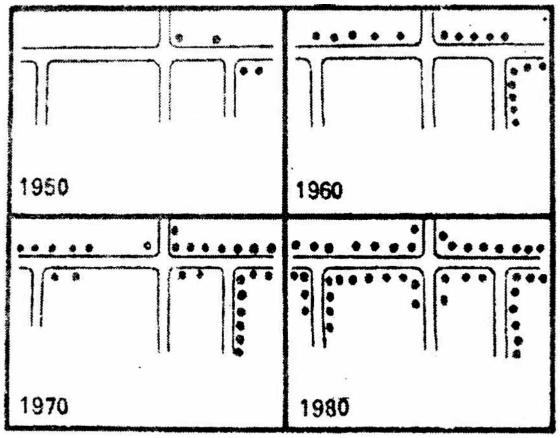

चित्र - 7.3 : गाजियाबाद और शाहदरा नगरों के बीच एक बढ़ती हुई बस्ती में उसके एक सिरे से भीतरी भाग की ओर निर्माण -उद्योगों का विसरण - 1950 में 4 लघु उद्योग, 1960 में 17 लघु उद्योग, 1970 में 26 लघु उद्योग तथा 1980 में 43 लघु उद्योग

7.6 सांस्कृतिक विलम्बन (Cultural Persistence)

यद्यपि प्रवास, यात्रा, व्यापार, शिक्षा और आक्रमण द्वारा विभिन्न संस्कृतियाँ परस्पर मिलती रहीं हैं और इस विसरण से सभ्यता में बहुत प्रगति होती रही है तथापि सांस्कृतिक सुषुप्ति भी कुछ मात्रा में जारी रहती है किसी -किसी प्रदेश या जनजाति में बहुत प्राचीन काल की संस्कृति वर्तमान युग में भी चलती रहती है और वे सभ्यता की रूढ़ियों में जकड़े रहते हैं । धार्मिक विश्वास, सामाजिक प्रथाएँ, किन्हीं क्रियाओं के प्रति विशेष मान्यताएँ और अन्धविश्वास बड़े प्रभावशील होते हैं । वे नई संस्कृति के नए ढंग को अपनाने में रुकावटें डालते हैं ।

सांस्कृतिक रूढ़िवादिता के कई उदाहरण हैं, जैसे - मलाया की सेमाँग व सकाई जनजातियाँ; कालाहारी की बुशमैन जनजाति; अफ्रीका की बाण्टू बसूटो, हॉटेन्टॉट, अक्का, बटवा, च आदि जनजातियाँ; तथा पैटागोनिया, चिली, बोलिविया, ब्राजील आदि देशों की कुछ जनजातियाँ जिनमें आज भी प्राचीन सभ्यता के स्पष्ट लक्षण देखने को मिलते हैं । भारत में सांस्कृतिक विलम्बन कुछ जनजातियों में यथेष्ट रूप से विद्यमान है, जैसे - राजस्थान की गाडोलिया लोहार जिनका मूल निवास क्षेत्र मेवाड़ है । सोलहवीं शताब्दी में ये लोग अपने प्रदेश को छोड़कर गंगा-यमुना के मैदान में चले गए थे । लगभग चार शताब्दियों तक इन लोगों का सम्पर्क उत्तर प्रदेश, दिल्ली, पंजाब आदि के ग्रामों एव नगरों से बना रहा फिर भी ये अपने पुराने व्यवसाय और सामाजिक प्रथाओं को आज तक अपनाए हुए हैं । इन्होंने अपने भोजन, वस्त्र, निवास, व्यवसाय या घुमक्कड़ जीवनशैली में आज तक कोई परिवर्तन नहीं किया है ।

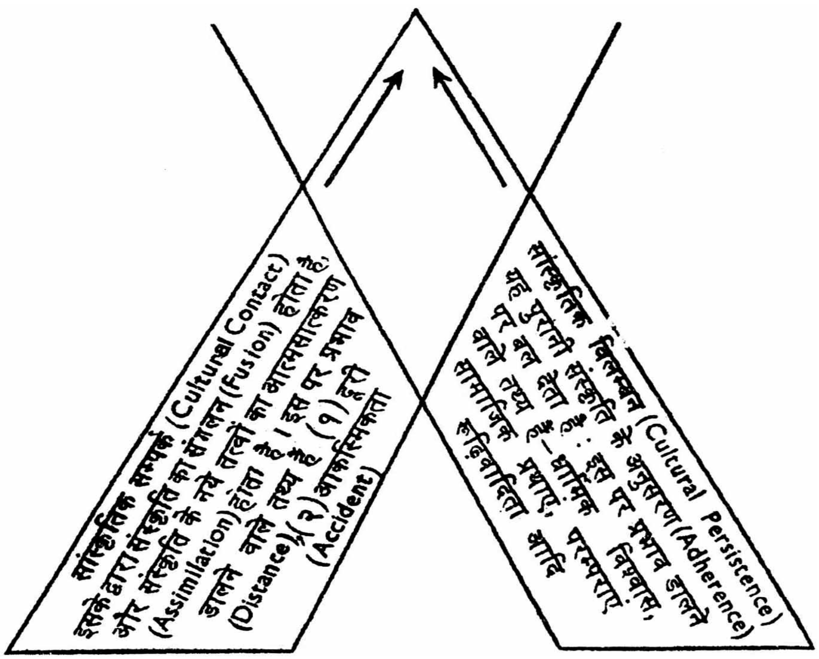

चित्र - 7.4 : सांस्कृतिक परिवर्तन का वेग निर्धारित करने वाली दो विरोधी शक्तियाँ - सम्पर्क तथा विलम्बन

उपर्युक्त सभी उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि किसी प्रदेश में सांस्कृतिक परिवर्तन का वेग दो विरोधी शक्तियों - सम्पर्क (Contact) तथा विलम्बन (Persistence) - द्वारा निर्धारित होता है । सम्पर्क के द्वारा संस्कृतियों का अन्तर्मिश्रण होता है जबकि विलम्बन के कारण पुरानी संस्कृतियों का अनुसरण बना रहता है (चित्र- 7. 4) । वर्तमान युग में नित्य नए आविष्कारों के कारण नई यांत्रिक संस्कृति का प्रसार हो रहा है जिसके फलस्वरूप सांस्कृतिक विलम्बन की गति मन्द पड़ती जा रही है

बोध प्रश्न - 3

1. सांस्कृतिक सम्पर्क के मुख्य घटक क्या हैं?

………………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………………

2. सांस्कृतिक विसरण का क्या अर्थ हे?

………………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………………

3. सांस्कृतिक विसरण किन कारकों पर निर्भर करता है?

………………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………………

4. सांस्कृतिक परिवर्तन का वेग निर्धारित करने वाली दो विरोधी शक्तियाँ कौन-कौन-सी हैं?

………………………………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………………………

5. सांस्कृतिक सम्पर्क और सांस्कृतिक विलम्बन के क्या प्रभाव पड़ते हैं ?

……………………………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………………………

7.7 सारांश (Summary)

मानव एक सक्रिय भौगोलिक कारक है । भौगोलिक अध्ययन में उसकी केन्द्रीय स्थिति है । भौगोलिक वातावरण के दो भेद हैं - (i) प्राकृतिक वातावरण, तथा (ii) सांस्कृतिक वातावरण । इनमें से प्रत्येक के तीन अंग हैं - (i) वातावरण की शक्तियाँ, (ii) वातावरण की प्रक्रियाएँ, तथा (iii) वातावरण के तत्व । वातावरण के तत्वों का संयुक्त प्रभाव पड़ता है जिसमें प्रत्येक तत्व अपनी पृथक् -पृथक् क्रिया करते हुए सम्मिलित क्रिया भी करता है । वातावरण और मानव के परस्पर सम्बन्धों का स्वरूप समय के साथ संचित और परिवर्तित होता रहता है जिसे पारिस्थितिक या कालिक अनुक्रम कहते है ।

मानव व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों रूप से वातावरण के साथ अपने कार्यो का अनुकूलन करता है तथा अपने चयन का प्रयोग करते हुए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी शक्ति और रुचि के अनुसार वातावरण का रूपान्तरण करता है अर्थात् वातावरण चयन द्वारा क्षेत्र संगठन करता है । पृथ्वी के विभिन्न प्रदेशों में मानव ने प्राकृतिक वातावरण का प्रयोग करते हुए सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण किया है । मानव ने वनस्पति और पशु जगत में अनेक परिवर्तन किए हैं । एक भौगोलिक कारक के रूप मे मानव की क्रियाएँ उत्पादनकारी एवं विनाशकारी दोनों ही प्रकार की होती है । अपने उत्पादक रूप में मानव ने एक ओर जहाँ पौधों और पशुओं की अनेक नस्लों का संवर्द्धन किया है वहीं दूसरी ओर वनों के कटाव या अत्यधिक चराई से भू-अपरदन को बढ़ावा दिया है । प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके मानव ने आशातीत सामाजिक व आर्थिक प्रगति की है । इसी प्रकार सांस्कृतिक वातावरण की विभिन्न क्रियाओं का प्रभाव भी मानव प्रगति की गति को त्वरित या मन्दित करता है ।

सांस्कृतिक परिवर्तन के वेग को निर्धारित करने वाली दो परस्पर विरोधी शक्तियाँ हैं - (i) सांस्कृतिक सम्पर्क, तथा (ii) सांस्कृतिक विलम्बन । सांस्कृतिक सम्पर्क द्वारा संस्कृतियों का अन्तर्मिश्रण होता है और नई संस्कृतियों का विकास होता है जबकि सांस्कृतिक विलम्बन में पुरानी सभ्यता एवं सांस्कृतिक लक्षणों के प्रति सबल आग्रह बना रहता है । सांस्कृतिक सम्पर्क अनेक कारणों से होते हैं, जैसे - आखेट या चरागाहों की तलाश में, नए देशों अथवा मूल्यवान खनिजों की खोज में, साम्राज्य विस्तार अथवा धार्मिक यात्राओं के लिए इत्यादि । ज्ञान और संस्कृति के प्रसार को विसरण कहते हैं । विसरण में दूरी और घटना का प्रभाव प्रखरता से होता है । यदि दूरी कम है तो पड़ौसी प्रदेशों का सम्पर्क यद्यपि सरल होता है तथापि यह कदापि जरूरी नहीं कि किसी प्रदेश में रहने वाला कोई समुदाय अपने पड़ौसी समुदाय की संस्कृति को अपना ही लेगा । सांस्कृतिक विलम्बन अर्थात् रूढ़िवाद से संस्कृतियों के मिश्रण में कुछ विलम्ब होता है और सांस्कृतिक सुषुप्ति की दशा बनी रहती है, यद्यपि विज्ञान और शिक्षा के प्रसार से विलम्बन का प्रभाव अब क्रमशः कम होता जा रहा है ।

7.8 शब्दावली (Glossary)

- **आत्मसात्करण (Assimilation) :** एक संस्कृति द्वारा अपने से भिन्न किसी अन्य संस्कृति को स्वय में इस प्रकार से मिला लेना कि उसका पृथक् अस्तित्व ही समाप्त हो जाए ।
- **आदिम जाति (Aboriginal / Aboriginee) :** वे लोग जो आदिकाल से ही किसी प्रदेश के मूलनिवासी हैं ।
- **नवोन्मेष / नवाचार (Innovations) :** किसी समाज की प्रचलित परम्पराओं, कार्यविधियों, प्रक्रियाओं, प्रविधियों अथवा व्यवस्थाओं में नवीनता का प्रवेश । अन्य शब्दों में, नूतन शोध एवं आविष्कारों द्वारा संस्कृति में परिवर्तन घटित होने की प्रक्रिया ।
- **वातावरण / पर्यावरण (Environment) :** वह परिवृत्ति जो मानव को चारों ओर से घेरे हुए है और उसके जीवन एव उसकी क्रियाओं को प्रभावित करती है । अन्य शब्दों में, जीवन की प्रभावकारी दशाओं या परिस्थिति -कारकों का सम्पूर्ण योग ।
- **वातावरण समायोजन (Environmental Adjustment) :** वातावरण -प्रभावों के अनुसार रहन -सहन के अनुकूलन (स्वपरिवर्तन) तथा वातावरण के रूपान्तरण की प्रक्रिया ।
- **वातावरण अनुकूलन (Environmental Adaptation) :** प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण की विभिन्न शक्तियों, प्रक्रियाओं तथा तत्वों के प्रभावानुसार मानव का स्व - परिवर्तन ।
- **वातावरण रूपान्तरण (Environmental Modification) :** प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण मे मानव द्वारा अपने चयन का प्रयोग करते हुए परिवर्तन जो मानव अपनी आवश्यकताओं, शक्तियों और रुचियों के अनुसार करता है ।
- **पारिस्थितिक - तंत्र (Ecosystem) :** वातावरण -विशेष अथवा एक निवास - प्रदेश में विद्यमान समस्त जैव - अजैव तत्वों की अन्त : क्रियाओं का तंत्र । यद्यपि सम्पूर्ण पृथ्वी एक पूर्ण पारिस्थितिक -तंत्र है तथापि वातावरण -इकाई के अनुसार स्थानीय पारिस्थितिक तंत्र का अभिज्ञान सम्भव है ।
- **पारिस्थितिकी (Ecology) :** विभिन्न जीवरूपों तथा उनके चतुर्दिक वातावरण - दशाओं के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन ।
- **सांस्कृतिक प्रसरण (Cultural Diffusion) :** किसी वस्तु, विचार, संस्कृति -लक्षण, नवोन्मेष आदि का अपने उत्पत्ति - स्थल से अन्य क्षेत्रों में उत्तरोत्तर प्रसार ।
- **संस्कृति (Cultural) :** मानव -कार्यविधियों एवं अभ्यागत आचरण का सम्पूर्ण योग ।
- **संस्कृतिकरण (Enculturation) :** संस्कृति -विशेष के सामान्य ल क्षणों व विशेषकों के ग्रहण एवं अभ्यासन की प्रक्रिया ।
- **विसंस्कृतिकरण (Deculturation) :** समूह -विशेष द्वारा अपनी संस्कृति को पूर्णतया खो देना।

- **संस्कृति - तत्व (Cultural Element) :** किसी संस्कृति की सबसे छोटी रण अविभाज्य इकाई।
- **सांस्कृतिक विलम्बन (Cultural Persistence) :** सभ्यता और संस्कृति में प्रगति के बावजूद किसी समाज में पुरानी सभ्यता या सांस्कृतिक ल क्षणों के प्रति सबल आग्रह बना रहना अर्थात् सांस्कृतिक सुषुप्ति का जारी रहना ।
- **संस्कृति - तंत्र (Cultural System) :** क्रियात्मक समष्टि के रूप में संस्कृति -ल क्षणों का समुच्चय, जैसे - चीनी संस्कृति -तंत्र ।
- **नियतिवाद / निश्चयवाद (Determinism) :** मानव के न केवल आर्थिक कार्यो अपितु उनके सम्पूर्ण आचरण पर प्राकृतिक वातावरण के निरपेक्ष नियन्त्रण को स्वीकार करने विषयक दार्शनिक धारणा । मानव - क्रियाओं द्वारा भौतिक वातावरण की शक्तियों को निष्प्रभावी बना देने सम्बन्धी दार्शनिक विचारधारा को ' सांस्कृतिक निश्चयवाद ' की संज्ञा दी गई है ।
- **पारिस्थितिक या कालिक अनुक्रम (Ecological or Temporal Succession) :** वातावरण के समस्त तत्वों की क्रियाओं - प्रतिक्रियाओं का समय तत्व व पारिस्थितिकी के संदर्भ में संयुक्त प्रभाव का संचयी अनुक्रम ।

7.9 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. एम. डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2006
2. एस. के. दीक्षित एवं आर. डी. त्रिपाठी : **सांस्कृतिक भूगोल,** वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2003
3. जयकुमार जैन : **विश्व का सांस्कृतिक भूगोल,** नवभारत प्रकाशन, जोधपुर, 2001
4. 4.. Negi ,B.S : **Human Geography :An ecological approach ,** Kedar Nath Ram Nath ,Merrut,2006
5. DeBlij, H.J : **Human Geography : Culture, Society and Space** . John Wiley and Sons , Inc New York 1977
6. Philbrick, A.K : **This Human World,** John Wiley and Sons , Inc New York 1967
7. Rogers, E.M : **Diffusion of Innovations ,** The Free Press of Glencoe , New York 1962
8. Spencer, J.E. and W.L.Thomas : **Introducing Cultural Geography,** and Sons , Inc New York 1973
9. Wagner , R.H : **Environment and Man ,** W.W.Norton and CO. New York. 1971

7.10 बोध प्रश्नो के उत्तर

बोध प्रश्नों के उत्तर -1

1. वातावरण भौगोलिक दशाओं की वह परिवृत्ति है जो मानव को चारों ओर से घेरे हुए है और उसके जीवन तथा उसकी क्रियाओं पर प्रभाव डालती है । इसमें मानव जीवन को प्रभावित करने वाले सभी तथ्य, वस्तुएँ, स्थितियाँ और दशाएँ सम्मिलित त होती हैं ।
2. वातावरण की शक्तियाँ, (ii) वातावरण की प्रक्रियाएँ, तथा (iii) वातावरण के तत्व ।
3. प्राकृतिक वातावरण की शक्तियाँ हैं - गुरुत्वाकर्षण, पृथ्वी की परिभ्रमण व परिक्रमण गतियाँ, विवर्तनिक शक्तियाँ, सूर्यताप, महासागरीय शक्तियाँ आदि । इन सभी शक्तियों के प्रभावों का अध्ययन मानव भूगोल में होता है ।
4. प्राकृतिक वातावरण की प्रक्रियाएँ हैं - ताप विकिरण, ताप चालन, ताप संवहन, वायु संचलन, जल संचलन, अणु सक्रियता, अनाच्छादन, अपक्षय, -निक्षेप आदि । इन सभी प्रक्रियाओं के प्रभावों का अध्ययन म । न व भूगोल में होता है ।
5. प्राकृतिक वातावरण के तीन मुख्य तत्व हैं - (i) अमूर्त तत्व, (ii) भौतिक या मूर्त तत्व, तथा (iii) जैविक तत्व ।
6. मानव स्वय जिसके चारों ओर मानव भूगोल के अन्य कारक क्रियाशील रहते हैं । मानवीय शक्ति ही सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करती है ।
7. सांस्कृतिक वातावरण की प्रमुख प्रक्रियाएँ हैं - पोषण, सामूहीकरण, पुनरोत्पादन, प्रभुत्व स्थापन, प्रवास, पृथक्करण, समावेश, विशेषीकरण तथा अनुक्रमण ।
8. सांस्कृतिक वातावरण के प्रमुख तत्व हैं - मानवनिर्मित वस्तुएँ, भू-दृश्य, व्यवसाय, विज्ञान, यंत्र, उद्‌योग, तकनीक, संस्थाएँ, प्रथाएँ, कलाएँ आदि ।
9. वातावरण और मानव के पारस्परिक सम्बन्धों का स्वरूप समय के साथ संचित और परिवर्तित होता रहता है जिसे पारिस्थितिक या कालिक अनुक्रम कहते हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण के भिन्न-भिन्न तत्व मनुष्य के भोजन, वस्त्र, निवास, व्यवसाय और सामाजिक संस्कृति पर संयुक्त प्रभाव डालते हैं । मनुष्य उनके प्रभावों के अनुसार ही (i) अपने रहन-सहन का अनुकूलन, और (ii) वातावरण का रूपान्तरण करता है । इन सभी क्रियाओं को वातावरण समायोजन कहते हैं ।
2. प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण की विभिन्न शक्तियों, प्रक्रियाओं तथा तत्वों के प्रभावानुसार मानव का स्व-परिवर्तन अनुकूलन कहलाता है ।
3. अनुकूलन दो प्रकार का होता है - आन्तरिक और बाहय । आन्तरिक अनुकूलन के पुन : दो प्रकार हैं - ऐच्छिक और अनैच्छिक ।
4. प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण में मनुष्य अपने चयन के अनुसार परिवर्तन कर लेता है जिसे वातावरण रूपान्तरण कहते हैं । यह रूपान्तरण मानव अपनी आवश्यकताओं, शक्तियों तथा रुचियों के अनुसार करता है ।

बोध प्रश्न - 3

1. सांस्कृतिक सम्पर्क के चार मुख्य घटक हैं - (i) सम्पर्क करने वाले लोग और उनकी क्षमता, (ii) संस्कृति के अवयव, (iii) संस्कृति का विसरण और दूरी, तथा (iv) घटना या संयोग ।
2. किसी नई तकनीक, आविष्कार या प्रक्रिया के प्रसार को विसरण कहते हैं ।
3. सांस्कृतिक विसरण मुख्यत : तीन कारकों पर निर्भर करता है - (i) प्राकृतिक वातावरण, (ii) मानवीय ज्ञान का स्तर तथा मानव में नवाचारों को अपनाने की इच्छाशक्ति, तथा (iii) परिवहन व संचार के साधनों की प्रकृति ।
4. सांस्कृतिक सम्पर्क और सांस्कृतिक विलम्बन ।
5. सांस्कृतिक सम्पर्क के द्वारा संस्कृतियों का अन्तर्मिश्रण होता है जबकि विलम्बन के कारण पुरानी संस्कृतियों का सबल अनुसरण बना रहता है अर्थात् सांस्कृतिक सुषुप्ति की दशा जारी रहती है ।

7.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वातावरण की शक्तियों, प्रक्रियाओं और तत्वों में क्या भेद है? सोदाहरण समझाइए ।
2. वातावरण के प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक पक्षों के मुख्य तत्वों की विवेचना कीजिए ।
3. 'मानव भूगोल में मानव की केन्द्रीय स्थिति है ।' स्पष्ट कीजिए तथा मानव और वातावरण के सम्बन्धों की सटीक विवेचना कीजिए ।
4. 'समय भी वातावरण का एक तर्कसंगत पक्ष है ।' किस प्रकार? पारिस्थितिक या कालिक अनुक्रम के सन्दर्भ में समझाइए ।
5. 'वातावरण के समस्त तत्वों का संयुक्त प्रभाव होता है ।' इस भौगोलिक अनुभूति को प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण से उदाहरण देते हुए स्पष्ट कीजिए ।
6. मानव भूगोल के अध्ययन में किन आधारभूत सिद्धान्तों को सम्मिलित किया जाता है? वातावरण का विकास करने में मानवीय क्रियाओं के महत्व का मूल्यांकन कीजिए ।
7. 'मानव ने प्राकृतिक भू-दृश्य में परिवर्तन करके सांस्कृतिक भू-दृश्य का निर्माण किया है ।' कैसे? उदाहरण सहित समझाइए ।
8. भूमि, जलवायु और मिट्टी के उपयोग में मानवीय चयन के उदाहरण दीजिए ।
9. वातावरण समायोजन का क्या अर्थ है? वातावरण समायोजन के प्रादेशिक पक्षों की विवेचना कीजिए ।
10. सांस्कृतिक उपलब्धियों के सन्दर्भ में मानवीय चयन की विवेचना कीजिए ।

11. 'मानव ने वातावरण रूपान्तरण द्वारा महत्वपूर्ण सांस्कृतिक उपलब्धियाँ अर्जित की हैं ।' उदाहरण देकर समझाइए ।
12. सांस्कृतिक सम्पर्क के कारणों एवं परिणामों की विवेचना कीजिए ।
13. सांस्कृतिक परिवर्तन का वेग निर्धारित करने वाली शक्तियों की सोदाहरण व्याख्या कीजिए ।

14. 'ज्ञान और संस्कृति के प्रसार में दूरी और घटना अथवा संयोग का मुख्य प्रभाव होता है । ' उदाहरण देकर समझाइए ।

इकाई 8 : मानव के प्रमुख व्यवसाय: भोजन संग्रहण - पशुचारण तथा कृषि अर्थव्यवस्था (Principal Human Occupation : Food Gathering , Pastoral and Agricultural Economies)

इकाई : की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 भोजन संग्रहण

8.2.1 आखेट तथा संग्रहण

8.2.2 वन-वस्तुएं तथा संग्रहण

8.2.3 मस्त ग्रहण

8.3 पशुचारण

8.3.1 पारम्परिक चलवासी पशुचारण

8.3.1.1 ऋतु प्रवास

8.3. 1.2 चलवासी पशुचारण व्यवसाय का विश्व वितरण

8. 3. 1.3 चलवासी पशुपालकों की वर्तमान दशा

8.3.2 व्यापारिक पशुचारण

8.3.2.1 व्यापारिक पशुचारण का वितरण

8.4 कृषि

8.4.1 निर्वाह कृषि

8.4.1.1 स्थानान्तरी कृषि

8.4.1.2 स्थानबद्ध कृषि

8.4.2 गहन निर्वाह कृषि

8.4.2.1 चावल प्रधान आर्द्र गहन निर्वाह कृषि

8.4.2.2 चावल रहित अन्य फसल प्रधान गहन निर्वाह कृषि

8.4.3 विस्तृत व्यापारिक अन्न कृषि

8.4.4 उष्ण कटिबन्ध में रोपण कृषि

8.4.5 मिश्रित कृषि

8.4.6 डेयरी कृषि

8.4.7 भूमध्य सागरीय कृषि

8.4.8 विपणन उद्यान -कृषि

8.4.9 सहकारी कृषि

8.4.10 सामूहिक कृषि
8.5 सारांश
8.6 शब्दावली
8.7 सन्दर्भ ग्रंथ
8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
8.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्ययन को अध्ययन की सुगमता की दृष्टि से निम्नलिखित उद्देश्य हैं : -

- आदिकाल से वर्तमान काल तक मानव द्वारा जीवन यापन के लिये किये गये विभिन्न प्रक्रियाओं का अध्ययन करना ।
- मानव की आर्थिक प्रगति के क्रम को समझना ।
- पशुचारण की विभिन्न व्यवस्थाओं, उनका विश्व वितरण और वर्तमान दशा का तुलनात्मक अध्ययन करना ।
- आदिमकालीन कृषि अर्थव्यवस्था से वर्तमान में प्रचलित कृषि अर्थव्यवस्था के विभिन्न प्रतिरूपों के क्रमबद्ध विकास को समझना ।

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव की आर्थिक क्रियाओं पर सदैव भौतिक तथा सामाजिक वातावरण का प्रभाव पड़ता हैं । भौतिक वातावरण में भौगोलिक स्थिति, धरातल, भू-गर्भिक संरचना, जलप्रवाह, जलवायु, मृदा, प्राकृतिक वनस्पति तथा खनिज सम्पदा सम्मिलित हैं । सामाजिक वातावरण में जनसंख्या, तकनीकी विकास, नगरीकरण, यातायात के साधन, उद्योग, व्यापार आदि महत्वपूर्ण हैं । विश्व के विभिन्न प्रदेशों में भौतिक तथा सामाजिक वातावरण की परिस्थितियाँ भिन्न होने के कारण मनुष्य की आर्थिक क्रियाएँ भी भिन्न होती हैं ।

विकास के प्रारम्भिक चरणों में मानव साधारण एवं कठिन जीवन -व्यतीत करता था और उसके। आवश्यकताएँ सीमित थी । प्राचीन काल में लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर भोजन त था जल की खोज में घूमते रहते थे व अपनी भूख को शाँति करने के लिए जानवरों का शिकार काते थे और खाने योग्य पेट. पौधों से फल, गिरीफल, जड़, तना और पत्ता एकत्र करते थे । मनुष्यों द्वारा पेड़ पौधों और जीव -जन्तुओं का घरेलूकरण किए बिना जीवन निर्वाह के लिए पशुओं का शिकार जंगली पेड़-पौधों से भोजन एकत्र करना और मछली पकड़ना चरवाही जीवन कहा जाता हैं ।

भोजन बनाने तथा गर्म करने के लिए आग का प्रयोग, पशुओं का घरेलूकरण, फसलों की खेती और स्थाई गांवों में निवास ने कृषि क्रान्ति की नींव रखी । कृषि क्रान्ति ने मानव के जीवन को काफी परिवर्तित किया क्योंकि उसके पास अन्य कार्यो के लिए काफी समय रहता था । अत : अर्थव्यवस्था के विकास की ये सभी प्रक्रियाएँ कृषि तथा उससे सम्बन्धित कार्यो पर आधारित थी।

आर. लटजेन्स (R.Lutgens) के अनुसार मानव के प्राथमिक -व्यवसायों का क्रमिक विकास तालिका 1 के अनुसार हुआ हैं । इसके अध्ययन मानव की संस्कृति का विकास क्रम से स्पष्ट होता हैं । आरम्भ में वह घुमक्कड़ चरवाहा रहा किन्तु धीरे -धीरे कृषि का विकास होने पर उसने स्थायी रूप से पशुपालन करना आरम्भ किया । कृषि से उसे भोजन एवं वस्त्रों के रूप में पर्याप्त मात्रा में अन्य वस्तुएँ भी उपलब्ध होने लगी । आजीविका के उपरान्त जो समय मिलता, उसे वह ललित कलाओं, दस्तकारी, कला-कौशल, व्यापार आदि में लगाने लगा । इसी अवस्था में वह खनिज निकालने और वाणिज्य उद्योग आदि क्रियाएँ भी करने लगा । इस प्रकार आरम्भ से लेकर आधुनिक युग तक मानव के उद्योग का विकास हो पाया ।

तालिका- 8.1 : लटजेन्स के अनुसार मानव उद्यमों का क्रमिक विकास

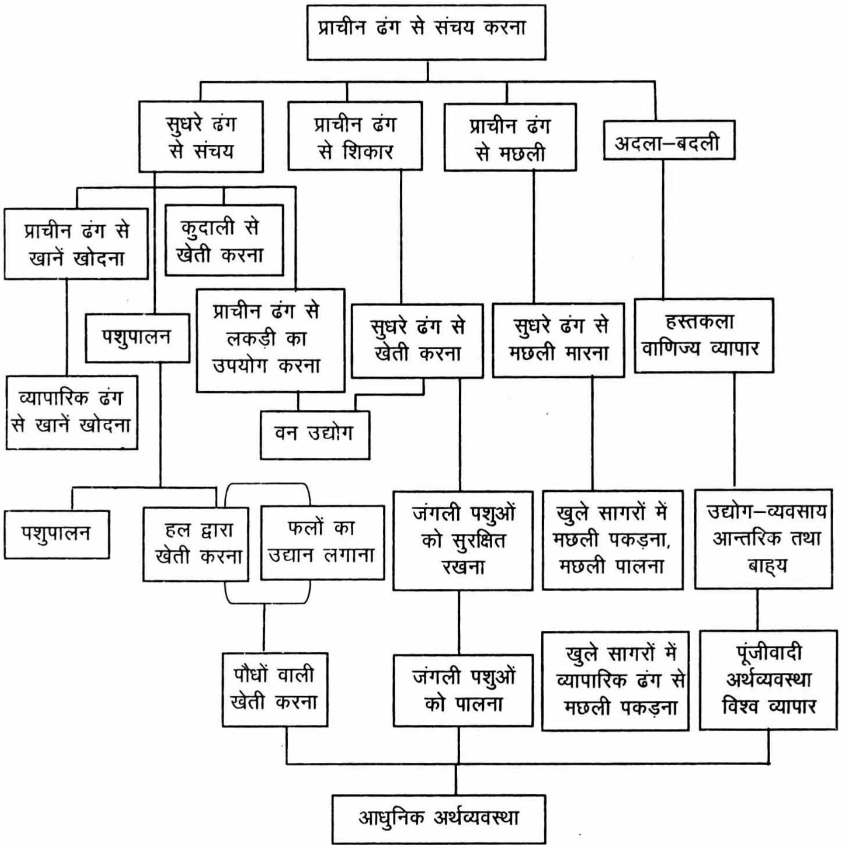

क्रिजाइमॉस्की के अनुसार मानव के व्यवसायों का विकास तीन चरणों मे हुआ था : आखेट कर मछली मारना, पशु चराने के लिए निरन्तर घूमते रहना और प्राचीन ढंग से कृषि करना लेकिन उन विद्वानों ने पशुपालन व्यवसाय को कृषि के बाद विकसित हुआ माना है क्योंकि व्यवसाय के रूप पशुपालन उसी समय सम्भव हो सकता था, जब मनुष्य एक स्थान पर स्थायी रूप से निवास करने लग

8.2 भोजन संग्रहण (Food Gathering)

भोजन संग्रहण तथा आखेट मानव के बहुत ही प्राचीन व्यवसाय हैं । आदि मानव जंगलों में रहता था जंगली जानवरों का आखेट करके अपना जीवन निर्वाह करता था । इसके अतिरिक्त वह अस आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बहुत से वन उत्पादों का संग्रहण भी करता था ।

12, 000 वर्ष पहले तक सभी मानव आखेटक एवं संग्राहक का जीवन व्यतीत कर रहे थे वे धरातल सभी रहने योग्य स्थानों पर फैले थे (चित्र- 8. 1 अ) । वर्तमान समय में एक लाख की जनसंख्या लगभग एक व्यक्ति ही (0. 0001 प्रतिशत से कम) इस प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहे हैं ।

आखेट तथा संग्रहण में संलग्र लोगों में अपार प्रतिरोधी क्षमता पाई जाती है हैं । सर 1950 में भी ये लम्बी भूमंडल के एक तिहाई भाग पर निवास करते थे । इनके निवास स्थलों में सम्पूर्ण आस्ट्रेलिया, अधिक उत्तर-पूर्व के बड़े भाग सम्मिलित थे (चित्र - 1 ब और स) ।

भोजन संग्रहण का कार्य मुख्य रूप से एकाकी क्षेत्रों में किया जाता है जो अत्यन्त ऊँचे और असत्य निम्न अक्षांशों में स्थित हैं । उच्च अक्षांशों के अन्तर्गत ऐसे क्षेत्र उत्तरी कनाडा, उत्तरी यूरोप, उत्तरी एशिया और दक्षिणी चिली सम्मिलित किये जाते हैं । निम्न अक्षांशीय क्षेत्रों में अमेजन बेसिन (ब्राजील, पीरु इक्काडोर एवं वेनेजुएला में) उष्ण कटिबन्धीय अफ्रीका में यंत्र-तंत्र बिखरे हुए भागों में, आस्ट्रेलिया; उत्तरी तटीय भाग, न्यूगिनी और बोर्नियों के भीतरी भाग तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया के आन्तरिक क्षेत्र (म्यांमार, थाईलैण्ड और चीन) सम्मिलित हैं ।

प्राचीन ढंग से संचय कार्य के अन्तर्गत प्रकृति द्वारा बहुलता से प्रस्तुत फल-मूल-कंद, सुपारियाँ, लकड़ियाँ फूल-पत्तियाँ, बेर, जड़े, रेशे एवं अन्य अनेक प्रकार की छोटी-छोटी वस्तुएँ इकट्ठी की जाती है तथा जंगली पक्षियों और मछलियों को जाल द्वारा पकड़ा जाता हैं । इन सबसे मानव को भोजन-सामग्री आश्रय, वस्त्र तथा औजार बनाने के पदार्थ मिलते हैं ।

उच्च अक्षांशीय क्षेत्रों में संचय मुख्य पशु जीवन से प्राप्त वस्तुओं के लिए किया जाता है - स्थल पा कैरीबो, कस्तूरी बैल तथा जल से सील, वालरस, व्हेल, सामन आदि मछलियाँ और वायु में उड़ने वाले पक्षियों से अण्डे प्राप्त किये जाते हैं । उत्तरी अमेरिका के एस्किमो लोग इनका शिकार करने में बड़े कुशल हैं । इसी प्रकार अमेरिका में रेड इण्डियन हिरणों का (जिनके कारण कभी-कभी इन्हे 'People of the deer' कहा जाता है) शिकार कर उनसे अनेक वस्तुएँ प्राप्त करते हैं ।

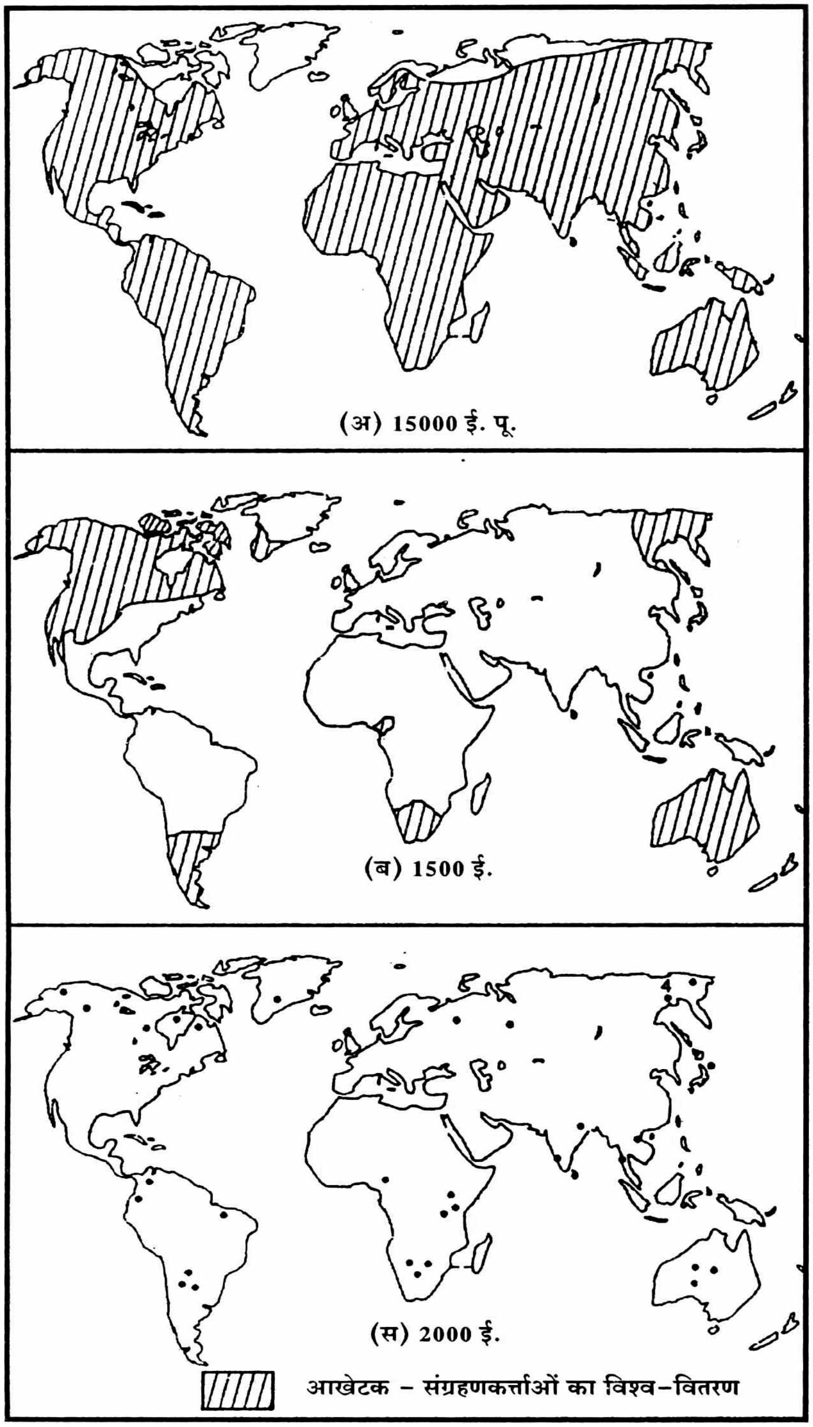

चित्र-8.1 : आखेटक-संग्रहणकर्त्ताओं का विश्व-वितरण

निम्न अक्षांशीय क्षेत्रों में उष्ण कटिबन्ध में अनेक प्रकार के पेड़ -पौधों एवं पशुओं से फल, जड़ें, पत्तियाँ, लकड़ियाँ, माँस, अण्डे आदि प्राप्त किये जाते है जो इन लोगों का मुख्य भोजन होता हैं । इक्काडोर के औका (Auca), उत्तरी कालाहारी के बुशमैन (Bushman), कांगों के पिग्मी

(Pygmies) और न्यूगिनी के पापुआन (Papuans) अनेक प्रकार के कैद -मूल -फल इकट्ठा करते हैं तथा पशुओं और मछलियों का फंदों से शिकार करते हैं ।

8.2.1 आखेट तथा संग्रहण (Hunting and Gathering)

मानव का यह प्राचीनतम उद्यम मरूस्थलों को छोड़कर यूरेशिया और उत्तरी अमेरिका के ध्रुवीय और अर्द्व - ध्रुवीय क्षेत्रों में तथा अर्द्व -उष्ण कटिबन्धीय स्टैपी और निरन्तर गर्म और तर रहने वाले निम्न अक्षांशीय विषुवत् रेखीय क्षेत्रों में किया जाता हैं । (चित्र - 2) यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इन क्षेत्रों में पशुपालन एवं खेती के विकास के फलस्वरूप अनेक स्थानों से आदिवासी प्राय : अन्यत्र खिसकते जा रहे हैं अथवा उनकी संख्या कम होती जा रही हैं ।

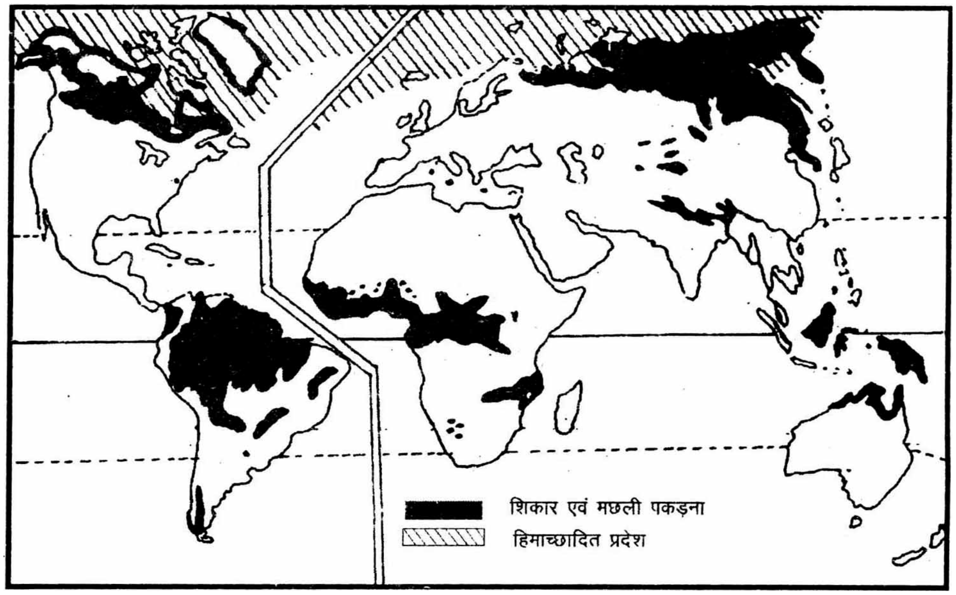

चित्र - 8.2 : विश्व में शिकार और मछली पकड़ने के क्षेत्र

बुशमैन छोटे-बड़े जीवों जैसे नस, स्टैण्ड एण्टीलोप, जिराफ, हाथी, गैंडे, जैबरा, सूअर और शुतुर्मुग का शिकार करते थे किन्तु ज्यों-ज्यों यूरोपीय चरवाहे यहाँ बढ़ते गये, इनकी संख्या में कमी आती गयी । उत्तरी अमेरिका के बड़े मैदान में भी, शिकारियों, मछुआरों एवं जाल फेंक कर पशु पकड़ने वाली जातियों का आधियत्य था । ब्लेकफुट, क्रो, एराफाहो, किओवा, एसिनीबोन, कोमैनचे आदि जातियाँ उत्तर से दक्षिण की और फैली हुई थी ।

उपर्युक्त सभी आदिवासियों की अर्थव्यवस्था अत्यन्त पुराने ढंग की तथा आत्म -निर्भर कही जा सकती है । इनके औजार दो प्रकार के होते हैं - एक वे जिनसे दूर की वस्तुएँ प्राप्त कि जा सकती हैं, जैसे -तीर कमान, फेंकने वाली लकड़ी, बूमरेंग तथा दूसरे वे जो केवल निकट की वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए काम में लायी जाती हैं जैसे -फंदा, लकड़ी, भाले आदि । ये अधिकतर लकड़ी या हड्डियों के बने होते हैं । बुशमैन शिकार के अनुरूप ही कई प्रकार के औजारों को काम में लाते हैं । एस्किमों लोग उड़ती चिड़ियों को मारने के लिए भालों (Bird Spear), तीर-कमान, हुक, हारपून आदि का तथा ग्रीष्म ऋतु में वालरस, सील, नरवल आदि

मछलियों का शिकार करने में हारपून, जाल, हुक और बसन्त ऋतु में कैरीबों लिए राइफलों का प्रयोग करते हैं । कांगों के पिग्मी और बोर्नियों के दून शिकार के लिए जहर-बुझे तीर-कमानों और भालों का पक्षियों को पकड़ने के लिए जालों का उपयोग करते हैं तथा मछली पकड़ने के लिए हुक, जाल, भाले आदि का । एस्किमो को विश्व का सबसे चतुर शिकारी माना जाता हैं । ऋतु, दैनिक मौसम, बर्फ की दशा एवं शिकार की आदत से एस्किमों पूरी तरह परिचित होकर ही शिकार में सफलता पाता हैं । ग्रीष्म काल में, जब बर्फ पिघलने लगती है तो एस्किमों अपनी कयाक (Kyak) नावें लेकर हारपून (लोहे का औजार -Killing Iron), राइफल आदि लेकर नदियों और खुले समुद्रों में निकल जाते हैं । नदियों के किनारे और झीलों में स्त्री-पुरुष सभी मिलकर जाल, हुकों और हारपूनों से मछलियाँ मारते हैं । खुले समुद्रों में विशेषत : सील, वालरस, बेलूग्स और नरवाल (Narwhal) मछलियों का शिकार किया जाता हैं । स्थल पर जालों द्वारा स्त्रियाँ चिड़ियाँ, पैटारमिगन, डोव आदि पकड़ती हैं । उत्तरी ग्रीनलैण्ड में दो महीने तक तथा अधिक दक्षिण ओर कई महीनों तक कयाक नावों में शिकार किया जाता हैं । पतझड़ ऋतु में जब बर्फ जमना आरम्भ हो जाता है तो कयाक के स्थान पर स्लेज गाड़ियाँ (जो कुत्तों द्वारा खींचीं जाती हैं) कैरिबों का शिकार करने के लिए काम में लायी जाती हैं । ये गाड़ियाँ बर्फ पर फिसलती जाती हैं । कैरीबों का शिकार करने का समय कुछ ही सप्ताहों तक सीमित रहता है क्योंकि कैरीबों शीघ्र ही दूसरे स्थानों की ओर खिसक पड़ते हैं । शीत ऋतु में अत्यधिक शीत और ठण्डी पवनों के कारण एस्किमों लोग अधिकतर विश्राम करते है तथा ग्रीष्म और पतझड़ की उपज का आदान-प्रदान रण उत्सव आदि करते हैं किन्तु फिर भी इस ऋतु में सील, ध्रुवीय रीछ, वालरस आदि को शिकार किया जाता हैं । ये बर्फ के नीचे दबे रहते हैं किन्तु साँस लेने के स्थान पर जो छिद्र हो जाता है, उसी के सहारे हारपून से इनका शिकार कर लिया जाता हैं । उत्तरी अमेरिका में इण्डियनों द्वारा कैरीबों का शिकार पतझड़ ऋतु में ही किया जाता है, जबकि मोटे ताजे कैरीबों टुण्ड्रा की ओर जाने लगते हैं । इनके अतिरिक्त वर्ष के विभिन्न भागों में लोमड़ी, खरगोश, भालू मार्टेन, गिलहरी, मिक्स, ऊटर, सैबल, बीवर, फिशर आदि समूरदार (Fur-bearing) जीवों का भी शिकार किया जाता हैं । सबसे अधिक शिकार समूरदार पशुओं का ही किया जाता हैं ।

संग्रहण का नया व्यापारिक रूप: आधुनिक युग में एक प्रकार का संग्रहण बाजारोन्मुख तथा व्यापारिक हो गया हैं । इसकी विशेषताएं निम्न है : -

1. कीमती औषधीय पौधों की पत्तियाँ, छाल या पूरा पौधा ही एकत्र करके तथा सामान्य से प्रसंस्करण के बाद बाजारों में बेच दिया जाता हैं ।
2. पत्तियाँ पेय पदार्थो, दवाओं, प्रसाधन रेशों, छप्पर छाने या वस्त्र बनाने के काम आती हैं ।
3. गिरी भोजन और तेल में उपयोगी होती हैं ।
4. वृक्षों के तनों से रबड़, गोंद, राल, और बैलाटा (दक्षिणी अमेरिका के बुली पेड़ से गोंद जिसे रबड़ और गाटा पार्चा के रूप में प्रयोग में लाया जाता है) प्राप्त किये जाते हैं ।

8.2.2 वन-वस्तुएँ तथा संग्रहण

क्षेत्र : वन प्रदेशों से वस्तुएँ संचय करने का कार्य मुख्यत: दो क्षेत्रों में किया जाता है : -

1. उत्तरी गोलार्द्ध के मध्य ।
2. उष्ण कटिबंधीय प्रदेश ।
3. इन दोनों क्षेत्रों के अतिरिक्त दक्षिणी चिली, दक्षिणी पूर्वी आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड त था भूमध्यसागरीय प्रदेशों में ।

वनों से प्राप्त होने वाली वस्तुओं को सामान्यत : दो क्रियाओं द्वारा प्राप्त किया जाता है - लकड़ी काटकर या लकड़ियों के नये वृक्ष लगाकर (Lumbering) और विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को इकट्ठा करके ।

वनों से प्राप्त पदार्थ : वनों से प्राप्त की जाने वाली वस्तुऐं निम्न हैं : -

1. अनेक प्रकार के वृक्षों का रस या दूध (Sap of trees) जिसके अन्तर्गत गोंद से रबड़ तक सम्मिलित होता हैं ।
2. अनेक प्रकार की सुपारियां (Nuts), जिनका उपयोग मारगरीन, तेल, साबुन, मोमबत्तियाँ, ग्लिसरीन बनाने में किया जाता है, नारियल (श्वेत माँस - 'White Meat'), ताड़, आदि ।
3. रेशेदार पौधे, जिनसे रेशे (Fibres) प्राप्त किये जाते हैं -कपोक (Kapok), नारियल से जटाएँ ।
4. वृक्षों की पत्तियाँ (Tree Leaves), जैसे - अबाका (Abaca), मनीला हैम्प (Manila Hemp), जिससे रस्से, रस्सियाँ आदि बनाये जाते हैं । कोका (Coca) झाड़ी की पत्तियों से कोकेन (Cocaine) नामक नशीला पदार्थ तथा यरबा माटे (Yerba Mate) झाड़ी की पत्तियों से चाय - तुल्य पत्तियाँ प्राप्त की जाती हैं ।
5. वृक्षों की छाले (Barks), जैसे सिनकोना वृक्ष से कुनैन तथा दालचीनी के वृक्ष से दालचीनी की छाल ।

8.2.3 मत्स्यग्रहण (Fisheries)

मत्स्य उत्पादन मानव का प्राचीनतम व्यवसाय हैं । मछली एक सस्ता, सुलभ एवं पौष्टिक खाद्य हैं । यही कारण है कि आधुनिक समय में भी यह मानव के भोजन का महत्वपूर्ण अग हैं । विश्व की बढ़ती हुई आबादी तथा खाद्य पदार्थों के अभाव ने मानव को सागर के अक्षय भण्डारों (मछलियों) की ओर आकर्षित किया हैं । विश्व में मानव द्वारा उपयोग किये जाने वाले भोजन का लगभग 3 प्रतिशत भाग मछली से प्राप्त होता हैं ।

हेरिंग, सार्डिन, एनकोवज, कॉड, हेक, हैडोक, पौलेक, मैकरल, टूना, फ्ताउण्डर, सैपर, वास, ब्लूफिश तथा सालमन आदि मछलियों का ही अधिक उपयोग होता हैं ।

8.2.3.1 मछली प्राप्ति के लिए अनुकूल दशाऐं (Favorable Fishing conditions)

मछली प्राप्ति के लिए निम्नलिखित दशाऐं अनुकूल होती है : -

1. छिछले समुद्र (Shallow seas)

2. नदियों के मुहाने
3. समुद्री धाराऐं "
4. जलवायु
5. व्यापारिक दृष्टिकोण से भी मछलियाँ शीतोष्ण प्रदेशीय समुद्रों में पकड़ी जाती हैं । इसके निम्नलिखित कारण है -
   (i) पश्चिमी यूरोप, ब्रिटेन, उत्तरी अमेरिका आदि के समुद्री तट कटे -फटे हैं, अत : यहाँ मछलियों को पकड़ने की सुविधा होती है, एवं यहाँ सुरक्षित बन्दरगाह बहु त हैं ।
   (ii) इन प्रदेशों की जलवायु शीत प्रधान है, अत : मछलियाँ सड़ती नहीं हैं । ठण्डी जलवायु प्राकृतिक शीत भण्डारों की सुविधा का काम करती हैं ।
   (iii) इन प्रदेशों में छिछले समुद्रों की अधिकता है तथा ठण्डी और गर्म जल धाराएँ भी कई स्थानों पर मिलती हैं ।
   (iv) निकटवर्ती वन प्रदेशों से नावें बनाने के लिए लकड़ी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाती हैं ।
   (v) शीतोष्ण प्रदेशों में अधिकतर क्षेत्रों में तटीय भागों में कृषियोग्य भूमि की कमी रहती हैं । इसके फलस्वरूप मनुष्य का झुकाव समुद्रों की ओर रहता है ।
   (vi) इन प्रदेशों की मछलियाँ स्वादिष्ट होती है तथा बड़ी मात्रा में मिलती है और उष्ण प्रदेशों की मछलियों की तरह विषैली नहीं होती हैं ।

(vii) शीतोष्ण प्रदेशों में अधिकतर देश धनी और विकसित हैं, अत: वैज्ञानिक उपकरणों से मछलियाँ पकड़ी जाती हैं । मछलियों से खाने के अतिरिक्त दवाईयाँ तेल एवं विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनती हैं ।

8.2.3.2 मत्स्य-प्राप्ति के प्रमुख क्षेत्र (Principal Fishing Areas)

भूतल पर सर्वत्र ही सह तटों, उथले एवं गहरे समुद्रों में कुछ न कुछ मछलियाँ पकड़ी जाती रही हैं लेकिन मछलियों का अधिकतम व्यापारिक एवं खाद्य रूप में उत्पादन विष्व के शीतोष्ण एवं शीत कटिबन्धीय प्रदेशों में होता हैं । जो मछलियों जल की सतह पर या उसके निकट रहती हैं, उन्हें पैलेजिक (Pelagic) मछलियाँ कहते हैं - जैसे हेरिंग, सारडीन, मैकरेल आदि तथा जो मछलियाँ सागर तल पर रहती हैं उन्हें तलीय मछलियाँ (Demersal) कहते हैं जैसे -कॉड हैडॉक, हैलिबट, आदि । विश्व में मस्त प्राप्ति के प्रमुख क्षेत्र निम्न है -

1. उत्तरी प्रशान्त महासागरीय तटवर्ती क्षेत्र
2. उत्तरी एटलाँटिक तटीय अमेरिका क्षेत्र
3. उत्तरी पश्चिमी यूरोपियन क्षेत्र : नार्वे और ब्रिटेन मुख्य उत्पादक हैं ।
4. जापानी क्षेत्र : जापान इस क्षेत्र का प्रमुख उत्पादक देश हैं । जापान के बाद चीन और कोरिया प्रमुख उत्पादक हैं ।

बोध प्रश्न - 1

1. क्रिजाइमॉस्की ने मानव के व्यवसायों का विकास कितने चरणों में होना बताया हैं ?

……………………………………………………………………………………………………..

……………………………………………………………………………………………………..

2. मानव का सबसे प्राचीन व्यवसाय कौन सा है?

……………………………………………………………………………………………………..

……………………………………………………………………………………………………..

3. कालाहारी और कांगों में पाई जाने वाली आदिम प्रजाति के नाम बताइये ।

……………………………………………………………………………………………………..

……………………………………………………………………………………………………..

4. बुशमैन किन जानवरों का शिकार करते थे?

……………………………………………………………………………………………………..

……………………………………………………………………………………………………..

5. आस्ट्रेलियाई आदिवासी शिकार के लिये किन हथियारों का प्रयोग करते थे?

……………………………………………………………………………………………………..

……………………………………………………………………………………………………..

6. वन प्रदेशों से वस्तुएँ संचय करने का कार्य किन क्षेत्रों में किया जाता था?

……………………………………………………………………………………………………..

……………………………………………………………………………………………………..

8.3 पशुचारण (Pastoralism)

मनुष्य अपनी प्रारम्भिक अवस्था में केवल आखेट और संग्रहण पर ही जीवन निर्वाह करता था । समय के साथ उसे कुछ जीव जन्तुओं को पालतू बनाने में सफल रहा जो मानव सभ्यता के विकास में युगांतरकारी घटना थी ।

विभिन्न जलवायु की दशाओं में रहने वाले लोगों ने अपने पर्यावरण में पाए जाने वाले उपयोगी जीव- जन्तुओं का चयन किया और उन्हें पालतू बनाया - जैसे घास के मैदानों में गौपशु, टुण्ड्रा प्रदेश में रेंडियर, उष्ण कटिबंधीय मरूस्थलों में ऊँट, एंडीज पर्वत में लामा और अल्पाका, हिमालय में याक, को पालतू बनाया गया । इनके अतिरिक्त पालतू बनाए गए जीव-जन्तुओं में महत्वपूर्ण है -घोड़ा, गधा, भैंस, भेड़- बकरियाँ और कुत्ता । इन जीव-जन्तुओं से मनुष्य को भोजन के लिए दूध और उसके उत्पाद तथा माँस मिलता हैं । पशुपालन दो प्रकार का है -

(i) पारंपरिक चलवासी (खानाबदोशी) पशुचारण (Pastoral Nomadism or Nomadic Herding)

(ii) व्यापारिक पशुचारण (Commercial Livestock Rearing)

8.3.1 पारम्परिक चलवासी पशुचारण (Pastrol Nomadism)

यह एक निर्वाहन क्रिया है जो पशुओं पर निर्भर हैं । पशुओं के चारे और पानी के लिए पशुपालकों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना पड़ता हैं । अत : इन्हें चलवासी (खानाबदोश) कहते हैं । प्रत्येक पशुपालक समुदाय एक सुनिश्चित क्षेत्र में पशुचारण करता हैं । चलवासी पशुपालकों के पशु पूरी तरह से प्राकृतिक वनस्पति पर ही आश्रित रहते है -

1. अपेक्षाकृत अधिक वर्षा वाली तथा कोमल व लम्बी घास वाली घास भूमियों में गोपशु (Cattle) पाले जाते है ।
2. अपेक्षाकृत कम वर्षा वाली छोटी घास -युक्त घास - भूमियों में भेड़ें पाली जाती हैं ।
3. विरल घास वाली त था ऊबड़ -खाबड़ घास भूमियों में बकरियाँ पाली जाती हैं । चलवासी पशुपालकों के प्रमुख पशु - भेड़, बकरियाँ, ऊँट, गोपशु, घोड़े और गधे ।

8.3.1.1 ऋतु प्रवास (Transhumance)

संसार के कुछ भागों में पशुपालक ऋतुओं में परिवर्तन के अनुसार अपने पशुओं के साथ स्थान बदलते रहते हैं । ऋतुओं के अनुसार पशुओं के साथ पशुपालकों के स्थान परिवर्तन को ऋतु प्रवास कहते हैं । उदाहरण - हिमाचली क्षेत्रों (काँगड़ा, कुलू तथा अलकनन्दा की घाटियाँ) में गूजर, बकरवाल, गद्दी और भोटिया, ग्रीष्म ऋतु में पहाड़ों पर चले जाते हैं तथा शीत ऋतु में मैदानों और घाटियों में उतर आते हैं । इसी प्रकार यूरोप में आल्प्स पर्वत पर पशुपालक ग्रीष्म ऋतु में ऊँचे चरागाहों (आल्पस) पर चले जाते हैं तथा शीत ऋतु में घाटियों में उतर आते हैं । टुंड्रा प्रदेश में भी चलवासी रेंडियर पालक ग्रीष्म ऋतु में उत्तर की ओर तथा शीत ऋतु में दक्षिण की ओर चले आते हैं । मसाई (कीनिया और तन्जानिया - अफ्रीका) पशुपालक भी ऋतुओं के अनुसार स्थान बदलते हैं । (चित्र - 3)

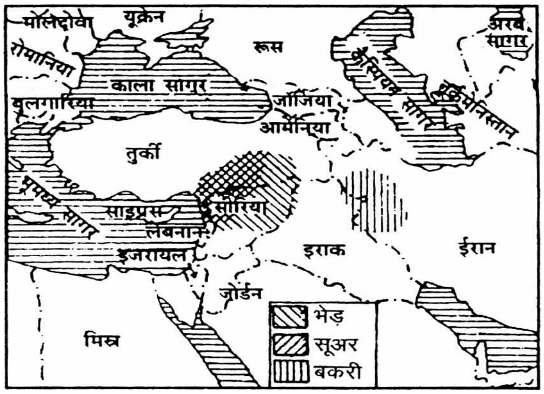

चित्र - 8.3 : पालतू पशुओं के पूर्वजों का संभावित वितरण

8.3.1.2 चलवासी पशुचारण व्यवसाय का विश्व वितरण (World Distribution of Nomadic Herding Occupation)

उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र: भूमध्यरेखीय सघन वन प्रदेश तथा उष्ण रेगिस्तानी प्रदेश के मध्य में स्थित घास युक्त प्रदेश में अनेक आदिम जातियाँ निवास करती हैं । ये अपने पालतू जानवरों

को पास की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर लेकर जाते रहते है । अफ्रीका में भूमध्यरेखीय एवं मरूस्थलीय प्रदेश के मध्य स्थित क्षेत्र में स्थायी एव मोटी सवाना घास अधिक पायी जाती हैं । वृक्ष दूर-दूर केवल एक-दो की संख्या में पाये जाते हैं । सवाना घास से युक्त प्रदेशों को अफ्रीका में सवाना, दक्षिण अमेरिका में कम्पोज, सेल्वा एवं लानोज और आस्ट्रेलिया में कींसलैण्ड प्रदेश के नाम से जाना जाता हैं । इस क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों का प्रमुख व्यवसाय चलवासी पशुचारण हैं । (चित्र- 4)

पश्चिमी एशिया के मरूस्थलीय शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क प्रदेश : इसका विस्तार सऊदी अरब से लेकर मध्य एशिया तक पाया जाता हैं । यहाँ के निवासी अपने पालतू पशुओं को लेकर चारागाह की तलाश में इधर-उधर घूमते रहते हैं । शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क जलवायु के कारण यहां रेगिस्तानी क्षेत्र पाया जाता हैं । केवल मरूद्यानों के पास ही घास पायी जाती हैं । इस प्रदेश में पाये जाने वाले बद्दू जाति के लोग ऊँट, घोड़े, भेड़, बकरियों आदि जानवर पालते हैं । ये लोग ऊँट अधिक संख्या में पालते हैं । इनका मुख्य भोजन जानवरों से प्राप्त होता हैं । अत: इनका जीवन पशुचारण, व्यवसाय पर निर्भर हैं । अरब के बद्दुओं के अतिरिक्त इस व्यवसाय में ईरान के कुर्द, बस्तियॉरी, लूट एव काशमई आदिम जाति के लोग संलग्र हैं ।

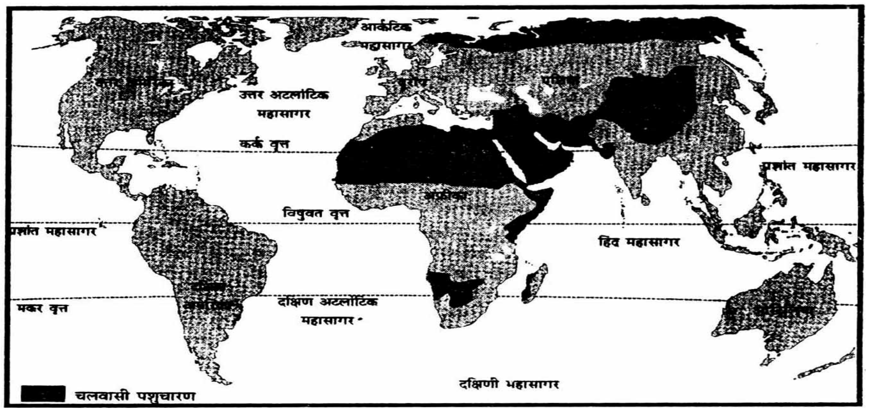

चित्र - 8.4 : चलवासी पशुचारण के क्षेत्र

एशिया के मध्यवर्ती पठारी क्षेत्र- यहाँ निवास करने वाली खिरगीज, कजाक रण कालमुक जाति के लोग अपने पालतू पशुओं के साथ चारागाहों की तलाश में घूमते रहते हैं । ये लोग भेड़, बकरियाँ घोड़े, आदि पशु पालते हैं । खिरगीज लोग मौसमी स्थानान्तरण करते हैं । खिरगीज लोग मौसम के अनुसार स्थानान्तरण करते हैं । इनका भोजन पालतू पशुओं के मॉस एव दूध से ही प्राप्त होता हैं ।

यूरेशिया की टुण्ड्रा जलवायु वाले प्रदेश- यहाँ निवास करने वाली लैंप, सेमोयेद्स, तुंग, चूकची तथा कोरयाक जनजातियों अधिकतर रेनडियर जानवरों को पालती हैं । इनका प्रमुख व्यवसाय रेनडियर को पालना एवं आखेट हैं जो इनके लिए दूध, मांस, स्लेज गाड़ी खींचने आदि के काम आता है ।

अफ्रीका महाद्वीप के पूर्वी भाग - इस क्षेत्र में कीनिया, तँजानिया एवं यूगाण्डा के पूर्वी पठारी भागों में रहने वाली मसाई आदिम जनजाति का प्रमुख व्यवसाय भी चलवासी पशुचारण ही हैं ।

मसाई जाति के लोग गाय, भेड़, बकरियाँ, गधे आदि पशु पालते हैं । चरागाहों की तलाश के लिए ' अपना निवास स्थान बदलते रहते हैं ।

8.3.2 व्यापारिक पशुचारण (Commercial Livestock Rearing)

व्यापारिक पशुचारण की निम्न विशेषताएँ है :

1. आधुनिक युग में पशुपालन केवल वैज्ञानिक तरीके से किया जाता हैं ।
2. पशुओं के लिए विशाल क्षेत्रों में चारे की फसलें और घास उगाई जाती हैं । केवल प्राकृतिक घास पर ही निर्भरता नहीं रहती हैं ।
3. चरागाहों को बाड़ों में बांटने के लिए तार लगा देते हैं । एक बाड़े की घास खत्म होने पर दूसरे, तीसरे आदि बाड़े में पशु चराए जाते हैं ।
4. पशुओं और अन्य जीवों की संख्या चरागाह की क्षमता के अनुसार तय की जाती हैं ।
5. अधिक दूध देने वाली नस्लें जैसे होल्स्टीन, जर्सी, आयरशायर, ब्राउन स्विस आदि गायें पाली जाती हैं ।
6. अधिक माँस देने वाली नस्लें - जैसे हरफोर्ड, अबरडीन, अगंस आदि नस्ल वाली गायें पाली जाती हैं ।
7. अधिक ऊन देने वाली मैरीनों जैसी नस्ल की भेड़ें तथा उत्तम नस्ल के घोड़े पाले जाते हैं ।
8. पशु की नस्ल सुधार, रोग नियन्त्रण और स्वास्थ्य पर विशेष बल दिया जाता हैं ।
9. चारे की खेती, दूध का प्रसंस्करण तथा माँस की डिब्बाबन्दी मशीनों से की जाती है तथा विदेशों को निर्यात किया जाता है ।
10. व्यापारिक पशुचारण मुख्यत : विकसित देशों में किया जाता हैं ।

8.3.2.1 व्यापारिक पशुचारण का वितरण (Distribution of commercial Rearing)

संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, अर्जेटीना, यूनाइटेड किण्गडम, फ्राँस, डेनमार्क, जर्मनी, रूस, आस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैण्ड प्रमुख व्यापारिक पशुचारक देश हैं । (चित्र- 5)

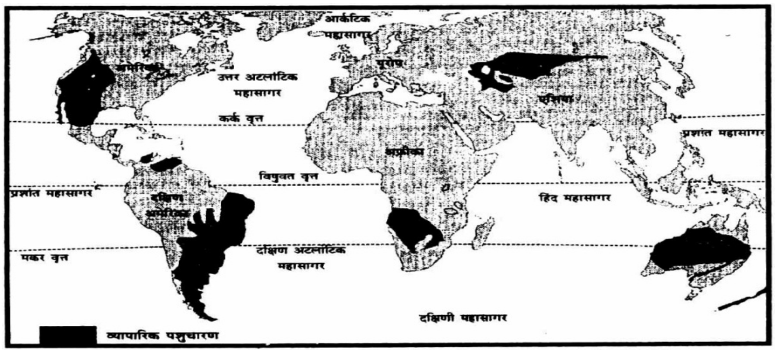

चित्र - 8.5 :व्यापारिक पशुचारण के क्षेत्र

बोध प्रश्न - 2

1. पशुपालन कितने प्रकार का होता है?

 ....

....

2. पारम्परिक चलवासी पशुचारण कैसी क्रिया है?

....

....

3. ऋतु प्रवास कौनसी प्रजातियों के द्‌वारा किया जाता हैं?

....

....

4. सवाना घास के प्रदेशों 'को किन 'नामों से जाना जाता हैं ?'

....

....

5. सवाना घास के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय 'कौनसा हैं ?'

....

....

6. व्यापारिक पशुचारण की कोई दो विशेषताएँ बताइए ?

....

....

8.4 कृषि (Agriculture)

संसार में जलवायु, भूमि, मृदा तथा सामाजिक -सांस्कृतिक -आर्थिक और राजनीतिक विविधताएँ पाई जाती हैं । इन्हीं विविधताओं के अनुरूप संसार के विभिन्न प्रदेशों के लोगों ने विभिन्न प्रकार की कृषि पद्धतियों अपनाई हैं । वे स्थानीय दशाओं और सुविधाओं तथा कृषि पद्धतियों के अनुसार किसान विभिन्न प्रकार की फसलें उगाता हैं एवं विविध प्रकार के पशुओं का पालन करता हैं । इन्हीं विविधताओं के आधार पर संसार की कृषि पद्धतियों को निम्न वर्गो में विभाजित किया गया हैं ।

8.4.1 निर्वाह कृषि (Subsistence Agriculture)

यह वह कृषि पद्धति है जिसमें सभी उत्पाद बिक्री के लिए न होकर कृषक परिवार के उपयोग के लिए होते है । इस कृषि की मुख्य विशेषता अधिशेष (Surplus) का लगभग नहीं होना है । किसान अपनी मानव के प्रमुख व्यवसाय : भोजन संग्रहण, पशुचारण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सभी प्रकार के अनाज, दलहन, तिलहन, सन, गन्ना आदि उगाता है । किसान मुख्यत :फसलों पर निर्भर रहता है, लेकिन कुछ दुधारु पशु' को भी पालता है । (चित्र - 8.6)

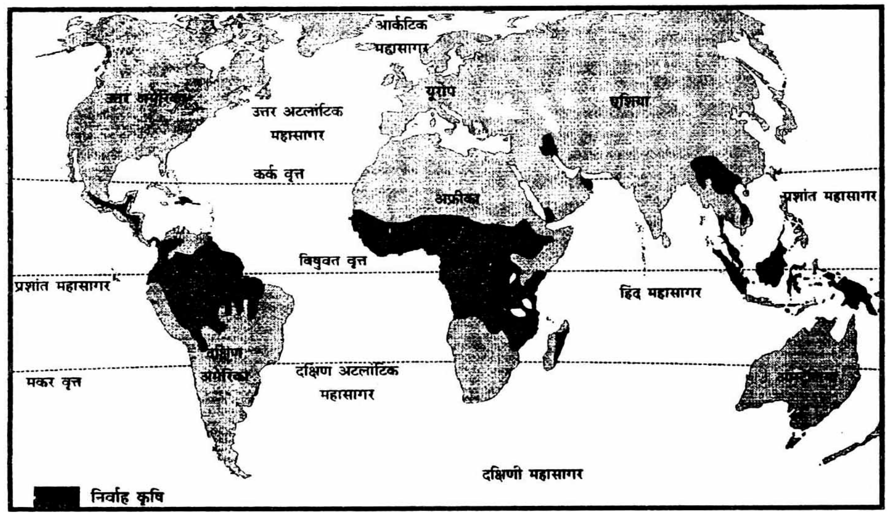

चित्र- 8.6 : आदिम निर्वाह कृषि के क्षेत्र

निर्वाह कृषि दो प्रकार की होती है : आदिम निर्वाह कृषि (स्थानान्तरी कृषि) और गहन निर्वाह कृषि । कृषि का यह प्राचीनतम रूप हैं । मनुष्य ने सर्वप्रथम कृषि का यही तरीका अपनाया था।

8.4.1.1 स्थानान्तरी कृषि (shifting Agriculture)

शुष्क ऋतु में भूमि के एक छोटे-से भाग से पेड़-पोधों और झाड़ियों को काटकर सूखने के लिए छोड़ देते है । इसी दौरान कृषक अपने आवास के लिए घास-फूस की झोपड़ी बना लेता हैं । झाड़-झंखाड़ों को सूखने पर उन्हें जला दिया जाता हैं । जली वनस्पति की राख खाद का काम करती हैं । वर्षा होने पर लकड़ी के खूटे या खुरपे से बीज बो दिए जाते हैं ।

स्थानान्तरी कृषि अधिकतर अधिक वर्षा वाले उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में की जाती हैं । फसलों के उगाने तथा निक्षालन क्रिया से मिट्टी शीघ्र ही अनुपजाऊ हो जाती हैं । अत : कृषक तीन चार सालों के बाद दूसरे खेत की तलाश में चल पड़ते हैं । इस प्रकार छोड़े हुए खेत में 20 से 25 सालों बाद पुन : खेती की जाती हैं । इसे फसल चक्र नहीं अपितु खेत चक्र कहा जाता है ।

स्थानान्तरी कृषि की विशेषताएँ : स्थानान्तरी कृषक पहाड़ी ढालों पर 0. 5 से 1. 00 हेक्टेयर क्षेत्र की वनस्पति को काटकर, सुखाकर जला देता हैं । कृषि के इस प्रकार में वनस्पति के काटने और जलाने के कारण इसे **काटो और जलाओ कृषि (Slash and Burn Agriculture)** भी कहते हैं । स्थानान्तरी कृषि में लकड़ी के खूंटे और खुरपे के अलावा और किसी उपकरण का उपयोग नहीं होता हैं । हल नहीं वलाया जाता । पशुओं की सहायता नहीं ली जाती । स्थानान्तरी कृषि में मुख्य रूप से मक्का, ज्वार-बाजरा, पहाड़ी धान, टैपियाकों, कैसावा, रतालू केला आदि उगाए जाते हैं । खाद और उर्वरकों का उपयोग न करने के कारण तथा निक्षालन क्रिया से मिट्टी जल्दी ही अनुपजाऊ हो जाती हैं । अत : एक खेत मे तीन - चार साल से अधिक की अवधि मे खेती नहीं होती । यह कृषि उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों मे आदिवासियों द्वारा की जाती हैं । ये लोग खाद्यान की कमी को संग्रहण, आखेट और मछली पकड़कर पूरा करते हैं । स्थानान्तरी कृषि में प्रति हैक्टेयर उपज बहुत कम होती हैं । अत : काफी बड़ा क्षेत्र भी थोड़े से

लोगों का ही भरण-पोषण कर पाता हैं । अत : इसकी वहन क्षमता बहुत कम हैं । स्थानान्तरी कृषि में प्रति इकाई उपज बढ़ाने के आधुनिक उपाय काम में नहीं लाए जा सकते ।

अवगुण : वनों का हास, मृदा का अनुपजाऊ होना तथा मृदा अपरदन होना स्थानान्तरी कृषि से की प्रमुख कमियाँ हैं ।

8.4.1.2 स्थानबद्ध कृषि (Sedentary Agriculture)

स्थानान्तरी कृषि के बाद अनुकूल जलवायु एवं उपजाऊ मिट्टी वाले क्षेत्रों में स्थायी खेतों तथा गाँवों के साथ स्थायी कृषि प्रणाली का उदय हुआ । उपजाऊ नदी घाटियों, जैसे - दजला- सिंधु, हुआँग ही, फरात, नील तथा चांग जिआँग में लगभग 6 हजार वर्ष पूर्व स्थायी कृषि के आधार पर महान सभ्यताओं का निर्माण हुआ । स्थानबद्ध कृषि स्थानान्तरी कृषि के बिल्कुल विपरीत होती हैं । इसमें कृषक एक ही स्थान पर स्थायी रूप से कृषि करता हैं । इस पद्धति में एक परिवार अथवा कई परिवारों का समूह एक स्थान पर स्थायी रूप से फसलें उगाते हैं । स्थानबद्ध कृषि की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है : -

1. कृषि एक ही स्थान पर की जाती है तथा कृषक स्थायी जीवन व्यतीत करता है ।
2. फसल चक्र पद्धति का प्रयोग किया जाता है जिससे मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बनी रही ।
3. फसलों की देखभाल भलीभाँति की जाती है ।
4. परती भूमि (Fallow Land) रखा जाती है ।
5. पशुपालन इस कृषि का अभिन्न अंग है ।
6. पर्यावरण की स्थिति तथा वर्षाकाल की अवधि के अनुसार एक से अधिक फसलें उगाई जाती

8.4.2 गहन निर्वाह कृषि (Intensive Subsistence Agriculture)

संसार के अधिकतर भागों में कृषि की प्रचलित पद्धति निर्वाह कृषि हैं । संसार की आधी से अधिक जनसंख्या अर्थात् 3.35 अरब लोग इस प्रकार की कृषि में लगे हैं । यह खेती ही नहीं अपितु एक जीवनशैली हैं । गहन निर्वाह कृषि मुख्यत : दो प्रकार की होती है : -

1. चावल प्रधान आर्द्र गहन निर्वाह कृषि
2. चावल रहित अन्य फसल प्रधान गहन निर्वाह कृषक

8.4. 2.1 चावल प्रधान आर्द्र गहन निर्वाह कृषि (Intensive Subsistence Agriculture Dominated By Wet Paddy Cultivation)

यह कृषि पद्धति संसार के घने बसे क्षेत्रों में प्रचलित हैं । यहाँ भूमि पर जनसंख्या का दबाव बहुत अधिक हैं । अत : प्रत्येक इंच भूमि पर फसलें उगाई जाती हैं । भूमि के छोटे से टुकड़े पर काफी बड़ी संख्या में लोग खेती में लगे होते हैं, कृषि के इस क्षेत्र में यह प्रमुख आर्थिक क्रियाकलाप है, लेकिन उत्पादन निर्वाह स्तर पर ही रहता हैं । बिक्री के लिए अधिशेष बहुत ही कम बचता है । (चित्र- 7)

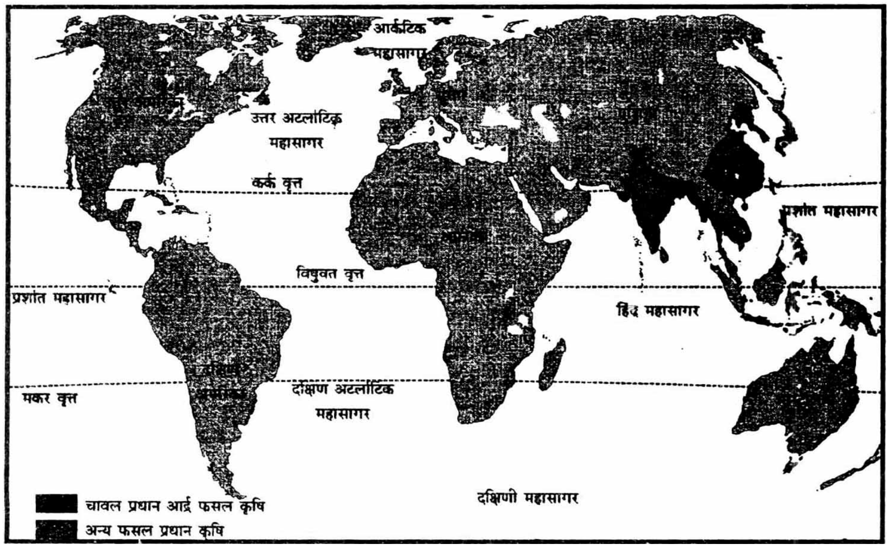

चित्र - 8.7 : गहन निर्वाह कृषि के क्षेत्र

मुख्य क्षेत्र : गहन निर्वाह कृषि मानसूनी जलवायु वाले दक्षिण एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया के प्रदेश में ही प्रचलित हैं । इस कृषि पद्धति क्षेत्र में भारत, चीन, बांग्लादेश, श्रीलंका, म्यांमार, थाईलैण्ड, लाओस, वियतनाम, इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपाइन्स, जापान और कोरिया देश मुख्य रूप से उल्लेखनीय है ।

उद्देश्य : इस कृषि पद्धति का मुख्य उद्देश्य भूमि का सघन और अनेक प्रकार से उपयोग करके अधिक से अधिक उत्पादन करना हैं । इस कृषि पद्धति में प्रति व्यक्ति उत्पादन की तुलना में, प्रति हैक्टेयर उत्पादन पर अधिक जोर दिया जाता हैं ।

मुख्य विशेषताएँ: -

1. चावल की प्रधानता
2. जनसंख्या का दबाव और प्रति व्यक्ति भूमि की निम्न उपलब्धता
3. छोटे और बिखरे खेत
4. पुराने औजार और शारीरिक श्रम
5. पूंजी निवेश कम
6. पशु शक्ति प्रधानता
7. कृषि निर्भरता
8. प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन
9. मानसूनी वर्षा पर निर्भरता
10. कृषि की आधुनिक तकनीक

अवगुण :

1. भूमि सुधार में कमी
2. विपणन व्यवस्था में दोष ।

8.4.2.2 चावल रहित अन्य फसल प्रधान गहन निर्वाह कृषि (Intensive Subsistence Agriculture Dominated By Crops Other Than Paddy)

भौगोलिक कारकों में भिन्नता : मानसूनी प्रदेशों- में वर्षा की मात्रा तथा तापमान सर्वत्र एक समान नहीं रहता हैं । इसके अतिरिक्त इतने बड़े प्रदेश में उच्चावच, मृदा तथा अन्य भौगोलिक कारकों में भी पर्याप्त भिन्नता पाई जाती हैं । इन्ही भौगोलिक भिन्नताओं के कारण सब क्षेत्रों

में चावल नहीं पैदा किया जा सकता । में उत्पादित प्रमुख अनाज गेहूँ सोयाबीन, जी और सोरघम प्रमुख फसलें हैं ।

मुख्य क्षेत्र : मंचूरिया (चीन का उत्तरी प्रदेश), उत्तरी कोरिया उत्तरी जापान है । भारत में गेहूं मुख्य रूप से गंगा -सिंधु के मैदानी भागों में पैदा किया जाता हैं । ज्वार, बाजरा और रागी (Millets) भारत के शुष्क पश्चिमी क्षेत्र और दक्षिण भारत में उगाया जाता हैं ।

मुख्य विशेषताएँ : चावल प्रधान कृषि के विपरीत सिंचाई इस पद्धति की मुख्य विशेषता है तथा चावल प्रधान गहन निर्वाह कृषि की अन्य सभी विशेषताएँ इस पद्धति पर भी लागू होती हैं ।

8.4.3 विस्तृत व्यापारिक अन्न कृषि

मध्य अक्षांशों के घास के मैदानों में अन्न का उत्पादन व्यापारिक स्तर पर किया जाता हैं । मुख्य फसल गेहूँ हैं । मक्का, जी, जई और राई भी पैदा किए जाते हैं । (चित्र - 8. 8 व 8.9)

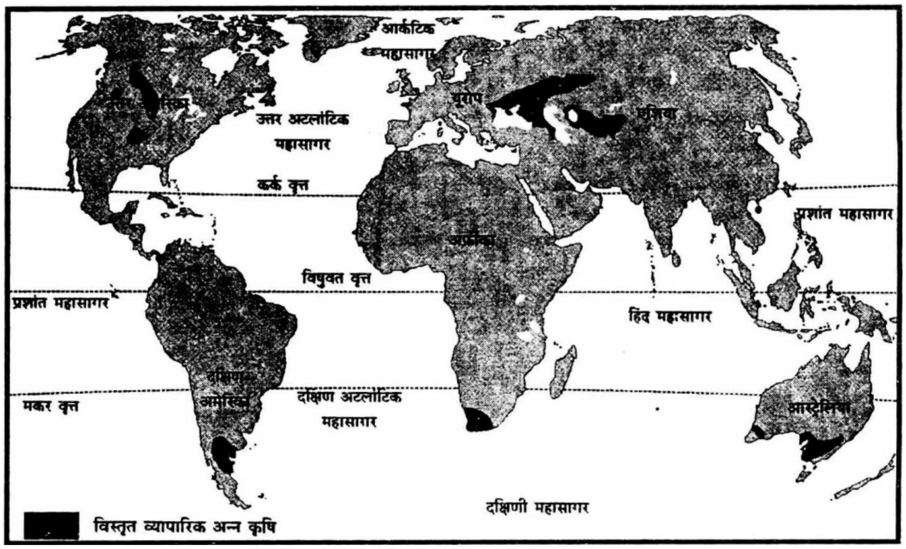

चित्र - 8.8 : विस्तृत व्यापारिक अन्न कृषि के क्षेत्र

चित्र - 8. 9 में कृषि को प्रभावित करने वाले तत्वों के समुचित प्रभाव को दर्शाया गया है । स्पष्ट है कि तेल, ताड़, कोको, रबर, कॉफी, गन्ना, जूट, मूँगफली, कपास, चाय, चावल आदि मुख्यत : उष्ण कटिबन्धीय इलाकों में उगाई जाने वाली फसलें हैं । दूसरी ओर शीतोष्ण कटिबन्धीय फसलों में तोरिया, मानव के प्रमुख व्यवसाय : भोजन संग्रहण, पशुचारण अलसी, चुकन्दर, सूर्यमुखी, गेहूँ राई, जई और आलू उगाई जाती हैं । फसलों का यह स्थानिक वितरण मुख्यत : तापमान पर निर्भर करता है । उष्ण कटिबन्धीय फसलों को उच्च तापमान की आवश्यकता होती हैं जबकि शीतोष्ण कटिबन्धीय फसलें निम्न तापमान में भी उग आती हैं । कुछ फसलें विस्तृत क्षेत्र में पैदा की जाती हैं क्योंकि वे तापमान के अधिक परिवर्तनों को सहन कर सकती हैं । कपास, मक्का, चावल, गेहूँ, आलू आदि ऐसी ही फसलें हैं । कुछ अन्य फसलें पतली पट्टी में ही उगाई जा सकती हैं क्योंकि इन फसलों की वृद्धि के लिये विशिष्ट तापमान की आवश्यकता होती है । तेल, ताड़, कोको, रबर, कॉफी, जूट आदि इस श्रेणी की फसलें हैं ।

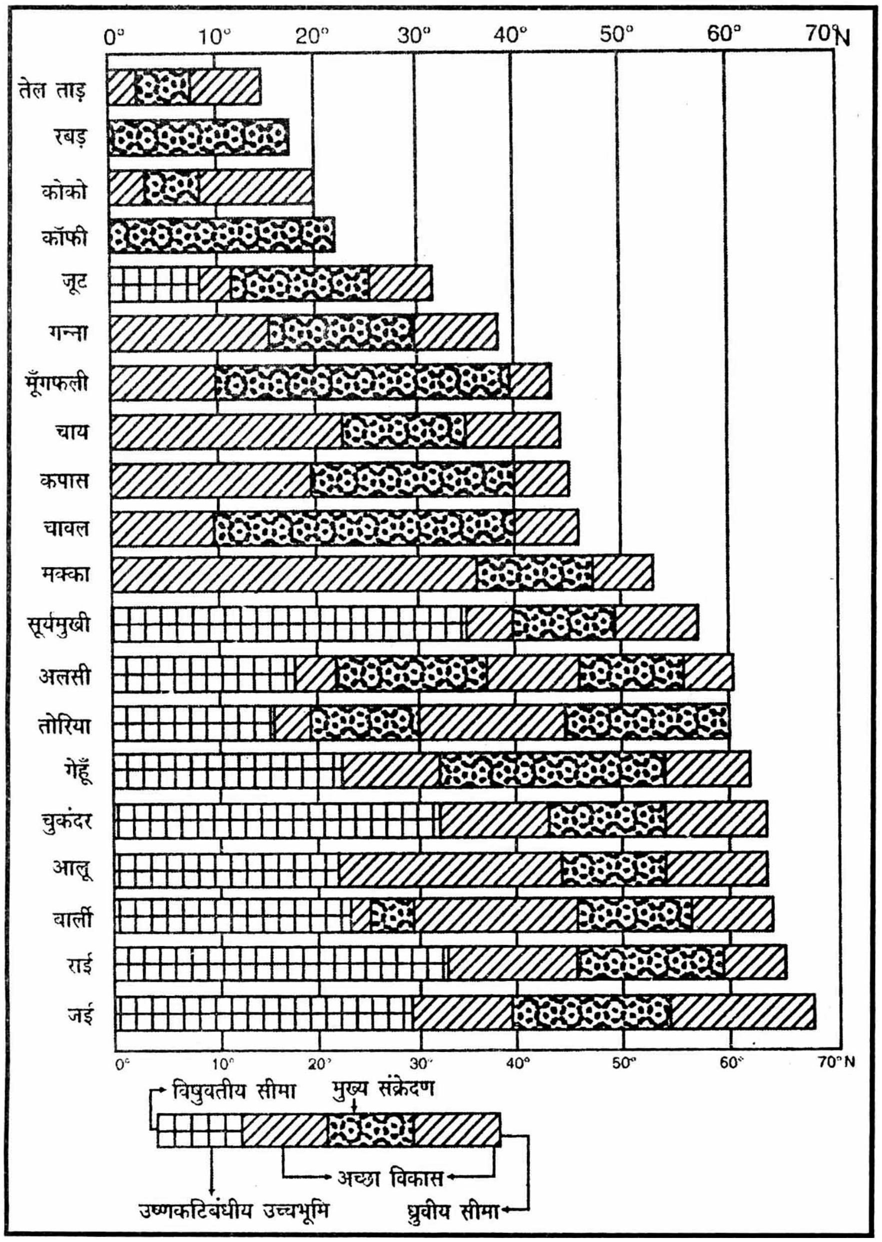

चित्र-8.9 : प्रमुख फसलों का अक्षांशीय विस्तार

कृषि क्षेत्र : संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और कनाडा के प्रेयरी घास के मैदान, प्लेन, पश्चिमी यूरोप, पम्पास अर्जेन्टाइना (दक्षिणी अमेरिका), आस्ट्रेलिया के दक्षिणी भाग (डाउन्स), दक्षिण अफ्रीका के वेल्स, न्यूजीलैण्ड के कैन्टरबरी, भारत के पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर में व्यापारिक अन्न कृषि की जाती है ।

मशीनीकरण : फार्मों का आकार बहुत बड़ा होता हैं । उत्पादन प्रति हैक्टेयर तो कम होता है, लेकिन प्रति व्यक्ति ज्यादा होता हैं क्योंकि इतने बड़े फॉर्म पर एक दो व्यक्ति ही काम करते हैं । इस प्रकार की कृषि में अधिकतर कार्य मशीनों से किया जाता है ।

8.4.4 उष्ण कटिबन्ध में रोपण कृषि (Plantation Agriculture)

उष्ण कटिबन्ध में रोपण कृषि यूरोपवासियों की देन हैं । इसका विकास उपनिवेश काल में हुआ था । इस कृषि पद्धति का विकास यूरोपवासियों ने उष्ण कटिबन्धीय कृषि उत्पादों को प्राप्त करने के लिए किया था ।

रोपण कृषि की विशेषताएँ : रोपण कृषि के फार्म विशाल होते हैं । इन्हें विरल जनसंख्या वाले क्षेत्रों में स्थापित किया जाता हैं । फार्म 5 से 40 हेक्टेयर के होते हैं । रोपण कृषि में भौगोलिक दशाओं के आधार पर एक फसल की खेती की जाती है, काँफी, चाय, केला, नारियल, अन्नानास, गन्ना, कपास, रबड़ रोपण कृषि में उगाई जाने वाली फसलें हैं ।

(i) रोपण कृषि के कार्यो के लिए काफी श्रमिकों की जरूरत होती हैं । स्थानीय श्रमिकों के न मिलने पर देश के अन्य भागों या विदेशों से भी श्रमिक बुलाए जाते हैं ।

(ii) रोपण कृषि फार्मों की स्थापना और चलाने के लिए भारी पूँजी की आवश्यकता होती है ।

(iii) रोपण कृषि में कृषि की आधुनिकतम और वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग किया जाता है । उर्वरक, कीटनाशक, उत्तम बीज, कृषि यंत्र, अन्य मशीनें आदि विदेशों से आयात करनी पड़ती हैं ।

(iv) रोपण कृषि में सभी फसलें व्यापार के लिए उगाई जाती हैं । कृषि उत्पादों को पूर्ण रूप से या आशिक रूप से फार्मों पर ही संसाधित किया जाता हैं । कभी-कभी डिब्बाबन्दी भी फॉर्म पर ही होती है ।

(v) रोपण कृषि ने अनेक देशों की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया हैं । मलेशिया, ब्राजील, कोस्टारिका और श्रीलंका की अर्थव्यवस्था रोपण कृषि के उत्पादों के निर्यात पर आधारित है।

8.4.5 मिश्रित कृषि (Mixed Farming)

यह कृषि का वह प्रकार है जिसमें फसलें उगाने और पशुपालन को समान महत्व दिया जाता है । मिश्रित कृषि में अधिक से अधिक उत्पादन, विविधता और फसलों के चयन के लचीलेपन पर विशेष बल दिया जाता है । यूरोप में धरातल के नीचे चुकन्दर, आलू आदि बोए जाते है तथा धरातल के ऊपर जी, जई और राई उगाई जाती हैं । इन फसलों के कटने के तुरन्त बाद कम अवधि में जल्दी तैयार होने वाली चारे की फसल बो दी जाती है इसे अंतर्वती फसल (Catch Crops) कहते हैं ।

मिश्रित कृषि की विशेषताएँ : यह कृषि की अत्यंत गहन पद्धति हैं । किसान पूरे वर्ष फसल उत्पादन मानव के प्रमुख व्यवसाय : भोजन संग्रहण, पशुचारण और पशुपालन में व्यस्त रहता हैं । (।चित्र - 10)

मिश्रित कृषि में अत्याधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग होता हैं । किसान रासायनिक उर्वरकों को, संकर बीजों और सिंचाई का विवेकपूर्ण और सक्षम उपयोग करता हैं । आधुनिक मशीनें और वैज्ञानिक फसल चक्र इसकी अन्य विशेषता हैं ।

इस प्रकार की कृषि में किसान सुरक्षित रहता हैं । आय के विविध स्त्रोत उसे आर्थिक हानि से बचा लेते है ।

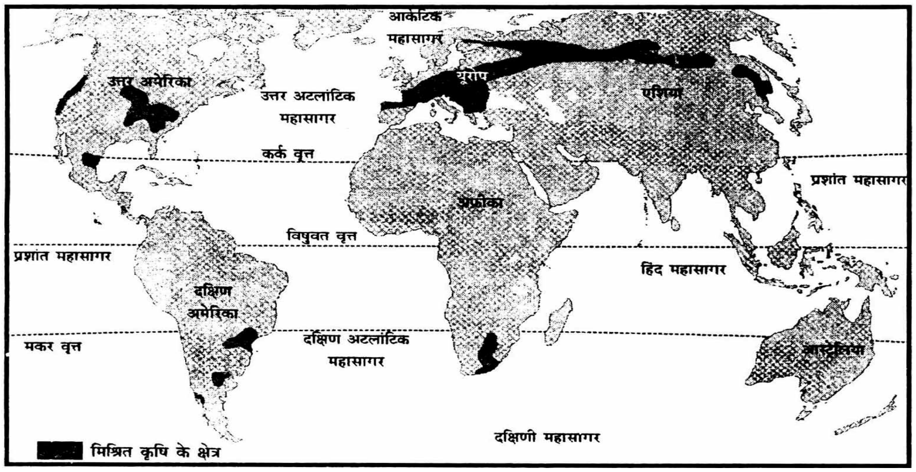

चित्र - 8.10 : मिश्रित कृषि के क्षेत्र

मिश्रित कृषि के क्षेत्र : पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, अर्जेन्टाइना, स्वतंत्र राष्ट्रों का राष्ट्र कुल (पूर्व सोवियत संघ) तथा पश्चिमी यूरोप (फ्रांस, जर्मनी, यूनाइटेड किण्गडम, नीदरलैण्ड, आयरलैण्ड) मिश्रित कृषि के प्रमुख क्षेत्र हैं ।

8.4.6 डेयरी कृषि (Dairy Farming)

डेयरी कृषि मुख्य रूप से दूध और इसके उत्पादों (पनीर, मक्खन, घी आदि) से सम्बन्धित हैं । भारत में श्वेत क्रान्ति के माध्यम से दूध का उत्पादन कई गुणा बढ़ा हैं । यही कारण है कि बड़े-बड़े शहरों में अब दूध सुलभ हैं । (चित्र - 11)

डेयरी कृषि विकास के अनुकूल कारक: -

(i) हरी-भरी घास वाले विस्तृत चरागाह,

(ii) मैदानी क्षेत्र या सामान्य तरंगित क्षेत्र,

(iii) सामान्य तापमान,

(iv) उपभोग के केन्द्र

(v) विपणन और निर्यात की सुविधा ।

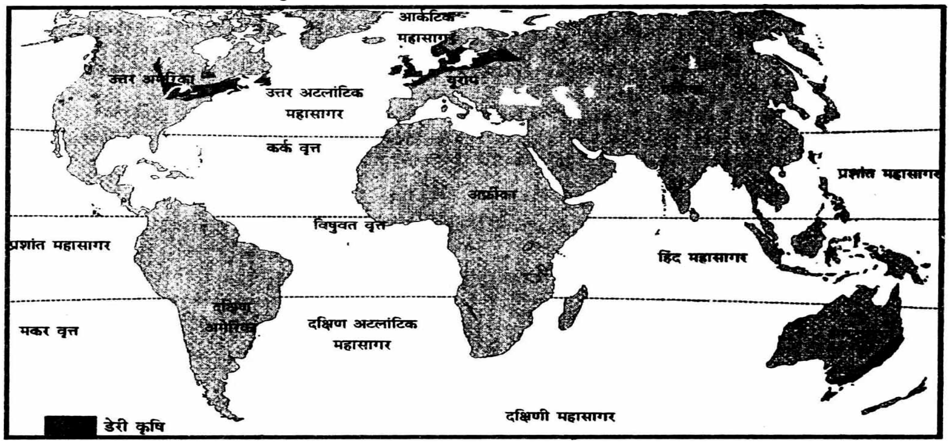

चित्र- 8.11 : डेयरी कृषि के क्षेत्र

डेयरी कृषि की विषेशताएँ: -

(i) फसलों की तुलना में अधिक कुशल और सक्षम श्रमिक चाहिए ।

(ii) डेयरी कृषि में रात-दिन वर्ष भर काम ही काम रहता है ।

(iii) दुधारू पशुओं का लालन-पालन, दुहने का काम, डेयरी उत्पाद बनाना, सभी कुछ वैज्ञानिक रीति से होना चाहिए।

(iv) आधुनिक डेयरी कृषि फॉर्म अधुनातन मशीनों से सुसज्जित ।

(v) भारी पूँजी की जरूरत ।

(vi) गौ पशु प्रजनन, उनके स्वास्थ्य और पशु चिकित्सा सुविधाओं पर अधिक ध्यान देना जरूरी।

(vii) दूध दुहने, पशुओं की देखभाल आदि कामों के लिए श्रमिकों की बहुत जरूरत होती है ।

(viii) नगरीय और औद्योगिक क्षेत्रों के निकट स्थिति- क्षेत्रों में ही रु और इसके उत्पादों की भारी मांग होती हैं । अत: इनके आसपास डेयरी फार्म चलाए जाते हैं ।

(ix) परिवहन, प्रशीतन, पाश्चुरीकरण और परिरक्षण की अन्य प्रक्रियाओं की सुविधा आवश्यक ।

प्रमुख क्षेत्र : उत्तर पश्चिमी यूरोप, इसमें डेनमार्क, हालैण्ड और ब्रिटेन प्रमुख देश हैं ।

(1) उत्तर अमेरिकी प्रदेश: संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा ।

(2) ओंशेनिया प्रदेश : आस्ट्रेलिया के दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र, तस्मानिया और न्यूजीलैण्ड ।

(3) भारत के गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, कर्नाटक और तमिलनाडु ।

8.4.7 भूमध्य सागरीय कृषि (Mediteranean Agriculture)

भूमध्य सागरीय कृषि बहुआयामी और अनोखी कृषि पद्धति हैं । यहाँ की पारंपरिक और व्यापारिक कृषि पर जलवायु का प्रभाव बहुत अधिक पड़ा हैं । भूमध्य सागरीय कृषि में अनाज और फल, उत्पादन, बागान, उद्यान कृषि और फूलों की खेती शामिल हैं । (चित्र - 12)

स्थिति : (i) कैलीफोर्निया (से रा. अमेरिका); (ii) मध्यचिली; (iii) दक्षिण अफ्रीका का दक्षिणी भाग; (iv); दक्षिणी आस्ट्रेलिया में मर्रे -डार्लिंग द्रोणी का निचला भाग ।

जलवायु : यहाँ शीत ऋतु में वर्षा होती है तथा ग्रीष्म ऋतु सूखी रहती हैं । औसत वार्षिक वर्षा 50 सेमी. तथा तापान्तर 100 से. लेकर 300 से. ग्रे. तक रहता हैं ।

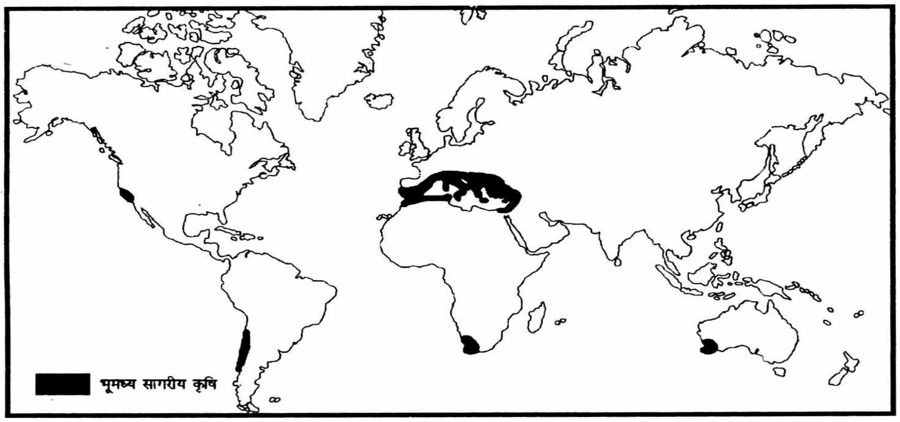

चित्र- 8.12 - भूमध्य सागरीय कृषि के क्षेत्र

कृषि पद्धतियों

(i) अनाज कृषि ।

(ii) बागानी कृषि ।

(iii) पशुपालन और उद्यान कृषि ।

विशेषताएँ : भूमध्य सागरीय कृषि की निम्नलिखित विशेषताएँ है : -

1. कृषि बहुआयामी हैं । अनाज उत्पादन व बागानी फसलें तथा पशुपालन इस कृषि पद्धति के प्रमुख अंग है ।
2. इस कृषि में उद्यान कृषि और सब्जी उत्पादन शामिल हैं ।
3. शुष्क कृषि भी की जाती हैं । गर्मी के महीनों में अंजीर और जैतून पैदा होते है ।
4. अंगूरी शराब यहाँ की विशेषता है ।
5. पशुपालन भी आर्थिक दृष्टि से बहुत लाभकारी है ।

8.4.8 विपणन उद्यान कृषि (Market Gardening and Horticulture)

यह महंगी सब्जियों, फलों और फूलों की खेती हैं । इसके सभी उत्पाद नगरीय क्षेत्रों के लिए होते हैं । इस कृषि की निम्न विशेषताएँ हैं : -

(i) फॉर्म के आकार छोटे होते हैं । (ii) फॉर्म शहरों के निकट ऐसे क्षेत्रों में होते है जो तीव्रगामी परिवहन से जुड़े होते हैं । (iii) इसके उत्पाद उच्च आय वर्ग के शहरी लोगों के लिए होते हैं । (iv) यह कृषि श्रम और पूँजी प्रधान दोनों ही हैं । (v) कीमती फूलों जैसे तुलिप की खेती इसकी अन्य खास विशेषता हैं । (vi) ट्रक फार्मिग (सब्जियों की खेती) इस खेती के लिए फॉर्म ऐसे क्षेत्रों में स्थापित किए जाते हैं, जहाँ से एक रात में उत्पाद ट्रकों द्वारा बाजार में भेजे जा सके । इसलिए सब्जियों की ऐसी खेती को ट्रक फॉर्मिंग कहते हैं । इस खेती में किसानों ने सब्जियों के उगाने, उनका रग-रूप, आकार-प्रकार आदि सही रखने में विशेषज्ञता और कौशल विकसित कर लिए हैं । (vii) फैक्टरी फार्मिंग: - इसमें किसान मुख्य रूप से गौपशुओं और मुर्गी का पालन करता हैं । नस्लों का चुनाव और वैज्ञानिक प्रजनन इस कृषि की अन्य विशेषता हैं । (viii) भारी पूंजी निवेश ।

कृषि क्षेत्रों का स्थिति : विपणन उद्यान कृषि के प्रमुख क्षेत्र हैं : -

(i) उत्तर पश्चिमी यूरोप के औद्योगिक प्रदेश ।

(ii) संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तर पूर्वी प्रदेश ।

(iii) भूमध्यसागरीय प्रदेश ।

(iv) उत्तर अमेरिका और पश्चिमी यूरोप में फैक्ट्री फॉर्मिंग ।

8.4.9 सहकारी कृषि (Cooperative Farming)

सक्षम और लाभकारी खेती के लिए किसानों का एक समूह स्वेच्छा से अपने संसाधनों (भूमि, हल, बैल आदि) को एक जगह मिलाकर एक सहकारी समिति बना लेते हैं । इसमें व्यक्तिगत फार्म ज्यों के त्यों रहते हैं, केवल खेती के काम सहकारी भावना और प्रेरणा से किए जाते हैं ।

सहकारी कृषि के लाभ

1. सहकारी समितियां खेती का सामान आदि खरीदने में किसानों की सहायता करती हैं ।
2. उत्पादों को उचित ऊँची कीमतों पर बेचने में सहायता करती है ।
3. उत्पादों का प्रसंस्करण सस्ते में करवाने में मदद करती है ।

सहकारी कृषि के क्षेत्र

सहकारिता आन्दोलन का जन्म लगभग 100 वर्ष पहले पश्चिमी यूरोप के देशों में हुआ था तथा सफल भी रहा था । सहकारी कृषि के लिए डेनमार्क, नीदरलैण्ड, बेल्जियम, स्वीडन । इटली आदि के नाम उल्लेखनीय है ।

डेनमार्क में सहकारिता आन्दोलन इतना सफल हुआ कि लगभग प्रत्येक किसान अब सहकारी समिति का सदस्य बन गया हैं ।

8.4.10 सामूहिक कृषि (Collective Farming)

सोवियत संघ के सामूहिक फार्म (जिन्हें कोलखोज के नाम से जाना जाता था) अब इतिहास की विषय- वस्तु बन गए हैं और आजकल वहाँ ऐसे कोई फार्म नहीं हैं । ऐसे फार्मों की भूमि या तो किसानों में बांट दी गई है या खेती के लिये दूसरी पद्धतियाँ अपना ली गई है । इस ऐतिहासिक कृषि पद्धति को मात्र अध्ययन की दृष्टि से यहाँ प्रस्तुत किया गया हैं ।

उद्देश्य : उत्पादन के साधनों का सामाजिक स्वामित्व तथा सामूहिक श्रम होता था । पूर्व सोवियत संघ में दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहिक फार्म या कोलखोज की स्थापना हुई थी ।

(i) पुरानी पद्धतियों की अक्षमताएँ । (ii) आत्मनिर्भरता के लिए कृषि उत्पादन को बढाना।

सामुहिक फॉर्म की कार्यप्रणाली :

(i) किसान भूमि, पशु और श्रम के संसाधनों को एक साथ मिला लेते थे ।

(ii) सरकार उत्पादन के वार्षिक लक्ष्य निर्धारित करती थी ।

(iii) उत्पाद सरकार द्वारा तय कीमतों पर ही बेचने पड़ते थे ।

(iv) लक्ष्य से अधिक उत्पादन सदस्यों में वितरित होता था या बाजार में बेच दिया जाता था ।

(v) किसानों को उत्पादन मशीनों के किराए पर टैक्स देना पड़ता था ।

(vi) अच्छे काम के लिए नकद या वस्तुओं में पुरस्कार दिए जाते थे ।

(vii) सोवियत संघ के बिखरने के बाद इन सामूहिक फॉर्मों का रूप परिवर्तन कर दिया गया है ।

बोध प्रश्न- 5

1. विश्व की पाँच खाद्य फसलों के नाम बताइये । इनमें से किस खाद्य फसल की उपज सर्वाधिक है? रोपण फसलों के नाम बताइये?

   ....

   ....

2. किस देश में सहकारी खेती का प्रयोग सबसे अधिक सफल रहा है?

   ....

   ....

3. किस देश में विस्तृत व्यापारी अन्न कृषि प्रचलित है?

....

....

4. चाय के पौधे पहाड़ी ढलानों पर ही क्यों लगाये जाते हैं?

....

....

5. गहन निर्वाह कृषि के दो प्रकार कौन से हैं?

....

....

6. मिश्रित कृषि के दो अंग कौन से हैं?

....

....

7. डेयरी कृषि के मुख्य उत्पाद बताइये?

....

....

8.5 सारांश (Summary)

मनुष्य के द्वारा अपने जीवन निर्वाह हेतु की जाने वाली सभी आर्थिक क्रियाएँ व्यवसाय कहलाती हैं । आर्थिक क्रियाओं का संचालन मनुष्य अपने कौशल एवं तकनीकी ज्ञान के आधार पर करता हैं । वनीय क्षेत्रों में लकड़ी काटना एव एकत्रीकरण करना, मरूस्थली क्षेत्रों में घुमक्कड़ जीवन के साथ पशुचारण एवं शिकार करना, तटीय क्षेत्रों में मछली पकड़ना, समतल एवं उपजाऊ नदी घाटियों में कृषि करना आदि व्यवसाय क्षेत्र विशेष की सुविधाओं के अनुसार करता हैं । इस प्रकार मानव व्यवसायों का निर्धारण संसाधनों की उपलब्धता, प्राकृतिक दशाओं, जलवायु, शिक्षा, पूँजी, तकनीकी ज्ञान आदि भौगोलिक कारकों के द्वारा होता हैं ।

आदिमकाल में मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति केवल वनों और जंगली जानवरों के शिकार द्वारा ही करता था । धीरे - धीरे मनुष्य के बौद्धिक विकास के कारण वह शिकारी जानवरों को पालने लगा जिससे उसे दूध आदि प्राप्त हुए । जंगली पौधों के उगने की प्रक्रिया से वह अवगत होकर कृषि कार्य करने लगा । आरम्भ में वह घुमक्कड़ जीवन व्यतीत करता था लेकिन कृषि एवं पशुपालन के बाद वह एक जगह पारिवारिक समूह के रूप में रहने लगा ।

भोजन एकत्रण करने का व्यवसाय प्रमुख रूप से निर्जन वनीय क्षेत्रों में रहने वाली आदिम जनजातियों में पाया जाता हैं । विश्व के विभिन्न भागों में रहने वाले लोग किसी भी वस्तु विशेष का उत्पादन नहीं करते हैं बल्कि अपने जीवन निर्वाह हेतु वनीय वस्तुओं के एकत्रीकरण पर आश्रित होते हें । वनीय क्षेत्रों में वन उपजों को एकत्रित करने के अतिरिक्त जंगली जानवरों का शिकार करना, मछली पकड़ना आदि करी भी किए जाते है ।

आखेट : विश्व के उन भागों में जहाँ कृषि व्यवसाय हेतु उपयुक्त सुविधाओं का अभाव पाया जाता हैं वहाँ के लोग अपना जीवन-यापन विभिन्न जानवरों के शिकार एवं मछली पकड़कर

व्यतीत करते हैं । ये लोग अधिकतर घुमक्कड़ जीवन बिताते है तथा जहाँ शिकार हेतु प्रयुक्त जानवर पाये जाते है वहाँ अपने डेरे लगा लेते हैं ।

पशुचारण : प्रारम्भिक अवस्था में मानव आखेटक व संग्रहकर्ता रहा लेकिन धीरे -धीरे जीव जन्तुओं को पालतू बनाने लगा । पालतू जीव अनेक रूपों में उपयोगी सिद्ध हुए फलस्वरूप मानव ने विविध जलवायु दशाओं के अनुसार उपयोगी पशुओं का चयन कर पालतू बनाया । प्रारम्भ में गोपशु, रेंडियर, ऊँट, लामा तथा अल्पाका, याक, घोड़ा, भैंस, भेड़, बकरियाँ आदि को पालना आरम्भ किया । वर्तमान में शीतोष्ण तथा उष्ण कटिबन्धीय घास के क्षेत्रों में पशुपालन किया जाता हैं ।

कृषि मनुष्य का प्रमुख प्राथमिक व्यवसाय हैं । लगभग 10000 वर्ष पूर्व मनुष्य ने कृषि कार्य प्रारम्भ किया । तत्कालीन जीवों में विद्यमान प्राणी जात एवं वनस्पति को विकसित किया तथा अनुपयोगी वृक्षों को जैविक चक्र से बाहर निकालना भी उसी समय प्रारम्भ कर दिया था । यह औद्योगिक क्रान्ति तक जारी रही । पृथ्वी पर उच्चावच, जलवायु, मृदा तथा सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व कृषि पद्धति में भी भिन्नता उत्पन्न हो गई । इस प्रकार विश्व में भौतिक व सांस्कृतिक पर्यावरण के अनुसार विभिन्न प्रदेशों में स्थानान्तरी, स्थायी, गहन, विस्तृत, निर्वहन, व्यापारिक, रोपण तथा मिश्रित प्रकार की कृषि पायी जाती हैं ।

8.6 शब्दावली (Glossary)

- **उद्यान कृषि (Horticulture) :** फलों और सब्जियों की खेती । यह प्राय: छोटे -छोटे खेती में, खेती के अन्य प्रकारों की तुलना में अत्यन्त सघनता के साथ की जाती हैं ।
- **गहन कृषि (Intensive Agriculture) :** प्रति इकाई भूमि पर अधिक उपज लेने के लिए पूंजी और श्रम का अधिक मात्रा में उपयोग करने वाली पद्धति ।
- **मिश्रित कृषि (Mixed Agriculture) :** कृषि का एक प्रकार जिसमें फसलों की खेती के साथ -साथ पशुपालन भी होता हैं । अर्थव्यवस्था में दोनों का ही बहुत महत्व होता है ।
- **चलवासिता / खानाबदोशी (Nomadism) :** जीवन यापन की एक पद्धति जिसमें लोग अपने पशुओं के चारे के लिए प्राय : एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवास बदलते रहते हैं । चलवासियों की अर्थव्यवस्था में पशु बहुत महत्वपूर्ण होते हैं ।
- **पशुचारण (Pastoralism) :** पूरी तरह से पशुओं पर आधारित अर्थव्यवस्था । चलवासी पशुचारण केवल जीवन निर्वाह के लिएg किया जाता हैं । आधुनिक रैंच, बड़े-बड़े पशु फार्म व्यापारिक पशुचारण के रूप हैं ।
- **ऋतु प्रवास (Transhumance) :** चरवाहों का अपने पशुधन के साथ ऋतुओं के बदलने के अनुसार प्रवास करना ही ऋतुप्रवास हैं । इसमें चरवाहे पहाड़ी पर जाते हैं या नीचे आते हैं या एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाते हैं ।
- **स्थानबद्ध कृषि (Sedentary Agriculture) :** स्थायी रूप से एक ही स्थान पर रहने वाले किसानों द्वारा भूमि को एक ही टुकड़े पर साल दर साल नियमित रूप से की जाने वाली कृषि ।

- **स्थानान्तरी कृषि (Shifting Agriculture) :** यह एक प्रकार की खेती हैं जिसमें दो या तीन साल बाद पुराना खेत छोड़कर नया खेत बना लेते हैं । खेतों के बदलने के कारण ही इसे स्थानान्तरी कृषि कहते हैं
- **निर्वाह कृषि (Subsistence Agriculture) :** इसमें अधिकतर उत्पाद किसान और उसके परिवार के उपभोग के लिए होते हैं । बेचने के लिए बहुत कम मात्रा बचती है जबकि व्यापारिक कृषि में सभी उत्पाद बड़े पैमाने पर बिक्री के लिए होते हैं ।

8.7 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. पुरूषोत्तम जैन : **आर्थिक भूगोल,** रस्तोगी प्रकाशन, मेरठ, 2001.
2. 'एस डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2004.
3. जगदीश सिंह एवं काशीनाथ सिंह : **मानव एवं आर्थिक भूगोल,** ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर, 1997
4. डी. आर. खुल्लर : **भूगोल,** सरस्वती हॉउस, नई दिल्ली, 2006.
5. सी. बी. मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन, आगरा, 2004.
6. एच. एस. गर्ग : **मानव भूगोल,** प्रगति प्रकाशन, मेरठ, 2000.
7. वाई. एस. सिंह : **भूगोल,** वी. के. इन्टरप्राईजेज, नई दिल्ली, 2007.
8. J.W.Alexander : **Economics Geography** , Prentice - Hall , New York .1963
9. C.D.Forde :**Habitat, Economy and Society** , London 1953
10. Gary Kielhofner : Model of Human Occupation : Theory and Application Lippincott Williams & Wilkins Fourth Edition .2007
11. J.O.Wheeler : **Economic Geography ,** John Willey , New York .1995

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. मानव द्वारा पेड़ -पौधों तथा जीव -जन्तुओं का घरेलुकरण किए बिना जीवन निर्वाह के लिए पशुओं का शिकार जंगली पेड़ -पौधों से भोजन एकत्र करना और मछली पकड़ना चरवाही जीवन कहा मानव के प्रमुख व्यवसाय : जाता है ।
2. गेहूं,चावल, मक्का, आलू तथा कसावा ।
3. गन्ना, कपास, कॉफी, रबड़, केला, नारियल ।
4. डेनमार्क ।
5. मध्य अक्षांशों के घास के मैदानों में ।
6. स्थानान्तरी कृषि ।

बोध प्रश्न - 2

1. 12000 वर्ष ।

2. भेड़, बकरियां, ऊंट, गौपशु, घोड़े और गधे ।
3. क्योंकि यह लगभग समस्त मानव जाति को भोजन तथा जीवन की अन्य आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराती हैं । अब भी विश्व की लगभग आधी जनसंख्या कृषि पर आधारित हैं ।
4. क्योंकि खड़ा पानी चाय की झाड़ी की जड़ों को गला देता है और झाड़ी नष्ट हो जाती हैं ।
5. अ. चावल प्रधान आर्द्र गहन निर्वाह कृषि,

   ब. चावल रहित अन्य फसल प्रधान गहन कृषि
6. अ. कृषि की अत्यन्त गहन पद्धति,

   ब. किसान पूरे वर्ष फसल उत्पादन और पशु पालन में मस्त रहता हैं ।

   स. अत्याधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग होता हैं ।

   द. इस कृषि में किसान सुरक्षित रहता हैं ।

   य. मृदा का वैज्ञानिक उपचार

बोध प्रश्न - 3

1. (अ) कुशल सक्षम श्रमिक,

   (ब) खाली समय नहीं

   (स) उत्तम पशु चिकित्सा

   (द) श्रम प्रधान,

   (य) कृषि में वैज्ञानिक तकनीक ।
2. एक अनुमान के अनुसार एक लाख में से एक व्यक्ति (0. 0001 प्रतिशत) ही आखेट और संग्रहण पर आश्रित हैं
3. इतिहास का अंग बन गई हैं ।
4. स्कैंडिनेविया ।
5. आदिम निर्वाह कृषि ।
6. अण्डमान -निकोबार द्वीपसमूह (भारत) ।

8.9 अभ्यासार्थ प्रष्न

1. आखेट और संग्रहण की प्रमुख विशेषताओं का संक्षेप में वर्णन कीजिये?
2. ऋतु प्रवास किसे कहते है?
3. व्यापारिक पशुचारण की विशेषतायें क्या हें?
4. चावल प्रधान आर्द्र गहन निर्वाह कृषि में नये परिवर्तन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।
5. अन्तर स्पष्ट कीजिए :

   अ. चलवासी पशुचारण और व्यापारिक पशुचारण

   ब. स्थानान्तरी और गहन निर्वाह कृषि

   स. डेयरी कृषि और मिश्रित कृषि
6. सहकारी कृषि के तीन लाभ बताइये?

7. भूमध्य सागरीय कृषि अनूठी और बहुआयामी कैसे है? स्पष्ट कीजिऐ ।

8. संसार के मानचित्र में निम्नलिखित की स्थिति अंकित करें -

   अ. व्यापारिक पशुचारण के क्षेत्र

   ब. विपणन उद्योग कृषि के क्षेत्र

   स. सहकारी कृषि के शहतूत क्षेत्र

   द. भूमध्यसागरीय कृषि, विस्तृत व्यापारिक अन्न कृषि और चलवासी पशुचारण के क्षेत्र ।

इकाई 9 : मानव प्रजातियाँ (Human Race)

इकाई संरचना

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 मानव का जन्म व विकास

9.3 मानव प्रजातियाँ

9.3.1 मानव प्रजाति की परिभाषा

9.3.2 मानव प्रजातियों का उद्भव विकास

9.3.3 मानव प्रजातियों के शारीरिक लक्षण

9.4 प्रजातियों के वर्गीकरण के आधार

9.4.1 शरीर का कद

9.4.2 कपाल अथवा सिर का आकार

9.4.3 मुखाकृति

9.4.4 बालों की बनावट

9.4.5 नाक की आकृति

9.4.6 त्वचा का रग

9.4.7 आखों का रंग

9.4.8 अन्य लक्षण

9.5 मानव प्रजातियों का वर्गीकरण

9.5.1 हक्सले का वर्गीकरण

9.5.2 लिनेयस का वर्गीकरण

9.5.3 ब्लूमन बैंक का वर्गीकरण

9.5.4 क्रोबर का वर्गीकरण

9.5.5 हैडन का वर्गीकरण

9.5.6 ग्रिफिथ टेलर का वर्गीकरण

9.6 ग्रिफिथ टेलर का कटिबन्ध स्तर सिद्धान्त

9.7 संसार की प्रमुख मानव प्रजातियाँ

9.8 साराँश

9.9 शब्दावली

9.10 संदर्भ ग्रंथ

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.0 उद्देश्य (objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने से हम जान सकेंगे कि : -

- मानव प्रजातियाँ क्या हैं? उनकी परिभाषा क्या है?
- मानव प्रजातियों का उद्भव व विकास के इतिहास का ज्ञान
- मानव प्रजातियों के विकास को प्रभावित करने वाले कारक
- मानव प्रजातियों के शारीरिक लक्षणों का अध्ययन
- विश्व की मानव प्रजातियों का वर्गीकरण का ज्ञान
- मानव प्रजातियों के वर्गीकरण के आधार
- मानव प्रजातियों का मिश्रण व वर्तमान वितरण का प्रारूप

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

जीव जगत के इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इसके विकास की चरम सीमा होमासेपियन्स (homo-sapiens) हैं जिसे बुद्धिमान प्राणी या मेघावी मानव कहा जा सकता है । मानव शास्त्रियों का मत है कि उस मेघावी मानव का जन्म मध्य एशिया में हुआ था । उस समय वहाँ का जलवायु शीतोष्ण था तथा मानव के पालने के रूप में वह भूभाग समोचित था । वर्तमान में पाये जाने वाले समस्त मनुष्य उसी मेघावि मानव के वंशज हैं ।

प्रजाति शब्द का प्रयोग मानव एवं सामाजिक विज्ञानों में कबीला, वंशक्रम, संतति, नस्ल आदि के रूप में किया जाता है । वैसे रेस शब्द की उत्पत्ति इटली भाषा के रज्जा शब्द से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ परिवार, खानदान, वंशानुक्रम या नस्ल है । मानवशास्त्र में प्रजाति का अर्थ वहीं है जो जीव विज्ञान में जीव जातियों का है । विभिन्न प्रजातियों में शारीरिक तथा बौद्धिक लक्षणों में विभिन्नता पाई जाती है । इन शारीरिक लक्षणों में शरीर का कद, त्वचा का रंग बालों की बनावट, मुखाकृति, सिर का आकार नाक आँख व जबड़े की बनावट आदि प्रमुख हैं जिनके आधार पर मानव वर्ग अथवा प्रजाति बनती है । प्रजातियों की पहचान के ये स्थायी लक्षण वंशानुक्रम के द्वारा आगामी पीढ़ी तक चलते रहते हैं ।

अत: समान आनुवंशिक लक्षणों के आधार पर विश्व की समस्त मानव प्रजातियों की पहचान स्थापित होती है । यों तो संसार का प्रत्येक व्यक्ति अपनी विशिष्टता अलग से रखता है किन्तु व्यापक स्तर पर बहुत सी समानताएँ भी होती हैं जो प्रजाति समूह को अपनी अलग पहचान प्रदान करती हैं । फिर देशकाल व पर्यावरण सम्बन्धित परिवर्तन, प्रवास तथा सामाजिक - सांस्कृतिक मिश्रण प्रजाति के भौतिक लक्षणों में परिवर्तन करते हैं । यह परिवर्तन हजारों वर्षों बाद देखा जाता है । जीवों के वर्गीकरण में पृथ्वी पर मानव की कई प्रजातियाँ हैं जो बौद्धिक स्तर पर जैविक विकास के क्रम में सर्वोपरी है । इन प्रजातियों को समान लक्षणों वाले अनेक समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

9.2 मानव का जन्म व विकास

पृथ्वी पर मानव का जन्म कब हुआ, कैसे हुआ और कहाँ हुआ? इस विषय में विभिन्न मानवशास्त्रियों के अलग-अलग मत हैं । जीवाश्मों तथा मानव अवशेषों की प्राप्ति के पश्चात्

मानवशास्त्रियों ने महत्वपूर्ण अनुमान लगाये हैं । ऐसा माना जाता है कि आज से लगभग 130 लाख वर्ष पूर्व मायोसीन युग के अंत से लेकर प्लायोसीन युग के प्रारम्भ में मनुष्य का जन्म हो चुका था । वह नर वानर- जैसा था या अर्द्धमानव था, उसे इस रूप में आते-आते भी लाखों वर्ष लग गये । डार्विन ने जिस मानव की परिकल्पना की थी उसका जन्म भी अब से 5 लाख वर्ष पूर्व हुआ था । वर्तमान मानव का यह रूप लगभग दस हजार वर्ष पूर्व हुआ है, जो मध्य एशिया व केस्पियन सागर के आसपास था । यह मानव पूरी तरह खड़ा होकर चल सकता था । इसी को होमोसैपियन्स कहा जाता है । वर्तमान काल के सभी मानव इसी श्रेणी के अन्तर्गत हैं । कालान्तर में प्रवास के कारण वर्तमान मानव अनेक सुदूरवर्ती क्षेत्रों में बिखर गये तथा दीर्घकाल में विभिन्न पर्यावरणों में रहने के कारण उनकी शारीरिक विशेषताओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन आ गये । इस प्रकार वर्तमान मानव की विभिन्न प्रजातियाँ बनी । इनके अपने- अपने आनुवंशिक लक्षण हैं । इन प्रजातियों का अध्ययन इस अध्याय में किया जा रहा है ।

9.3 मानव प्रजातियाँ

पृथ्वी पर पाये जाने वाले समस्त जीवों को उनकी जैविक विशेषताओं के आधार पर कुछ वर्गों में विभक्त किया जाता है, जिसे जाति (speices) कहा जाता है । इस जैविक वर्गीकरण में मानव भी एक विशिष्ट जाति है जो अपनी बुद्धि के कारण समस्त जीवों में सर्वोपरि है । सारे संसार के मनुष्य भी एक समान नहीं हैं । उनमें बहुत सारी विभिन्नताएँ पाई जाती हैं, जो मानव जाति के उपवर्ग (subdivision) हैं । इन उपवर्गो को ही प्रजाति कहा जाता है, इन उपवर्गो में वंशानुक्रम से विशिष्ट शारीरिक लक्षण विकसित होते हैं, जो अन्य मानव समूहों से अलग होते हैं । इन्हीं अलग-अलग मानव समूहों को मानव प्रजातियों कहा जाता है । इनके शारीरिक लक्षणों में शरीर का कद, त्वचा का रंग, मुखाकृति, सिर की बनावट, नाक -आँख की बनावट, बालों की बनावट आदि प्रमुख हैं । ये विभिन्न प्रजातियों की पहचान के स्थायी लक्षण हैं जो वंशानुक्रम से आगामी पीढ़ियों में भी आते रहते हैं । अत: समान आनुवांशिक विशिष्टताओं के आधार पर ही विभिन्न मानव जातियों की पहचान बनी है । इस संसार में यद्यपि प्रत्येक मनुष्य अपने आपमें विशिष्ट व अद्भुत है और अन्य व्यक्तियों से विभिन्नता भी रखता है फिर भी उस मानव में बहुत सारी ऐसी समानताऐं हैं जो उसे एक समूह में सम्मिलित करती हैं । यह समान लक्षणों वाला मानव समूह ही मानव प्रजाति है ।

9.3.1 मानव प्रजाति की परिभाषा

सर्वप्रथम सर 1570 में फाक्स ने अपनी पुस्तक बुक ऑफ मार्टायर्स में रेस (race) शब्द (आंग्लभाषा) का प्रयोग किया था जिसका हिन्दी रूपान्तरण प्रजाति है । आंग्लभाषा में भी यह शब्द सम्भवत: इतावली भाषा के रज्जा (Razza) शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है परिवार, वंश अथवा नस्ल जो शारीरिक और वंशानुक्रम लक्षणों में समानता रखने वाला होता है । मानव प्रजाति एक जैविक विचार है जिसका सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से मनुष्य के वंश अथवा नस्ल (breed) से है । प्रजाति की परीभाषा बहुत विद्वानों ने की है । इस सम्बन्ध में कुछ विद्वानों के विचार निम्न हैं : -

1. वाइडल डी-ला-ब्लाश (1923) ने लिखा है, 'प्रजाति का तात्पर्य उस कायिक वर्गीकरण से है जो मानव शरीर की बनावट व शारीरिक लक्षणों पर आधारित है । "
2. क्रोबर के अनुसार - 'प्रजाति एक प्रतिष्ठित जैविक संकल्पना है । यह आनुवांशिकता, नस्ल, जननिक लक्षण या उपजाति द्वारा संगठित एक समूह है । यह मान्य सामाजिक सांस्कृतिक विचारधारा नहीं है । "
3. ग्रिफिथ टेलर - 'मानव प्रजाति नस्ल को प्रगट करती है, न कि नस्ल को । "
4. ए.सी. हैडन - 'प्रजाति शब्द एक वर्ग विशेष को प्रदर्शित करता है, जिसकी सामान्य विशेषताएँ परस्पर समरूपता प्रदर्शित करती हैं । यह एक जैविक नस्ल है जिसके प्राकृतिक लक्षणों का योग दूसरी प्रजाति के लक्षणों के योग से भिन्न हैं । "
5. गोल्डन वीजर - 'प्रजाति मनुष्यों का एक उपविभाग है जिसमें कुछ भौतिक लक्षणों की पैतृक देन रहती है । "
6. भारतीय समाज शास्त्री डा0 मजुमदार के अनुसार, 'यदि व्यक्तियों के एक समूह को समाज शारीरिक के आधार पर अन्य समूहों से अलग पहचाना जा सके तो उस जैविक समूह के सदस्य कितने ही बिखरे क्यों न हो वे एक प्रजाति है । "
7. डा. आर एन. सिंह व एस. डी. मौर्य (1997) के अनुसार, 'मानव प्रजाति मानव जाति का उपवर्ग है जिसके सदस्यों में वंशानुक्रम व विशिष्ट शारीरिक लक्षण एक समान हैं, जो उन्हें अन्य वर्गो से अलग करते हैं । "

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि ' -

1. प्रजाति की अवधारणा प्राणिशास्त्री है, जिसका राष्ट्र, भाषा, धर्म आदि से कोई से संबंध नहीं है ।
2. सभी प्रजातियों की अपनी अपनी प्रथक विशेषताएँ होती हैं ।
3. प्रजातियों के शारीरिक लक्षण वंशानुगत होते है जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहते हैं ।
4. प्रजातियों के आधार के रूप मे माने जाने वाले लक्षण एक विस्तृत मानव समूह में एक समान विद्‌यमान होते हैं ।
5. विश्व की सभी मानव प्रजातियाँ मूलत: एक जैसी हैं, उनमें बाहरी परिर्वतन जैसे त्वचा, बाल, नाक, आँख व मुखाकृति आदि केवल ऊपरी लक्षण हैं ।

9.3.2 मानव प्रजातियों का उद्भव व विकास

मानव प्रजातियों के उद्भव व विकास की प्रक्रिया जटिल है । इसके बारे मे मनुष्य का ज्ञान अधूरा है । मानवशास्त्री इस बिन्दू पर एकमत भी नहीं है । कोबर ने कहा है कि हम मानव प्रकारों को परिवर्तित करने वाले कारकों के विषय मे बहुत कम जानते हैं और प्रजातियो के इतिहास के संदर्भ के हमारा ज्ञान अधूरा है ।

संसार के विभिन्न भागों में पाये जाने वाली प्रजातियों के बाहरी लक्षणों मे पर्याय अंतर देश, काल व मानवीय कारकों के कारण कुछ पीढियों के पश्चात् परिवर्तन देखा जा सकता है । कोबर के अनुसार अंतर्प्रजाति विवाह, प्राकृतिक चयन और पर्यावरण आदि ऐसे तत्व हैं जो प्रजातियों

गुणों व शारीरिक लक्षणों को प्रभावित करते हैं । मानव प्रजातियों की शारीरिक रचना के बाहरी लक्षणों व विशेषताओं को प्रभावित करने वाले कारक निम्न हैं : -

1. ग्रन्थिरस प्रभाव
2. प्राकृतिक वरण व जैविक परिवर्तन,
3. जलवायु परिवर्तन
4. भौगोलिक एवं सामाजिक प्रथकता,
5. प्रजातियों का मिश्रण

1. **ग्रन्थिरस प्रभाव :** मानवशास्त्रियों के मतानुसार सभी मानव प्रजातियों का उत्पत्ति क्षेत्र एक ही है और वे सभी एक ही पितरों की संताने हैं । मानव शरीर में पायी जाने वाली ग्रान्थियाँ पृथक -पृथक क्रियाएँ करती रहती हैं जिससे प्रजातियों में भिन्नता आ जाती, जिन्हें हार्मोन (hormone) कहतें हैं । पीयूष ग्रन्थि अधिक क्रियाशील होने के कारण काकेशियन प्रजाति का कद ऊँचा, शरीर भारी, विकसित भौहें तथा नाक सुंदर है । इसके विपरीत गल ग्रन्थि के निष्क्रिय होने के कारण मंगोलियन प्रजाति के लोगों की नाक चपटी, चेहरा चपटा तथा माथा उभरा हु आ है । इसी प्रकार एड्रिनल ग्रन्थि के कारण त्वचा के रंग में परिवर्तन होता है । पर्यावरण के द्वारा भी ग्रन्थियो की कार्य प्रणाली प्रभावित होती है । जलवायु परिवर्तन के कारण भी ग्रन्थियों की क्रिया में परिवर्तन देखने को मिलता है । परिणाम स्वरूप शरीर के बाहरी लक्षणों में भी बदलाव देखने को मिलता है ।

   मनुष्य में चार प्रमुख रक्त समूह (blood group) पाये जाते हैं । ये है A, B, AB और O । शो देखा गया है कि A रक्त समूह के लोग यूरोप तथा आस्ट्रेलिया में अधिक हैं । मध्य एशिया में बी रक्त समूह के लोग अधिक हैं । जबकि शेष एशिया में मिश्रित रक्त समूह के लोग हैं । ये सब ग्रन्थि रस प्रभाव के कारण ही हैं ।

2. **प्राकृतिक वरण तथा जैविक परिवर्तन :** किसी भी प्रजाति के मूल शारीरिक लक्षण उसके जीन्स में पाये जाते हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी कायम रहते हैं । इसमें प्राकृतिक वरण द्वारा परिवर्तन भी होता रहता है । यह परिवर्तन प्राकृतिक छटाव के कारण होता है । इसका प्रमुख कारण प्रवास माना जाता है । मानव जब एक स्थान से दूसरे स्थान पर गमन करता है तो मार्ग में उसे अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है । इस क्रम में निर्बल व रोगी व्यक्ति समाप्त हो जाते हैं या पीछे छूट जाते हैं तथा सबल व सुदृढ़ व्यक्ति सारी बाधाओं को पार करके आगे बढ़ जाते हैं । कालान्तर बाद दीर्घकालीन प्रवास के कारण उनके शारीरिक लक्षणों में परिवर्तन आ जाता है । इस प्रकार प्राकृतिक छाँट के कारण परिवर्तन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है ।

   अपने वातावरण समायोजन के कारण टुंड्रा प्रदेश के लोग अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक जीवन व्यतीत कर रहे हैं । इसी प्रकार अमेजन बेसिन, कांगो बेसीन में रहने वाली प्रजातियाँ भी परिवर्तित नजर आने लगी हैं । भूमध्य सागरीय प्रजाति जो अमेरिका तथा उत्तरी भागों में चली गई उनके शारीरिक लक्षणों में परिवर्तन आ गया है । यह सब प्राकृतिक वरण तथा जैविक परिवर्तन का परिणाम है ।

3. **जलवायु परिवर्तन :** प्रारम्भिक काल में मानव विकास में जिन प्राकृतिक शक्तियों का सबसे अधिक नियन्त्रण रहता था, उसमें जलवायु प्रमुख थी । प्राति नूतन युग (Pleistocene period) में चार बड़े हिमयुग आये तथा उनके बीच में अन्तर - हिम युग के बीच उष्ण जलवायु का प्रभाव पड़ा था । ग्रिफिथ टेलर का कटिबंध स्तर सिद्धान्त जलवायु परिवर्तनों पर ही आधारित है । उनके अनुसार सभी मानव प्रजातियों का उद्भव स्थल (cradle land) एशिया की मध्यवर्ती भूमि है । प्लीस्टोसीन युग में चार बड़े हिमयुग आये जिनके बीच-बीच में गर्म जलवायु वाले अंतर्हिम युग भी आये । जब मध्य एशिया की भूमि पर प्रथम मानव वर्ग का विकास हुआ, वहाँ की जलवायु गर्म और मानव निवास के योग्य थी । कालान्तर में हिम युग के आगमन से मध्य एशिया की जलवायु शीतल हो गयी और गर्म जलवायु की पेटी दक्षिण की ओर खिसक गयी । इसके परिणामस्वरूप मध्य एशिया से मानव समूह ने भी दक्षिण की ओर प्रवास किया जहाँ जलवायु दशाएँ अपेक्षाकृत गर्म और उपयुक्त थी । मार्ग में उन्हें पहाड़ी तथा अन्य प्राकृतिक अवरोधों का सामना करना पड़ा, जिसके कारण उनमें उल्लेखनीय शारीरिक परिवर्तन भी आए । हिमयुग के समाप्त होने पर मध्य एशिया में पुन: गर्म जलवायु का आगमन हुआ और फलत: प्रवासी मानव समूह के कुछ लोग पुन: अपने मूल स्थान (मध्य एशिया) लौट आये । किन्तु बहुत से लोग नहीं लौटे । दक्षिण में जहाँ जलवायु गर्म थी, तेज धूप और गर्मी के प्रभाव से मनुष्य का रग काला, सिर लम्बे और होंठ मोटे हो गये । इसके विपरीत मध्य एशिया में विकसित प्रजाति के रंग अपेक्षाकृत श्वेत और सिर चौड़ा हो गया । इसी प्रकार अन्य हिमयुग के आगमनों पर भी बड़े पैमाने पर मानव वर्गों ने प्रवास किया । भिन्न जलवायु दशाओं में रहने वाले मानव वर्गों में वर्ण तथा शारीरिक विकास में भी भिन्नता उत्पन्न हुई । इस प्रकार विभिन्न मानव प्रजातियों का अभ्युदय हुआ ।

   जलवायु का मनुष्य की त्वचा के रंग पर स्पष्ट प्रभाव पाया जाता है । श्याम वर्ण की त्वचा धूप से शरीर की सुरक्षा करती है । सम्भवतः इसलिए ऊष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में लाखों वर्षों से निवास करने वाली प्रजातियों की त्वचा का रंग श्याम (काला) हो गया है । मानवशास्त्री हैडन (Hadden) के अनुसार जलवायुयिक दशाओं का प्रभाव मनुष्य के शरीर में पाये जाने वाले जीवाणु रस (germ Plasm) पर भी होता है । अत: विभिन्न प्रकार की जलवायु दशाओं का प्रभाव मनुष्य की भावी संतानों में भी वंशानुक्रम से चलता रहता है । जलवायु का प्रभाव त्वचा के वर्ण के अतिरिक्त नेत्र की बनावट एवं रंग, केशों की रचना एवं आकृति, सिर की आकृति, मुखाकृति आदि विभिन्न मानव अंगों पर भी निश्चित रूप से पड़ता है ।

4. **भौगोलिक एवं सामाजिक पार्थक्य (Geographical and Social isolation) :** प्रारम्भिक पुरा पाषाणकाल में जनसंख्या कम थी और अत्यन्त दूर-दूर क्षेत्रों में बिखरी हुई थी जहाँ की जलवायु दशाएँ एक -दूसरे से काफी भिन्न थीं । इनके बीच-बीच में अनेक प्रकार के प्राकृतिक अवरोध (पर्वत, वन, मरूस्थल, सागर) भी थे जिनके कारण एक -दूसरे से दूर स्थित विभिन्न प्रदेशों में निवास करने वाली प्रजातियों का सम्पर्क परस्पर नहीं हो पाता था । दुर्गम पर्वत मालाओं, मरुस्थलों, सागरों, नदियों, दुर्गम जंगलों आदि द्वारा

अलग-अलग रहने वाले प्रजाति समूहों के शारीरिक लक्षणों का विकास जलवायु तथा अन्य प्राकृतिक दशाओं से अधिक प्रभावित था ।

मनुष्य के भौगोलिक पार्थक्य के साथ ही प्राय: सामाजिक अलगाव भी रहता था । यह पृथकता पड़ौसी समूहों के परस्पर विरोधी हितों, सामान्य भाषा के अभाव एवं उनके मध्य होने वाले संघर्षो आदि के कारण कायम रहती थी । इस प्रकार ऐसा माना जाता है कि भिन्न-भिन्न भौगोलिक दशाओं में भिन्न-भिन्न शारीरिक लक्षणों वाली प्रजातियों का विकास सम्भव हुआ । यदि उन प्रजातियों के बीच अवरोध और अलगाव न होते तो उनमें एक-दूसरे से भिन्न शारीरिक लक्षणों का उद्भव सम्भव नहीं था । मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ विभिन्न मानव प्रजातियाँ एक -दूसरे के निकट होती गयी । उनके पारस्परिक सम्पर्क से मिश्रित गुणों वाली प्रजातियों का भी विकास सम्भव हुआ । भौगोलिक पृथक्कता जो अतीत काल में अधिक सबल नियंत्रक थी, अब निरन्तर महत्वहीन होती जा रही है ।

नेस्तुख (Nesturkh) ने अपनी पुस्तक 'मानव जाति ' में लिखा है कि मानव वैज्ञानिक प्रारूपों के कुछ समूह (जैसे आर्कटिक या एस्किमों, पिग्मी और आस्ट्रेलियायी आदिवासी) लम्बे समय तक पूर्ण पृथकता में रहते थे जिसने उनके विशिष्ट प्रजातीय लक्षणों को तीव्र कर दिया । तथापि पिछले पाँच सौ वर्षो में इन पृथक्कृत समूहों तक ने अपनी तथा कथित प्रजातीय शुद्धता (racial purity) को खो दिया है, जिसके कारण आज कहीं भी वास्तव में शुद्ध (pure) प्रजाति नहीं रह गयी है ।

5. **प्रजातियों का मिश्रण (racial mixture) :** कालान्तर में अनेक प्राकृतिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि कारणों से मानव समुदायों के एक प्रदेश से अन्य प्रदेशों के लिए बडे पैमाने पर स्थानान्तरण हुए हैं । मानव प्रवास के कारण पृथक - पृथक मानव प्रजातियों के स्त्री-पुरूषों में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुए जिनसे मिश्रित लक्षणों वाली सन्तानें उत्पन्न हुई । इस प्रकार दो भिन्न प्रजातियों के स्त्री-पुरूष के सम्पर्क से वर्णसंकर संतानें उत्पन्न होने से मिश्रित प्रजाति का विकास सम्भव हुआ । रूसी मानवशास्त्री नेस्तुर्ख के मतानुसार प्रजातियों पर मनुष्य के सामाजिक आर्थिक विकास के प्रभाव का एक सुन्दर उदाहरण अंतर्प्रजातीय विवाह अथवा समिश्रण की प्रक्रिया है जो दीर्घकाल से चल रही है और विशाल रूप धारण कर चुकी है । मैक्सिकों में कुल जनसंख्या का लगभग 60% और कोलम्बिया में कुल जनसंख्या का लगभग 40% यूरोपीय तथा रेड इण्डियन के अन्तर्विवाहों की संताने हैं । अंतर्विवाह द्वारा जब दो प्रजातियाँ मिश्रित होती हैं, तो उनसे उत्पन्न संतति के अधिकांश प्रजातीय लक्षण मध्यवर्ती या मिश्रित प्रकृति के होते हैं और कालांतर में ये स्थायी समुदाय का स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं जिन्हें सम्पर्क समूह के नाम से जाना जाता है ।_ इस प्रकार मूल यूरोपीय तथा जापानी, यूरोपीय तथा अमरीकी इण्डियन, यूरोपीय तथा आस्ट्रेलियायी प्रजातियों के मिश्रित लोग विश्व में बहुत बड़ी संख्या में पाये जाते हैं । दक्षिण अमेरिका में तिहरे (three fold) और उससे भी अधिक मिश्रणों का वितरण प्राप्त होता है जिनमें नीग्रो, यूरोपीन और अमरीकी इण्डियन सम्मिलित हैं । इसी प्रकार प्राय: सभी महा प्रजातियों के

सीमान्त क्षेत्रों में दीर्घकाल तक सम्मिश्रण के परिणामस्वरूप अंतवर्ती सम्पर्क समूह पाये जाते हैं ।

9.3.3 प्रजातियों के शारीरिक लक्षण

मानव प्रजातियों का वर्गीकरण उनके सामान्य शारीरिक लक्षणों के आधार पर किया जाता है । इसमें शरीर के आन्तरिक तथा बाह्य लक्षण शामिल हैं । ग्रन्थि रस की भिन्नता, शरीर की लम्बाई, नाक, केश की बनावट, मुखाकृति आदि हैं, जो मानव प्रजातियों की शारीरिक विशेषताएँ है । इनमें कई लक्षण तो ऐसे हैं जो भिन्न - भिन्न प्रजातियों में एक समान मिल जाते हैं । कुछ मानव शास्त्रियों ने अधिक लक्षणों को शामिल किया है तो कुछ ने कम लक्षणों के आधार मानकर प्रजातियाँ वर्गीकृत की हैं । दरअसल प्रारम्भिक अध्ययनों में कम शारीरिक लक्षण शामिल हैं तथा आधुनिक अध्ययनों में अधिक लक्षणों को सम्मिलित किया गया है । इसमें जितने अधिक लक्षण शामिल किये जाएँ उतने ही अच्छे हैं क्योंकि उससे प्रत्येक प्रजाति वर्ग का समस्त व्यक्तित्व सामने आ जाता है । मानव प्रजातियों के इन शारीरिक लक्षणों का वर्णन आगामी पृष्ठों पर सविस्तार किया गया है । इन्हें मानव प्रजातियों के वर्गीकरण के आधारों के रूप में प्रस्तुत किया है ।

बोध प्रश्न- 1

1. प्रजाति का अर्थ क्या हैं?

 ………………………………………………………………………………………

 ………………………………………………………………………………………

2. होमोसैपियन्स का अर्थ क्या हैं ?

 ………………………………………………………………………………………

 ………………………………………………………………………………………

3. आदिमानव का जन्म स्थल कहीं माना जाता हैं ?

 ………………………………………………………………………………………

 ………………………………………………………………………………………

4. कापालिक सूचकांक का रू क्या हैं?

 ………………………………………………………………………………………

 ………………………………………………………………………………………

5. नासिका सूचकांक का सूत्र क्या है?

 ………………………………………………………………………………………

 ………………………………………………………………………………………

6. मानव रक्तसमूह कौन -कौन से हैं ?

 ………………………………………………………………………………………

 ………………………………………………………………………………………

9.4 प्रजातियों के वर्गीकरण के आधार

मानव शरीर की रचना स्थूल शरीर से होती है । सूक्ष्म शरीर की कोई प्रजाति नहीं होती है । यह सभी मनुष्यों में समान है । स्कूल शरीर ही प्रजातियों के लक्षणों को प्रकट करता है । इसमें शरीर का कद, सिर, नाक, मुख, जबड़ा, आँख, बाल आदि शामिल हैं । ये सभी तत्व मानव प्रजातियों के वर्गीकरण के आधार हैं । मानव प्रजातियों का वर्गीकरण करते समय शारीरिक बनावट के केवल एक या दो लक्षणों को ही सम्मिलित नहीं करना चाहिए, अपितु अधिकाधिक लक्षणों को शामिल करना चाहिए। ये आधार निम्न हैं : -

9.4.1 शरीर का कद

आधुनिक मानव का औसत कद 163 सेमी ऊँचा माना जाता है । लेकिन इसमें विभिन्नता भी पायी जाती है । ऐसा भी देखा गया है कि एक ही प्रजाति में विभिन्न कद वाले व्यक्ति भी मिलते हैं । हैडन महोदय ने कद के आधार पर 5 वर्ग बनाये है : -

1. बौना - 148 सेमी. से कम
2. छोटा - 143 सेमी. से 158 सेमी0 तक,
3. मंझोला - 159 सेमी. से 168 सेमी0 तक,
4. लम्बा - 169 सेमी. से 171 सेमी0 तक,
5. बहुत लम्बा - 172 सेमी. से अधिक ।

9.4.2 कपाल अथवा सिर का आकार

मनुष्य का यह स्थायी लक्षण माना जाता है । इसमें परिवर्तन बहुत कम होता है क्योंकि सिर की बनावट पर वातावरण का प्रभाव बहुत कम पड़ता है । सिर का आकार कपाल सूचकांक के द्वारा ज्ञात किया जाता है जिसका सूत्र निम्न है : -

कपाल सुचकांक - सिर की चौड़ाई / सिर की लम्बाई = 100

इसके आधार पर तीन श्रेणियाँ बनाई गई है: -

1. दीर्घ कपाल सूचकांक - 75 से कम,
2. मध्य कपाल सूचकांक - 75 से 80,
3. लघु कपाल सूचकांक - 81 से अधिक ।

समस्त मानव जाति का औसत सूचकांक 79 होता है ।

9.4.3 मुखाकृति

इसके अन्तर्गत सिर की बनावट से समानता लिये मानव मुख तथ ' निचला जबड़ा शामिल किया जाता है । लम्बे सिर वालों के चेहरे लम्बे, चौड़े व गोल होते हैं, जबकि गोल सिर वालों के चेहरे चौड़े व गोल होते हैं । मुख के आधार पर मानव प्रजातियों के तीन भाग हैं ।

1. चौड़े मुख वाले - 85 से कम
2. मध्यम मुख वाले - 85 से 98 तक

3. संकरे मुख वाले - 98 से अधिक

9.4.4 बालों की बनावट

विश्व की प्रमुख प्रजातियों के बालों की बनावट में भिन्नता पायी जाती है । कुछ लोगों के शरीर पर अधिक बाल पाये जाते हैं । कुछ के शरीर पर अधिक बाल पाये जाते हैं । कुछ के शरीर पर कम बाल होते हैं । सिर के बालों की बनावट भी भिन्न - भिन्न होती है । मानव प्रजातियों में सीधे, खड़े, लहरदार, घुंघराले और मुलायम बाल पाये जाते हैं । बालों की बनावट के आधार पर निम्न तीन भागों में मानव प्रजातियों को बांटा गया है : -

1. सीधे, मोटे, कड़े व लम्बे बाल - मंगोल प्रजाति
2. चिकने, लहरदार, घुंघराले, पतले और मुलायम बाल - आस्ट्रेलॉयड
3. लच्छेदार एवं काले बाल - नीग्रो

कुछ विद्‌वानों की मान्यता है कि जिनके शरीर पर कम बाल पाये जाते हैं उनके सिर के बाल उतने ही लम्बे होते है । सम्भवत: इसी कारण स्त्रियों के सिर के बाल अधिक लम्बे होते हैं ।

9.4.5 नाक की आकृति

मनुष्य का यह लक्षण स्थयी नहीं है। यह व्यक्ति की अवस्था के साथ परिवर्तित होता रहता है। इसे नासा अथवा नासिका सूचकांक कहते हैं। इसे ज्ञात करने का सूत्र निम्न है-

नासिका सूचकांक = नाक की चौड़ाई / नाक कि लम्बाई x 100

हैडन महोदय ने नासिका सूचकांक के आधार पर मानव प्रजातियों को पाँच भागों में वर्गीकृत किया है जो निम्न हैं -

1. अत्यन्त पतली नाक - 55 से कम
2. पतली नाक - 55 से 70 तक
3. मध्यम नाक - 70 से 85 तक
4. चौड़ी नाक - 85 से 100तक
5. अत्यन्त चौड़ी नाक - 100 से अधिक

प्रमुख प्रजातियों की नाक की बनावट इस प्रकार है:-

1. नीग्रोआयड - चौड़ी नाक
2. मंगोलायड - मध्यम व चपटी नाक
3. काकेशायड - लम्बी व पतली नाक

9.4.6 त्वचा का रंग

विश्व की मानव प्रजातियों की त्वचा का रंग भी भिन्न-भिन्न पाया जाता है। इस पर जलवायु का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। विषवत रेखा से ज्यों-ज्यों उत्तरी अथवा दक्षिणी ध्रुवों की ओर बढ़ते हैं तो त्वचा का रंग काले से श्वेत होता जाता है। त्वचा के रंग के आधार पर प्रजातियों के तीन भाग हैं।

1. श्वेत-गौर-वर्ण	-	कॉकेशियन प्रजाति	-	यूरोप, रूस, 30 अमेरिकी निवासी
2. पीत त्वचा	-	मंगोलियन प्रजाति	-	एशिया,मंगोल, चीनी, जापानी निवासी
3. काला या श्याम वर्ण	-	नीग्रोऑयड प्रजाति	-	अफ़्रीकी, नीग्रो आदि प्रजाति

9.4.7 आखों का रंग

वैसे तो अधिकांश रूप से आँखों का रंग काला पाया जाता है लेकिन आँख की पुतली में कुछ अंतर देखने को मिलता है। काकेशियन प्रजाति के लोगों की आँखें नीली, हरी व भूरी होती हैं। कुछ आँखे बादाम की तरह तिरछी होती हैं। इनकी फटान क्षेतिजीय होती है। कुछ की फटान तिरछी होती है। मंगोलीय प्रकार की आंखे अधखुली - सी होती है । आखों की चौड़ाई व लम्बाई भी भिन्न - भिन्न होती हैं । लम्बी और मोटी आँखे सुन्दर मानी जाती हैं जबकि छोटी व बारीक आँखें अच्छी नहीं मानी जाती है ।

9.4.8 अन्य लक्षण

इनमें बाह्य तथा आंतरिक दोनों ही प्रकार के हैं । बाह्य में होठों की बनावट, आँखों की पलकें, कान, दाँत आदि शामिल हैं, जबकि आंतरिक में खून (रक्त समूह), सीरस सम्बन्धी विशेषताएँ आदि सम्मिलित हैं । कुछ मानव शास्त्रियों इन लक्षणों का वर्णन भी अपने अध्ययनों में किया है ।

बोध प्रश्न - 2

1. सबसे पहले किस प्रजाति का जन्म हुआ? ( )
2. हैडन ने प्रजाति वर्गीकरण किस वर्ष में किया? ( )
3. ग्रिफिथ टेलर ने प्रजाति वर्गीकरण किस वर्ष में किया? ( )
4. सबसे बाद में किस प्रजाति का जन्म हुआ? ( )
5. पूर्तगाली किस प्रजाति के हैं? ( )
6. कटिबंध स्तर सिद्धान्त किस विद्वान् का है? ( )
7. कालाहारी मरुस्थल में कौन रहते हैं? ( )
8. पिग्मी किस प्रजाति से सम्बन्धित हैं? ( )

9.5 मानव प्रजातियों का वर्गीकरण

मानव शास्त्रियों ने अपने -अपने दृष्टिकोण और अनुभव के आधार पर संसार की मानव प्रजातियों का वर्गीकरण किया है । इस वर्गीकरण में लगभग सभी विद्वानों ने मानव के बाह्य शारीरिक लक्षणों को ही आधार बनाया है । यह देखने में आया है कि पूर्व में किये गये अध्ययनों में आधार कम लिये गये थे तथा सामान्यतया मोटे -मोटे लक्षणों को आधार बनाया था लेकिन आधुनिक विद्वानों ने वर्गीकरणों को विस्तृत रूप में किया है तथा छोटे -छोटे लक्षणों को भी शामिल करके उन पर अधिक बल दिया है ।

प्रमुख मानवशास्त्रियों द्वारा प्रतिपादित वर्गीकरण निम्नलिखित है. -

9.5.1 हक्सले का वर्गीकरण

हक्सले ने सन् 1870 में मानव के बालों को प्रमुख आधार पर विभाजित किया है, जो निम्नलिखित सारणी द्वारा प्रदर्शित है. -

	प्रजाति	वितरण	विवरण
1.	आस्ट्रेलॉयड	आस्ट्रेलिया व द भारत	भूरा व चाकलेटी रंग, बाल काले लहरदार, आंखें भूरी व गहरी, खोपड़ी संकरी , नाक चौड़ी, होठ मोटे, पलके उन्नत
2.	नीग्रोयड	द पूर्वी अफ्रीका, मालागासी व कालाहारी मरुस्थल	रंग काला, नाक चपटी, जबड़ा निकला हुआ, आंखें काली, बाल काले व घुंघराले
3.	मंगोलॉयड	चीन, तिब्बत, मंगोलिया व जापान	आँखे काली, कद मध्यम, बाल हल्के, रंग पीला चेहरा व नाक चपटी
4.	सैनथोक्रायड	उत्तरी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका	कद लम्बा, आँखें नीली व पूरी, बाल भूरे, खोपड़ी चौड़ी
5.	मैलनक्रॉयड	दक्षिणी यूरोप, अरब, स्पेन यूनान	रंग, कद छोटा, आँखें काली, बाल काले

9.5.2 लिनियस का वर्गीकरण

केरोलस लिनियस स्वीडन के प्राणिशास्त्री थे । इन्होंने प्रजाति को चार भागों में विभाजित किया है, जो निम्न है : -

1. अमेरिकी प्रजाति - त्वचा का रंग लाल
2. यूरोपीय प्रजाति - त्वचा का रंग श्वेत
3. एशियाई प्रजाति - त्वचा का रंग पीला
4. अफ्रीकी प्रजाति - त्वचा का रंग काला

9.5.3 ब्लूमन बैंक का वर्गीकरण

बैंक महोदय ने यह वर्गीकरण सर 1806 में प्रस्तुत किया था । आपने त्वचा के रंग, बाल, चेहरा व खोपड़ी के आकार को आधार मानकर मानव प्रजातियों को चार भागों में विभाजित किया है ।

काकेशियन	-	त्वचा का रंग श्वेत, नाक संकड़ी, गोल खोपड़ी
मंगोलियन	-	पीली त्वचा, छोटी नाक व चौकोर खोपड़ी
इथोपियन	-	काली त्वचा, नाक चौड़ी व लम्बी खोपड़ी

अमेरिकी इंडियन	-	त्वचा का रंग लम्बाई, चौड़ा चेहरा व अनियमित चेहरा
एवं मलय प्रजाति		

9.5.4 क्रोबर का वर्गीकरण

क्रोबर महोदय ने विश्व की प्रजातियों को तीन प्रमुख भागों व ग्यारह उपविभागों में विभक्त किया है । इनके विभाजन का आधार सिर का आकार, बालों की बनावट, त्वचा का रंग व नाक की बनावट है ।

1. कॉकेशायड - नॉर्डिक, अल्पाइन, भूमध्यसागरीय व हिन्दू
2. मंगोलॉयड - मंगोलियन, मलेशियन, अमेरिकन व इण्डियन
3. निग्रायड - नीग्रो, पिग्मी, बुशमैन आदि

9.5.5 हैडन का वर्गीकरण

ए. सी. हैडन ने सिर के बालों को मुख्य आधार मानकर सर 1924 में मानव प्रजातियों को वर्गीकृत किया था । उन्होंने गौण आधार के रूप में सिर की बनावट, त्वचा का रंग, शरीर का कद व नाक की बनावट को भी रखा । इस प्रकार हैडन महोदय ने सम्पूर्ण प्रजातियों को तीन प्रधान भागों में विभक्त किया है ।

1. छल्लेदार बालों वाली प्रजातियाँ - इनमें नीग्रिटो व नीग्रो हैं ।
2. लहरदार बालों वाली प्रजातियों - इनमें आस्ट्रेलॉइड, कॉकेशियन, नॉर्डिक व अल्पाइन हैं ।
3. सीधे बालों वाली प्रजातियाँ - इनमें मंगोलियन हैं ।

9.5.6 ग्रिफिथ टेलर का प्रजातीय वर्गीकरण

सन् 1919 में टेलर ने जलवायु चक्र और प्रजातियों के विकास का प्रवास कटिबन्ध सिद्धान्त के आधार पर मानव प्रजातियों का वर्गीकरण करते हुए स्पष्ट किया कि प्रारम्भ की पांच मानव प्रजातियों की उत्पति मध्य एशिया में महा हिमयुग के पूर्व हुई थी और वहीं से ये प्रजातियाँ अन्य महाद्वीपों में फैली । जलवायु में परिवर्तनों के साथ-साथ मानव प्रजातियों के भौतिक लक्षणों में भी विभिन्नता उत्पन्न होती रही । टेलर ने बालों की बनावट और खोपड़ी के सूचकांक के आधार पर 7 मानव प्रजातियों को निम्न में बांटा है (चित्र- 9. 1) : -

1. **नीग्रीटो :** इस प्रजाति का रंग लाल चाकलेटी से लेकर काला कत्थई तक होता है । इसका डीलडौल नाटा, होंठ काफी मोटे, नाक चौड़ी तथा चपटी होती है । अणुवीक्षण यन्त्र से देखने पर इनके बाल चपटे और फीते के समान घने होते हैं । ये आपस में लिपटकर गाँठ का निर्माण करते हैं । इनके जबड़े और दांत आगे निकले होते है, जिसमें एक उत्तल स्वरूपीय ढांचा बनता है । इस समय कुछ ही हजार नीग्रीटो जीवित हैं । उनमें भी अन्य जातियों के रक्त का इतना मिश्रण हो गया है कि उनके सिर के असली आकार के विषय में ठीक -ठीक कुछ कहा नहीं जा सकता, परन्तु उनके सिर का आकार तार्किक रूप से अवश्य 68 से 70 तक रहा होगा। नीग्रोटो प्रजाति के लोग इस समय श्रीलंका, मलेशिया, फिलीपीन्स,

इण्डोनेशिया, लूजन और न्यूगिनी के पहाड़ी वन प्रदेशों में हैं । इनके बड़े समूह युगाण्डा, फ्रांसीसी, विषुवत रेखा, कांगो बेसिन, कैमरून और अण्डमान द्वीपसमूह में मिलते हैं । पश्चिमी अफ्रीका और दक्षिणी अफ्रीका में भी इनके कुछ चिन्ह मिलते हैं । तसमानिया और जावा में भी पहले इनका निवास था । यूरोप, पूर्वी साइबेरिया और उत्तरी अमेरिका में अत्यधिक शीत पड़ने के कारण नीग्रीटो प्रजाति इन क्षेत्रों में नहीं पहुंच पायी ।

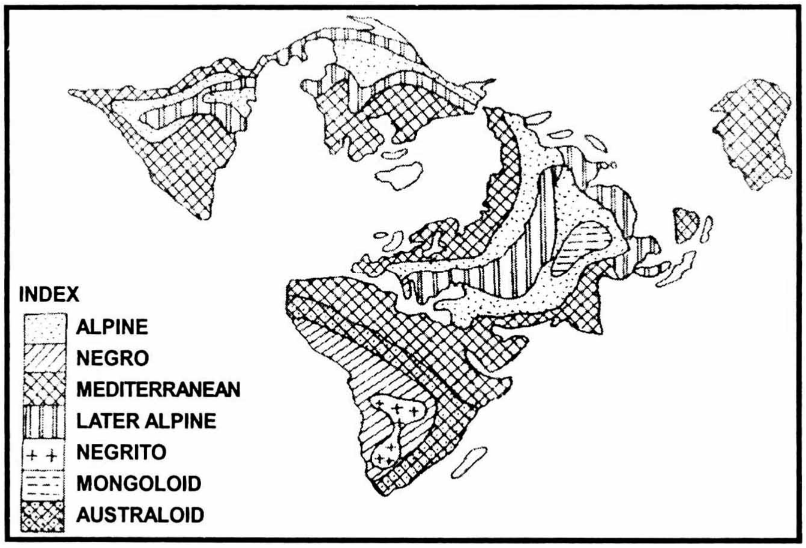

चित्र - 9.1 : ग्रिफिथ टेलर का प्रजातीय वर्गीकरण व वितरण

2. **नीग्रो :** इस प्रजाति का सिर अत्यन्त लम्बा होता है और अनुपात 70 से 72 तक मिलता है । उर्ध्वकार में इनके बाल लम्बे और अण्डाकार होते हैं, जिससे ये घुंघराले बन जाते हैं । इनकी त्वचा का रंग प्राय: भूरे से हल्का लाल, काला और काजल के समान होता है । इनके जबड़े निकलते हुए और नाक चपटी और चौड़ी होती है । नीग्रा प्रजाति दो स्थानों में मिलती है । पुरानी दुनिया के दोनों किनारों पर । इनमें पहली पश्चिमी अफ्रीका में सूडान और गिनी तट पर और दूसरी पैपुआं या न्यूगिनी में मिलती है । ऐतिहासिक युग में नीग्रो दक्षिणी यूरोप और एशिया में भी रहते थे । भारत में कोल, श्रीलंका में वेछा इनके प्रतीक हैं।
3. **आस्ट्रेलॉयड :** इस प्रजाति का सिर लम्बा और उभरा हुआ और कपाल सूचकांक 72 से 74 तक होता है । बाल पूर्णत : घुंघराले और त्वचा का रंग गहरे काले से लेकर कत्थई तथा पीला होता है । प्रत्येक बाल ऊर्ध्व लम्बा अण्डाकार होता है । जबड़े कुछ निकले हुए और नाक साधारण रूप से चौड़ी है । मानव प्रजाति के ये प्रकार आस्ट्रेलिया में मिलते हैं । ये स्व समय सारे आस्ट्रेलिया में छाये हुए थे । दक्षिणी भारत के वनों में भी इन लोगों के समूह मिलते हैं । ब्राजील में डोंस और बूटो-कूटो जातियां भी इसी की प्रतीक हैं । पूर्व ऐतिहासिक युग में आस्ट्रेलॉयड उत्तरी अमेरिका, पूर्वी एशिया और दक्षिणी यूरोप में भी पाये जाते थे । वर्तमान में इस प्रजाति का विस्तार भारत के दक्षिणी-पूर्वी भाग, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, अफ्रीका के मध्यवर्ती भाग एवं द्वीपसमूह के कुछ भागों में सीमित है ।

4. **भूमध्य सागरीय :** इस प्रजाति का सिर लम्बा कपाल सूचकांक 74 से 77 तक, नाक अण्डकार, बाल घुंघराले और जबड़े निकले होते हैं । इसकी प्राचीनतम प्रजाति कद में बड़ी छोटी और हड्डीदार चेहरे की होती है । आइबेरियन प्रजाति सुडौल, शरीर वाली और जैतून एवं तांबे के रग की होती है । सैमाइट प्रजाति लम्बी और सुन्दर होती है और इसकी नाक सुदृढ होती है । यह प्रजाति सभी बसे हुए महाद्वीपों के बाहरी किनारों पर मिलती है । इसमें यूरोप के पूर्तगाली, अफ़्रीका के मिस्री और आस्ट्रेलिया के माइक्रोनेसियन सम्मिलित हैं । उत्तरी अमेरिका के इरोकबाइस और दक्षिणी अमेरिका के तूपी भी इसी श्रेणी में आते हैं ।
5. **नार्डिक :** इस प्रजाति की मध्यम लम्बाई और चौडाई के सिर, लहरदार बाल र चपटा चेहरा और गरूड़ जैसा नाक इसकी पहचान है । अधिकाँश नार्डिक लोगों की चमड़ी हल्के पूरे से गुलाबी रंग की होती है । उत्तरी यूरोपियों की चमड़ी गोरे से गुलाबी होती है । मानव इतिहास के उषाकाल में यह प्रजाति यूरोप के भूमध्यसागरीय किनारों पर तथा एशिया तथा दोनों अमेरिका में फैली थी । यह कहा जाता है कि न्यूजीलैण्ड और वृहत् आस्ट्रेलियन सामूहिक प्रदेशों में पोलीनेशिया के भाग में भी इसका विस्तार था । केवल अफ्रीका में इनके विस्तार से कटिबन्ध नहीं मिलते । यद्यपि उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका के लोगों में इसके कुल लक्षण अवश्य पाये जाते है । जर्मनी का तानाशाह अडोल्फ हिटलर अपने आपको नार्डिक प्रजाति का वंशज समझता था जिनका प्रतीक चिन्ह स्वास्तिक था ।
6. **अल्पालाइन :** यह प्रजाति चौड़े सिर वाली है । चेहरे का ढाँचा सीधा होता है । नाक साफ तौर से संकीर्ण और बाल - सीधे होते हैं और रंग भूरे से गोरा तक होता है । अल्पाइन जाति की पश्चिमी शाखा जिसमें स्लेब, आरमोनियस, अफगान आदि सम्मिलित हैं । ये रंग में गोरे होते हैं, परन्तु पूर्वी शाखा के लोग अर्थात् फिन, मैगीआर्स, मंचूज और सीवक्स कुछ पीलापन लिये होता हैं । मानव इतिहास के प्रारम्भ में ये दोनों अमेरिका और एशिया में कुछ भागों में पाये जाते थे और यूरोप के मध्य की ओर घुसे हुए थे ।

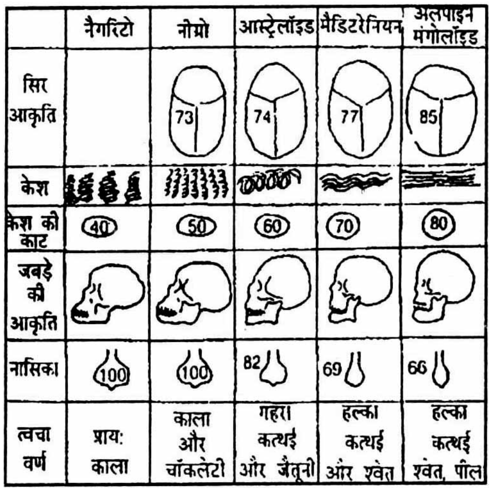

विभिन्न प्रजातियों के शारीरिक लक्षण (टेलर पर आधारित)

7. **मंगोलियन :** उत्तर अल्पाइन या मंगोलियन गोल सिर के होते हैं । इनके बाल सीधे और चपटे, चेहरा और जबड़ा नतोदार होता है । नाक पतली और संकड़ी, रँग हल्का पीला सा खुमानी रंग का होता है ।

इतिहास के उषाकाल में यह प्रजाति केवल मध्य एशिया के केन्द्रीय स्थानों में ही सीमित थी । इसके बाद वह पश्चिम में तुर्किस्तान और पूर्व में पूर्वी तट तक फैली । पिछड़े प्रदेश में यह अल्पाइन, नार्डिक और भूमध्यसागरीय लोगों से मिश्रित हो गयी, जिससे एक नयी जाति वर्णसंकर बनी, जो चीन तथा उसके समीपवर्ती प्रदेशों में पायी जाती है । चीन, जापान, कोरिया और दक्षिण - पूर्व एशिया में इस प्रजाति के लोगों का बाहुल्य है । यह प्रजाति विश्व की सबसे आधुनिक प्रजाति मानी जाती है ।

9.6 ग्रिफिथ टेलर का कटिबन्ध - स्तर सिद्धान्त

ग्रिफिथ टेलर ने 1919 में मानव प्रजातियों के उद्भव और विकास से सम्बन्धित एक नवीन संकल्पना प्रस्तुत की जिसे उन्होंने प्रवास कटिबन्ध सिद्धान्त या कटिबंध रख स्तर सिद्धान्त की संज्ञा प्रदान की है । टेलर पर डार्विन के विकासवाद सिद्धान्त का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ता है । टेलर की संकल्पना अनेक जैविक तथा भौगोलिक तथ्यों पर आधारित है जिसे अधिसंख्यक विद्वानों का समर्थन प्राप्त है । कटिबंध और स्तर सिद्धान्त के माध्यम से टेलर महोदय ने मानव प्रजातियों की उत्पति तथा विकास की व्याख्या क्षेत्र और समय के संदर्भ में की है ।

टेलर की यह मान्यता है कि सभी मानव प्रजातियों की उत्पति महाहिम युग से पहले ही हो चुकी थी । उन्होंने मध्य एशिया से समस्त प्रजातियों का उद्‌गम स्थल माना है जहां से वे फैलकर विभिन्न महाद्‌वीपों तक पहुंच गयी हैं । उनके अनुसार महाहिमयुग का अधिक प्रभाव उत्तरी गोलार्द्ध पर पड़ा जिसके कारण जलवायु और वनस्पति पेटियों में भी परिवर्तन हुए । उस समय मध्य एशिया की जलवायु अपेक्षाकृत गर्म थी और यह मुख्यत: स्टेपी (शीतोष्ण घास) प्रदेश था । इसके उत्तर में वन पेटी तथा दक्षिण में क्रमश: रेगिस्तानी तथा वन भूमि का विस्तार था । आखेट मानव जीवन का मूलाधार था । जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप कई अंतर्हिम युग भी आते रहे । मानव प्रजाति का उद्भव विभिन्न अंतर्हिम युगों की अवधि में हुआ। टेलर के मतानुसार सबसे पहले नीग्रेटो प्रजाति का विकास मध्य एशिया में हुआ जहाँ की जलवायु उस समय उष्ण थी । कालान्तर में हिमयुग का प्रादुर्भाव हुआ और मध्य एशिया की जलवायु अति शीतल हो जाने के कारण मानव निवास के योग्य नहीं रह गयी । गर्म जलवायु वाले वन प्रदेश की पेटी दक्षिण की ओर खिसक गयी जिसके फलस्वरूप मानव समुदायों ने दक्षिण की ओर प्रवास किया जहाँ की जलवायु अपेक्षाकृत गर्म थी । सहस्रों वर्षों पश्चात् पुन: जलवायु दशाओं में परिवर्तन हुए और हिमयुग धीरे - धीरे समाप्त हो गया । हिमयुग की समाप्ति पर मध्य एशिया की जलवायु दशाओं में पुन: परिवर्तन हुए और उष्ण हो गयी जिसके फलस्वरूप वनस्पतियों तथा जीवों की पेटियाँ पुन: उत्तर की ओर खिसक गयी । फलत: दक्षिण की ओर प्रवासित मानव जाति के बहुत से समूह पुन: मध्य एशिया वापस लौट आये किन्तु इनके अनेक वर्ग वापस नहीं लौटे और प्रवास वाले क्षेत्रों में ही रहने लगे थे । उन पर अधिक

धूप एवं ताप के प्रभाव से उनकी त्वचा के रंग काला तथा सिर लम्बे हो गये किन्तु उसी अवधि में एशिया में रहने वाले मनुष्यों के त्वचा वर्ण अपेक्षाकृत साफ और सिर चौड़े हो गये । इस प्रकार उष्ण कटिबंध में नीग्रिटो तथा मध्य एशिया में नीग्रो प्रजातियों का विकास हुआ।

कालान्तर में द्वितीय हिमयुग के आगमन पर मध्य एशिया से पुन: मनुष्यों ने बड़ी संख्या में प्रवास किया । इन मानव समूहों ने पहले से रहने वाली प्रजाति के लोगों को बाहर की ओर खदेड़ दिया, जिससे वे मानव समूह बाहर की ओर स्थानान्तरित होते गये । द्वितीय हिमयुग के समाप्त होने पर कुछ मानव समुदाय पुन मध्य एशिया में लौट आये किन्तु कुछ वर्ग नहीं लौटे और वहीं के पर्यावरण से समायोजन करके रहने लगे । इसी प्रकार जलवायु के परिवर्तन के परिणामस्वरूप बाद के हिम युगों और अन्तर्हिम युगों में भी मानव प्रवास होता रहा । इस प्रकार प्रत्येक अंतर्हिम युग में मध्य एशिया की भूमि पर नवीन मानव प्रजातियों का उद्भव सम्भव हुआ । टेलर के मतानुसार सभी मानव प्रजातियों का विकास क्रमिक रूप से मध्य एशिया में हुआ जहाँ से उनका प्रवास बाह्य प्रदेशों के लिए होता रहा । बाद में विकसित होने वाली प्रजातियाँ अपने पूर्ववर्ती प्रजातियों से अधिक चतुर और शक्तिशाली थी । अतः' बाद में विकसित होने वाली प्रजातियाँ अपने से पहले विकसित प्रजातियों को बाहर की ओर हटाती गयी । इस प्रकार जो मानव प्रजाति सबसे पहले विकसित हुई वह (नीग्रिटो) बाद में विकसित प्रजातियों द्वारा महाद्वीपों की परिधि (बाह्य प्रदेशों) की ओर हटा दी गयी ।

टेलर के मतानुसार मध्य एशिया में निएण्डरथल मानव के पश्चात् क्रमश' नीग्रिटो, नीग्रो, आस्ट्रेलॉइड, भूमध्य सागरीय, अल्पाइन तथा मंगोलॉइड प्रजातियों का विकास हुआ। सबसे पहले विकसित प्रजातियाँ महाद्वीपों के बाहरी पेटी में पायी जाती हैं और बाद में विकसित प्रजातियाँ क्रमश: महाद्वीपों की आंतरिक पेटी में पायी जाती हैं । सबसे बाद में विकसित होने वाली मंगोलॉइड प्रजाति अभी भी मध्य एशिया तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में निवास करती है । विभिन्न मानव समूहों (प्रजातियों) का स्थानान्तरण कई चरणों में हुआ। प्रत्येक स्थानान्तरित मानव समूह दीर्घकाल तक प्रदेश में रहने के बाद इन: बाहर की ओर स्थानान्तरित होता रहा । स्थानान्तरण के कारण नये पर्यावरण से उन मानव समुदायों को समायोजन करना पड़ता था जिसके फलस्वरूप मनुष्य के शारीरिक लक्षणों जैसे त्वचा के रंग, सिर, बाल, नाक आदि की आकृति और शारीरिक कद में भी परिवर्तन होता गया । इस प्रकार नये जलवायु कटिबंधों के प्रभाव से भिन्न-भिन्न शारीरिक लक्षणों वाली मानव प्रजातियों का उद्भव एवं विकास सम्भव हुआ।

टेलर ने अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में प्रजाति सम्बन्धी तथ्यों को निम्नांकित साक्ष्यों तथा सिद्धान्तों के रूप प्रस्तुत किया है

1. पृथ्वी के विशाल भू-खण्डों में एशिया महाद्वीप की केन्द्रीय स्थिति है जिसके समीप तीन महाद्वीप यूरोप, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा अमेरिका हैं ।
2. प्रत्येक महाद्वीप में प्रजातीय कटिबंध पाये जाते हैं जो मध्य एशिया से बाहर की ओर क्रमश: आदि कालीन होते गये हैं ।

3. सर्वाधिक आदि कालीन प्रजाति महाद्वीपों के बाहरी पेटी में या परिधीय क्षेत्रों में पायी जाती हैं और सबसे अंत में विकसित होने वाली प्रजाति केन्द्रीय भाग (मध्य एशिया) में पायी जाती हैं ।
4. जिन क्षेत्रों में प्रजातीय विकास की प्रगति सर्वाधिक हुई है, वहां भूमि में आदिम प्रजातियों के दबे हुए स्तर सर्वाधिक पाये जाते हैं ।
5. मानव प्रजातियों के विकास का क्रम दोनों प्रकार से एक जैसा ही पाया जाता है । चाहे विकास केन्द्र (मध्य एशिया) से बाहर की ओर जाते हुए विभिन्न कटिबन्धों को पार किया जाय अथवा विकास केन्द्र में ऊपर से नीचे की ओर विभिन्न स्तरों को देखा जाये ।
6. आदिम प्रजाति उन प्रदेशों में जीवित (वर्तमान) पायी जाती है, जहाँ पर उनकी उत्पति नहीं हुई थी, बल्कि वे अन्यत्र से स्थानान्तरित होकर वहाँ पहुँची हैं ।
7. यूरोप, अफ्रीका, दक्षिणी एशिया तथा आस्ट्रेलिया मे पाये गये साक्ष्यों के आधार पर स्पष्ट होता है कि मध्य एशिया में प्रजातियों का अपकेन्द्रीय प्रवास हुआ है । प्रथम मानव समूह का प्रवास दक्षिण-पश्चिम एशिया तथा अफ्रीका की ओर हुआ । द्वितीय प्रमुख प्रवास दक्षिणी पूर्वी एशिया होते हुए आस्ट्रेलिया की ओर हुआ । तीसरा प्रवास साइबेरिया होते हुए बेरिंग जलसन्धि के रास्ते से उत्तरी अमेरिका के लिए हुआ ।

9.7 संसार की प्रमुख मानव प्रजातियाँ

विश्व के विभिन्न भागों मे पायी जाने वाली सभी मानव प्रजातियों को उनकी उत्पत्ति, विकास, स्थानान्तरण व प्रजातीय समिश्रण के आधार पर चार प्रमुख समूहों में बाँटा जाता है जो निम्नलिखित

1. निग्रोइड प्रजाति
2. आस्ट्रेलॉइड प्रजाति
3. कॉकेसाइड प्रजाति
4. मंगोलॉइड प्रजाति

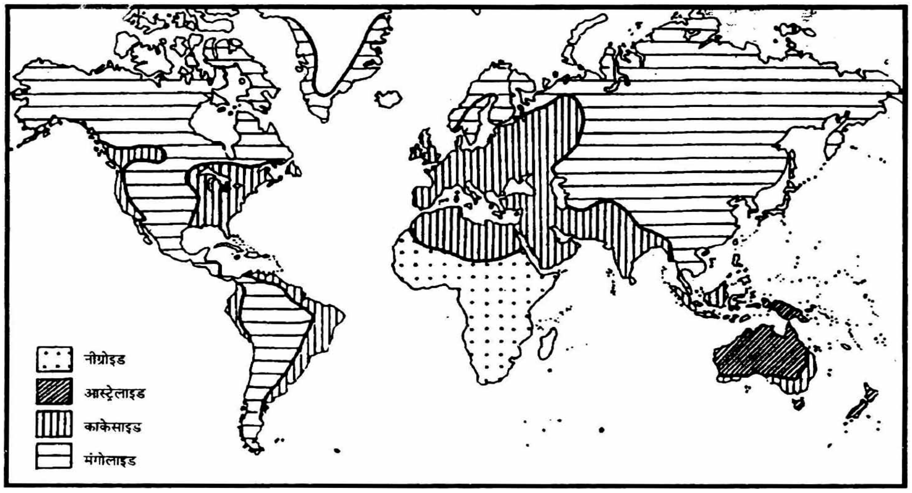

चित्र- 9.2 : विश्व की प्रमुख मानव प्रजातियाँ

9.7.1 निग्रोइड प्रजाति

इस प्रजाति समूह के मनुष्यों की त्वचा, केश तथा नेत्रों के रंग काले होते हैं । सिर के बाल घुंघराले, छल्लेदार अथवा लहरदार (woolly and wavy) होते हैं । इनकी नाक चौड़ी और जबड़ा आगे को कुछ निकला हुआ होता है । होंठ मोटे होते हैं तथा ऊपरी होठ आगे निकला हुआ होता हैं । नीग्रो शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के नीगर शब्द से जुड़ी हुई है जिसका अर्थ है काला (black) नीग्रोइड प्रजाति का मुख्य आवास अफ्रीका महाद्वीप है और इसलिए नीग्रोइड बहूल अफ्रीकी क्षेत्र मध्य और दक्षिणी अफ्रीका को काला अफ्रीका (black Africa) कहलाता हैं । नीग्रोइड प्रजाति के विभिन्न उपवर्गो में मानव वैज्ञानिक विशेषताओं में उल्लेखनीय अतर पाया जाता है । कुछ की त्वचा हल्के रंग की होती है तो कुछ के होंठ की मध्यम मोटाई होती हैं । शारीरिक कद और नाक की बनावट में भी भिन्नता देखी जाती हैं ।

नीग्रोइड प्रजाति समूह को दो प्रमुख वर्गों में विभक्त किया जा सकता हैं ' -

(अ) प्रधान नीग्रोइड प्रजातियाँ - इसमें पिग्मी व जंगली नीग्रो हैं ।

(ब) गौण नीग्रोइड प्रजातियाँ - इसमें बुशमैन, नीलोटिक नीग्रो, महासागरीय नीग्रो व अमेरिकी नीग्रो शामिल हैं ।

9.7.2 आस्ट्रेलॉइड प्रजाति

इसे ओशेनियाई प्रजाति के नाम से भी जाना जाता है । इसके प्रतिनिधि मुख्यत ' आस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैण्ड (ओशेनिया) में निवास करते हैं । आस्ट्रेलिया के मूल निवासी एशियायी मुख्य भूमि से बहुत दूर तक एक लघु तथा विपन्न महाद्वीप पर लम्बी भौगोलिक पृथकता की अवस्थाओं में विकसित हुए हैं । आस्ट्रेलियाई आदिवासियों के प्रजातीय लक्षण यह प्रकट करते है कि वे नीग्रोइड प्रजाति के निकट रूप से सम्बन्धित हैं । कुछ विद्वान् इसे प्राचीन काकेसियन प्रजाति के अन्तर्गत सम्मिलित करते हैं । वर्तमान में शुद्ध आस्ट्रेलियाई आदिवासियों की संख्या लगभग 40,000 है । आस्ट्रेलिया के उपनिवेशन के समय यह संख्या लगभग 3 लाख थी । इनके अनेक लघु समूह भी हैं ।

अधिकांश आस्ट्रेलियाई आदिवासियों के शारीरिक लक्षण हैं - गहरी कत्थई या गहरी चाकलेटी त्वचा, घुंघराले (लहरदार) बाल, शरीर तथा चेहरे पर सुविकसित रोम, संकरा तथा नीचा चेहरा विकसित भौहें, गहरे कत्थई नेत्र, मोटे होंठ, आगे निकले हुए जबड़े, बहुत कम विकसित चिबुक, लम्बा सिर तथा औसत से अधिक लम्बा कद ।

कतिपय मानवशास्त्रियों का विचार है कि पाषाण काल में दक्षिणी - पूर्वी एशिया में मुख्यत : आस्ट्रलियाई और मेलेनेशियाई दोनों प्रारूप समूहों का मूल आवास था । आस्ट्रेलियाई प्रजाति के पूर्वज उत्तर पाषाण काल में स्थानान्तरित होकर मोलक्का द्वीप समूह, सेरांग और न्यूगिनी होते हुए आस्ट्रेलिया महाद्वीप पर पहुँच गये । यह भी माना जाता है कि वे जावा, सेलीबीज तथा तिमोर द्वीपों से होते हुए आस्ट्रेलिया के उत्तरी-पूर्वी तट पर पहुंच गये होगें । इनके पहुँचने से पूर्व आस्टेलिया में टस्मानियाई प्रजाति के लोग रहते थे । आस्ट्रेलियाइयों के द्वारा भगा दिये जाने के कारण उनमें से कुछ लोग वास जल संधि को पार करके तस्मानियाई पहुँच गये थे जो

तस्मानियाई पूर्वज आस्ट्रेलिया की मुख्य भूमि पर रह गये थे उन्हें आस्ट्रेलियाइयों ने समाप्त कर दिया । तस्मानियाई लोग ओशेनिया के मूल निवासी थे । उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेज उपनिवेशवादियों ने जिस तस्मानियाई समूह को पाशविक तरीके से नष्ट कर दिया, वे भी मेलानेशियाई प्रारूप समूह के ही थे ।

आस्ट्रेलिया प्रजाति के समान किन्तु उससे पूर्व विकसित होने वाले मानव समूहों को आद्य आस्ट्रेलॉइड कहा जाता है । दक्षिण भारत की द्रविड़, श्रीलंका की वेद्दा और जापान की आइनू अथवा कुरील प्रजाति भी प्रोटो आस्टेलाइड प्रकार की है । ज्ञातव्य है कि द्रविड़ों में कई ऐसे लक्षण मिलते हैं जो इथोपियाई समूह के लक्षणों में समता रखते हैं । कुछ सोवियत मानवशास्त्रियों के अनुसार आइनू मूलत' एक आस्ट्रेलाइड प्ररूप था जिसने दक्षिण - पूर्वी और पूर्वी एशिया के मंगोलाईड प्रजातियों के साथ मिश्रण द्वारा नवीन लक्षण प्राप्त कर लिया है ।

9.7.3 कॉकेसाइड प्रजाति

इसे यूरोपीय महाप्रजाति के नाम से भी जाना जाता है । इस प्रजाति का मूल निवास क्षेत्र यूरोप, दक्षिणी एव दक्षिण पश्चिम एवं उत्तरी अफ्रीका है । नयी दुनिया (अमेरिका) की खोज के पश्चात् इस प्रजाति के लोग उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका और बाद में आस्ट्रेलिया में भी फैल गये । आदिकालीन कॉकेसाइड प्रजाति के लोग दक्षिणी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका तथा दक्षिण-पश्चिम एशिया के संयुक्त भूमि पर निवास करते थे जहाँ से उत्तर पाषाण काल या उससे भी बाद के युगों में पूरे यूरोप तथा उत्तरी अफ्रीका को घेरते हुए सभी दिशाओं में फैल गये ।

कॉकेसाइड प्रजाति के मनुष्यों की त्वचा का रंग हल्के गुलाबी (गेहुंआ) से पूरे रंग का होता है । शरीर रोम प्रचुर तथा चेहरे के बाल अधिक विकसित होते हैं । सिर के बाल मुलायम तथा हल्के लहरदार से सीधे होते हैं । जिसका रंग हल्के से गहरा (काला) तक पाया जाता हैं । ललाट सीधा अथवा हल्का ढलवा होता है तथा ऊपरी पलक पर बाल कम विकसित होते हैं । इसके नेत्र प्राय: भूरे होते हैं किन्तु धूसर, हल्की नीली तथा नीली आखों वाले लोग भी पाये जाते हैं । नाक पतली एव ऊँची तथा होंठ पतले होते हैं ।

कॉकेसाइड प्रजातियों को दो प्रधान वर्गों के अंतर्गत रखा जा सकता हैं -

(अ) प्रमुख कॉकेसाइड प्रजातियाँ

(ब) गौण या परिवर्तित कॉकेसाइड प्रजातियाँ

(अ) **प्रमुख कॉकेसाइड प्रजातियाँ :** यह प्रजाति समूह भी दो शाखाओं (वर्गों) में विभक्त हैं :-

- (i) दक्षिणी शाखा :- इसके अन्तर्गत भूमध्य सागरीय प्रजाति और अर्मीनाइड प्रजाति हैं।
- (ii) उत्तरी शाखा (अटलांटिक -बाल्टिक) की प्रजातियाँ : - इसके अन्तर्गत नार्डिक प्रजाति और अल्पाइन प्रजाति सम्मिलित हैं ।

(ब) **गौण या परिवर्तित कॉकेसाइड प्रजातियाँ :** इसमें पूर्वी बाल्टिक प्रजाति, दिनारिक प्रजाति, इण्डो द्रविड आदि हैं ।

बोध प्रश्न- 3

1. टुंड्रा प्रदेश में कौन रहते हैं? ( )

2.	नीग्रो प्रजाति के बाल कैसे होते हैं?	( )
3.	काकेशियन प्रजाति की त्वचा का रंग कैसा हैं?	( )
4.	एडोल्फ हिटलर अपने आपको किस प्रजाति का वंशज मानता था?	( )
5.	रैड इंडियन्स कहाँ पाये जाते हैं?	( )

9.7.4 मंगोलॉइड प्रजाति

मंगोलाइड प्रजाति को एशियाई -अमेरिकी प्रजाति के नाम से भी जाना जाता है । ग्रिफिथ टेलर के अनुसार यह सबसे नवीन और बाद की अल्पाइन (late alpine) प्रजाति है जो इतिहास के आरम्भिक काल में एशिया के विशाल केन्द्रीय भाग में रहती थी । बाद में यह पश्चिम में तुर्किस्तान और पूर्व में महाद्वीपीय तटों तक फैल गयी । मंगोलाइड प्रजाति के अन्तर्गत सम्पूर्ण मानव जाति का एक - तिहाई से अधिक (लगभग 37%) भाग सम्मिलित है जिनमें से लगभग आधे लोग चीन में है । मंगोलाइड प्रजाति के प्रतिनिधि अधिकांशत: एशिया के उत्तरी, मध्यवर्ती, पूर्वी तथा दक्षिणी- पूर्वी क्षेत्रों में पाये जाते हैं ।

दोनों अमेरिकाओं तथा आस्ट्रेलिया में भी इसके अल्प प्रतिनिधि मिलते हैं ।

मंगोलाइड प्रजाति के मनुष्यों का सिर गोल तथा लघु होता है । जिसका सिर सूचकांक 80 से ऊपर पाया जाता है । त्वचा का रंग पीला से भूरा तक और सिर के बाल सीधे, कड़े तथा सामान्यतया काले होते हैं । इनकी नाक पतली और चेहरा अवतल होता है । आनन रोम (दाढी -मूछें) सामान्यतया कम विकसित होते हैं तथा शरीर पर रोमावलियों का लगभग अभाव होता हे । मंगोलाइड प्रजाति तीन प्रमुख शाखाओं में विभक्त है : -

1. उत्तरी मंगोलॉइड
2. दक्षिणी मंगोलाइड
3. अमरीकी इण्डियन

इस प्रकार विश्व की मानव प्रजातियों के उद्भव, विकास और वर्तमान वितरण एक बहुत ही रूचिकर व ज्ञानवर्धक विषय है । इस विषय का अध्ययन व्यापक पैमाने पर भी किया जा सकता है ।

9.8 सारांश (summary)

अंत में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जीव - जगत की चरम सीमा मेघावी मानव या बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में मानी जाती है जिसे आंग्ल भाषा में होमोसेपियन्स कहा जाता है । सभी जीवित मनुष्य एक ही वर्ग होमोसेवियन्स के हैं तथा अधिकांश विद्वान् इस बात से सहमत हैं कि आदि मानव का जन्म मध्य एशिया में हुआ होगा । इस क्षेत्र का तत्कालीन जलवायु शीतोष्ण थी और जल, वनस्पति. पशु-पक्षी तथा कंद-मूल-फल आदि प्रचुर मात्रा में मिलते होंगे । मानव के उद्भव व विकास के दौर में हिम युगों का प्रभाव बहुत अधिक रहा है । प्राकृतिक कारण जैसे - भूकम्प, ज्वालामुखी, जलवायु परिवर्तन आदि से मानव स्थानान्तरण हुआ और जिस भूभाग में मनुष्य गया वहाँ के पर्यावरण ने अपना प्रभाव उस पर डाला ।

परिणामस्वरूप मानव के शारीरिक गठन, रक्त वर्ग, त्वचा का रग व बौद्धिक लक्षणों में विभिन्नता दृष्टिगोचर होने लगी । इससे अलग -अलग प्रजातियों का जन्म हुआ । मायोसीन युग के प्रारम्भिक काल से लेकिन नूतन युग तक मानव व मानव प्रजातियों के अध्ययन को मानव शास्त्रियों ने अपने - अपने नजरिये से परिभाषित व रेखांकित किया है ।

मानव प्रजातियों के विकास में ग्रंथिरस प्रभाव, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक वातावरण, जैविक परिवर्तन, भौगोलिक व सामाजिक एकान्त व प्रजाति मिश्रण आदि ऐसे कारक रहे हैं जिनके सामुहिक प्रभाव ने वर्तमान मानव व प्रजातियों की रचना में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है । प्रजातियों के शारीरिक लक्षणों का अपना विशेष महत्व है जो प्रत्येक व्यक्ति की पहचान को दर्शाता है । इन शारीरिक लक्षणों में शरीर का गठन (काठी-काया), सिर का आकार, बालों की बनावट, नाक का आकार, कपाल धारिता, मुखाकृति, त्वचा रग, खून का ग्रुप आदि बहुत महत्वपूर्ण हैं जिससे प्रजाति की पहचान निर्धारित होती है । इन्हीं शारीरिक लक्षणों के आधार पर लिनियस, ब्लूमनबैक, हक्सले, क्रोबर, हैडन और टेलर आदि विद्वानों ने अपने-अपने नजरिये से मानव प्रजातियों का वर्गीकरण किया है । कुल मिलाकर लुब्बे-लुवाब के रूप में नीग्रटो, नीग्रो, आस्ट्रेलॉइड, भूमध्य सागरीय, नार्डिक, अल्पाइन व मंगोलिक प्रजातियाँ प्रमुख हैं, जिन्हें सारांश में नीग्रो, आस्ट्रेलियाई, काकेशियाइ व मंगोल चार प्रमुख प्रजातियों में बाँटा जा सकता है ।

मानव प्रजातियों के वर्गीकरण एव वर्तमान वितरण की विभित्र अवस्थाओं के रेखांकित करते हुए ग्रिफिथ टेलर ने कटिबन्ध स्तर सिद्धान्त की ब्रून्स बहुत महत्वपूर्ण परिकल्पना प्रस्तुत की है जिसे इतना व्यापक समर्थन मिला कि अब उसे सिद्धान्त का दर्जा मानव शास्त्रियों ने दे दिया है । इस सिद्धान्त की व्यापक चर्चा सामाजिक व मानवीय विज्ञानों में चर्चित रही है । मानव प्रजाति विषय रूचिकर है । हमें अपने पूर्वजों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है । इतिहास का झरोखा खुलता है । मानव शास्त्रियों की सोच और दृष्टिकोण के अनोखे अध्याय का पर्दा ऊपर उठता है और मानव जीवन की फिल्म फ्लैश बैक (भूतकाल) में दिखने लगती है ।

9.9 शब्दावली (glossary)

- **होमोसेपियन्स :** मेघावी मानव, बुद्धिमान प्राणी, जीव जगत के विकास की चर्म सीमा ।
- **प्रजाति :** परिवार, वंश व नस्ल से सम्बन्धित मानव समूह ।
- **शारीरिक लक्षण :** मुख, नाक, सिर, आँख, त्वचा, कद आदि को दर्शाने वाले कारक ।
- **शरीर का कद :** शरीर की ऊँचाई ।
- **कपाल सूचकांक :** लम्बा, मध्यम व चौडा सिर का पैमाना ।
- **नासिका सूचकांक :** पतला, मध्यम व चौडेनाक का मापक ।
- **एल्पाइन :** शीतोष्ण कटिबन्ध में रहने वाले श्वेत लोग ।
- **भूमध्य सागरीय :** भूमध्य सागर के आस पास का क्षेत्र ।
- **नीग्रीटो :** उष्ण कटिबन्ध में रहने वाली छोटे कद व काली त्वचा की प्रथम प्रजाति ।
- **नीग्रो :** विश्व की दूसरी प्रजाति श्याम व काला रंग ।

- **आस्ट्रेलाइड :** आस्ट्रेलिया, ब्राजील, द0भारत में रहने वाली प्रजाति ।
- **नार्डिक :** उत्तरी यूरोप व अन्य क्षेत्रों में गुलाबी त्वचा वाली प्रजाति ।
- **मंगोलियन :** हल्की पीली त्वचा की प्रजाति ।
- **वर्ण संकर :** दो विभिन्न प्रजातियों के मिश्रण से जन्मे लोग ।
- **प्रवास :** एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरण ।
- **कपाल सूचकांक :** मानव के सिर की बनावट मापने का तरीका ।
- **नासा सूकांक :** नाक मापने का तरीका ।

9.10 संदर्भ ग्रंथ (reference books)

1. एस. डी. मौर्य : **मानव भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद ।
2. चतुर्भूज मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा ।
3. गायत्री प्रसाद : **सांस्कृतिक भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद ।
4. रामकुमार गुर्जर व बी सी. जाट : **मानव भूगोल,** पंचशील प्रकाशन, जयपुर ।
5. एस डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ ।
6. L.R.Singh : **Fundamentals of Human Geography ,** Sharda Pustak bhawan Allahabad.
7. Vidal de la Blache : **Principles of Human Geography ,** Henry Holt & Co ,New York
8. Griffith ,Taylor : **Geography in 20th Centuary**, America.

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. मानव प्रजाति परिवार, वंशानुक्रम तथा नस्ल को प्रकट करती हैं,
2. होमो सैपियन्स का अर्थ मेधावी मानव अथवा बुद्धिमान प्राणी है ।
3. आदिमानव का पालना अथवा जन्म स्थल मध्य एशिया को माना जाता है ।
4. कपाल सूचकांक का सूत्र है - सिर की चौड़ाई / सिर की लम्बाई x 100 = कापालिक सूचकांक
5. नासिका सूचकांक का रू है - नाक की चौड़ाई / नाक की लम्बाई = 100 x नासिका सूचकांक
6. प्रमुख रक्त सूत्र A, B, AB व O हैं ।

बोध प्रश्न- 2

1. नीग्रिटो	2. सन् 1924 में	3. सन् 1919
4. मंगोलिक	5. भूमध्यसागरीय	6. टेलर
7. बुशमैन	8. नीग्रिटो	

बोध प्रश्न- 3

1. एस्किमो 2. घुंघराले 3. पीत
4. नॉर्डिक 5. अमेरिका में

9.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. मानव प्रजाति क्या है? इनके वर्गीकरण के आधार बताइये ।
2. विश्व की मानव प्रजातियों का वर्गीकरण कीजिए ।
3. ग्रिफिथ टेलर के कटिबन्ध सिद्धान्त की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
4. मानव प्रजातियों के उद्भव व विकास पर एक भौगोलिक निबन्ध लिखिए ।
5. संसार की प्रमुख मानव प्रजातियों पर एक लेख लिखिए ।
6. विश्व की प्रमुख मानव प्रजातियों के वितरण की व्याख्यात कीजिए ।
7. विश्व की प्राचीनतम प्रजाति कौनसी है? उसका विश्व वितरण समझाइये ।
8. विश्व की नवीनतम प्रजाति के लक्षण व वितरण का विश्लेषण कीजिए ।
9. मानव प्रजातियों के उद्भव व विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का विस्तार से वर्णन कीजिए ।

इकाई 10 :विश्व के प्रमुख मानव समूहन (Principal Human Agglomeration of the World)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 प्रथम श्रेणी प्रतिरूप
10.2.1 एशियाई जनसमूह
10.2.2 यूरोपीय जनसमूह
10.2.3 अमेरिकन जनसमूह
10.3 द्वितीय श्रेणी प्रतिरूप
10.3.1 दक्षिणी महाद्वीपीय जनसमूह
10.3.1.1 अफ्रीका का जनसमूह
10.3.1.2 द.अमेरिका का जनसमूह
10.3.1.3 आस्ट्रेलिया का जनसमूह
10.4 जनसमूहों की लाक्षणिक विशेषताऐं
10.5 सारांश
10.6 शब्दावली
10.7 संदर्भ ग्रन्थ
10.8 बोध प्रश्न के उत्तर
10.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.0 उद्देश्य (objectives)

इस इकाई के अध्ययन से आप विश्व के प्रमुख मानव समूहन के निम्नांकित पक्षों के विषय में समझ सकेंगे -

- प्रत्येक समूहन में जनसंख्या के मात्रात्मक पहलू वृद्धि, वितरण एवं घनत्व,
- प्रत्येक समूहन में जनसंख्या के विषम वितरण व घनत्व के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों के बाबत,
- प्रत्येक जनसमूह की लाक्षणिक विशेषताऐं,
- प्रभाव जनसमूहों के तुलनात्मक पक्ष ।

10.1 प्रस्तावना (introduction)

पृथ्वी स्थल पर जनसंख्या का वितरण अत्यधिक विषम है । पृथ्वी की लगभग आधी जनसंख्या उसके पाँच प्रतिशत भू -भाग पर रहती है जबकि 57 प्रतिशत भू -भाग पर केवल पाँच प्रतिशत जनसंख्या पायी जाती है । क्योंकि मानव समूहों को बसाव के लिए प्रभावित करने वाले अनेक प्राकृतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, जनांकिकी एवं एतिहासिक कारकों ने जनसंख्या के संकेन्द्रण को

अत्यधिक विषम बना दिया है । वर्तमान में पृथ्वी स्थल पर बसाव वाले क्षेत्रों के अन्तर्गत वृहद् मानव समूह दो श्रेणियों में विभक्त किए जा सकते हैं ।

10.2 प्रथम श्रेणी प्रतिरूप

10.2.1 एशियाई जनसमूह (Asiatic agglomeration) 291 करोड़

A. चीन
B. जापान
C. भारत
D. बांग्लादेश

10.2.2 यूरोपीय जनसमूह (European agglomeration) 78 करोड़)

A. ग्रेट ब्रिटेन
B. फ्रांस
C. जर्मनी

10.2.3 अमेरिकन जनसमूह (American agglomeration) 69 करोड़

A. संयुक्त राज्य अमेरिका
B. कनाडा

10.3 द्वितीय श्रेणी प्रतिरूप

10.3.1 दक्षिणी महाद्वीपीय जनसमूह (Southern continental agglomeration)

A. अफ्रीका
B. दक्षिणी अमेरिका
C. आस्ट्रेलिया

10.2.1 एशियाई जनसमूह(Asiatic agglomeration)

इस कथ्य को कच्ची एशिया के जनसमूह नाम से भी जान' जात' है ' पृथ्वी पर मनुष्यों द्वारा बसा हुआ (ecumene) कोई भी भाग मिला हुआ क्षेत्र नहीं है । भोगोलिक एवं राजनीतिक कारणों से मानव समूह एक दूसरे से बहुत दूर -दूर बसे हुए है । एशियाई जनसमूह के क्षेत्रों में सर्वाधिक जनसंख्या चीन तथा भारत में बसी हुई है । चीन के समीप जापान तथा भारत के समीप बांग्लादेश एवं जावा प्रदेश भी इसी क्षेत्र में स्थित है । इन देशों की जनसंख्या का वितरण निम्न प्रकार से है -

एशियाई जन समूह में जनसंख्या 1992

एशियाई मानव महा समूह	जनसंख्या (करोड़ो मे)	विश्व की कुल जनसंख्या (प्रतिशत मे)
चीन	119	21.70
भारत	8.8	16.03
इंडोनेशिया	19	3.46
जापान	12.5	2.28
बांग्लादेश	12	2.18

Source : world population prospectus (estimates and projections). UN publication NY .1992

एशियाई जनसमूह 10^0 उत्तरी अक्षांश और 40^0 उत्तरी अक्षांशों के मध्य स्थित पेटी में बसा है । इस पेटी की जलवायु काफी गर्म है इसलिए फसलों के पकने में कम समय लगता है और वर्ष में दो या तीन फसलें भी उगाई जाती हैं । मानसूनी पवनों की पर्याप्त वर्षा से नदियों में वर्ष भर जल बहता रहता है । इसके अतिरिक्त पर्वत श्रेणियों पर जमी बर्फ पिघलने से नदियों के जलस्तर में बढोतरी होती रहती है । नदियों द्वारा बिछाई गई कांप मिट्टियां नदी बेसिनों की उर्वरकता को बनाये रखती है । नदियों की नहरी वितरिकाऐं सिंचाई सुविधा प्रदान करती है ।

अत: एशियाई जनसमूह के लगभग सभी देश कृषि प्रधान हैं । चूंकि चावल में जनसंख्या पोषण क्षमता अपेक्षाकृत ज्यादा होती है इसलिए यहां की प्रमुख खाद्यान्न फसल चावल है । चावल की प्रति एकड़ उपज भी अन्य फसलों की तुलना में अधिक है । अन्य फसलों में गेहूँ जौ, मक्का, मोटे अनाज, गन्ना तथा दालें आती हैं । इस समूह के देशों के नदी बेसिनों में उपजाऊ कांप मिट्टी तथा जल वृष्टि की मात्रा फसलों के लिए उपलब्ध है । सूखे क्षेत्रों में नहरों, कूओं और तालाबों से सिंचाई सुविधाऐं भी उपलब्ध हैं ।

कृषि आधारित सघनता विशेषत : गंगा की निचली घाटी तथा यांगट्सि ओर मीक्यांग डेल्टाओं में 570 मनुष्य प्रति वर्ग कि मी से भी अधिक पहुँच गई हैं । यहाँ की जनसंख्या अत्यन्त निर्धन हैं । चीन का जेचवान नदी बेसिन भी बहुत उपजाऊ क्षेत्र है जहां कृषि पूर्णत : सिंचाई पर आधारित है । भारत में सिंधु, सतलज , गंगा, ब्रहमपुत्र के विशाल मैदान तथा अन्य नदी बेसिनों में जन घनत्व ऊँचा पाया जाता है । जापान में कृषि के अतिरिक्त औद्योगिक क्रियाऐं विकसित हैं ।

एशियाई विशाल जनसमूहन को चावल की सभ्यता (rice cultivation) वाला अथवा कांप सभ्यता (alluvial cultivation) वाला प्रदेश मे कहा जाता है क्योंकि यहाँ के आर्थिक तथा सामाजिक जीवन में चावल का बड़ा महत्व है । अत: जनसंख्या का अधिकांश समूहन नदियों की उपजाऊ घाटियों तक ही सीमित है ।

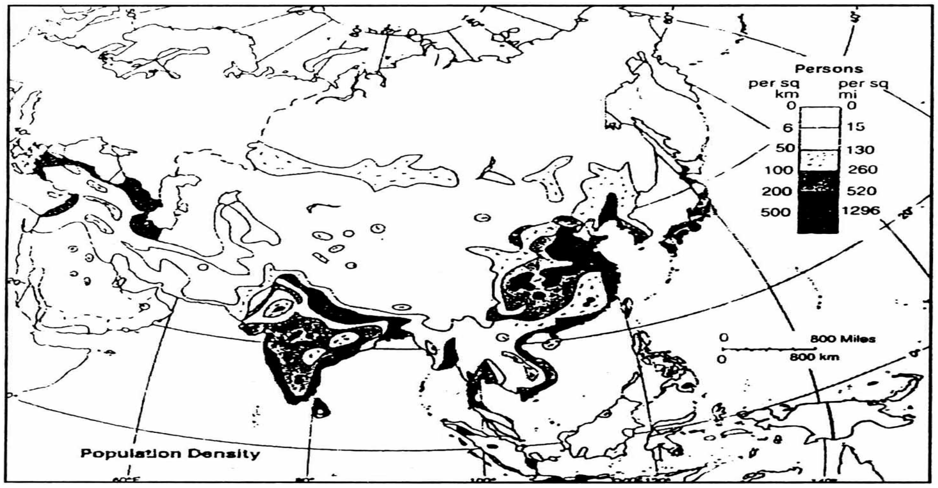

चित्र 10.1 : एशिया में जनसंख्या का घनत्व ।

इसके विपरीत साईबेरिया, मंगोलिया, तुर्किस्तान और तिब्बत के अधिकांश भागों में जनसंख्या का घनत्व 5 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी से भी कम है । एशिया के इस भीतरी भाग में वर्षा अत्यन्त कम होती है । यातायात के साधनों का भी अभाव है, गर्मियों में अधिक गर्मी तथा सर्दियों में अधिक ठंड पड़ती है । फिर भी वर्तमान में पश्चिम से रूसी साईबेरिया के वनों तुर्किस्तान के अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों की ओर जनसंख्या क्रमश: बढती जा रही है । चीनी मंगोलिया तथा मंचूरिया भी बराबर घने बसते जा रहे हैं कि आगामी वर्षो में गिनेचुने प्रतिकूल भागों को छोड़कर शेष सभी प्रदेश बस जाऐंगे । एशिया में जनसमूह की दृष्टि से निम्न भाग उल्लेखनीय हैं (सन्दर्भ चित्र- 10. 1) -

1. **अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र -** द पू एशिया में घना जनसमूह पाया जाता है । इस क्षेत्र में एशिया की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निवासित है अर्थात इस पर एक तिहाई क्षेत्र पर एशिया की लगभग दो-तिहाई जनता निवास करती है । चीन, भारत, जापान, बांग्लादेश, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया, श्रीलंका, द. कोरिया तथा फिलीपीन इस क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं । यहां जनसंख्या का घनत्व 100 से 800 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी है और भारत का इस दृष्टि से दूसरा स्थान आता है ।
2. **मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र -** एशिया के जिन भागों में जीवन स्तर की पर्याप्त सुविधाऐं नहीं हैं वहां अपेक्षाकृत कम लोग बसे हैं । इसमें म्यांमार, मलेशिया, नेपाल, उ.कोरिया आदि देशों को सम्मिलित किया जाता है । इस क्षेत्र में एशिया की 20 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है । यहां के निवासी कृषक तथा भा-पालक हैं ।
3. **विरल जनसंख्या वाले क्षेत्र -** एशिया के वे भाग जहां मानव को जीवनयापन के लिए प्रकृति से कड़ा संघर्ष करना पड़ता है, आते हैं । इन क्षेत्रों के अन्तर्गत एशियाई रूस , मंगोलिया, अरब, इराक, अफगानिस्तान तथा तिब्बत आदि देश आते हैं । यहां एशिया की केवल 8 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है जबकि यह क्षेत्र एशिया के 50 प्रतिशत क्षेत्रफल को घेरे हुए है ।

   किसी भी प्रदेश में जनसंख्या केन्द्रीयकरण का एक अन्य प्रतिरूप तथा उनके उपसमूहों स्पष्ट देखे जा सकते हैं । जनसंख्या के इस पुंज प्रतिरूप (clustered pattern) में कृषि तथा औद्योगिक तथ्यों का प्राकृतिक संसाधनों से घनिष्ट सम्बन्ध होता है जैसे (1) कृषि प्रधान प्रदेशों में उपसमूहों का धरातल की आकृति, मिट्टियां, सूर्यताप तथा जलपूर्ति से गहरा सम्बन्ध होता है । (ii) निर्माणकारी औद्योगिक क्षेत्रों में जनसंख्या के उपसमूहों का खनिज संसाधनों और परिवहन सुविधाओं से घना सम्बन्ध रहता है ।

चीन (china)

विश्व की जनसंख्या का पाँचवां भाग चीन में बसा है । जिसमें से 75 प्रतिशत जनता ग्रामीण तथा कृषक है । इसके द .पू भाग में जनसंख्या सर्वाधिक है । यत्रान (yunnan) से उत्तरी मंचूरिया तक खींची जाने वाली एक रेखा चीन को दो भागों में बांटती है । इस रेखा के उ. पू भाग पर्वतीय तथा शुक मरुस्थलीय है । इस भाग के 60 लाख वर्ग किमी. क्षेत्र पर केवल चार

करोड़ जनता रहती है । इसमें मंगोलिया और सीक्यांग के विशाल मरूस्थलीय भाग स्थिति हैं । दूसरी ओर इस रेखा के द. पू की जलवायु आर्द्र है । चीन के इस भाग में बड़ा मैदान (great plain), यांग्ट्सी बेसिन, जैकुआन (szechuan) का बेसिन, सीक्यांग बेसिन और समुद्रतटीय मैदानी पेटी सम्मिलित की जाती है, जहां सघन जनसमूह बसा है । वस्तुत: चीन के इस भाग में 80 करोड़ जनता रहती है । दक्षिणी चीन के पहाडी भाग में भी केवल नदियों की घाटियों में जनसमूह मिलते हैं । चीन क निम्नांकित क्षेत्रों में जनसमूह सघन बसा है

1. चीन का उत्तरी बड़ा मैदान जिसमें ह्वांग्रहो (hwang ho) का निचला बेसिन, वी-हो (wei-mho) की घाटी तथा शॉन्टुग आते हैं ।
2. यांग्ट्सी नदी (Yangtze River) का डेल्टा, शंघाई का पृष्ठ भाग,
3. यांग्ट्सी कीं मध्य घाटी, हैंकाऊ (Hankow) क्षेत्र,
4. जेकुआन नदी बेसिन
5. सिक्यांग नदी घाटी तथा डेल्टा क्षेत्र,
6. द. पू समुद्रतटीय संकरी पेटी,
7. द. मंचूरिया का भारी औद्योगिक क्षेत्र

इन सभी क्षेत्रों में घना बसा जनसमूह कृषि पर आधारित है किन्तु अब इन क्षेत्रों में बड़े-बड़े औद्योगिक नगर बस गए हैं फलस्वरूप शंघाई, नानकिंग, केनन, हेन्काऊ, सिंगटाओ, पीकिंग आदि नगरों में जनसमूह की सघनता 2000 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी. तक बढ़ गई है ।

जापान (Japan)

जापान के सघन जनसमूह वाले क्षेत्र समुद्रतटीय मैदान हैं जहां जल विद्युत द्वारा संचालित उद्योगों का विकास हुआ है । एशिया में जापान ही ऐसा देश है जहां सर्वाधिक औद्योगिकरण तथा नगरीकरण हुआ है । जापान की लगभग 76 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में बसी है । केवल 16 प्रतिशत भू-भाग पर गहरी खेती की जाती है । जापान में सघन जनसमूह पेटी मूलत : वहां की औद्योगिक पेटी है जिसमें पाँच वृहद् जनसमूहन क्षेत्र हैं -

1. क्वांटो (Kwanto) क्षेत्र जिसमें टोकियो केन्द्रीय स्थल है ।
2. नगोया (Nagoya) क्षेत्र ।
3. किनकी (kinki), कोबे (kobe), ओसाका (Osaka) ।
4. उत्तरी क्यूशू (Kyushu) क्षेत्र जिसमें हिरोशिमा, नागासाकी, मोजी यवाता आदि केन्द्र आते है ।
5. कनजावा (kanazawa) क्षेत्र ।

जापानी जनसमूह का समूद्री आकर्षण के चार प्रमुख कारण हैं -

(i) कूरोसिवा (kuro-sivo) गर्म जलधारा जापान के तटीय क्षेत्र की जलवायु को आर्द्र तथा गर्म रखती है जो स्वास्थ्यवर्द्धक है ।
(ii) चूंकि चावल तथा मछली जापानियों का मुख्य भोजन है अत: सह से भारी तादाद में मछलियां पकड़ी जाती हैं । बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए मत्स्य उद्योग का बड़ा महत्व है ।

(iii) उत्तर में आने वाली क्यूराइल (kurile) धारा बड़े आकार की मछलियां लाती हैं ।

(iv) द्वीपों में बसे जापानियों का विदेशी परिवहन हेतु एकमात्र आधार समुद्र ही है । नागासाकी आदि बन्दरगाहों से कच्चे माल के आयात तथा निर्मित माल के निर्यात में प्रमुखता रहती है।

जापान की आबादी का एक बडा भाग 370 उत्तरी अक्षांश रेखा के दक्षिण में उपोष्ण (subtropical) जलवायु वाले भाग में बसा है । जापान के औद्योगिक नगरों में टोकियो नगर का स्थान विश्व के बड़े नगरों में सर्वप्रथम आता है । जापान के मध्यवर्ती पहाड़ी भाग में केवल नदी घाटियाँ सघन आबाद हैं जबकि सबसे उत्तरी द्वीप होकेडो (hokkaido) सबसे कम आबादी वाला द्वीप है जहां केवल कांप मिट्टी वाले क्षेत्र में जनसमूह निवासित है ।

भारत का जनसमूह

2001 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1, 027, 015, 247 है जिसमें से 75 प्रतिशत जनता नदी बेसिनों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है । सतलज -गंगा मैदान सघन आबाद हैं इसमें भी गंगा का डेल्टा प्रदेश सघन आबाद क्षेत्र है जहां 1000 व्यक्ति से अधिक प्रति वर्ग कि मी जन घनत्व पाया जाता है । पहाड़ी भागों में अपेक्षाकृत कम आबादी है ।

2001 की जनगणना अनुसार मध्यवर्ती मैदानी भाग में उत्तर प्रदेश (16. 60 करोड़), पंजाब (2. 47 करोड़), बिहार (8. 28 करोड़), प बंगाल (8. 02 करोड़), हरियाणा (2. 10 करोड़), राजस्थान (5. 64 करोड़) आदि में सघन जनसमूह बसा है । वस्तुत: देश की 40 प्रतिशत जनता इन्ही प्रदेशों में निवास करती है । उत्तर प्रदेश के महत्वपूर्ण मैदानी भाग में कुल जनसंख्या का 16 प्रतिशत भाग निवासित है । कृषि के अतिरिक्त व्यापार, औद्योगिक इकाइयों एवं इनसे जुड़े यातायात के साधन जन समूह के लिए प्रमुख आकर्षण रहे हैं ।

दूसरे वर्ग में दक्षिण के पठार वाले राज्य रखे जाते हैं । यहां सामान्यत : महाराष्ट्र (9. 67 करोड़), मध्यप्रदेश (6. 30 करोड़), कर्नाटक (6. 27 करोड़) और आन्ध्र प्रदेश (7. 57 करोड) में सघन जनसमूह बसा है । किन्तु जनसंख्या का अधिकतम वितरण शहरी क्षेत्रों में हुआ है । मलाबार तट, तमिलनाडू के औद्योगिक नगरों, प महाराष्ट्र तथा कर्नाटक के औद्योगिक केन्द्रों में जनसमूह का उच्च संकेन्द्रण मिलता है ।

जनसमूह के तीसरे वर्ग में समुद्र तटीय क्षेत्र, उ प पर्वतीय भाग एवं राजस्थान, के पश्चिमी भाग को सम्मिलित किया जाता है । धरातलीय विषमता, प्राकृतिक प्रतिकूलता और यातायात की सुविधाओं के अभाव के कारण कम जनसमूह पाया जाता है । भारत में जनसंख्या का वितरण अत्यन्त विषम है किन्तु साथ ही विशेषता यह है कि कुल जनसंख्या का लगभग तीन चौथाई (72. 22 प्रतिशत) जनसमूह ग्रामीण है । भारत एक कृषि प्रधान देश है अत: कृषि को प्रभावित करने वाले कारक ही जनसंख्या के बसाव को नियन्त्रित करते हैं ।

बांग्लादेश

जनसंख्या की दृष्टि से बांग्लादेश एशिया का पांचवां बड़ा राष्ट्र है । अधिकांश जनसमूह नदी बेसिनों में आबाद है । यहां 825 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी. जनसंख्या घनत्व पाया जाता है बांग्लादेश की जनसंख्या लगभग 18 करोड़ है जिसका 90 प्रतिशत भाग नदियों के मैदानी तथा

डेल्टाई क्षेत्रों में बसा है । सबसे अधिक घनत्व पूर्वी भाग के ढाका जिले में है जहां 1500 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी घनत्व पाया जाता है । सबसे कम जनसमूह सिलहट तथा मोहनगंज जिलों के आस -पास है जो 75 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी से भी कम है । पूर्वी भाग में ढाका एवं मेमनसिंह बड़े औद्योगिक नगर है ।

10.2.2 यूरोपीय जनसमूह (European agglomeration)

यूरोपीय जनसमूह मुख्यत 40^0 उत्तरी अक्षांश और 60^0 उत्तरी अक्षांश के बीच आबाद है । इसका सघन भाग 45^0-55^0 उत्तरी अक्षांशों के मध्य बसा है । सर्वाधिक औद्योगिक उन्नति कोयला पेटी क्षेत्र में हुई है । यह पेटी 50^0 उत्तरी अक्षांश रेखा के सहारे-सहारे लगातार ब्रिटेन तथा इंग्लिश चेनल से लेकर सोवियत रूस में डोनेट्ज बेसिन तक फैली है । इस पेटी में जनसघनता सर्वाधिक है जहां लगभग 77 करोड़ जनसंख्या निवास करती है । इस कोयला पेटी को (500 उत्तरी अक्षांश) यूरोपीय जनसमूह की धुरी (Axis of European agglomeration) भी कहा जाता है ।

यहां औद्योगिक नगरों का विकास भी सर्वाधिक हुआ है । जनसमूह की सघनता ग्रेट ब्रिटेन, बेल्जियम, हॉलेंड, उत्तरी फ्रांस, जर्मनी, द. पोलेण्ड और पी (po) नदी बेसिन में पाई जाती है । इस महाद्वीप में जनसंख्या का प्रमुख आधार निर्माणकारी उद्योग हैं । इसीलिए यहां की सभ्यता को औद्योगिक सभ्यता (industrial civilization) भी कहा जाता है । यद्यपि यूरोप के उत्तरी भाग की जलवायु शीत प्रधान है फिर भी 600 उत्तरी अक्षांश रेखा तक वन उद्योग, समूर उद्योग, और जल विद्युत उद्योग बहुत विकसित अवस्था में हैं । लोह-इस्पात, वस्त्र, मशीनरी, रासायनिक, प्लास्टिक, तथा बिजली उपकरण उद्योग सम्पूर्ण यूरोप में फैले हैं ।

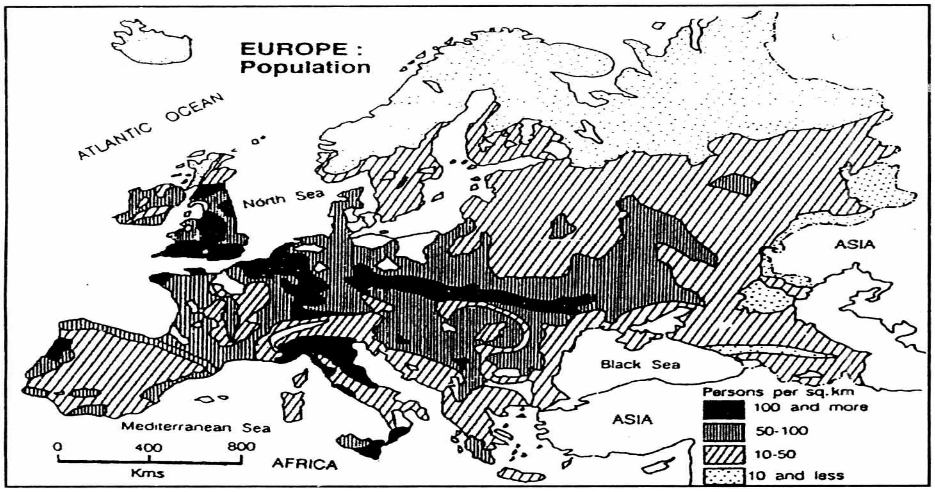

चित्र - 10.2 : यूरोप में जनसंख्या का घनत्व ।

यूरोप के भूमध्य सागरीय क्षेत्र में घनी जनसंख्या के छोटे -छोटे केन्द्र नदी डेल्टाओं के मैदानों और घाटियों में पाए जाते है । इन डेल्टाओं में खेती ही लोगों का मुख्य आधार है । जनसंख्या के इस भाग में सर्वाधिक महत्वपूर्ण इटली की पो (po) नदी की उपजाऊ तथा विस्तृत घाटी क्षेत्र है ।

यूरोप में नगरीय तथा ग्रामीण दोनों प्रकार के जनसमूहों का मिश्रण मिलता है । वैलेशिया तथा उत्तरी पुर्तगाल के तटीय प्रदेशों में (जहां गेहूं की अधिक पैदावार होती है) जनसंख्या का घनत्व अधिक है । इसके विपरीत पहाड़ियों, दलदली भागों तथा मरुभूमि क्षेत्रों में जैसे आल्प्स पर्वत, प्रिपेट दलदल और स्पेन के शुष्क मैसाटा के पठार तथा केस्पियन तट में जनसंख्या कम है । स्पष्ट है कि पूर्वी एशिया का घना जनसमूहन नदियों के विस्तृत मैदानों में स्थित है और कृषि प्रधान है जबकि पश्चिमी और मध्यवर्ती यूरोप की अधिकांश जनसंख्या व्यापारिक तथा औद्यागिक नगरों में केन्द्रित है । जिनका सम्बन्ध यहां के खनिज संसाधनों व्यापारिक मार्गों, खाद्य पदार्थों तथा अन्य कच्चा माल पैदा न करने वाले उपजाऊ मैदानों से है । (सन्दर्भ चित्र - 10. 2)

यूरोपीय जनसमूह का जीवन स्तर एशियाई जनसमूह की तुलना में काफी ऊँचा है । यहां के जनसमूह की कुछ विशेषताऐं निम्नलिखित है : -

1. यूरोप का सघन जनसमूह मैदानी भागों में बसा है ।
2. समशीतोष्ण जलवायु निवास के लिए उत्तम तथा स्वास्थ्यवर्द्धक है ।
3. नदियों की काँप (Alluivial) तथा लोएस (loess) मिट्टी अधिक उपजाऊ है ।
4. अनेक खाद्यान्न फसलें यथा गेहूँ , जौ, जई, राई, मक्का, चुकन्दर, आलू फल सब्जियां आदि खूब पैदा होती हैं,
5. निर्माण उद्योगों के कारण जनसंख्या के पोषण की क्षमता बहुत बढ़ गई है और बड़े पैमाने पर निर्यात व्यापार ने विशाल नगर स्थापित किए हैं ।

यातायात साधनों की सुलभता से खाद्यान्न तथा कच्चा माल अन्य महाद्वीपों से आयात कर बदले में निर्मित माल को निर्यात किया जाता है ।

ग्रेट ब्रिटेन

ग्रेट ब्रिटेन की कुल जनसंख्या लगभग 6 करोड़ है जिसमें से केवल 8 प्रतिशत मनुष्य कृषि करते हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में बसे हैं जबकि 82 प्रतिशत जनता नगरों में बसी है । जनसमूहों का सघन भाग वहां के कोयला क्षेत्रों में पाया जाता है । केवल लंदन ही ऐसा क्षेत्र है जो कोयला क्षेत्र पर निर्भर नहीं है । लंकाशायर, मानचेस्टर, लिवरपूल, यार्कशायर, लीड्स, ब्रेडफोर्ड, शेफील्ड, बर्मिधम इत्यादि भारी औद्योगिक केन्द्र हैं । पूर्वी इंग्लैण्ड में जनसमूह का केन्द्रण नार्थम्बरलैण्ड-डरहम क्षेत्रों में टाइन (Tyne) और टीज नदियों के सहारे हुआ है जहां कोयला ओर लोहा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है ।

दक्षिणी वेल्स के कोयला क्षेत्र में स्वान्सी और कार्डिफ बड़े केन्द्र हैं । स्कॉटलैण्ड में भी आबादी के मुख्य केन्द्र क्लाइड नदी घाटी और ग्लासते के कोयला क्षेत्र हैं । यहां जनसंख्या की सघनता 00 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी. से अधिक है । वृहद् नगरों में तो घनत्व 1600 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी तक पहुँचा है ।

एशियाई तथा यूरोपीय जनसमूहों में तथ्यात्मक भिन्नता देखी जा सकती है : -

यूरोपीय जनसमूह (निमार्ण उद्योग प्रधान)	**एशियाई जन-समूह (कृषि प्रधान)**

1. यूरोपीय जनसमूहक मुख्य आधार औद्योगिक विकास है । लगभग 70 लोग निर्माण उद्योगों, परिवहन, व्यापार तथा अन्य सेवाओं में लगे हैं	1. एशियाई जनसमूह विशेषत: द पू एशियाई प्रतिशत देश कृषि प्रधान हैं । लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि उद्योग में लगी है केवल जापान में औद्योगिक विकास हुआ है । जापान की 40 प्रतिशत जनसंख्या कृषि में लगी है ।
2. इस क्षेत्र में खनिज पदार्थों के विशाल भंडार है । विशेषत : कोयला तथा लोहे के कारण जनसमूह का सघन केन्द्रीकरण कोयला खानों और समुद्र तटों पर हुआ हैं	2. यहां की जलवायु मानसूनी है अत : पर्याप्त वर्षा हैं । और तापमानों के कारण फसलों को उगानेका लम्बा समय मिल जाता है अत : वर्ष में दो-तीन फसलें ली जाती हैं
3. समुद्र की समीपता और अच्छे बन्दरगाह के कारण अर्न्तमहाद्वीपीय यातायात तथा व्यापार सुलभ हो सका है परिणामस्वरूप जनसमूह का सघन बसाव हुआ है	3. मैदानी भागों में कृषि के लिए उपयुक्त भूमि तथा सिंचाई की सुविधाओं के कारण जनसमूहों का बसाव नदी बेसिनों में हुआ है विशेषकर हांग्रहो, यांगट्सीक्यांग, गंगा-सिंधु और ब्रह्मपुत्र नदियों के मैदानों में सघन जनसंख्या पायी जाती है
4. यहाँ बसे जनसमूह को अनेक सुविधाऐं उपलब्ध है (i) नदियों से कारखानों के जलापूर्ति (ii) जलविद्युत की उपलब्धता (iii) परिवहन सुविधा (iv) नहरों द्वारा आन्तरिक यातायात सुविधा	4. यहाँ की नदियों से अनेक लाभ (i) उपजाऊ कांप मिट्टी मिलती है, (ii) सिंचाई सुविधा उपलब्ध है (iii) समतल भूमि (iv) जल विद्युत का उत्पादन से कृषि के लिए विद्युत की उपलब्धता, और (v) परिवहन साधनो का जाल,
5. समशीतोष्ण जलवायु स्वास्थ्य के लिए अनुकूल	5. एशियाई देशों की उष्ण जलवायु कृषि के लिए उत्तम
6. कच्चे माल के लिए खनिज संसाधनों तथा वनों की समीपता तथर शिक्षित एवं कुशल श्रमिक	6. श्रमिकों में अशिक्षा तथा तकनीकी ज्ञान में कमी
7. वैज्ञानिक तथा तकनीकी उन्नति ने जनसंख्या के भरण-पोषण क्षमता को बढ़ाया है	7. उच्च जन्मदर तथा तकनिकी ज्ञान में पिछड़ेपन के कारण भरण -पोषण क्षमता में कमी ।

10.2.3 युक्त राज्य अमेरिका

उत्तरी अमेरिका की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या अटलांटिक तट पर बसी है । जनसमूहन की दृष्टि से यहां दो भाग स्पष्ट है प्रथम सं. रा. का पूर्वी तटीय भाग और द्वितीय सं. रा. का पश्चिमी भाग । प्रथम भाग औद्योगिक विकास की चरम सीमा पर है फलस्वरूप जनसंख्या घनी

है किन्तु दूसरे भाग में जनसंख्या का बसाव अपेक्षाकृत कम है । स रा. की 85 प्रतिशत जनसंख्या 1000 देशान्तर के पूर्व में रहती है । पूर्वी भाग में जनसंख्या का समान वितरण पाया जाता है केवल ओहियो के उत्तर और मिसिसिपी के पूर्व में औसत से अधिक जनसंख्या वाले कुछ केन्द्र स्थित हैं । (सन्दर्भ चित्र- 10. 3)

दक्षिणी मेन-मेरीलैण्ड तक की अत्यन्त विकसित औद्योगिक पेटी अधिकतम जनघनत्व वाली पेटी है । अपलेशियन के पश्चिम में जनसमूह के चार केन्द्र पाए जाते हैं -

1. मिशिगन झील के दक्षिणी सिरे का क्षेत्र जिसमें शिकांगो और मिलवाकी शामिल हैं ।
2. इरी झील का दक्षिणी तथा पश्चिमी सिरे वाला भाग जिसमें डेट्राइट, क्लीवीलैण्ड, बफैलो और आक्रोन सम्मलित किए जाते हैं ।
3. ओंटेरियो झील का दक्षिणी भागा तथा मोहाक घाटी के क्षेत्र जिसमें रोचेस्टर, साइराक्यूज, और रोनेकटाडी सम्मलित हैं ।
4. ओहियों की ऊपरी घाटी जिसमें पिट्सबर्ग मुख्य केन्द्र है ।

संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी भाग में सघन जनसमूहन के निम्नांकित मुख्य कारण हैं -

1. यह भाग सबसे पहले आबाद हुआ तथा अप्लेशियन पर्वतीय बाधा के कारण पश्चिम की ओर जनसंख्या का प्रवास नही हो पाया, फलस्वरूप जनसंख्या का घनत्व बढ़ता गया
2. यूरोपीय औद्योगिक केन्द्रों की समीपता और कटे-फटे तटीय बन्दरगाहों से व्यापार की सुविधा
3. कोयला, लोहा तथा जल विद्युत की प्रचुर उपलब्धता से औद्योगिक विकास भी व्यापक स्तर पर हुआ जिससे इस ओर जनसंख्या का आकर्षण रहा
4. यहां की जलवायु लगभग पश्चिमी यूरोप तुल्य है तथा स्थिति भी प्राय: उन्हीं अक्षांशों में है अत : यूरोपवासी सर्वप्रथम उन्हीं भागों मे बसे । इसके अतिरिक्त आर्थिक संसाधन (लकड़ी कोयला क्षेत्र, उपजाऊ भूमि) सभी यूरोप जैसे ही हैं

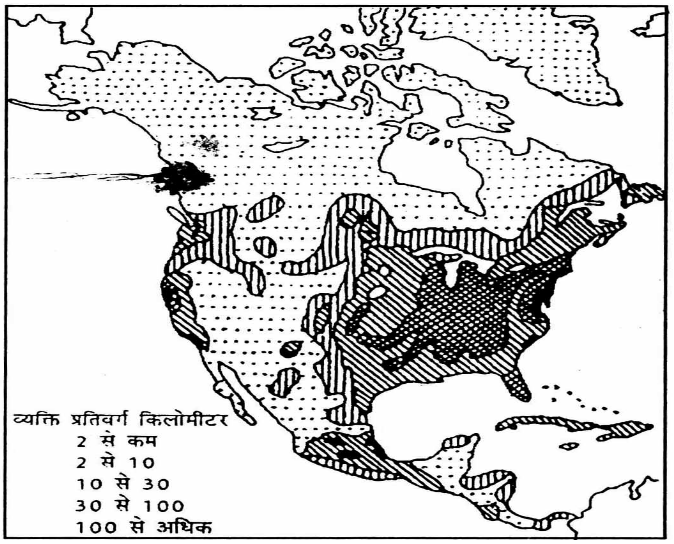

चित्र - 10.3 : उत्तरी अमेरिका में जनसंख्या का घनत्व

100^0 पश्चिमी देशान्तर के पश्चिम में जनसमूह कम होता जाता है । नदी घाटियों, सिंचाई क्षेत्रों, पीडमोंट कांप के मैदानों तथा खनिज संसाधनों के समीप जनसंख्या का केन्द्रीयकरण पाया जाता है । पश्चिम की ओर केलिफोर्निया घाटी आबादी का प्रमुख केन्द्र है । प्रशान्त महासागर के तटीय राज्यों में जहां जलवायु आर्द्र तथा उद्योग काफी बढ़े -चढ़े हैं वहां घना जनसमूह पाया जाता है ।

कनाडा

सम्पूर्ण कनाडा की जनसंख्या लगभग 2. 5 करोड़ है जबकि इसका क्षेत्रफल भारत के क्षेत्रफल से तीन गुना से अधिक है । यहाँ का जनसंख्या घनत्व 3 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी. से भी कम है । कनाडा का 273 जनसमूह सेंटलारेंस नदी के निम्न प्रदेश में ग्रेट लेक्स के समीप निवासित है । इसमें कनाडा के बड़े नगर ओटावा, क्यूबेक, मान्ट्रियल, टोरेन्टो आदि बसे हैं । दूसरा बड़ा जनसमूह प्रेयरी (prairie) के बड़े मैदान में पाया जाता है जिसमें मनीटोबा, सैस्केचवान और अलबर्टा प्रान्तों के बड़े नगर हैं । तीसरा अपेक्षाकृत छोटा जनसमूह पैसिफिक तट पर ब्रिटिश कोलाम्बिया के द प भाग में स्थित है । कनाडा में टुन्ड्रा और शंकुधारी वनों की पेटी प्राय : निर्जन है ।

10.3 द्वितीय श्रेणी प्रतिरूप

10.3.1 दक्षिणी महाद्वीपीय जनसमूह (southern continental agglomeration)

दक्षिणी गोलार्द्ध में विश्व की कुल जनसंख्या का 20 प्रतिशत भाग निवासित है । सर 2002 में इन महाद्वीपों की अनुमानित जनसंख्या 122 करोड़ थी जिसमें से द. अमेरिका में 36 करोड़, अफ्रीका में 84 करोड़ तथा आस्ट्रेलिया व न्यूजीलैण्ड में 24 करोड़ थी । इन तीनों महाद्वीपों का क्षेत्रफल विश्व का 44 प्रतिशत है जबकि जनसमूह मात्र 20 प्रतिशत ही पाया जाता है । इन महाद्वीपों के अधिकांश भाग प्रतिकूल जलवायु तथा विषम भू-रचना के कारण मानव निवास के अनुकूल नहीं बन पाया है इसलिए प्रत्येक महाद्वीपों की स्थिति अलग-अलग है ।

10.3.1.1 अफ्रीका का जनसमूह (African agglomeration)

अफ्रीका महाद्वीप लगभग 3 करोड़ वर्ग कि मी क्षेत्र पर फैला है अर्थात् भूमंडल के 22.3 प्रतिशत भाग को अपने में समेटे हुए है किन्तु यहां विश्व की केवल 13.5 प्रतिशत जनसंख्या ही निवास करती है । सम्पूर्ण महाद्वीप में जनसंख्या का घनत्व का वितरण असमान है । यहां सघन जनसमूह क्षेत्र निम्नानुसार हैं -

(i) भूमध्य सागर के तट के समीप मोरक्को तथा अल्जीरिया की संकीर्ण पेटी

(ii) नील नदी की घाटी तथा डेल्टाई प्रदेश

(iii) इथियोपिया की उच्च भूमि

(iv) पश्चिम का गिनी तटीय भाग तथा उत्तरी नाईजीरिया

(v) दक्षिण में केप प्रान्त तथा नेटाल जहां समशीतोष्ण जलवायु पायी जाती है ।

नील नदी की घाटी अफ्रीका का सघन जनसमूह क्षेत्र है जहां अफ्रीका की 13 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है । नदी की ऊपरी घाटी में जनसंख्या का घनत्व 50 से 100 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी से अधिक पाया जाता है । नील नदी घाटी मानव सभ्यता का प्राचीन केन्द्र स्थल भी है नदी की उपजाऊ कांप मिट्टी इस सघन जनसमूह का प्रमुख आधर है । इस घाटी प्रदेश में जनसंख्या का रेखीय बसाव नदी के किनारे -किनारे फैला है । अफ्रीका के उ पू भाग में इथियोपिया की उच्च भूमि तथा संलग्न इरीट्रिया प्रदेश में महाद्वीप की लगभग 7 प्रतिशत जनसंख्या पायी जाती है इस प्रकार नील नदी की घाटी तथा संलग्न इथियोपिया की उच्च भूमि में अफ्रीका की लगभग 20 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है ।

उत्तरी अफ्रीका में मोरक्को, अल्जीरिया, ट्यूनिशिया, उ प. लीबिया के भूमध्य सागरीय जलवायु वाले क्षेत्रों में अफ्रीका की 21 प्रतिशत जनसंख्या पाई जाती है । एटलस की पर्वतीय घाटियाँ तथा उससे संलग्न भूमध्य सागरीय तटवर्ती भागों में जनसंकुल बस्तियां बसी हैं । कृषि हेतु अनुकूल जलवायु, लोह - अयस्क तथा खनिज तेल संसाधनों ने सघन जनसंख्या को आकर्षित किया है ।

अफ्रीका के पश्चिमी भाग में लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या बसी हुई है । जहां कोको, कपास, पाम, मूंगफली आदि व्यापारिक फसलें पैदा की जा रही हैं । यहाँ लोह -अयस्क, मैंगनीज, टिन आदि का दोहन भी किया जाता है । इसके अतिरिक्त सोना, चांदी तथा हीरे का भी कुछ मात्रा में खनन होता है । नीग्रो जनसमूह नदी घाटियों एवं तटवर्ती मैदानों और अनुकूल पर्वतीय ढालों पर निवासित है ।

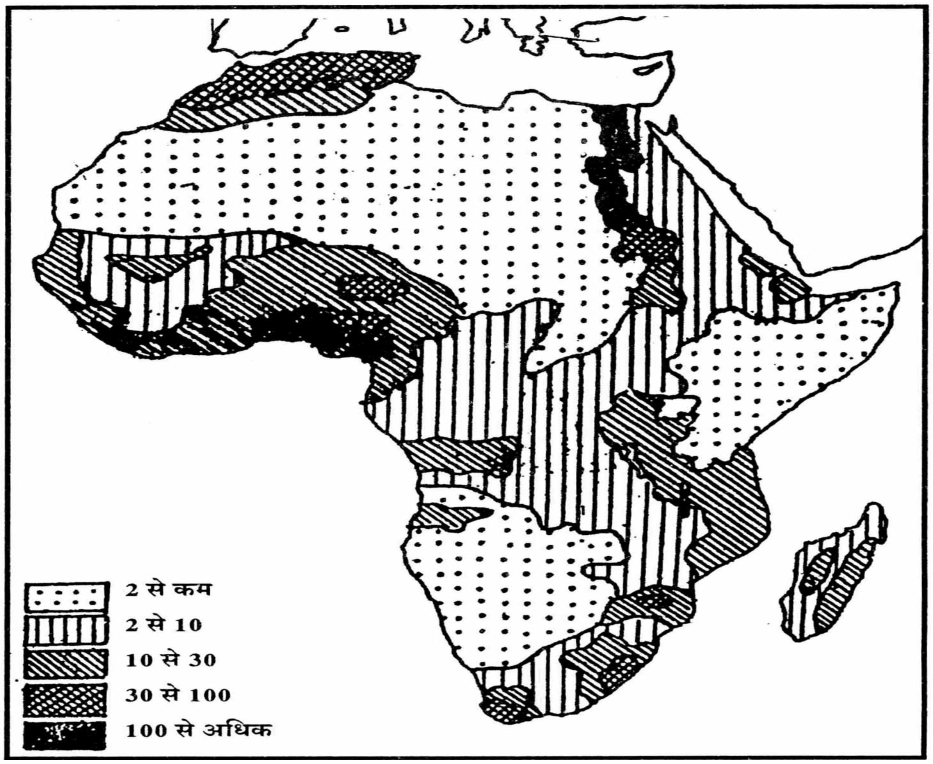

चित्र - 10.4 : अफ्रीका में जनसंख्या का वितरण (प्रति वर्ग कि मी.)

पूर्वी अफ्रीका की रिफ्ट घाटी में स्थित झीलों के तटवर्ती पठारों पर कीनिया, तंजानिया तथा यूगाण्डा के उच्च पठारों पर आदिवासी कबीले बसे हैं । उष्ण कटिबन्ध में स्थित इन उच्च पठारों पर सवाना तुल्य जलवायु तथा वनस्पति पायी जाती है । ऊँचाई के कारण यहाँ की जलवायु मृदुल तथा निवास योग्य है और वर्षा भी पर्याप्त मात्रा में हो जाती है । अफ्रीका महाद्वीप की लगभग 31 प्रतिशत जनसंख्या पूर्वी अफ्रीकी देशों में पायी जाती है । मध्य अफ्रीका के दुर्गम क्षेत्रों में महाद्वीप की 12 प्रतिशत जनसंख्या बिखरी हुई है ।

अफ्रीका के दक्षिणी भाग में सघन जनसमूह द. अफ्रीका एवं मोजम्बिक प्रदेश में है । सोना, हीरा, लोह -अयस्क तथा कोयला उत्खनन क्षेत्रों में जनसंख्या का केन्द्रीयकरण अधिक है । जेम्बिया और जिम्बाम्बवे में जेम्बेजी नदी घाटी में विक्टोरिया जलप्रपात के आस -पास जनसमूह केन्द्रित है । महाद्वीप के विभिन्न भागों में नगरीकरण की मात्रा अलग-अलग है । उत्तरी अफ्रीका में 40 से 50 प्रतिशत, द. अफ्रीका में 45 से 50 प्रतिशत, प अफ्रीका में 25 से 30 प्रतिशत तथा पूर्वी अफीका में 15 प्रतिशत से कम नगरीकरण हुआ है ।

महाद्वीप के विशाल भू-भाग अति उष्ण आर्द्र होने तथा शुष्कता के कारण प्राय : जनशून्य है जिनमें महान सहारा, द पू में स्थित मरूस्थलीय स्टेपी तथा दलदली भाग, मध्य अफ्रीका का अतिउष्ण आर्द्र प्रदेश, कलाहारी का मरूस्थलीय प्रदेश उल्लेखनीय हैं । इन क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व 5 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी. से भी कम है ।

10.3.1.2 दक्षिणी अमेरिका का जनसमूह (south American agglomeration)

द. अमेरिका का आधे से अधिक जनसमूह अकेले ब्राजील में निवासित है । जिसमें से 176 भाग अर्जेणटाइना में तथा 1 / 3 भाग एण्डीज पर्वतीय क्षेत्रों में बसा हुआ है । जनसमूह का अधिकांश भाग तटीय भागों में बसा है ताकि महासागरों द्वारा विदेशों से सम्पर्क रखा जा सके । इनमें ब्राजील के साआपोलो, सेण्टोस तथा अर्जेण्टाइना और वनेजुएला के तटीय भाग उल्लेखनीय हैं । मध्यवर्ती अक्षांशों में अर्जेण्टाइना और यूरोग्वे में लाप्लाटा नदी मैदान में कृषि सुविधाओं के कारण जनसमूहों का बसाव हुआ है । उ -पू ब्राजील में उष्णार्द्र खेती के अन्तर्गत कपास तथा कहवा के उत्पादन ने जनसंख्या के बसाव में सघनता को आकर्षित किया है ।

अन्यत्र जनसंख्या विशेषत : ऊँचे भागों में पाई जाती है जहां की जलवायु अपेक्षाकृत स्वास्थ्यवर्द्धक है । ताँबा, चाँदी, शोरा आदि खनिज संसाधनों के समीप जनसमूह केन्द्रित है । इक्वेडोर, पीरू, बोलिविया और कोलम्बिया में जनसंख्या 2200 मीटर से अधिक ऊँचाई पर भी बसी है जहां पर गेहूँ , जौ, और आलू पैदा किए जाते हैं । इसी प्रकार कोटा (2900 मीटर) में पशुपालन तथा खद्यानों की खेती पर जनसमूह निर्भर है । अमेजन के ढालों पर अधिक वर्षा के कारण गन्ना, कहवा, फल सब्जियों के उत्पादन ने जनसमूह को सघनता प्रदान की है ।

इसके विपरीत अमेजन के जँगली तथा दल-दली भाग, एण्डिज पर्वतों की ऊँचाईयां, पैटागोनिया, चिली, पीरू के मरुस्थल तथा मध्य अमेरिका में मलेरिया उत्पादक जलवायु, ग्रेनचाको के गर्म दल- दली और बाढ़ ग्रस्त भागों तथा ब्राजील के गर्म घास के मैदानी भागों में जनसमूह छितरी

अवस्था में पाया जाता है । जनसमूहों की सघनता की दृष्टि से इन्हें निम्न वर्गों में रखा जा सकता है -

(i) **अधिक जनसंख्या वाले जनसमूह क्षेत्र :** द. अमेरिका के पूर्वी तटीय क्षेत्रों में घनी आबादी निवासित है । कृषि क्षेत्रों, तटीय भागों, विशाल नगरों तथा राजधानियों में सघन, जलसमूह निवासित है । द -पू ब्राजील, लाप्लाटा का बेसिन, मध्य चिली, कैरेबियन तट तथा ओरनिको नदी डेल्टा घने मानव बसाव क्षेत्र हैं ।

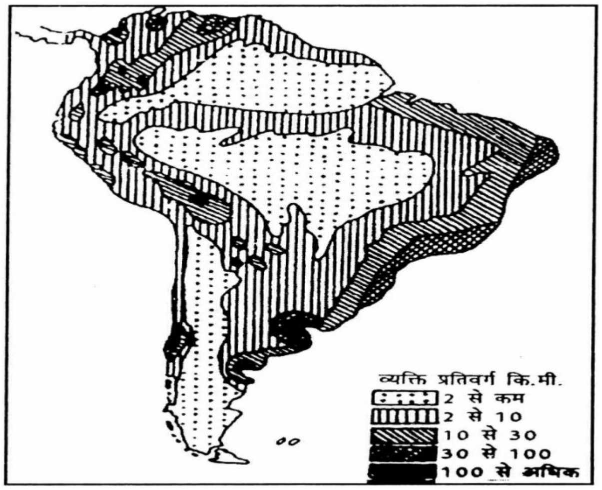

चित्र- 10.5 : दक्षिण अमेरिका में जनसंख्या का घनत्व

(ii) **मध्यम जनसंख्या वाले जनसमूह क्षेत्र :** इस महाद्वीप के उ प. तटीय भागों में मध्यम आकार के जनसमूह पाए जाते हैं । इसके अन्तर्गत कोलम्बिया का पूर्वी तट, वेनेजुएला का उत्तरी भाग, पीरू का उ प तट, इक्वेडोर, बोलिविया का मध्य भाग, अर्जेण्टाईना का मध्य भाग तथा पेराग्वे का मध्य क्षेत्र सम्मलित किए जाते हैं ।

(iii) **न्यून जनसंख्या वाले जनसमूह क्षेत्र :** द. अमेरिका के पर्वतीय क्षेत्रों, मरूस्थलों, अविकसित क्षेत्रों तथा दलदली भागों में कम जनसंख्या निवासित है । पैटागोनिया के शुष्क मरूस्थल, अटाकामा के मरूस्थल, एण्डिज पर्वत तथा बोलिविया के उच्च भागों में जनसमूह बड़ा विरल है । मोटेतोर से द अमेरिका का 40 प्रतिशत भाग कम जनसंख्या वाला क्षेत्र है यह क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा है । इन क्षेत्रों में शक्ति के साधनों, खनिज पदार्थो, कृषि विस्तार तथा वनों के उपयोग की अनेक सम्भावनाऐं हैं । जिनके विकास से यहाँ अतिरिक्त जनसंख्या बसाई जा सकी है ।

10.3.1.3 आस्ट्रेलियन जनसमूह (Australian agglomeration)

सन 2002 में आस्ट्रेलिया महाद्वीप की जनसंख्या 2 करोड़ थी जबकि न्यूजीलैण्ड की मात्र 40 लाख थी । यह भारत के उड़ीसा राज्य से भी कम है । यहाँ जनसंख्या के कम होने क प्रमुख कारण यहाँ की श्वेत नीति है । जो यहाँ केवल गोरे लोगों को बसने की अनुमति देती है । यद्यपि आस्ट्रेलिया महाद्वीप स्थल मण्डल के केवल 6. 25 प्रतिशत भू-भाग पर फैला है पर इसकी जनसंख्या विश्व की जनसंख्या के आधे प्रतिशत (0 .4 2) से भी कम है । आस्ट्रेलिया

की 86 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय तथा 14 प्रतिशत ग्रामीण है । सिडनी, मेलबोर्न, एडिलेड, केनबरा, ब्रिस्बेन तथा पर्थ आदि नगरों में देश का लगभग 50 प्रतिशत जनसमूह पाया जाता है । लगभग आधी जनसंख्या तो केवल सिडनी और मेलबोर्न नगरों में ही बसी है । अत्यधिक नगरीकरण का कारण यहाँ की अर्थव्यवस्था है । आस्ट्रेलिया के सभी आधुनिक उद्योग तथा आयात निर्यात व्यापार इन्हीं बन्दरगाही नगरों से होता है । आस्ट्रेलिया के सघन जनसमूह क्षेत्र निम्नांकित है (सन्दर्भ चित्र- 10. 6) ।

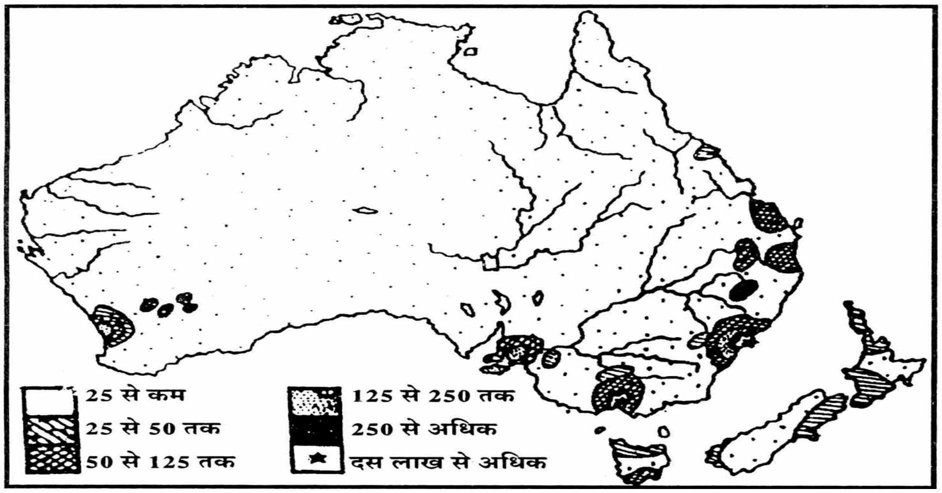

चित्र - 10.6 : आस्ट्रेलिया का जनसंख्या घनत्व

(i) न्यूसाउथवेल्स का पूर्वी तटवर्ती प्रदेश

(ii) विक्टोरिया राज्य का अधिकांश भाग

(iii) द. आस्ट्रेलिया का दक्षिणी भाग

(iv) क्वींसलैण्ड का द.पूर्वी भाग

(v) प आस्ट्रेलिया का द प. भाग

आस्ट्रेलिया के प्रमुख उद्योग न्यूसाउथवेल्स के पूर्वी भाग तथा विक्टोरिया के दक्षिणी भाग में केन्द्रित हैं । सिडनी और मेलबोर्न प्रमुख औद्योगिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के केन्द्र हैं । इसके अतिरिक्त त डाउन्स तथा ग्रेट आस्ट्रेलियन बेसिन का क्षेत्र ऊन, माँस और गेहूँ निर्यात करता है । इसीलिए आस्ट्रेलिया का घना जनसमूह यहाँ बसा है । यहाँ की जलवायु भी यूरोपवासियों के अनुकूल है ।

प. आस्ट्रेलिया के द.प. भाग की जलवायु भूमध्यसागरीय तुल्य है । 19 वीं शताब्दी से सोने के खनिज संसाधनों ने जनसंख्या को आकर्षित किया है । इसके अतिरिक्त यहाँ गेहूँ जौ, मक्का आदि की फसलें भी उगाई जाती हैं । क्वींसलैण्ड का पूर्वी तटवर्ती प्रदेश में भी सघन जनसमूहन है । यहाँ गन्ना, तम्बाकू, अन्नानास की खेती महत्वपूर्ण है । सोना तथा टिन का खनन व्यवसाय भी होता है ।गर्म तथा आर्द्र प्रदेश होने के कारण पशुपालन के साथ विविध फसलें भी उगाई जाती हैं ।

आस्ट्रेलिया के विरल जनसमूह क्षेत्र

1. प. आस्ट्रेलिया का मरूस्थली प्रदेश जो प्राचीन चट्टानों का क्षरण पठार है, वर्षा की कमी के कारण कहीं भी कोई भी फसल उगाई नहीं जाती है ।
2. ग्रेट आस्ट्रेलियन बेसिन एक अर्द्ध-शुष्क क्षेत्र है जहाँ भेड़ -पालन प्रमुख व्यवसाय है ।
3. उत्तरी आस्ट्रेलिया मानसूनी जलवायु तथा उष्ण कटिबन्धीय पर्णपाती वन क्षेत्र है । इससे जुड़ी सवाना भूमि में अच्छे चारे की कमी, पानी की कमी तथा यातायात के साधनों की कमी ने विरल जनसंख्या को आश्रय दिया है । मरे -डार्लिंग का कछार भाग में कुछ सिंचाई सुविधाओं के कारण गेहूँ तथा जी की खेती की जाती है । इस क्षेत्र को आस्ट्रेलिया का अन्न -भण्डार भी कहा जाता है ।

10.4 जनसमूहों की लाक्षणिक विशेषताऐं

1. जनसमूहों के वित्तरण में असमानता तथा क्षेत्रीय विसंगतियों का पाया जाना सबसे बड़ी विलक्षणता है । विश्व का 90 प्रतिशत भाग उत्तरी गोलार्द्ध में तथा केवल 10 प्रतिशत भाग ही दक्षिणी गोलार्द्ध में निवासित है । अक्षांशीय वित्तरण जनसंख्या की असमानताओं को ओर अधिक स्पष्ट करता है । विश्व की लगभग आधी जनसंख्या मात्र 5 प्रतिशत से भी कम भू- भल पर और शेष आधी 50 प्रतिशत क्षेत्र पर बिखरी हुई हैं (ट्रिवार्था, 1969) ।
2. सभी महाद्वीपों के सागर तटवर्ती कटिबन्ध जनसमूहों के सघन बसाव के लक्षण दर्शाते हैं । इस बसाव के सम्भवत: दो कारण हैं - जलवायु तथा सभ्यता । विश्व का 80 प्रतिशत जनसमूह समुद्र तल से 500 मीटर की ऊँचाई से निम्न स्थलों में बसी है ।
3. सघन जनसमूह क्षेत्र सामान्यतया पूर्वी एशिया, दक्षिणी एशिया,पश्चिमी यूरोप तथा उ पू- संयुक्त राज्य अमेरिका में निवासित है । इन क्षेत्रों में जन घनत्व 1000 से 2500 व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी तक पाया जाता है । यूरोप तथा ऐंग्लो -अमेरिका में सघन जनसमूहों के बसाव नगरीय तथा औद्योगिक विकास का आकर्षण दर्शाता है जबकि एशिया में इसका सम्बन्ध कृषि से है जहाँ नगरीय प्रभाव मात्र सूक्ष्म स्तर तक ही झलकता है । विशाल शुष्क प्रदेश, उच्च अक्षांशीय शीत प्रदेश और आर्द्र उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र लगभग निर्जन हैं । निर्जन अमेजन घाटी पिछड़ी कृषि संस्कृति की द्योतक है ।
4. जनसंख्या वितरण के लिए मुख्यत : भौतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक -सांस्कृतिक और जनांकिकी तत्व उत्तरदायी होते हैं । प्राचीन सभ्यता वाले क्षेत्र आज भी सघन जनसमूह वाले क्षेत्र हैं । जलवायु स्थलाकृति, उपजाऊ मिट्टियां, खनिज संसाधन, जल की उपलब्धता और क्षेत्रीय सम्बन्ध आज भी जनसमूह के बसाव में मुख्य भूमिका निभाते हैं । सांस्कृतिक घटकों में सामाजिक मनोवृति, आर्थिक विकास का स्तर और राजनीतिक संगठन तथा जनसांख्यिकीय घटकों में उत्पादकता, मार्त्यता दर और आवास -प्रवास धारा का विशेष महत्व होता है । ये सभी घटक सम्मलित रूप से मानव समूह के बसाव लक्षणों पर अपना प्रभाव डालते हैं । ज्यादातर अब यह भी देखने को मिलता है कि ज्यों-ज्यों विज्ञान तथा तकनीकी का विकास होता है, भौतिक कारकों का महत्व घटता जाता हैं । आमतौर पर पिछड़े समाज में जनसंख्या वित्तरण एवं घनत्व वहाँ पर उपलब्ध खाद्य संसाधनों पर

आधारित होता है । इनमें प्राकृतिक लक्षणों का प्रभाव अधिक रहता है । जबकि इसके विपरीत प्राविधिक दृष्टि से विकसित नगरीय संस्कृति में सांस्कृतिक घटकों का प्रभाव अधिक रहता है । अत : विश्व जनसमूह बसाव का वर्तमान प्रारूप मानव के उन हजारों वर्षो के लक्षण का प्रतिफल है जिसमें जनसमूह भौतिक प्रभाव के अनुरूप समायोजित होती रही है ।

5. महाद्वीपों के मुख्य जनसमूहों को बसाव लक्षणों के आधार पर दो भागों में रखा जा सकता है । प्रथम एशिया के दोनों जनसमूह के वितरण के लक्षण समान हैं जबकि अमेरिका और यूरोप के जनसमूह वितरण के लक्षण एक प्रकार के हैं । द्वितीय एशियाई जनसमूह के वितरण सम्बन्धी लक्षण ग्रामीण तथा कृषि आधारित है जबकि अमेरिका एवं यूरोप जनसमूह वैज्ञानिक तथा तकनीकि ज्ञान पर आधारित है । सभ्यता का यान्त्रीकरण, प्रादेशिक विशिष्टीकरण, नगरीय जीवन, औद्योगिक और वाणिज्य प्रगति इन जनसमूहों में पड़ने वाले राष्ट्रों की मुख्य विशेषता है ।

अत: जनसमूहों के लाक्षणिक विशेषता के सम्बन्ध में स्पष्ट है कि तेजी से बढ़ती विश्व जनसंख्या का अधिकांश जनसमूह विकासशील देशों मे बसता जा रहा है । यूरोप महाद्वीप को कृषि प्रधान एशिया महाद्वीप ने जनसंख्या वित्तरण और घनत्व दोनों मामलों में पीछे छोड़ दिया है । विकसित देशों में जनसंख्या या तो स्थिर है अथवा बहुत मन्द गति से बढ़ रही है । विश्व जनसमूह वितरण का सबसे बड़ा लक्षण जनसंख्या वितरण में भारी असमानता तथा अत्यधिक क्षेत्रीय विसंगतियों का पाया जाना है । अत्यधिक ठंडे-शुष्क एवं उष्णार्द्र क्षेत्रों में जनसंख्या वितरण जलवायु जैसे प्राकृतिक लक्षणों की पकड़ का परिचायक है ।

बोध प्रश्न - 1

1. संयुक्त राज्य अमेरिका की 85 प्रतिशत जनसंख्या किस देशान्तर रेखा के पूर्व में निवास करती है?

....

....

2. आस्ट्रेलिया महाद्वीप में जनसमूह का संकेन्द्रण प्राय : तटवर्ती भाग में ही पाया जाता है । इसका सबसे प्रमुख कारण क्या है?

....

....

3. एशियाई जनसमूह तथा यूरोपीय जनसमूहो के कौन से दो लक्षण एक दूसरे को अलग करते हैं?

....

....

4. विश्व के सर्वाधिक जनसमूह पृथ्वी के किस गोलार्द्ध में पाया जाता है?

....

....

5. उत्तरी अमेरिका में सघन जनसमूह कहाँ बसा हुआ है?

....

....

7. दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप का आधे से अधिक जनसमूह किस प्रदेश में निवासित है?

....

....

10.5 सारांश (summary)

प्राचीन बसे विश्व में कुल जनसंख्या का 86 प्रतिशत भाग रहता है जबकि नई दुनिया में कुल जनसंख्या का 14 प्रतिशत भाग निवासित है । दक्षिण के तीन महाद्वीपों में कुल का संख्या का केवल 19 प्रतिशत भाग बसा हुआ है । अक्षांशीय वितरण में भी काफी असमानता देखी जा सकती है । विषुवत रेखा के उत्तर में कुल जनसंख्या का 90 प्रतिशत से अधिक जबकि दक्षिण में 10 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या का बसाव है । उत्तरी गोलार्द्ध में जनसंख्या का वितरण निम्न प्रकार का है -

अक्षांश	**विश्व की कुल जनसंख्या का प्रतिशत**	**महाद्वीप**
0^0-20^0	10	मुख्यत: एशिया
20^0-40^0	50	मुख्यत: एशिया
40^0- 60^0	30	मुख्यत: यूरोप
>60^0	>10	मुख्यत: यूरोप

विश्वकी 80 प्रतिशतजनसंख्या 20^0 उत्तरी अक्षांश से 60^0 उत्तरी अंक्षाशों के मध्य बसी हुई है। मोटेतौर पर विश्व का अधिकांश जनसमूह महाद्वीपों के किनारों की ओर पाया जाता है । जैसे-जैसे आन्तरिक भागों की ओर बढ़ते है जनसंख्या विरल होती जाती है । विश्व का दो-तिहाई जनसमूह से 500 कि मी और तीन चौथाई समुद्र से 1000 कि मी. क्षेत्र में बसा हुआ है । महाद्वीपों के आन्तरिक भागों में शुष्कता अथवा दुर्गमता के कारण जनसमूहन कम है ।

जनसंख्या की वृद्धि उन्हीं भागों में अधिक पायी जाती है जहाँ प्रारम्भ से ही जनाधिक्य है और नगरीकरण का विस्तार हुआ है । पूर्वी तथा दक्षिण एशिया में जनसंख्या की वृद्धि अन्य भागों की तुलना में अधिक देखी जा सकती है ।

10.6 शब्दावली (glossary)

- **मानव समूह (human agglomeration) :** ऐसे व्यक्तियों का समूह जो कुछ सामान्य हितों के लिए एक दूसरे के साथ अर्थपूर्ण क्रिया द्वारा संबधित हों ।
- **एशिया (Asia) :** विश्व का वृहत्म द्वीप जिसका कुल क्षेत्रफल लगभग 440 लाख वर्ग कि. मी. है । यह 10^0 दक्षिणी अक्षांश से 80^0 उत्तरी अक्षांश और 26^0 पूर्वी देशान्तर से 169^0 पश्चिमी देशान्तर के मध्य स्थित है ।

- **महाद्वीप (continental) :** सागर तल से ऊपर उठे हुए पृथ्वी के विशाल भू - भाग जो चारों ओर से अधिकांशत : महासागरों से घिरे होते हैं ।
- **घाटी (valley) :** भूतल का अपेक्षाकृत लम्बी किन्तु संकरी द्रोणी जिसका ढाल मन्द तथा नियमित होता है । घाटी से होकर प्राय : किसी नदी या हिमनदी का प्रवाह होता है जो इसे अपरदित करके समतल तथा नीचा बना देती है ।
- **डेल्टा क्षेत्र (delta area) :** नदी के मुहाने पर पर्याप्त जलोढ़ (मिट्टी के कण) के निक्षेप से निर्मित त्रिभुजाकार या पंखाकार निचली भूमि ।
- **उष्ण कटिबन्ध (tropicapl zone) :** भूमध्य रेखा के दोनों ओर अयनवृतों (कर्क तथा मकर मृत) के मध्य स्थित पृथ्वी का भाग ।

10.7 संदर्भ ग्रंथ (reference books)

1. एस. डी कौशिक : **संसाधन भूगोल,** रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ 2007
2. आर सी. चान्दना : **जनसंख्या भूगोल,** कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना 2006
3. वी. पी. पण्डा : **जनसंख्या भूगोल,** मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 2004
4. राव एवं श्रीवास्तव : **मानव भूगोल,** वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर 2006
5. मामोरिया एवं माहेश्वरी : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा 2006
6. एस. डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ 2006
7. अलका गौतम : **आर्थिक भूगोल के मूल तत्व,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहबाद 2006
8. एस. डी. मौर्य : **जनसंख्या भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहबाद 2007

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 100^0 पूर्वी देशान्तर के उत्तर में,
2. जलवायु की अनुकूलता ।
3. एशियाई जनसमूह कृषि प्रधान है जबकि यूरोपीय जनसमूह उद्योग प्रधान है ।
4. सर्वाधिक जनसमूह उत्तरी गोलार्द्ध में पाया जाता है ।
5. पूर्वी तट पर सर्वाधिक जनसमूह बसा हुआ है ।
6. ब्राजील में आधे से अधिक जनसमूह निवासित है ।

10.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. एशिया जनसमूह तथा यूरोपीय जनसमूह की तुलना करते हुए उनकी विशेषताऐं बताइए?
2. भारत में जनसमूहों के प्रमुख क्षेत्रों तथा उपक्षेत्रों का वर्णन कीजिए?
3. दक्षिणी अफ्रीका के किन्हीं पांच सघन जनसमूहों की विवेचना कीजिए?

इकाई 11 : प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय मानव प्रवास (Major International Human Migration)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय मानव प्रवास के प्रकार
    11.2.1 यूरोपीय प्रवसन
    11.2.2 एशियाई प्रवसन
11.3 अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास के कारण
    11.3.1 भौतिक
    11.3.2 आर्थिक
    11.3.3 सामाजिक -सांस्कृतिक
    11.3.4 राजनीतिक
11.4 जनसंख्या का अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन
    11.4.1 प्रागैतिहासिक
    11.4.2 मध्यकालीन
    11.4.3 आधुनिक
11.5 प्रवसन के क्षेत्रीय स्वरूप
    11.5.1 यूरोप से उ. तथा द अमेरिका में जनप्रवाह
    11.5.2 यूरोप से आस्ट्रेलिया एवं अफ्रीका में जनप्रवाह
    11.5.3 एशिया में प्रवसन
    11.5.4 अफ्रीका से स्थानान्तरण (प्रवसन)
11.6 प्रवसन की विशेषताऐं
11.7 प्रवसन के प्रभाव
    11.7.1 क्षेत्रीय प्रभाव
    11.7.2 जीवन शैली पर प्रभाव
    11.7.3 जनांककीय प्रभाव
    11.7.4 आर्थिक -सामाजिक प्रभाव
    11.7.5 राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव
    11.7.6 आयुवर्ग पर प्रभाव
11.8 प्रवसन के मॉडल
    11.8.1 गुरूत्व मॉडल
    11.8.2 मध्यस्थ अवसर मॉडल

11.8.3 ई एस ली का स्थानान्तरण मॉडल
11.8.4 जेलस्की का गतिशील संक्रमण मॉडल
11.9 सारांश
11.10 शब्दावली
11.11 संदर्भ ग्रंथ
11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई की अध्ययन करने के उपरान्त आप समझ सकेंगे कि : -

- प्रवास की अवधारणा और प्रवास के प्रकारों को समझना ।
- प्रवास के कारणों का ज्ञान ।
- तीन काल खण्डों - प्रागैतिहासिक, मध्य व आधुनिक कालों में विश्वव्यापी अन्तर्राष्ट्रीय प्रमुख प्रवसन ।
- मानव प्रवसन के प्रभाव ।
- प्रवसन के मॉडल का ज्ञान ।

11.1 प्रस्तावना (introduction)

पृथ्वी तल पर मनुष्य कभी भी पूर्णरूप से स्थिर अवस्था में नहीं रहा है । आदिकाल से ही विभिन्न प्राकृतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कारणों से प्रभावित होकर मानव एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर प्रवसन करता रहा है और यह गतिशीलता आज भी बनी हुई है इसी गतिशीलता से प्रभावित होकर फ्रेडरिक रेटजेल ने भूगोल को गतिशीलता का विज्ञान (science of movement) कहा था । अत : प्रवसन से तात्पर्य मानव समूह द्वारा कठिन परिस्थितियों वाले स्थान को त्याग कर किसी अनुकूल स्थान पर स्थायी रूप से बस जाना ही प्रवसन (migration) कहलाता है । संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी स्थानान्तरण को स्पष्ट करते हुए लिखा है । कि ' 'प्रवसन से तात्पर्य भौगोलिक अथवा स्थानिक (spatial) प्रवासितता से है जो एक भौगोलिक इकाई से दूसरी भौगोलिक इकाई के मध्य देखी जा सकती है । जिनमें रहने का मूल स्थान और पहुँचने का स्थान दोनों एक दूसरे से भिन्न होते हैं । ऐसे प्रवसन अधिकांशत : स्थायी हो सकते हैं क्योंकि इसमे मानव का निवास स्थान स्थायी रूप से बदल जाता है ' । " प्राय : अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन निम्नांकित दो शब्दों से सम्बोधित किया जाता है । स्थान परिवर्तन के साथ दोनों के अर्थ बदल जाया करते हैं -

1. उत्प्रवास अथवा बहिर्गमन (emigration or out-migration)
2. आप्रवास अथवा आगमन (immigration or in-migration)

---

1. UNO, Multilingual Demographic Dictionary, 1956, P. 46.

1. **उत्प्रवास -** एक महाद्वीप अथवा देश के व्यक्तियों का किसी दूसरे महाद्वीप अथवा देश में जाकर बस जाने पर वे व्यक्ति वहाँ के लिए प्रवासी कहलाऐंगे । जैसे यूरोप के लोग पलायन करके उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि देशों में जाकर बस गए । ये लोग वहाँ यूरोपीय उत्प्रवासी कहलाए ।
2. **आप्रवासी -** इसके विपरीत बाहरी देशों -महाद्वीपों से जब मानव स्थानान्तरित होकर जिस देश विशेष में आकर बस जाते हैं तो वहाँ के लिए ये लोग आप्रवासी कहलाऐंगे । उदाहरणार्थ यूरोप; व महाद्वीप के लोग अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि देशों में आप्रवासी कहलाए । अर्थात किसी एक महाद्वीप अथवा देश से जाने वाले उत्प्रवासी (Emigrates) और अन्य देश महाद्वीप में आने वाले आप्रवासी (Immigrates) कहलाते हैं ।

11.2 अन्तर्राष्ट्रीय मानव प्रवसन के प्रकार (Types of international migration)

विश्व में एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप में या एक देश से दूसरे देश में लोगों के होने वाले प्रवसन को अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन कहते हैं । प्राय : अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रवसन आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एव धार्मिक कारणों से ही हुआ है । प्राचीन काल में जहाँ मानवीय प्रवसन के मुख्य कारणों में साम्राज्यवाद तथा श्रम हेतु बलात स्थानान्तरण प्रमुख कारण थे । वहीं वर्तमान समय में मानव उच्च शिक्षा तथा रोजगार प्राप्ति की दृष्टि से प्रवासित हो रहा है । अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन अधिकतर यूरोप एवं एशिया महाद्वीप के विभिन्न देशों के मध्य हुआ है । अत : अन्तर्राष्ट्रीय मानव प्रवसन को क्रमश: यूरोप एव एशियाई प्रवसन प्रकार में विभाजित किया जाता है -

11.2.1 यूरोपीय प्रवसन (European migration)

महाद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी भाग के लोग अन्य देशों की ओर प्रवसन करने में अग्रणीय रहे हैं । यहाँ से लोग समुद्री मार्ग द्वारा विशेषत: 17वीं से 20वी शताब्दी तक विश्व के अनेक देशों में जाकर स्थायी रूप से बस गए । इसका प्रमुख कारण यूरोप में संसाधनों की कमी तथा जीवन -स्तर का गिरना था । अन्य ज्ञात देशों में उपजाऊ भूमि, खनिज संसाधन आदि प्रचूर मात्रा में उपलब्ध हो गए । इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, पुर्तगाल, स्पेन, नीदरलैण्ड आदि देशों से लोग प्रवासित होकर अफ्रीका, एशिया तथा अमरीकी देशों में जा बसे । अपनी उच्च तकनीक एवं ज्ञान से इन लोगों ने वहाँ के संसाधनों का तीव्रगति से विकास किया । यूरोप से स्थानान्तरित होकर ये लोग विश्व के दो मुख्य भागों में जाकर बसे

(अ) **उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र (tropical regions) :** उत्तरी अमेरिका एवं दक्षिणी अमेरिका के समुद्र तटीय उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र तथा एशिया के दक्षिणी-पूर्वी भाग जलवायु दृष्टि से अनुकूल रहे । यहाँ जाकर इन लोगों ने कपास, गन्ना, गर्म मसाले, तम्बाकू, कहवा, चाय आदि व्यापारिक फसलों का उत्पादन प्रारम्भ किया । खेतों पर मजदूरी के लिए ये यूरोपीय लोग अन्य देशों से बन्धुओं मजदूर बलात लाते थे ।

(ब) **शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र (temperate region) :** इस कटिबन्ध की जलवायु यूरोपीय लोगों के लिए अनुकूल थी अत: यहाँ के लोग स्थायी रूप से बसे । उत्तरी अमेरिका के संयुक्त राज्य, कनाडा, द. अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों में इनकी जनसंख्या अधिकतम पायी जाती है । प्रारम्भ में यूरोपीय लोगों का मुख्य उद्देश्य केवल उपनिवेश स्थापित कर उन देशों का आर्थिक शोषण करना ही था । किन्तु बाद में ये लोग उन देशों में स्थायी रूप से बसने लगे ।

11.2.2 एशियाई देशों से प्रवसन (Asian Migration)

18वीं शताब्दी के बाद जनाधिक्य के कारण चीन, भारत एवं जापान के लोग अपने पड़ौसी देशों में प्रवासित होकर स्थायी रूप से बसने लगे । इसका प्रमुख कारण पड़ौसी देशों में जनसंख्या का कम होना था । चीन से अधिकांश लोग मंचूरिया, कोरिया, मलेशिया, थाईलैण्ड, वियतनाम, फिलिपीन, म्यांमार आदि विरल जनसंख्या वाले देशों में जाकर बस गए । इसके अतिरिक्त चीनी लोग अमेरिका तथा अफ्रीकी देशों तक भी जा बसे ।

जापान एक छोटा देश होने के कारण प्रारम्भ से ही जनसंख्या दबाव में ही रहा अत: यहाँ से जापानी संयुक्त राज्य अमेरिका, हवाई द्वीप, कनाडा, ब्राजील, आस्ट्रेलिया, कोरिया, मंचूरिया, मलेशिया आदि देशों में प्रवसन कर गए ।

भारत से भी प्राचीन काल में धार्मिक प्रचार प्रसार के लिए कई लोगों ने प्रवसन किया । बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए म्यांमार, श्रीलंका, मलेशिया, हिन्देशिया आदि देशों में प्रवासित हुए । अंग्रेजी शासन काल में अनेक भारतीयों को अंग्रेजी कृषि बागानों में मजदूरी करवाने द. अफ्रीका, मारीशस, फिजी आदि देशों में ले गए जो बाद में स्थायी रूप से वहाँ बस गए ।

अत : कारण, दूरी और क्षेत्र के आधार पर प्रवसन को दो -दो वर्गों में रखकर देखा जा सकता है-

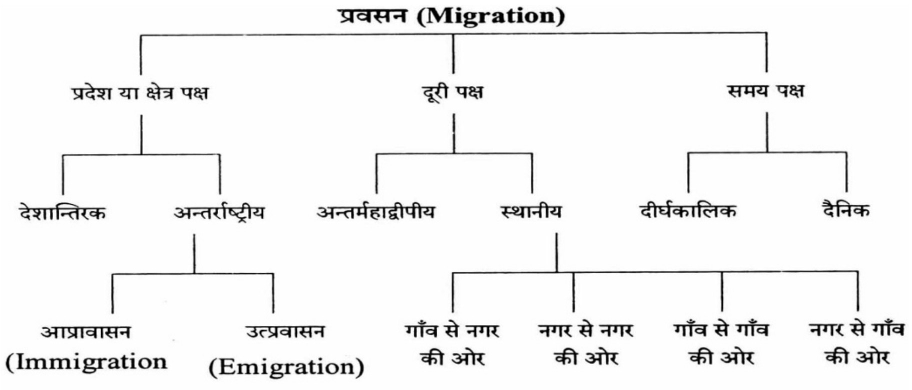

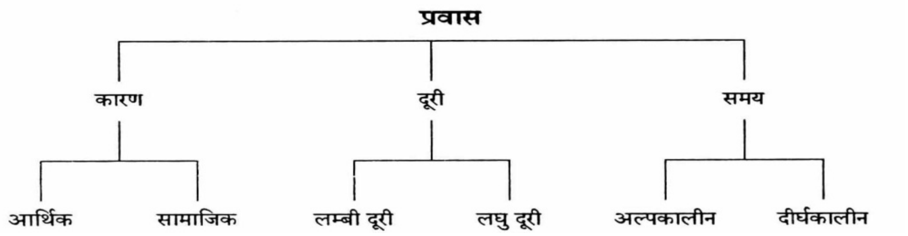

11.3 अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन के कारण (Causes Of international Migration)

विश्व में एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप में या एक देश से दूसरे देश में लोगो के स्थानान्तरण को अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन कहा जाता है । ये प्रवसन अधिकांशत : आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक कारणों से हैं । वर्तमान प्रवसन के पृष्ठ में रोजगार प्राप्ति तथा उच्च शैक्षणिक कारक उत्तरदायी हैं । मोटेतोर से प्रवसन के कारकों को निम्न वर्गो में विभाजित किया जा सकता है -

1. प्राकृतिक कारक : (i) जलवायु (ii) नदियां (iii) विनाशकारी शक्तियां; जैसे भूकम्प, ज्वालामुखी, भूस्खलन आदि (iv) उर्वरक मिट्टियां ।
2. आर्थिक कारक - औद्योगिकरण, खनिज संसाधनों का विकास, नवीन कृषि क्षेत्रों की उपलब्धि, कृषि तकनीकी का विकास, रोजगार अवसरों का होना, व्यापार में सुविधा, आवागमन के साधन आदि ।
3. सामाजिक कारक - सामाजिक रीतिरिवाज, धार्मिक स्वतन्त्रता ।
4. राजनीतिक कारक - राजनीतिक अस्थिरता, उपनिवेशन, सुरक्षा, युद्ध तथा उनके परिणाम, बलात बर्हिप्रवास तथा आप्रवास ।
5. जनांककी कारक - अल्प जनसंख्या, क्षेत्रिय मित्रता ।

मोटेतोर से प्रवसन के कारकों को चार वर्गो में रखा जा सकता है -

1. भौतिक कारण
2. आर्थिक कारण
3. राजनीतिक कारण
4. सामाजिक सांस्कृतिक कारण

11.3.1 भौतिक कारण

जलवायु परिवर्तन (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ़ या दुर्भिक्ष) भूकम्प, ज्वालामुखी उद्गार, हिमाराशियों का घटना-बढना, मिट्टियों का अनउपजाऊ होना तथा समुद्र तटों का उन्मज्जन या निमज्जन होना आदि प्रतिकूल प्राकृतिक दशाऐं मनुष्य को अपने जीवन की सुरक्षा के लिए अन्य स्थानों को पलायन करने को बाध्य करती हैं ।

भौतिक या प्राकृतिक कारणों में सबसे व्यापक प्रभाव जलवायु परिवर्तन का होता है । कुमारी सैम्पुल के अनुसार जब मध्य एशिया में शुष्कता बढ़ गई तो वहां से आर्य लोग चारों दिशाओं में पलायन करने लगे । इन्हीं आर्यो की एक शाखा तुर्किस्तान और अफगानिस्तान होती हुई भारत की ओर बढ़ी । इसी प्रकार मध्य युग में भी इसी शुष्क मध्य एशिया से आक्रमणकारी (शक, हूण, तातार और मंगोल) चीन, भारत तथा यूनान में जा बसे । प्लीस्टोसीन युग के अन्तिम चरण में जब हिमालय क्षेत्र उत्तरी बाल्टिक खण्ड तक फैला तो धीरे-धीरे द. यूरोप से लोग उत्तर की ओर अग्रसर हुए ।

उत्तम जलवायु के कारण ही उ. अमेरिका पश्चिमी यूरोप, भूमध्य सागरीय क्षेत्र तथा पूर्वी एशिया आदि क्षेत्रों में मानव जाकर बसे । स्फूर्तिदायक जलवायु तथा प्रयास वर्षा के कारण ही एशिया के स्टैपी प्रदेशों से तत्कालीन जातियाँ विशेषत: गोथ, हूण, वलगर और टार्टर आदि पश्चिमी यूरोपीय देशों की ओर बढीं । इसी प्रकार बाल्टिक सागर के लोग भूमध्य सागर की ओर बड़े । मंगोलिया के पर्वतीय क्षेत्रों से यांग्ट्सीक्यांग नदी बेसिन में मानव बसाव का प्रमुख कारण उपयुक्त जलवायु के साथ उपजाऊ मिट्टियों का होना ही था । इसके अतिरिक्त बाढ़ के कारण भी जनसंख्या के बड़े पैमाने पर पलायन हुआ है । भारत में कोसी नदी, चीन का हांग्हो, और कम्बोदिया की मीकांग नदियों में भंयकर बाढ़ों के साथ नदियों के मार्ग बदल जाते हैं फलस्वरूप मानव समूह अपने मूल स्थान को छोड़कर सुरक्षित क्षेत्रों की ओर प्रवसन कर जाते हैं ।
1934 के बिहार के भूकम्प के कारण हजारों लोग पलायन करके पश्चिमी बंगाल, उत्तर प्रदेश और उड़ीसा राज्यों में जाकर स्थायी रूप से बस गए । ज्वालामुखी के आकस्मिक उद्‌गार भी व्यक्तियों को अपने निवास स्थान छोड़ने को बाध्य करते हैं । जैसे सिसली, फिलीपीन और हवाई द्‌वीपों से इसी कारण हजारों लोग अन्य देशों में जाकर बस गए ।

11.3.2 आर्थिक कारण

आर्थिक कारणों में जनाधिक्य, खाद्‌य सामग्री का अभाव, सिंचाई की सुविधा, उपजाऊ भूमि का आकर्षण, खनिज तथा वन संसाधनों की उपलब्धता आदि मुख्य हैं । डॉ. हैडन के अनुसार ' 'जनसंख्या पलायन का मुख्य कारण किसी देश की भूमि पर जनसंख्या के अधिक भार बड़ जाने से खाद- सामग्री का अभाव होने लगता है फलस्वरूप पड़ौसी देश के धन-धान्यता का आकर्षण उस पर आक्रमण कर वहां पलायन करने की भावना उनमें जगा देता है । " अत: मानव प्रवसन में निम्न कारण उत्तरदायी होते हैं -

(i) पश्चिमी यूरोप, मध्य एशिया, पूर्वी चीन आदि देशों में जनाधिक्य के कारण वहाँ से मानव समूह दूसरे देशों को प्रवास करते रहे हैं । उदाहरणार्थ 1920 से 1940 तक जापान में जनसंख्या के अधिक सघन हो जाने से अधिकांश जापानी अच्छे आर्थिक स्त्रोतों हेतु कोरिया, मंचूरिया, वियतनाम तथा ब्राजील में जा बसे ।
(ii) जिन देशों में खनिज सम्पदा, औद्‌योगिकरण आदि की प्रधानता होती है वहां अन्य देशों के लोग पलायन करके वहाँ आने लगते हैं जैसे अमेरिकाओं, भारत, अफ्रीका तथा अन्य एशियाई देशों को उच्च आर्थिक दशाओं की उपलब्धता के कारण पलायन हुआ ।
(iii) उत्तरी अमेरिका, लेटिन अमेरिका, आस्ट्रेलिया एवं दक्षिणी अफ्रीका में विस्तृत कृषि भूमि की उपलब्धता ने यूरोप, चीन और जापान के लोगों को आकर्षित किया है । सिंचाई की उत्तम सुविधा के कारण ही अन्य भागों से जनसंख्या यांग्टिसीक्याँग और सिन्धु -गंगा नदी बेसिनों की ओर बढ़ी ।
(iv) खनिज सम्पदा के आकर्षण के कारण ही अलास्का की बर्फीली तथा कठोर जलवायु के बावजूद भी वहां सोने की खानों के समीप स्पेन वासियों की बस्तियां बस गई है । इसी प्रकार आस्ट्रेलिया के उष्ण मरूस्थल में स्थित कालगुर्ली और कूलगार्डी सोने की खानों के

कारण मानव बस्तियां का प्रवास हुआ है । मध्य एशिया में तेल कूओं के पास मानव बसे हैं । यूरोप तथा संयुक्त राज्य अमरीकी पूर्वी राज्यों में कोयला पेटी में स्थित नगरों का आकर्षण मानव प्रवसन को बढ़ाता रहा है ।

(v) पहाड़ी अथवा शुष्क अन्न-उपजाऊ प्रदेश के निवासियों ने विशेषत: मंगोलिया तथा मध्य एशिया के लोगों ने वहाँ की कठोर जलवायु से निजात पाने के उद्देश्य से गंगा-यमुना, दजला- फरात अथवा यांग्ट्सी नदी घाटी क्षेत्रों पर आक्रमण किए और स्वच्छ जल भरी नदियों के सहारे बस गए । आज भी चीन, स्पेन, पुर्तगाल, हालैण्ड आदि देशों में साम्राज्य विस्तार की होड़ लगी है ।

(vi) तीर्थ स्थलों के कारण भी प्रवसन होने लगता है । प्रतिवर्ष हजारों मुस्लिम विश्व के अन्य देशों से मक्का, मदीन तथा रोमन कैथोलिक रोम और फ्रांस, इथियोपिया रच ब्रिटेन से यहूदी जेरूसलेम को जाते हैं किन्तु ऐसे स्थानान्तरण अस्थायी हुआ करते हैं ।

11.3.4 सामाजिक - सांस्कृतिक कारण (Social - cultural reasons)

धार्मिक एवं सामाजिक संकटों के कारण भी बड़ी मात्रा में प्रवसन होते हैं जैसे 16 वीं और 17 वीं शताब्दियों में हागूनॉट (Hunghnat) लोगों ने फ्रांस से भागकर इंग्लैण्ड, जर्मनी, बेल्लियम और इसी प्रकार यहूदियों ने जर्मनी और मिस्त्र से भागकर फिलिस्तीन में शरण ली । 1947 में देश विभाजन के कारण पाकिस्तान से लगभग 73 लाख लोग भारत आए और 67 लाख मुस्लिम परिवार भारत से पाकिस्तान गए । धार्मिक कारणों का यह विश्व का सबसे वृहद प्रवसन था ।

सातवीं से बारहवीं शताब्दी तक ईसाई तथा इस्लाम धर्मावलम्बियों के बीच धर्म युद्ध होते रहने के कारण ईरान से लगाकर स्पेन-पूर्तगाल के बीच नियमित मानव समूहों का पलायान होता रहा है । धार्मिक भावनाओं के कारण ही स्पेन के लोग मैक्सिको में और फ्रांसिसी कनाडा में प्रवासित हुए । इसी प्रकार जर्मनी और रूस से असंख्य यहूदी अमेरिका जा बसे । कुमारी सैम्पुल के अनुसार अरब से बाहर प्रवास करने वाले इस्लाम धर्मावलम्बियों ने अपने धर्म व सभ्यता को पश्चिम में मिस्त्र और अफ्रीकी मरूस्थल तथा सूडान तक और पूर्व में ईरान, अफगानिस्तान तथा चीनी तुर्किस्तान तक और उत्तर में पेलेस्टाइन, सीरिया और इराक तक फैला दिया था ।

11.3.4 राजनीतिक कारण

राजनीतिक प्रवसन में मुख्यत: चार कारण प्रभावी रहते हैं -

(i) आक्रमण,

(ii) विजय प्राप्त करने की लालसा,

(iii) नए देशों में उपनिवेशों की स्थापना

(iv) बलात

आक्रमणों के कारण हुए पलायन के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं । मुगलों के आने से पूर्व सिकन्दर, महमूद गजनवी, मुहम्मद गौरी, बाबर, चँगेज खाँ, तैमुरलंग के भारत पर आक्रमण के

समय जो लोग इनके साथ थे, वे यहीं बस गए । इसी प्रकार ब्रिटेन से जो प्रवासी उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड की -ओर गए उन्होंने वहां के मूल निवासियों रेड इण्डियन, आस्ट्रेलॉयड और मावरी (Maoris) लोगों को खदेड़ कर भूमि पर अपना अधिकार जमा लिया । डच लोगों ने इण्डोनेशिया में, स्पेनी एवं पुर्तगालियों ने लेटिन अमेरिका में, अंग्रेजों तथा फ्रांसिसियों ने क्रमश: भारत तथा अफीका देशों में अपने -अपने उपनिवेश स्थापित किए । तत्पश्चात प्रशासन के संचालन, व्यापार आदि के लिए ये लोग इन देशों में आकर रहने लगे । भारत के चाय, कहवा, रबड़ आदि बागानों में अपनी पूंजी लगा कर स्थायी रूप से यहीं बस गए । कुछ अंग्रेज पादरी भी धर्म प्रचार के लिए यहाँ आकर रहन लगे । मंचूरिया पर चीनी विजय के पश्चात चीनी लोग यहाँ आकर बस गए । उपनिवेश स्थापित करने के मुख्य प्रायोजन खेती तथा खनिज संसाधनों पर आधिपत्य कर अपने हित में उनका विकास करना रहा है ।

बलात प्रवसन (forced migration) संसार के अनेक देशों में देखे जा सकते हैं । भारतीयों को कुली बनाकर अंग्रेज इन्हें मॉरिशस, गायना, नेटाल, फिजी आदि उपनिवेशी देशों में ले गए । इसी प्रकार 18 वीं- 19 वीं शताब्दी में अनेक हब्शी गुलामों को संयुक्त राज्य अमेरिका में मजदूरी करने के लिए ले जाया गया । द्वितीय विश्व युद्ध काल में फ्रांस, बेल्जियम, पौलेण्ड आदि देशों से लगभग- दो करोड़ लोगों को अपने निवास स्थानों से खदेड़ा गया ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि मानव प्रवसन प्रवृति का प्राणी है । जब किसी क्षेत्र में जनाधिक्य भार उसके आर्थिक संसाधनों की तुलना मे असंतुलित हो जाता है तो लोग अपने मूल स्थान को त्याग कर अन्यत्र प्रवास कर जाते हैं । वास्तव में मानव प्रवसन सामाजिक - सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा भौगोलिक दशाओं की ही उपज है । प्रो. ब्लाश का कथन सटीक प्रतीत होता है । उन्होंने कहा है कि " जब मक्खियों का छता पूरी तरह से भर जाता है, तो मक्खियाँ उसे छोड़ कर अन्यत्र पलायन कर जाती हैं । अत : सभी कालों में मानव प्रवास का ऐसा ही इतिहास रहा है ।

डोनाल्ड बोग के शब्दों में ''Migratory movement is a response of human organisms to economic , social and demographic forces in the environment “

मौटेतोर पर प्रवसन के लिए दो घटक (Factors) उत्तरदायी हैं - (i) धक्का देने वाले अथवा प्रतिकूल घटक (push factors) और (ii) अनुकूल या आकर्षक (pull Factors) घटक ' ।

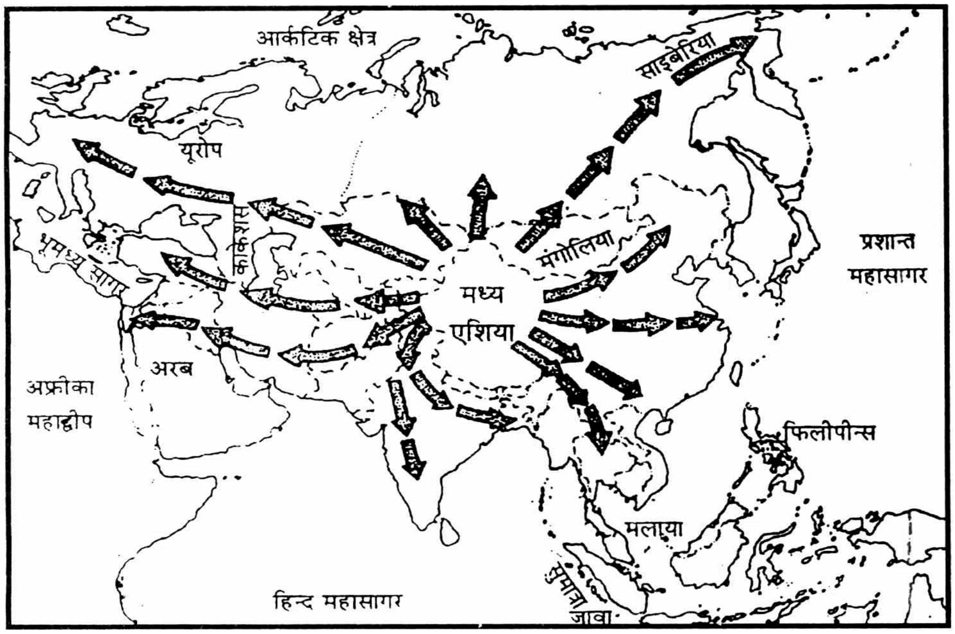

चित्र - 11.1 : मध्य एशिया से प्रागतिहासिक प्रवास की दिशायें

1. **प्रतिकूल घटक (Push Factors)** - में निम्न तत्व उत्तरदायी रहते हैं (i) मूल स्थान में जनसंख्या वृद्धि दर ऊँची होने से भूमि पर उसका बढ़ता हुआ भार (ii) प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन या अभाव (iii) प्राकृतिक आपदाऐं (iv) सामाजिक अथवा राजनीतिक कारणों से सामाजिक संघर्ष (v) एक वर्ग का दूसरे वर्ग के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार (vi) संयुक्त परिवार प्रणाली में विघटन (vii) वर्तमान सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे के प्रति असन्तुष्टि । इन एकाकी या सामूहिक कारणों से क्षुब्ध होकर मानव प्रवास करता है ।
2. **अनुकूल घटक (Pull factors) -** व्यक्ति अपने जीवन को अधिक सुखी बनाने के लिए अन्य क्षेत्रों -देशों की ओर आकर्षित होता है जिनमें (i) लाभपूर्ण रोजगार के श्रेष्ठ अवसरों की उपलब्धता (ii) अधिक आय उपार्जन के लिए श्रेष्ठ अवसर की प्राप्ति (iii) विशिष्ट शिक्षा-प्रशिक्षण एवं योग्यता बढाने की सुविधाओं की उपलब्धता (iii) अनुकूल वातावरण एवं जलवायु में आवास व्यवस्था (iv) आमोद-प्रमोद के साधनों की उपलब्धता (iv) विकसित देशों का आकर्षण आदि प्रमुख घटक उत्तरदायी रहते हैं ।

11.4 जनसंख्या का अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन (International Human Migration)

कोई समूह या व्यक्ति अकारण स्थानान्तरित नहीं होता है फिर भी मानव में स्थानान्तरण की एक प्रवृति होती है जो प्रवसन के लिए प्रेरित करती है । अत : मानव प्रवसन बहुआयामी,

---

2. Bogue, Donald. J., Principles of Demography, 1969, p. 753.
3. Thomilson, Ralph, Population Dynamics, 1965, P. 224.

बहुउद्देशीय और बहुकालिक होता है । यही कारण है कि अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन को तीन काल खण्डों में विभक्त किया जा सकता है -

1. प्रागैतिहासिक प्रवसन (pre-historic Migration)
2. मध्यकालीन प्रवसन (Middle age Migration)
3. आधुनिक प्रवसन (Modern Migration)

11.4.1 प्रागैतिहासिक प्रवसन

विद्वानों का ऐसा विश्वास है कि आज से दस लाख वर्ष पूर्व अन्तर्राष्ट्रीय मानव प्रवसन प्रारम्भ हो गया था । मध्य एशिया में जलवायु शुष्कता के कारण जब मानव को भोजन की कठिनाई पैदा हुई तो वह नए क्षेत्रों की ओर प्रवसन होने का बाध्य हुआ । ऐसा अनुमान है कि प्रथम मानव प्रवसन ईसा पूर्व 10 लाख से 5 लाख वर्ष के मध्य हुआ जिसके फलस्वरूप अफ्रीका और दक्षिणी पूर्वी एशिया के उपोष्ण क्षेत्र आबाद हुए । दूसरा प्रवसन 5 लाख से 2 लाख ईसा पूर्व हुआ तब उत्तरी अमेरिका और आस्ट्रेलिया में मानव ने प्रवेश किया । (चित्र- 11. 1)

यह युग हिमप्रसार का युग था इसलिए केवल शीतोष्ण प्रखण्डों तक ही मानव प्रवसन हो सका । इस समय तक मानव हथियार बनाने की कला सीख चुका था अत : नए क्षेत्रों की बाधाओं को आसानी से पार कर सका । ईसा से 20 हजार वर्ष पूर्व हिम के आखरी आवरण के हट जाने से आदि मानव का मध्य अक्षांशों का क्षेत्र आकर्षक लगने लगा क्योंकि यहाँ उष्ण प्रदेशों की अपेक्षा शिकार की अधिक अच्छी सुविधा थी । यह क्रम ईसा से 5 हजार वर्ष पूर्व तक चलता रहा । कुछ विद्वान प्राचीन कालीन विश्वव्यापी मानव प्रवसन का समय ईसा से 5 हजारों से 1500 वर्ष तक मानते हैं । इस युग में नदी घाटियों में प्रवासित समूह स्थाई अर्थतन्त्र विकसित करने लगा था फलस्वरूप कृषि, पशुपालन, व्यापार और यातायात के साधनों के विकास के साथ कुछ नदी घाटी सभ्यतायें विश्व प्रसिद्ध होने लगी थीं ।

इस समय कई समुद्री यात्राओं भी की गई जिनके द्वारा न्यूज़ीलैण्ड, दक्षिणी प्रशान्त महासागरीय द्वीपों और हवाई द्वीपों पर अधिकार किया गया । इस काल में अधिकांश प्रवसन छोटे पेमाने पर हुए क्योकि यात्रा के मार्गो पर कठोर प्रतिबन्ध थे । प्राग-एतिहासिक युगों में मानव समूहों के प्रवसन जो मध्य एशिया से बाहरी भागो मे हुए थे उनमें निम्नलिखित मुख्य थे -(चित्र 11.2)

1. पूर्वी चीन को विशेषत : ह्वंग्रहो नदी घाटी को । बाद में वहां से समुद्र तटीय मैदानी मार्ग से यांग्ट्जीघाटी और हिन्द चीन को प्रवसन ।
2. खेबर तथा अन्य दर्रो द्वारा सिंधु -गंगा घाटी और उत्तरी भारत के मैदानी भाग को ।
3. ईरान, दजला-फरात के उपजाऊ प्रदेश और मिस्त्र की नील घाटी को ।
4. भूमध्य सगर के तटीय क्षेत्र से होते हुए जिब्राल्टर के मार्ग से स्पेन तथा फ्रांस को ।
5. भूमध्य सागर के तटीय क्षेत्र से होते हुए जिब्राल्टर के मार्ग से स्पेन तथा फ्रांस को ।
6. मंगोलिया का और उसके अनादिर (Anadir) प्रायद्वीप को ।

7. कुछ मानव समूह अनादिर से आगे बढकर बैरिग (Bering) के मार्ग से उत्तरी अमेरिका पहुंचा जहाँ इनकी दो शाखाऐं बन गई थी । यही लोग तत्पश्चात् उतरी अमेरिका के मूल निवासी कहलाए ।

11.4.2 मध्यकालीन प्रवसन

इस काल का प्रवसन प्रागैतिहासिक स्थानान्तरण से सर्वथा भिन्न था । मध्यकाल में दास प्रथा के रूप में प्रवसन हुए । नदी घाटियाँ विशेषत : दजला-फरात, नील बेसिन, गंगा-सिन्धु मैदान, हवांग्रहो घाटी तथा रूमसागर तटीय क्षेत्र आदि अपने आकर्षण से लोगों का ध्यान अपनी और खींचते रहे और इनकी सम्पत्ति को बार बार लूटते रहे । सिकन्दर से लेकर बाबर के हमले मानव प्रवसन को बाध्य करते रहे । दक्षिणी यूरोप, मध्य और दक्षिणी एशिया इस काल खण्ड में सबसे अधिक प्रवसन से प्रभावित हुए । इस काल में मुख्यत : तीन प्रकार के प्रवसन हुए -

(i) **बलात प्रवसन :** यूरोप, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका के अनेक उपनिवेशों में इस प्रकार का प्रवसन हुआ । स्पेन, पुर्तगाल, फ्रांस, रोम आदि साम्राज्यवादी शक्तियों ने अनेक देशों से दास के रूप में लोगों को बलात पकड़कर अपने उपनिवेशों में काम करने के लिए बाध्य किया । इस प्रकार के बलात प्रवसन अफ्रीका, भारत आदि देशों से किया गया

(ii) **स्वैच्छिक प्रवसन :** इस युग में बादशाहों, सरदारों, सिपहसालारों की अगुआई में कुशल कलाकारों, उद्यमियों, व्यापारियों और सिपाही के रूप में व्यापक प्रवसन हुए । भारत में मुगलों की बढ़ती ताकत के कारण पश्चिमी एशिया के लोग यहाँ लाकर बसाए गए । इस काल में इस्लाम के प्रचारक अफ्रीका, यूरोप और मध्य एशिया से लेकर दक्षिणी-पूर्वी एशिया तक सक्रिय थे ।

(iii) **धर्म और युद्ध के कारण प्रवसन :** प्रथम विश्व युद्ध में लगभग 60 लाख व्यक्ति और द्वितीय विश्व युद्ध में लगभग 6 करोड़ बेघरबार हुए । धर्म संकट के समय कई लोगों को अपना घरबार छोड़ना पड़ा । इसी प्रकार रूस से 10 लाख लोग वोल्गा से सुदूर पूर्व क्षेत्रों में गए ।

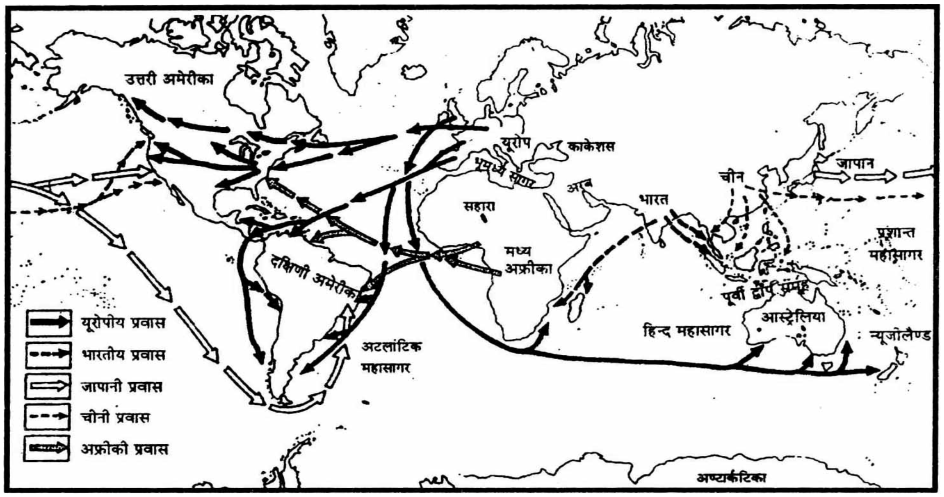

चित्र - 11. 2 : विश्व के प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास

11.4.3 आधुनिक जनसंख्या का प्रवसन

15वीं सदी के पश्चात यूरोपीय संस्कृति के उत्कर्ष का काल प्रारम्भ हुआ। यूरोप के अनेक तटवर्ती देशों के साहसिक नाविक एशियाई देशों से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाने के लिए समुद्री मार्ग की तलाश में निकल पड़े । 1442 में कोलम्बस की अमेरिकी यात्रा ने एक नया उत्साह जगाया फलस्वरूप मैगलेन, क्यूरस, वास्कोडिगाम एवं जेम्स कुक ने यूरोप वासियों के लिए ऐसे क्षेत्र ढूंढ निकाले जहाँ नाम मात्र की जनसंख्या अपने आदिम जीवन या अविकसित संस्कृति के कारण कमजोर अवस्था में थी । बस यही से उपनिवेशवादी प्रवसन प्रारम्भ हुआ। यूरोप के लोग एक के बाद एक दूसरे देश या क्षेत्र पर कब्जा जमाने लगे । अंग्रेज, फ्रांसिसी, स्पेनी, पुर्तगाली, डच और बेल्जियम अपनी कूटनीति तथा सामरिक क्षमता के कारण पृथ्वी के विशाल भाग पर अपने उपनिवेश स्थापित करने में सफल रहे । उपनिवेशों के संसाधनों के दोहन के लिए इन्हें विश्वव्यापी प्रवसन (global migration) को प्रोत्साहित करना पड़ा । इस काल बलात तथा स्वेच्छिक दोनों प्रकार प्रवसन हुए ।1850 से 1930 के बीच केवल यूरोपीय देशों से अनुमानत: 5 करोड़ से अधिक लोगों का प्रवसन संसार के अनेक भागों में हुआ। कुछ देश तो पूर्णत : यूरोप वासियों के राष्ट्र ही बन गए जैसे दोनो अमेरिका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड । अनेकानेक दृष्टि से आधुनिक प्रवसन प्राचीन प्रवसन से भिन्न है ।

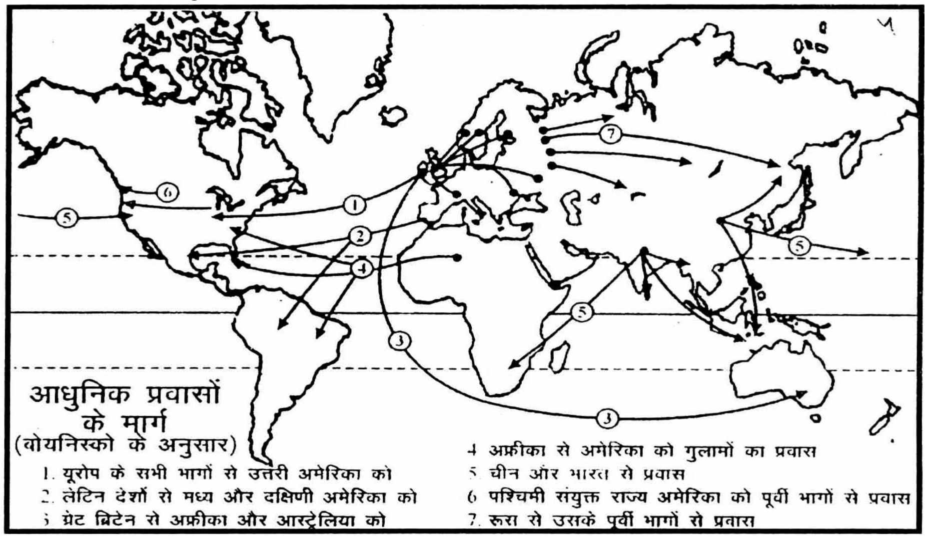

चित्र 11.3 : आधुनिक प्रवसन के मार्ग

11.5 प्रवसन के क्षेत्रीय स्वरूप (Regional Pattern of migration)

इस युग में राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय से लेकर, स्वेच्छिक, बलात, स्थाई और अस्थाई, ग्रामीण और नगरीय, मौसमी और दैनिक सभी प्रकार के स्थानान्तरण हुए हैं । इस युग में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक घटक भी अधिक सक्रिय रहे हैं । लाखों यूरोपवासी धनवान बनने की चाह में अमेरिका, अफ्रीका, एशिया के अनुकूल अथवा प्रतिकूल दशाओं में निवासित होते रहे हैं । आस्ट्रेलिया की भौतिक कठिनाईयों को सोना के मोह में भुला दी और लोग बसने लगे । दासों का बलात प्रवसन भी इस युग की उल्लेखनीय घटना है । औद्योगिक विकास ने गाँवों को

उजाड़ा और नगरों को बोझिल बना दिया । 17 वी सदी से लेकर 20 वीं सदी तक करोड़ों कीं संख्या में लोग एक महाद्वीप को छोड़ कर दूसरे महाद्वीप में प्रवासित होते रहे हैं । ऐसे क्षेत्र जहाँ बड़े पैमाने पर इस काल के हुए जनसंख्या प्रवसन को बृहत् स्थानान्तरण प्रवाह क्षेत्र कहा गया है । इन जन प्रवासों के स्थानान्तरण मैं निम्नांकित क्षेत्रीय स्वरूप विशेष महत्व रखते हैं -

1. यूरोप से उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका में प्रवसन प्रवाह ।
2. यूरोप से अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में प्रवसन प्रवाह ।
3. एशियाई देशों से अन्य महाद्वीपों में जन प्रवाह ।
4. अफ्रीकी देशों से अन्य महाद्वीपों में जन प्रवाह ।

11.5.1 यूरोपीय देशों से उत्तरी एव दक्षिणी अमेरिका में जन प्रवाह

आधुनिक समय में वृहद् अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन यूरोप से अमेरिका में हुए, जो यूरोपीय आधिपत्य का आकर्षण था करोड़ों लोग अटलांटिक महासागर पार कर हजारों मील दूर जाकर बस गए । यूरोप के सीमित संसाधन, बढ़ती जनसंख्या और जातीय संघर्ष के कारण यहाँ के लोग उपजाऊ भूमि, अच्छे बन्दरगाह, सोना प्राप्ति, रोजगार सम्भावनाओं और अमीर बनने की लालसा के कारण स्वेच्छा से यूरोप छोड़ अमेरिका में बसते रहे । 1846 से 1932 के मध्य लगभग 5 करोड़ यूरोपीय प्रवासी अमेरिका आए जिसमें से तीन -चौथाई लोग उत्तरी अमेरिका आए और उत्तरी अमेरिका में बसे । 1950 से 1958 के मध्य अकेले कनाडा में 15 लाख यूरोपीय आकर बसे । औसतन संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति वर्ष 5 लाख लोग आकर बसते रहे हैं । इस प्रकार गत 100 वर्षों में 8 करोड़ से अधिक प्रवासी यहाँ स्थाई रूप से बस गए । सर्वाधिक लोग ब्रिटेन, इटली, स्पेन, पुर्तगाल, नीदरलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी और रूस से आए । उत्तरी अमेरिका अंग्रेजों के वर्चस्व के कारण ब्रितानी उपनिवेश में बदल गया । मध्यवर्ती ओर दक्षिणी अमेरिका की ओर लातीनी लोग अधिक प्रव्रजित हुए फलत: कालान्तर में दक्षिणी अमेरिका को लेटिन अमेरिका कहा जाने लगा । संघर्ष तथा आपसी समझौते के प्रवास तहत लातीनी (दक्षिणी यूरोपयी देश जहाँ लेटिन भाषा का प्रभाव था) दक्षिणी और मध्यवर्ती अमेरिका को अनेक देशों में बांट लिया । इस प्रकार अन्य महाद्वीपों की संस्कृतियाँ इस महाद्वीप में सिमटती गई । संसाधनों के कुशल उपयोग के लिए दास प्रथा को जन्म दिया । अफ्रीकी नीग्रो दासों की खरीद और बलात प्रवसन इस युग की घिनोनी घटना रही है । इन नीग्रो दासों के साथ पशुवत व्यवहार किया जाता था । खेतों, खानों और बागों में कार्य के लिए इन यूरोपीय अप्रवासियों ने अफ्रीका और एशिया से श्रमिकों का आयात भी किया जिसे बलात प्रवसन भी कहा जाता है । दिमागी प्रवाह (Brain Drain) के कारण कुशल और प्रवीण लोग अमेरिका में बसना गौरव पूर्ण मानने लगे । इसके लिए राजनीतिक सूझ -बूझ और अमरीकी जीवनशैली की उदारता भी आकर्षण के अन्य बिन्दु रहे हैं ।

11.5.2 यूरोप से आस्ट्रेलिया और अफ्रीका में जन प्रवाह

उपनिवेशवाद से ग्रसित लोग बड़ी संख्या में आस्ट्रेलिया में जाकर बसने लगे । 1790 में लाखों की संख्या में ब्रितानी आस्ट्रेलिया में जाकर बसे । 1850 से 1860 के दशक में 6 लाख से अधिक यूरोपीय मात्र सोना प्राप्ति की लालसा से यहाँ आकर बस गए । 1960 में आस्ट्रेलिया की कुल 160 लाख की जनसंख्या में से 110 लाख अंग्रेज और शेष इटली, नीदरलैण्ड, ग्रीस, जर्मनी, यूगोस्लाविया, पोलैण्ड, रोमानिया, फ्रांस आदि के लोग थे । न्यूजीलैण्ड में भी यूरोप के लोग आकर बसते रहे हैं ।

यूरोप से दूसरा जन प्रवाह अफ्रीका की ओर हुआ जिसका प्रमुख कारण था मूल्यवान खनिज पदार्थ, उष्ण कटिबन्धीय कृषि उत्पाद और श्रम शक्ति का बलात उपयोग । अत : एक के बाद एक अफ्रीकी क्षेत्र उपनिवेश में बदलते गए । । दक्षिणी अफ्रीका की अनुकूल जलवायु के कारण सर्वाधिक यूरोपीय यहाँ बस गए ।

11.5.3 एशियाई देशों से प्रवसन

एशिया के एक वृहद् भाग पर अंग्रेजों का औपनिवेशिक शासन स्थापित हो गया था फलत : स्वेच्छा और बलात दोनों प्रकार के प्रवसन यहां भी होते रहे । श्रीलंका, दक्षिणी पूर्वी एशिया, मॉरीशस, गायना आदि देशों में कृषि, खनन-उत्खनन और पशुपालन के लिए भारतीय श्रमिकों का स्थानान्तरण हुआ । चीन से भी बड़ी संख्या में प्रवसन हुए । ऐसा अनुमान है कि करोड़ से अधिक चीनी प्रवासी पूर्वी द्वीप समूह, मलाया, कम्बोडिया, थाईलैंड, म्यांमार, दोनों अमेरिका, अफ्रीका और भारत में आकर बसे । चीन की बढ़ती जनसंख्या के कारण अन्यत्र बसने की प्रवृत्ति सहज नहीं है । स्थान की कमी के कारण जापानी भी प्रवसन के लिए प्रेरित होते रहे हैं । 1918 से 1938 के मध्य प्रति वर्ष एक लाख से अधिक जापानी अन्यत्र जाकर बसते रहे । जापानियों का प्रवसन एशियाई देशों के. अतिरिक्त दोनों अमेरिका और अफ्रीका में भी हुआ ।

एशिया से प्रवसन करने वालों में पश्चिमी एशिया के लोगों की तादाद भी कम नहीं रही । सीमित कृषि भूमि और शुष्क जलवायु के कारण बड़ी तादाद में लोग यथा - तुर्क, लेबनानी, ईरानी, इराकी, यहूदी आदि यूरोप, अमेरिका और अफ्रीकी देशों में प्रवासित होते रहे हैं । द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कई लाख तुर्क और लेबनानी केवल पश्चिमी जर्मनी में जाकर बस गए जिन्हें वहां अतिथि श्रमिक (Guest Worker) कहा जाता है । ईसा मसीह के वंशज मध्यकाल में संघर्ष से उत्पीड़ित होकर इजराइल त्यागने को बाध्य हुए क्योंकि छठी से नवीं सदी तक इस्लाम विस्तार के लिए यहाँ सब कुछ किया गया । यहूदी विस्थापित होकर यूरोप, अमेरिका और एशिया के अन्य देशों मे बस गए । प्रथम विश्व युद्ध के बाद जब मुसलमानों की शक्ति क्षीण हुई तो धीर- धीरे अधिकांश विस्थापित यहुदी इजराइल लौटने लगे । 1925 में 45 हजार यहूदी पुन : आए और उसके बाद यह क्रम चलता रहा । 1950 में 2 लाख लोग बाहर से आकर इजराइल में बसे । भारत-पाकिस्तान विभाजन ने भी विशाल जनप्रवाह को जन्म दिया । बंगलादेश से आठ लाख विस्थापित भारत आए । इसी प्रकार श्रीलंका के विस्थापितों की बड़ी संख्या भारत में आई ।

11.5.4 अफ्रीकी देशों से स्थानानान्तरण

धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और जातीय कारणों से प्रवसन होता रहा है । इस्लाम के बढ़ते प्रभाव के कारण उत्तरतटीय क्षेत्र और पूर्वी भाग से अधिकांश अफ्रीकी भाग कर आन्तरिक क्षेत्रों की ओर चले गए और ऐसे रिक्त हुए क्षेत्रों में पश्चिमी एशिया से आकर लोग बस गए । 16 वीं सदी में अफ्रीकी लोगों का बलात प्रवसन कर उन्हें दासों के रूप में अमेरिका, दक्षिणी पूर्वी एशिया, पश्चिमी द्वीप समूह में बसाया गया । 16 वीं सदी के मध्य से सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ तक अनुमानत : 50 लाख नीग्रो दास अफ्रीका में प्रवजन कर चुके थे । कैरेबियन और ब्राजील में गन्ना, तम्बाकू, कहवा और कपास की खेती के लिए 30 से 35 लाख नीग्रो लाए गए । ऐसा अनुमान है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में इस क्रम में कम से कम 10 लाख नीग्रो अफ्रीका से लाए गए ।

आधुनिक प्रवसन के प्रभावी कारक

आधुनिक प्रवसन बहुप्रयोजनीय रहा है । जब प्रवसन स्वैच्छिक होता है तो उसके पृष्ठ में शिक्षा, सुरक्षा, सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक लाभ प्रमुख प्रेरक कारक होते हैं । सामूहिक प्रवसन के व्यापक प्रभाव दोनों छोरों पर पड़ता है । ऐसी ही स्थिति में यूरोप खाली हुआ और अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया आबाद हुए । बलात प्रवसन के कई रूप विकसित होते हैं उदाहरणार्थ पलायन (Fight), विस्थापन (Displacement), कानूनी प्रवसन जैसे कालापानी सजा के लिए अण्डमान में प्रवसन अथवा श्रमिक तथा दास के रूप में एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में स्थानान्तरण विशेष उल्लेखनीय है । ब्रिटिश सरकार द्वारा पहले आस्ट्रेलिया में कैदी लोगों को स्थानान्तरित किया गया और बाद में सामान्य जन प्रवाह उसकी ओर हो गया । ऐसी ही दशा अण्डमान द्वीप समूहों में विकसित हुई ।

11.6 प्रवसन की विशेषताऐं

यूरोपीय औपनिवेशिक युग में नए क्षेत्रों को अपने अधिकार में रखने के लिए विश्वास पूर्ण कर्मचारियों, सैनिकों और प्रशासनिक अधिकारियों की आवश्यकता थी । फलस्वरूप यूरोप से स्वतंत्र प्रवसन नए क्षेत्रों की ओर हुए । खेत, कारखानों और दफ्तरों में काम करने के लिए बलात प्रवसन उन क्षेत्रों से किए गए जहां जनसंख्या अधिक थी अथवा देश पिछड़े थे जैसे अफ्रीकी और एशियाई देश । इस युग का स्थानान्तरण इतना व्यापक था कि उसे प्रवसन प्रवाह (Migration Fiow) नाम दिया गया । इसके तहत लाखों लोग एक ही दिशा में प्रवासित होते रहे और नए-नए क्षेत्र आबाद होते रहे । अस्तु इस अभिनव प्रवसन की आठ विशेषताऐं उल्लेखनीय हैं -

1. अटलांटिक अपतटीय प्रवसन यूरोप से अमेरिका में हुए प्रवसन ने एक अनूठा स्वरूप लिया । यूरोप से अमेरिकी भूमि की ओर जो प्रवसन हुए वे स्थायी तथा स्वेच्छिक थे । इस विशाल जन-प्रवसन से नये देशों का उदय हुआ (संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, मैक्सिको तथा लातिनी देश), नई संस्कृति अस्तित्व में आई और विश्व शक्ति का ध्रुवीकरण यूरोप से अमेरिका में चला गया ।

2. दक्षिणी यूरोप से दक्षिणी और मध्यवर्ती अमेरिका में प्रवसन उतना प्रबल नहीं था, फिर भी इसका प्रभाव व्यापक रूप से पड़ा । अनेक देशों से प्रवासित लोग यहाँ भी वर्गों में बंट गए इससे मध्यवर्ती तथा दक्षिणी अमेरिका अनेक राजनीतिक टुकड़ों में बांटा गया और इस क्षेत्र की शक्ति बिखर गई ।
3. ब्रिटेन अपनी सामरिक शक्ति, कूटनीति और अवसरवादी प्रवृति के कारण जहाँ लाखों लोगों को अपने देश से बाहर बसाता रहा वहीं लाखों लोगों को एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में प्रव्रजित भी करता रहा है क्योंकि उसका साम्राज्य इतना विशाल हो गया था, जहाँ कभी सूर्य अस्त नहीं होता था । अत: अंग्रेजी संस्कृति के प्रसार में ब्रितानी प्रवसन आधुनिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है ।
4. भारत से भी ब्रितानी उपनिवेशों में पर्याप्त मात्रा में प्रवसन हुए फलतः: मॉरीशस, गायना, श्रीलंका, दक्षिणी-पूर्वी एशिया, अमेरिका, ब्रिटेन, हांगकांग आदि देशों में भारतीयों की बस्तियां पनप गई । स्वतंत्रता के बाद बड़ी मात्रा में लोग पश्चिमी एशिया की ओर अस्थायी रूप से प्रवासित हुए । पाकिस्तान और बंगलादेश आने वाले विस्थापितों के कारण 1951 के बाद भारत में जनसंख्या विस्फोट की बात कही जाने लगी ।
5. चीन से दक्षिणी पूर्वी, दक्षिणी एशिया और अन्य महाद्वीपों में प्रवसन सहज तथा स्वैच्छिक था । चीन से प्रवसन सुविधा की तलाश में हुआ किन्तु अपनी संस्कृति के प्रति हमेशा जागरूक बने रहे ।
6. आस्ट्रेलिया को अंग्रेजों ने पहले काला पानी क्षेत्र बनाया जहाँ उपनिवेशिक देशों से कैदियों को नजर बन्द रखा जाता था किन्तु सोना प्राप्त के बाद स्थिति बदल गई और आन्तरिक क्षेत्र आबाद होने लगा ।

तालिका- 11. 1 से स्पष्ट है कि विश्व के अनेक देशों में आज भी प्रवसन ब्रून्स महत्वपूर्ण बना हुआ है । आज घटता ससांधन, बढ़ती जनसंख्या, जातीय विवाद, धार्मिक कट्टरता और क्षेत्रवाद के कारण जनसंख्या प्रव्रजन के समक्ष कई चुनौतियां हैं और प्रवसन पर कानूनी रोक भी है फिर भी इसे रोकना सम्भव नहीं है क्योंकि कई क्षेत्रों में प्रवासित लोगों की अपनी आवश्यकता है । जैसे आस्ट्रेलिया आव्रजन को प्रोत्साहित करता है लेकिन यूरोप के लोगों को ही बसाना चाहता है।

तालिका यह भी दर्शाती है कि यूरोप के लोग अब भी सबसे अधिक प्रवसन करते हैं । आव्रजकों को आकर्षित करने में संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का अग्रणी देश है जहां प्रतिवर्ष औसतन तीन लाख से अधिक लोग विश्व के विभिन्न देशों से आते हैं । उदारवादी नीति और आर्थिक सुविधा के कारण सबसे अधिक मेधावी लोगों का प्रवाह संयुक्त राज्य अमेरिका की ओर होता है । ऐसे मेधावी लोगों में एक-तिहाई लोग यूरोप से प्रति वर्ष आते हैं । विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार 1958 में लगभग 1250 लाख लोग अपने गृह क्षेत्र को त्यागर कर अन्य क्षेत्रों मे निवासित हुए थे। गृह क्षेत्र को त्यागने वालो मे सर्वाधिक विकासशील देशों के लोग थे । 1985 में अरब देशों की 34 प्रतिशत जनसंख्या विदेशी लोगों की थी जबकि 26 प्रतिशत आस्ट्रेलियाई

आव्रजक वर्ग के थे । औद्योगिक देशों में आज भी कुशल श्रमिकों आव्रजन बना हुआ है अत: जनसंख्या का प्रवसन एक प्रक्रिया बन चुकी हैं ।

तालिका-11 .1 : विश्व के देशों मे औसत वार्षिक आव्रजन-प्रव्रजन

आव्रजन क्षेत्र,	**संख्या**	**प्रवजन क्षेत्र,**	**संख्या**		
आस्ट्रेलिया	- अफ्रीका	- उत्तरी अमेरिका	- दक्षिणी अमेरिका	- एशिया	- यूरोप
147507	- 3082	- 4460	- -	- 5081	-131680
कनाडा					
145758	- 3203	- 15329	- 2471	- 11677	- 07459
ब्राजील					
23859	- -	- 971	- -	- 2671	-116829
नीदरलैण्ड					
76718	- 7425	- 7914	- 7169	- 11621	-39749
ब्रिटेन					
137925	- 4853	- 21942	- 16722	- 29421	-55989
दक्षिणी अफ्रीका					
33326	- 10763	- 1888	- 788	- 327	-25166
संयुक्त राज्य अमेरिका					
321040	- 3137	- 83536	- 25830	- 39678	-123661

*विश्व बैंक रिपोर्ट पर आधारित

अत : स्पष्ट है कि प्रवसन मानव की सामान्य आर्थिक सामाजिक प्रकिया है । वह अपनी सुख - सुविधा की तलाश में एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र या एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में आता-जाता रहा है । वर्तमान में अनेक राजनीतिक, धार्मिक -सामाजिक तथा जातीय कारणों से जनसंख्या के प्रवसन में कुछ रूकावटें पैदा की जा रही है जिसके कारण 'वसुदेव कुटुम्बकम ' की भावना कमजोर होती जा रही है इसलिए भविष्य में जनसंख्या को लेकर अनेक भंयकर समस्याऐं खड़ी हो सकती हैं जिसके लिए विश्व को गम्भीर होना आवश्यक है ।

11.7 प्रवसन के प्रभाव (impacts of migration)

जनसंख्या के प्रवसन से जनसंख्या सम्बन्धी अनेक समस्याओं का समाधान होता है और विश्व बन्धुत्व की भावना को भी बल मिलता है किन्तु दूसरी ओर सघन बसे देशों से होने वाला उत्प्रवास उसे राहत देता है जबकि विश्व जनसंख्या वाले देशों में श्रमिकों की समस्या का समाधान भी होता है । अप्रवासियों के कारण एक नई संस्कृति के सम्पर्क होने से जीवन का स्व बदलता है । यहूदी व्यापारियों ने अनेक देशों में व्यापारिक चेतना जगाई । अन्तर्राष्ट्री प्रवसन से बेरोजगारी, प्रतिव्यक्ति उत्पादकता, प्रवास जीवनस्तर आदि प्रभावित होते हैं । जैसे संयुक्त राज्य में नीग्रो समस्या और श्रीलंका में तमिल समस्या ने जीवन स्तर को प्रभावित किया है । अत : प्रवसन के प्रभावों को निम्न समूहों में रखा जा सकता है ।

11.7.1 क्षेत्रीय प्रभाव

पूर्व ऐतिहासिक काल में विश्वव्यापी मानव प्रवसन से विविध प्रजातियों का उदय हुआ और विभिन्न क्षेत्र आबाद हुए । मध्यकाल में भी युद्ध व धर्म के नाम पर वृहद प्रवसन से नए-नए क्षेत्रों में मानव जा बसा । आधुनिक काल में यूरोपवासियों के विश्वस्तरीय प्रवसन से विश्व का स्वरूप ही बदल गया । अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा अनेक वीरान द्वीप आबाद हुए तथा यूरोपीय संस्कृति विश्वव्यापी प्रभाव बनाने में सख्त हुई । राष्ट्रीय स्तर पर प्रवसन से जनसंख्या संतुलन के साथ संसाधन दोहन की प्रक्रिया में विस्तार हुआ । भारत-पाकिस्तान विभाजन से विस्थापितों की बड़ी जमात ने आर्थिक -सामाजिक परिदृश्य को नया रूप दिया । भारत-पाकिस्तान विभाजन से विस्थापितों की बड़ी जमात ने आर्थिक- सामाजिक जीवन को बदला । इसी प्रकार राष्ट्रीय प्रवसन से राष्ट्रीय समृद्धि के नए परिवर्तन बने जैसे सोवियत रूस एवं संयुक्त राज्य अमेरिका ।

11.7.2 जीवन शैली पर प्रभाव

प्रवासित मानव समुदाय अपनी जीवनशैली का प्रभाव दूसरे वर्ग पर डालने का प्रयास करता है जिससे जीवन में गुणात्मक परिवर्तन आता है । यूरोपीय लोगों की जीवनशैली के प्रभाव औपनिवेशिक देशों के लोगों पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं । शिक्षा के प्रचार-प्रसार से अफ्रीका जैसे निरक्षर समाज में एक से एक मेघावी राजनेताओं का उदय हुआ । किन्तु इस प्रभाव का दुखद अन्त भी होता है । शक्तिशाली बाहरी संस्कृति नैसर्गिक जीवनशैली को मिटा देती है । अफ्रीका और एशिया की प्राचीन जीवनशैली की उपेक्षा और उपभोक्तावादी पश्चिमी संस्कृति का प्रसार इसका स्पष्ट प्रमाण है । इसे दूसरे शब्दों में सांस्कृतिक आक्रमण भी कहा जा सकता है ।

11.7.3 जनांककी प्रभाव

एक देश की जनसंख्या की कुछ नैसर्गिक विशेषताऐं होती हैं जिनसे जनसंख्या वृद्धि और वितरण निर्धारित होते है । जनसंख्या वितरण को संतुलित करने में क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रवसन सहायक बन जाता है जैसे चीन, यूरोप और एशिया की सघन बसी जनसंख्या के प्रवसन से इन देशों को कुछ राहत मिली, वहीं दूसरी और आव्रजकों के कारण अनेक देशों की जनसंख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई । वृद्धि को नियन्त्रित करने में प्रव्रजन की अहम भूमिका रही है । केवल पुरूषों के प्रव्रजन से लिंग अनुपात असंतुलित होता है जिससे अनेक सामाजिक परिवर्तन आ जाते हैं जैसे अमेरिका में इसी कारण वर्ण संकट लोगों की संख्या बढ़ गई । आव्रजकों से अनेक प्रजातियों का विनाश भी होता है । यूरोप के लोगों ने रेड इण्डियन, इजतेक और माया संस्कृति के लोगों का बड़े पैमाने पर विनाश किया । आव्रजन से जनसंख्या बहुजातीय, बहुधर्मी और बहुभाषी हो जाती है । उत्तरी अमेरिका इसका प्रमाण है ।

11.7.4 आर्थिक -सामाजिक जीवन पर प्रभाव

विश्व की अर्थव्यवस्था में जो गुणात्मक परिवर्तन आया है उसके लिए प्रवसन काफी हद तक जिम्मेदार है । अमेरिका में बसे यूरोपवासियों ने संसाधन विकास की नई विधियां विकसित कीं । व्यवसायिक पशुपालन, व्यवसायिक कृषि, उद्योग, व्यापार, खनन उद्योग और परिवहन में

क्रान्तीकारी परिवर्तन के लिए अप्रवासियों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है । श्रमिकों की कमी के कारण कृषि, उद्योग और यातायात में यान्त्रीकरण इसके प्रमाण हैं जो अमेरिका से अन्य महाद्वीपों में प्रचारित हुआ । गन्ना, चाय, कहवा, रबड़, तम्बाकू, कपास, अन्न आदि की कृषि मूल स्थान से अन्य क्षेत्रों में भी होने लगी है । ऐसे ही विशिष्ट फसलों की कृषि के लिए भारतीय मॉरीशस और फिजी स्थानान्तरित हुए । आज इन द्वीपों की संस्कृति भारतीय हो गई है । प्रवसन से नवाचार विस्तार को बल मिलता है । यूरोप से अमेरिका गए लोगों ने आदिवासियों पर नियन्त्रण किया । भारत के सामाजिक संगठन को विदेशी आव्रजकों ने बहुत प्रभावित किया । प्रवसन से मद्भावना और सहयोग के साथ-साथ कुटिलता और स्वार्थपरता भी पनपती है । यूरोपीयों की कुटिलता और स्वार्थ के कारण भारत को गुलामी सहनी पड़ी । प्रवसन ने क्षेत्रीयता तथा जातीय विभेद को भी पनापाया । संयुक्त राज्य में नीग्रो समस्या, पाकिस्तान में भारतीय मुसलमानों को उत्पीड़न सहना इसके ज्वलंत उदाहरण हैं ।

11.7.5 राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव

यूरोपवासियों के लिए प्रवसन राजनीतिक लाभ के रूप में ब्रून्स प्रकार का वरदान ही मिला । राजनीतिक संरक्षण में पहले नाविकों और व्यापारियों को प्रवजन के लिए उत्साहित किया गया और बाद में धीरे धारी लाभदायक क्षेत्रों पर कब्जा जमा लिया । ब्रिटेन ने विशाल औपनिवेशक साम्राज्य स्थापित किया । प्रवसन से यूरोपीय देशों में जहां आन्तरिक संघर्ष घटा वहीं उपनिवेशों को लेकर संघर्ष बढ़ता गया । दो विश्व युद्ध झेलने के बाद बदलाव आया और उपनिवेशों को स्वतन्त्रता मिली किन्तु राजनीतिक कुटिलता के कारण स्वतन्त्र देशों में राजनीतिक स्थिति तनाव पूर्ण हो गई । भारत और पाकिस्तान, श्रीलंका और अनेक अफ्रीकी देश आज भी इसका दुख : भोग रहे हैं । अत: जनसंख्या प्रवसन का प्रभाव कहीं सुखद तो कहीं दुखद भी बना हुआ है ।

11.7.6 जनसंख्या के आयु-वर्ग पर प्रभाव

जिन देशों से प्रवसन होता है उनमें नौजवानों की संख्या अधिक होती है फलस्वरूप बच्चे और बूढ़े उसी प्रदेश में रह जाते हैं । इस प्रकार प्रवासित क्षेत्रों में काम करने वाले वर्ग में कमी आ जाती है । इसके विपरीत नए आबाद देशों में जहाँ जवानों का आवास होता है वहां आर्थिक विकास तीव्र गति से होने लगता है । अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड आदि की तीव्र उन्नति होने का यही मुख्य कारण है ।

---

4. James, P.E., All Possible World, the Odyssey Press, Indiainpolis, 1972, P. 517...

11.8 प्रवास के मॉडल

विभिन्न जनांककी विद्‌वानों ने अपने अनुसन्धानों के आधार पर प्रवास मॉडलों का प्रतिपादन किया है । प्रवसन से सम्बन्धित ये मॉडल निम्नलिखित है -

11.8.1 गुरूत्व मॉडल (Gravity Model)

स्तुयर्ट ने सर्वप्रथम जनसंख्या के स्थानान्तरण को न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण नियम के साथ समरूपता सम्बन्ध (Isomorphic Relation) स्थापित किया ।

जो बाद में "ग्रेविटी मॉडल " के नाम से जाना गया । इसके अनुसार दो नगरीय केन्द्रों के बीच प्रवास उनके जनसंख्या का प्रतिफल होता है और उनके बीच की दूरी के विलोम अनुपात में होता है । इस मॉडल को निम्न ब्रून्स से प्रकट किया-

$$Mij = \frac{p_1 p_j}{dij}$$

अर्थात : Mij = i और j स्थानों के बीच कुल प्रवास

Pi = i स्थान की जनसंख्या

Pj = j स्थान की जनसंख्या

Dij = i और j स्थानों की दूरी

गुरूत्व मॉडल में यह विश्वास किया जाता है कि किसी क्षेत्र के प्रवास की आकर्षण शक्ति उसके आर्थिक आधार के आकार (size) पर निर्भर करती है । दूरी वर्ग को विभाजक माना जाता है । अर्थात ज्यों-ज्यों दूरी बढती है, प्रवासियों की संख्या कम होती है । हैरिस ने इस मॉडल की आलोचना इस आधार पर की कि प्रवास सामाजिक निर्णयों से पृथक नहीं है । पीटरसन का मत है कि इस मॉडल में प्रवासियों के लिंग तथा आयु प्रोफाइल की अवहेलना होती है । टेलर का कहना है कि गुरुत्व मॉडल एक अपरिष्कृत भौतिक समरूपता है जिसका सामाजिक विज्ञान में कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं है । (टेलर 1977 पृ. 305)

11.8.2 मध्यस्थ अवसर मॉडल (intervene Oppurtunity Model)

1940 में स्ट्रोफर ने मध्यस्थ अवसर मॉडल प्रस्तुत किया उनके अनुसार प्रवास निर्धारण में रेखीय दूरी का महत्व क्षेत्र की विशेषताओं की तुलना में कम होता है । इस कारण ज्यामितीय दूरी के स्थान पर सामाजिक- आर्थिक दूरी पर ध्यान देना चाहिए । इस प्रकार यथावत दूरी का उतना महत्व नहीं होता जितना मध्यस्थ सुविधाओं का होता हैं ।

इस मॉडल के अनुसार गन्तव्य स्थान पर जाते हुए व्यक्तियों की संख्या उस स्थान में उपलब्ध अवसरों के अनुपात में होगी किन्तु यह मध्यस्थ अवसरों की संख्या के विलोम अनुपात में होगी । मध्यस्थ अवसरों का तात्पर्य दो स्थानों के मध्य स्थित बिन्दुओं पर उपलब्ध अवसर से है । (स्ट्रोफ्त, पृ. 946) यह मॉडल निम्न रू द्‌वारा प्रकट किया जा सकता है -

$$y = k\frac{\Delta x}{x}$$

यहाँ Y = एक स्थान से केन्द्रीय स्थान की ओर जाने वाले प्रवासियों की संख्या

Δx = इस कटिबन्ध में स्थित अवसरों की मात्रा

X = प्रारम्भिक स्थल से लक्ष्य स्थल के बीच उपलब्ध अवसर

K = अचल समानुपाती' = $\dfrac{\sum O}{\dfrac{\sum \Delta x}{x}}$

O = प्रवासियों की वास्तविक संख्या

वास्तविक अवसरों में रोजगार अवसर, वातावरण, आवास आदि को समाहित किया जाता है जिनके कारण प्रवासियों के आकर्षण में बढ़ोतरी होती है ।

11.8.3 ली का स्थानान्तरण मॉडल

ई .एस .ली ने प्रवास प्रक्रिया को चार वर्गों में विभक्त किया -

1. उद्गम स्थल से सम्बन्धित पटक,
2. गंतव्य स्थल से सम्बन्धित घटक,
3. मध्यस्थ बाधाऐं
4. वैयक्तिक कारक ।

ली के अनुसार उद्गम तथा गन्तव्य स्थल दोनों स्थानों पर धनात्मक (आकृष्ट करने वाले) घटक, ऋणात्मक (विकर्षण) घटक और तटस्थ घटक उपस्थित रहते हैं । यदि गन्तव्य स्थल में धनात्मक घटक अधिक और उद्गम स्थल पर ऋणात्मक घटक अधिक होते है तो प्रवास के अनुकूल परिस्थितियाँ बनती है । मध्यस्थ बाधाओं में भौतिक, आर्थिक, शिक्षा प्रणाली अथवा कानूनी बधाऐं हो सकती हैं । मध्यस्थ बाधाऐं छोटी-बड़ी भी हो सकती है । मध्यस्थ बाधाएं बड़ी अथवा कठिन होने पर प्रवास बीच में ही स्थिति हो सकता है । अथवा दिशा बदल सकती है । ली ने प्रवास सिद्धान्त को निम्न चित्र द्वारा प्रगट किया है -

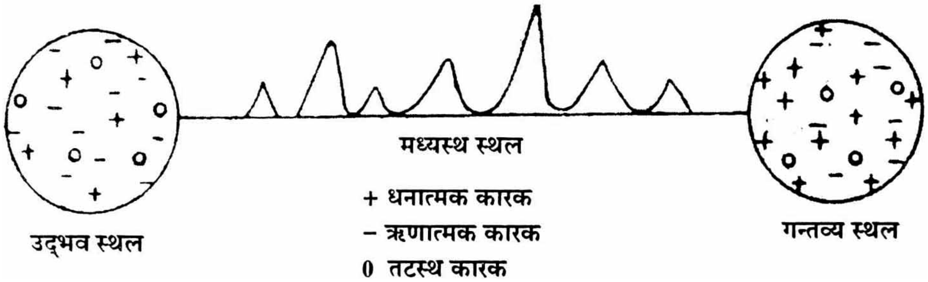

चित्र- 11.4 : ई एस ली. का स्थानान्तरण सिद्धान्त

ली ने अपने सिद्धान्त में निम्न लक्षण दर्शाए-

प्रवसन सभी दशाओं में चयनात्मक होता है । विशिष्ट आयुवर्ग के कुशल लोग प्रवास पर अधिक जाते हैं और अकुशलों में गतिशीलता कम होती है । चयन बहु धा द्विबहु लक (BI - model) होता है । कुछ प्रवासी गंतव्य स्थल पर धनात्मक कारक अधिक होने पर बेहतर अवसर की तलाश में प्रवास करते हैं किन्तु उद्गम स्थल पर ऋणात्मक कारक प्रभावी होने पर प्रवासी का

अपना कोई चुनाव नहीं होता, उसकी बाध्यता होती है । धनात्मक चयन मध्यवर्ती बाधाओं की कठिनाई के अनुरूप बढ़ती है । वस्तुतः प्रवासियों की विशेषता में उद्गम और गंतव्य दोनों स्थानों के और जनसंख्या के गुणों का मिश्रण पाया जाता है ।

11.8.4 जेलिंस्की का गतिशील संक्रमण मॉडल (Mobility Transition Modal)

जेलिंस्की ने प्रवास के प्रारूपों को जनांकिकी संक्रमण की विभिन्न अवस्थाओं से जोड़ कर अपना मॉडल प्रस्तुत किया है । उनकी धारणा है कि ग्रामीण कृषि प्रधान, अशिक्षित और अनेक संक्रामक बीमारियों से ग्रस्त समाज में भौतिक तथा सामाजिक गतिशीलता सीमित होती है । ज्यो-ज्यों यह समाज जनांककी संक्रमण की क्रमिक अवस्थाओं से गुजरता है प्रवास की दर उच्च होती जाती है । एक उद्योग प्रधान, नगरीय और शिक्षित समाज में गतिशीलता उच्चतम होती है । प्रवास सदैव देशकाल की चेतना से संबंधित रहता है । इसलिए आधुनिकरण ज्यो-ज्यों आगे बढ़ता है । विभिन्न प्रकार के प्रवास और संचार का प्रवाह भी बढ़ता जाता है ।

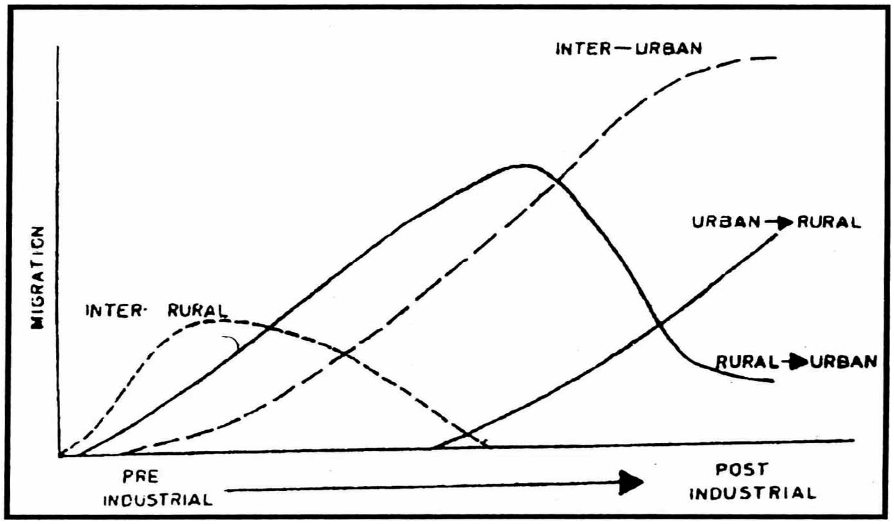

चित्र - 11.5 : Mobility Transition Model

जेलिंस्की (Zelinsky) के अनुसार विभिन्न अवस्थाओं में प्रवास की गति, स्वरूप और दिशा अलग - अलग होती है । ग्रामीण समाज में गतिशीलता सीमित होती है । गांव से गांव की ओर प्रवास अधिक किन्तु सीमित दूरियों तक होते है । इस अवस्था में यातायात के साधन कम और धीमी गति वाले होते है । दूसरी अवस्था में ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय तथा नए विकसित क्षेत्रों की ओर प्रवसन अधिक होता हैं । जनसंख्या वृद्धि के साथ आर्थिक सुअवसर भी बढ़ते हैं फलत : अंतर्राष्ट्रीय प्रवसन भी होते हैं तीसरी अवस्था मे इनकी गति धीमी होती है किन्तु चौथी अवस्था मे अंतर नगरीय और (inter- urban)तथा अंतरा-नगरी (intra-urban) प्रभाव अधिक होते हैं । कुशल व्यापारियों, वैज्ञानिकों, कुशल श्रमिकों का अतर नगरीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन अधिक होते हैं ।

11.8 सारांश (Summary)

प्रवासियों का गन्तव्य क्षेत्र मात्र विकसित राष्ट्र हीन हीं होते हैं वरन् हाल ही के वर्षों में विकासशील देशों में भी जैसे तेल उत्पादक राष्ट्र में भारी संख्या में प्रवासी पहुँच रहे हैं । लेकिन दूसरी और अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन घट भी रहा है उसका प्रमुख कारण प्रवास नियन्त्रण नीति का होना भी है । अवैध प्रवसन भी बढ़ रहे हैं । द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् राजनीतिक मानचित्रों में परिवर्तन के कारण भी शरणार्थी संख्या मे लाखों की वृद्धि हुई है जैसे भारत-पाकिस्तान का विभाजन, बंग्लादेश का अभ्युदय आदि से भी शरणार्थी प्रवासियों में भारी वृद्धि हुई ।

अनेक विद्वानों ने प्रवासी जनसंख्या के स्वभाव का विश्लेषण करने वाले मॉडलों का प्रतिपादन भी किया है जिनमें गुरूत्व मॉडल (gravity model), मध्यस्थ अवसर मॉडल (intervening opportunity model), ली (lee) का सिद्धान्त तथा जैलिंस्की का गतिशील संक्रमण मॉडल (mobility transition modal) प्रमुख उल्लेखनीय हैं । इन मॉडलों में यह दर्शाया गया है कि विभिन्न अवस्थानों में प्रवास का स्वरूप और दशा अलग-अलग होती है । जनसंख्या वृद्धि के साथ आर्थिक सुअवसर भी बढ़ते हैं जिसके कारण भी अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन प्रभावित होते हैं । कुशल व्यापारियों, वैज्ञानिकों तथा तकनीशियों में अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन अधिक देखने का मिलते है।

बोध प्रश्न - 1

1. संसार मे मानव वर्गो के प्रमुख प्रवसन कहाँ से प्रारम्भ हुए ?

   ……………………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………………

2. प्रवसन सिद्धान्त का प्रतिपादन किसने किया ?

   ……………………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………………

3. प्रवसन के प्रकारों के नाम लिखिए ।

   ……………………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………………

4. स्थानान्तरण या प्रवसन क्या है ?

   ……………………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………………

5. विश्व के प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन को प्रमुखता के आधार पर कितने भागों में विभाजित किया गया है?

   ……………………………………………………………………………………………

   ……………………………………………………………………………………………

6. यूरोपीय देशों के निवासी प्रवासित होकर विश्व के कौन से दो भागों में जाकर बसे?

……………………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………………

7. प्रवसन मार्ग में कौनसे दो अवरोध बाधाऐं उत्पन्न करते हैं ?

……………………………………………………………………………………………

……………………………………………………………………………………………

11.9 शब्दावली (glossary)

- **प्रवास या प्रव्रजन (migration) :** मनुष्य, पशु -पक्षी अथवा अन्य जीवों का व्यक्तिगत अथवा समूह में अपना निवास स्थान छोड़कर अन्य स्थानों में स्थायी या अस्थायी निवास के लिए स्थानान्तरण।
- **प्रवासी या प्रवजक (migrated) :** किसी स्थान को छोड़कार अन्य स्थान पर जाकर बसने वाला व्यक्ति ।
- **उपनिवेश (Collony) :** वह भूक्षेत्र जहाँ विदेशों से आने वाले अप्रवासी बस गए हों तथा जिस पर विदेशी प्रभुत्व हो ।
- **उपनिवेशन (Collonization) :** विदेश से आए व्यक्तियों को किसी देश विशेष में बसाने की नीति जिसके द्वारा किसी उपनिवेश का निर्माण होता है ।
- **संक्रमण क्षेत्र (Transition area) :** दो स्पष्ट क्षेत्रों के मध्य स्थित क्षेत्र जिसमें इसके दोनों ओर स्थित क्षेत्रों की विशेषताऐं कमोबेश मात्रा में पायी जाती है ।
- **मानव समूह (human agglomeration) :** ऐसे व्यक्तियों का समूह जो कुछ सामान्य हितों के लिए एक दूसरे के साथ अर्थपूर्ण अंत : क्रिया द्वारा संबंधित हों ।

11.10 संदर्भ ग्रंथ (reference books)

- बी पी पंडा : **जनसंख्या भूगोल,** मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल 2004
- आर.सी.चान्दना : **जनसंख्या भूगोल,** कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना 2006
- गुर्जर.आर.के एवं जाट बी.सी : **मानव भूगोल,** पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2008 254
- एफ. डी कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2006
- राव एवं श्रीवास्तव : **मानव भूगोल,** वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2007
- एस.डी.मोर्य : **सामाजिक भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2006
- अलका गौतम : **विश्व भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2007
- Beaujen Garnier , J. : **Geography of population**, Second Ed Longman group Ltd London , 1978
- Woods , R : **Population Analysis in Geography** . Longman London, 1979

- Lee, E.S : **"A Theory of migration in population Geography - A Reader"**, edited By G.J Demko and others , Mc Graw-hill Book co- New York, 1970.

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - I

1. मध्य एशिया से ।
2. मोरिट्स वेगनर ने ।
3. उत्प्रवास (emigration) आप्रवास (migration) ।
4. किसी व्यक्ति या मानव समुदाय द्वारा देशान्तरण या स्थान सम्बन्धी आवागमन को स्थानान्तरण या प्रवसन कहा जाता है ।
5. एशियाई तथा यूरोपीयन प्रवसन में विभाजित किया जाता है ।
6. यूरोपीय देशों के निवासी प्रवासित होकर उष्ण कटिबिन्धीय तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में जाकर बसे ।
7. प्राकृतिक बाधाऐं तथा कृत्रिम बाधाऐं ।

11.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अन्तर्राष्ट्रीय मानव प्रवसन के विभित्र प्रकारों की उदाहरण सहित विवेचना कीजिए?
2. जनसंख्या प्रवसन को प्रभावित करने वाले कारकों को समझाइए ।
3. अन्तर्राष्ट्रीय प्रवसन में आए वर्तमान दिशामूलक परिवर्तन पर टिप्पणी लिखिए ।
4. आधुनिक प्रवसन की विशेषताओं पर अपने विचार लिखिए ।

इकाई 12 : जनांककीय चक्र (Demographic Cycle)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 जनांकिकीय वृद्धि के सिद्धान्त
12.2.1 माल्थस का सिद्धान्त
12.2.2 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त
12.2.3 तकनीकी परिर्वतन सम्बन्धी सिद्धान्त
12.2.4 जनांककीय संक्रमण (चक्र) सिद्धान्त
12.2.4.1 जनांककीय चक्र की अवस्थाऐं
12.2.4.2 उच्च स्थिरता
12.2.4.3 शीघ्र बढ़ने वाली स्थिति
12.2.4.4 विलम्ब से वृद्धि वाली स्थिति
12.2.4.5 निम्न स्थिरता
12.2.4.6 घटने वाली स्थिति
12.2.5 जनांककीय चक्र के लक्षण
12.2.6 जनांककीय चक्र की अलोचना
12.3 जंनाककीय संक्रमण (चक्र) के क्षेत्रीय प्रारूप
12.3.1 प्रथम विश्व
12.3.2 द्वितीय विश्व
12.3.3 तृतीय विश्व
12.3.4 विकासशील देशों में जंनाककीय संक्रमण (चक्र) की अवस्था
12.4 सारांश
12.5 शब्दावली संदर्भ ग्रंथ
12.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के उपरान्त आप समझ सकेंगे कि -

- विभिन्न जनांककी वृद्धि सिद्धान्त,
- जनांककीय सिद्धान्त के प्रमुख लक्षण,
- जनांककीय चक्र के क्षेत्रीय प्रारूप,
- विकासशील देशों में जनांककीय संक्रमण की अवस्था ।

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

मध्यकाल में नवीन स्थलों की खोज के उपरान्त जनसंख्या के विभिन्न पक्षों पर चिन्तन की प्रवृत्ति में परिवर्तन आया जनसंख्या की वृद्धि सम्पूर्ण पृथ्वी पर समान नहीं रही, वरन् इसमें स्थानिक विभिन्न भी बढ़ती गई । सर 1850 से पूर्व यूरोपीय राष्ट्रों में शेष विश्व की तुलना में जनसंख्या वृद्धि दर तीव्र थी जिसका मूल कारण न्यून मृत्यु दर था जबकि इस जनसंख्या वृद्धि ने ही औद्योगिक क्रान्ति को जन्म दिया था अत: जनसंख्या वृद्धि (population growth) किसी देश की आर्थिक प्रगति, सामाजिक उत्थान एवं राजनीतिक नीतियों का एक प्रमुख सूचकांक (Intex) है । विगत दशकों से जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्तियों से सम्बन्धित विषयों में तेजी से परिवर्तन हुए हैं फलस्वरूप अर्थशास्त्रियों, भूगोलवेत्ताओं आदि का जनसंख्या वृद्धि के सिद्धान्तों की विवेचना पर निम्नांकित कारणों से विशेष ध्यान गया है -

1. हाल ही का जनसंख्या विस्फोट (Explosion), जिसके कारण खाद्य पदार्थों तथा अन्य संसाधनों की बढ़ती मांग,
2. सन् 1980 - 83 तथा 2007 - 08 की अर्थव्यवस्था की मन्दी का दौर,
3. पर्यावरण का निरन्तर बढ़ता हास और
4. विकासशील देशों पर जनसंख्या का बढ़ता दबाव ।

12.2 जनसंख्या वृद्धि के सिद्धान्त

जनसंख्या वृद्धि आधुनिक युग की एक गम्भीर समस्या है । जनवृद्धि के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए हैं उनमें से चार महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का विवेचन अभीष्ट है -

1. माल्थस का जनसंख्या वृद्धि सिद्धान्त
2. अनुकूलतम जनसंख्या का सिद्धान्त
3. तकनीकी परिवर्तन सम्बन्धी सिद्धान्त
4. जनांककीय संक्रमण (चक्र) सिद्धान्त

12.2.1 माल्थस का जनसंख्या वृद्धि सिद्धान्त

18वीं शताब्दी में प्रो. थामस रोबर्ट माल्थस ने अपने निबन्ध " Essay on the principal of population" में जनसंख्या वृद्धि के सम्बन्ध में अपने विचार प्रगट किए । माल्थस का जनसंख्या वृद्धि सिद्धान्त तीन अभिग्रहितों पर आधारित है -

1. स्त्री -पुरुष के बीच यौन आकर्षण स्वभाविक तथा यथास्थिर है और इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध सन्तानोत्पति से है ।
2. कृषि उत्पादन हास नियम (Law of diminshing Return) : जिस अनुपात में कृषि बढाई जाती है और जो बढ़ोतरी पहली औसत उत्पत्ति में प्रतिवर्ष होती है वह धीरे - धीरे क्रम में घटती जाती है ।
3. जीवनस्तर और जनसंख्या में सीधा सम्बन्ध है अर्थात जीवन-स्तर बढ़ने के साथ जनसंख्या बढ़ती है ।

माल्थस के विचारों को एक आरेख द्वारा प्रकट किया जाता है जिसमें जनसंख्या वृद्धि तथा कृषि उत्पादन सम्बन्धों के तीन चरण परिलक्षित होते हैं (संदर्भ आरेख- 12. 1) जब किसी प्रदेश की जनसंख्या बढ़ने लगती है, तो -

1. प्रथम चरण में मनुष्य की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताएँ उसके कृषि उत्पादन क्षमता से कम होती है ।
2. द्वितीय चरण में कृषि उत्पादन क्षमता और मानव आवश्यकताऐं बराबर होती हैं ।
3. तृतीय चरण में मानव की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताऐं कृषि उत्पादन क्षमता से अधिक होती है ।

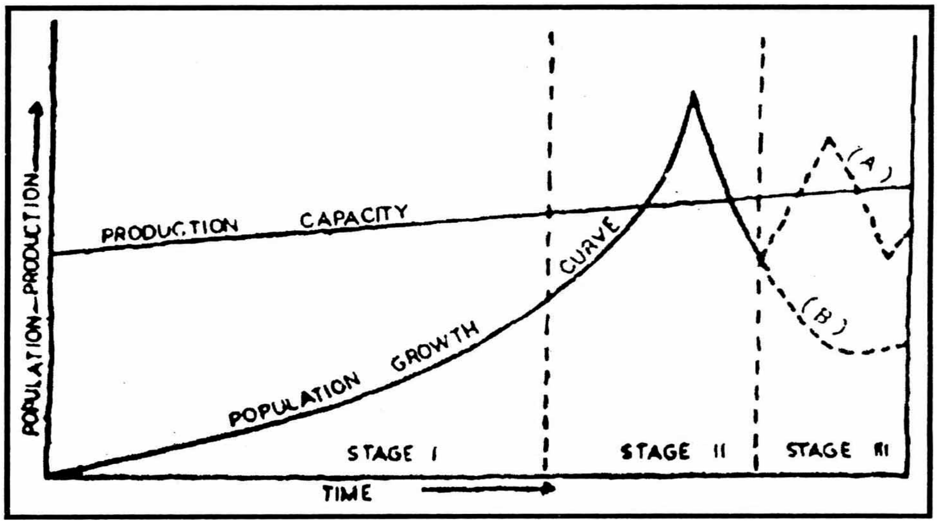

चित्र-12.1 : माल्थस का जनसंख्या वृद्धि सिद्धान्त

तृतीय चरण की अवस्था में दुर्भिक्ष, संक्रामक बीमारियों अथवा युद्ध के कारण कभी मृत्युदर उच्च होती है तो कभी जन्म दर उच्च होने से जनसंख्या में वृद्धि होती है । इस प्रकार जनसंख्या में वृद्धि और हास एकांतर क्रम में होते हैं । इस प्रकार जनसंख्या में असन्तुलन होने लगता है ।

माल्थस ने अपने सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "जनसंख्या में वृद्धि आवश्यक रूप से जीवन निर्वाह के साधनों द्वारा सीमित है । जीवन निर्वाह के साधनों के बढ़ने पर जनसंख्या स्थायी रूप से बढ़ेगी जब तक कि कोई शक्तिशाली अवरोध इस प्रवृति को रोक नहीं लेता । " अत : माल्थस का कथन था कि "प्रकृति ने सीमित अतिथियों के लिए टेबल सजायी है, अब जो बिना निमन्त्रण के आगे आऐंगे तो उनको अवश्य ही भूखा मरना पड़ेगा । " अर्थात जनसंख्या वृद्धि की शक्ति पृथ्वी के द्वारा निर्वाह करने की क्षमता से अधिक है । माल्थस ने अपने निबन्ध में जनसंख्या तथा खाद्य सामग्री के बढ़ने की दर को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया है -

1. जनसंख्या ज्यामितिक दर (Geometrical Ratio) से बढ़ती है । माल्थस के अनुसार यदि शक्तिशाली निरोधक उपाय क्रियाशील न हों तो जनसंख्या में वृद्धि खाद्यान्न उत्पत्ति की तुलना में बहुत अधिक होती है । नियन्त्रण मुक्त जनसंख्या की वृद्धि ज्यामितीय अर्थात गुणोत्तर अनुपात में यथा 1, 2, 3, 4, 6, 18, 32, 64, 128, 256, आदि इसी क्रम से

बढ़ती है । इस दर से जनसंख्या प्रति 25 वर्षो में दुगनी अर्थात 100 प्रतिशत हो जाएगी चित्र - 12. 1 से वृद्धि की स्थिति स्पष्ट हो सकती है ।

2. दूसरी ओर खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि समांतर श्रेणी मे अर्थात गणितीय अनुपात (Mathemetical Ratio) में यथा 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, क्रम में होती है । इस दर से 25 वर्षो में खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि केवल 25 प्रतिशत ही होगी । माल्थस के शब्दों में "यदि अन्य बातें समान रहें, तो प्रकृति के द्वारा मानवीय आहार धीरे - धीरे अंकगणितीय अनुपात में बढ़ता है जबकि मनुष्य तेजी से ज्यामितीय अनुपात में बढ़ते हैं । " चित्र - 12. 1 में खद्यात्रों के बढ़ने की दर दर्शायी गई हैं ।
3. खाद्य -सामग्री तथा जनसंख्या में असन्तुलन को 5 वर्षो के आकड़ों से स्पष्ट किया जा सकता है कि जहाँ खाद्यान्नों के उत्पादन में 5 गुनी वृद्धि होती है वहीं जनसंख्या में 16 गुनी वृद्धि हो जाती है । जैसे खाद्यान्न 1, 2, 3, 4, 5 (पांच गुनी वृद्धि) अन्तर - 16 - 5 =11. माल्थस ने सचेत किया कि इस असन्तुलन के भयंकर परिणाम सामने आते है ।
4. जनसंख्या पर प्रतिबन्ध और सन्तुलन को बनाए रखने के लिए माल्थस ने दो उपाय सुझाऐ:
   (A) सकारात्मक या प्राकृतिक रोक (Psitive or Natural Chcks) - माल्थस ने प्राकृतिक अथवा सकारात्मक रोक के अन्तर्गत दुर्भिक्ष, बीमारी, बाढ़, भूकम्प, प्लेग, शिशु हत्याऐं आदि अनेक दैवीय प्रकोपों को गिनाया है । इन प्रकोपों से जनसंख्या स्वत : ही कम होने लगती है क्योंकि इसमें जन्म दर की अपेक्षा मृत्यु दर बढ़ जाती है ।
   (B) निवारक उपाय (Preventive checks) - माल्थस के अनुसार प्राकृतिक प्रतिबन्ध अत्यन्त दुखदायी होते हैं इसलिए व्यक्ति को स्वयं जनसंख्या पर नियन्त्रण लगाना चाहिए । इनमें नैतिक नियन्त्रण, स्वेच्छिक निरोध, संयमित वैवाहिक जीवन आदि प्रमुख है ।

आलोचना

1. माल्थस द्वारा जनसंख्या सम्बन्धी भविष्यवाणी प्रासांगिक नहीं हैं । 10 वीं- 20 वीं सदी की कृषि क्रान्ति ने खाद्यानों में कमी नहीं आने दी,
2. माल्थस ने औद्योगिक विकास के मूल्य को कम आका है । यातायात के साधनों के विकास से नए क्षेत्र सम्भव हु ए हैं, फलस्वरूप सं. रा. अमेरिका, अर्जेण्टाइना तथा आस्ट्रेलिया के विशाल मैदानों का उपयोग कृषि उत्पादन के लिए किया जा सका,
3. विश्व में जन्म दर तथा मृत्यु दर दोनों में लगातार गिरावट दर्ज की जा रही है । चीन तथा द. कोरिया ने अपनी जनसंख्या को लगभग स्थिर कर रखी है,
4. माल्थस ने जनसंख्या वृद्धि को खाद्यान्न उत्पादन से सम्बन्धित किया है जबकि पशु, मत्स्य ससांधन आदि की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जो कि खाद्यान्न के महत्वपूर्ण पूरक हैं । अत: माल्थस का सिद्धान्त सैद्धान्तिक दृष्टि से भले ही सार्थक हो, व्यवहारिक दृष्टि से यह मान्य नहीं है ।

12.2.2 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त

जनसंख्या तथा संसाधनों के विश्लेषण ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया । अंग्रेज अर्थशास्त्री एडविन केनन (1861 - 1935) ने इस अवधारणा का विकास किया है । केनन के अनुसार किसी विशिष्ट क्षेत्र में ऐसी जनसंख्या जो अधिकतम आर्थिक उत्पादकता को सम्भव करती हैं, सीमित होती है । इस सिद्धान्त की दो प्रमुख मान्यताऐं हैं -

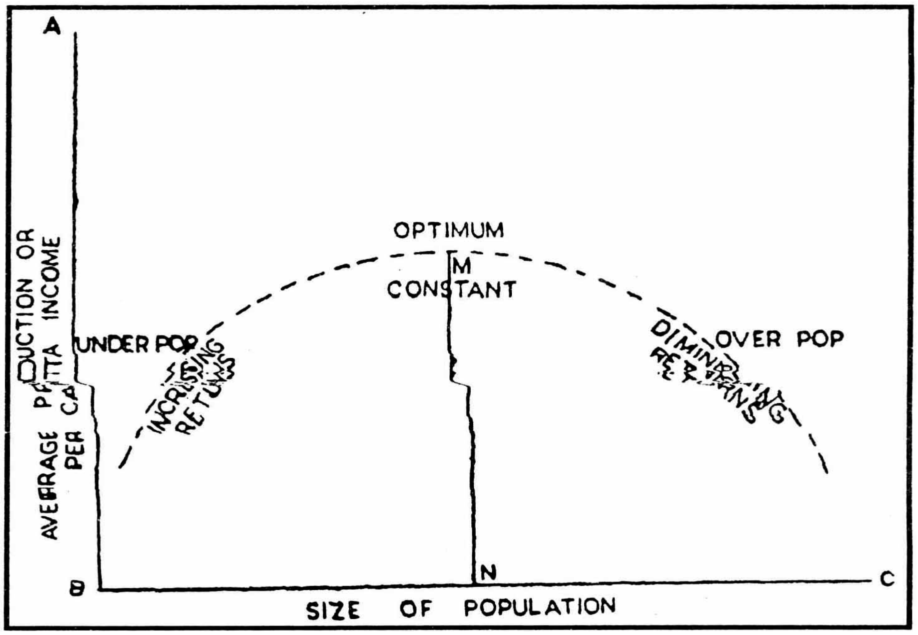

चित्र- 12.2 : अनुकूलतम जनसंख्या वृद्धि सिद्धान्त

1. जिस अनुपात में जनसंख्या बढ़ती है, ठीक उसी अनुपात में कार्यशील जनसंख्या (श्रम) भी
2. बढ़ती है,
3. औसत उत्पादन के बढ़ने तथा घटने के साथ-साथ प्रतिव्यक्ति आय भी घटती बढ़ती है,
4. इस बात को मान लिया गया है कि एक बिन्दु के बाद उत्पति हास नियम लागू होता है ।

आदर्शतम जनसंख्या के सिद्धान्त का आधार उत्पत्ति हास नियम है । आदर्श (Optimum) या अधिकतम उत्पादन के लिए यह आवश्यक है कि उत्पत्ति के साधनों को एक आदर्शतम अनुपात में लगाया जाए । जब उत्पत्ति के साधनों का आदर्शतम अनुपात में मिलाया जाएगा, तब प्रत्येक संसाधनों का पूरा-पूरा उपयोग हो सकेगा । उत्पादन में जब तक संसाधनों का आदर्शतम अनुपात स्थापित नहीं होगा तब तक उत्पादन बढ़ता ही जाएगा । अर्थात् जब तक जनसंख्या (श्रम) का अनुपात कम होगा तब तक देश के प्राकृतिक साधन, उत्पादन, कला तथा पूंजी का पूरा-पूरा उपयोग नहीं हो सकेगा और औसत उत्पत्ति भी कम होगी । अत : ज्यों-ज्यों श्रम (जनसंख्या) के अनुपात को बढ़ाया जाएगा । त्यों-त्यों राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ेगा और एक स्थिति एसी आएगी जहाँ पर उत्पादन सर्वाधिक होगा और उस समय की जनसंख्या को आदर्श जनसंख्या कहा जाएगा । यदि इस बिन्दु से आगे श्रम को बढ़ाया जाता है तो आदर्शतम अनुपात

टूट जाएगा । फलत : औसत उत्पादन अथवा आय घटने लगेगी और यह जनसंख्या देश के लिए अधिक होगी । इस कथन को निम्नांकित तालिका स्पष्ट करती है -

तालिका- 12. 1 :

कुल जनसंख्या (करोड़ों में)	**कुल वास्तविक आय**	**प्रति व्यक्ति औसत आय**
30	1500	50
40	2400	60
50	3500	70
60	4200	80
70	5250	75
80	5600	70
90	5850	65

तालिका के प्रारम्भ में प्राकृतिक साधनों की तुलना में देश की जनसंख्या कम है । ज्यों-ज्यों जनसंख्या बढ़ रही है, त्यों-त्यों कुल आय तथा प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि होती है । एक बिन्दु ऐसा आता है जहाँ पर जनसंख्या उतनी ही होती है जितनी कि उस देश के प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए आवश्यक है । इस दशा में औसत आय 80 अधिकतम है । इस औसत आय को प्राप्त करने के लिए 60 करोड़ की जनसंख्या आवश्यक है । यही आदर्शतम जनसंख्या है ।

आलोचना

1. यह कोई सुसम्बध सिद्धान्त नहीं है । यह केवल एक कल्पना मात्र है क्योंकि यह सिद्धान्त तो इस बात की व्याख्या ही नहीं करता है कि जनसंख्या क्यों और कैसे बढ़ती है और उसके बढने की दर क्या हे?
2. आदर्शतम बिन्दु को प्राप्त करना कठिन है और यदि इसे प्राप्त कर भी लिया जाए तो इस बात की क्या गारन्टी है कि इस बिन्दु को हमेशा के लिए स्थिर रखा जा सकता है?
3. कार्यशील जनसंख्या का अनुपात कुल जनसंख्या पर स्थिर नहीं रह सकता वरन् यह अनुपात बदलता रहता है ।
4. इस सिद्धान्त का व्यवहारिक महत्व नहीं है । इससे केवल इतनी जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि कौनसी जनसंख्या देश के लिए आदर्शतम है परन्तु सिद्धान्त यह नहीं बताता कि जनसंख्या को कम अथवा अधिक कैसे किया जाएगा ।
5. जनसंख्या की नीति का निर्धारण केवल औसत आय को ध्यान में रखकर नहीं किया जा सकता है । इसके लिए राष्ट्रीय उद्देश्य का भी ध्यान रखना चाहिए ।

अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त माल्थस के सिद्धान्त का सुधार कहा जा सकता है लेकिन अनुकूलतम जनसंख्या के आकार को प्राप्त कर पाना कठिन है इसलिए इस सिद्धान्त का केवल सैद्धान्तिक महत्व ही है ।

12.2.3 तकनीकी प्रगति सिद्धान्त (Technocratic theory)

20वीं सदी के महान तकनीकी विकास से प्रभावित होकर कुछ विद्वानों ने तकनीकी प्रगति सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । इनके अनुसार निरन्तर विकसित होते हुए तकनीकी ज्ञान के कारण उत्पादन में वृद्धि जनसंख्या वृद्धि दर से अधिक होगी । पिछले चार सौ वर्षो में विश्व के संसाधनों में इतना अधिक विस्तार हुआ है कि तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या को हम पर्याप्त भोजन तथा वस्त्र मै पाने में समर्थ हैं । तकनीकी विदों का विश्वास है कि तकनीकी ज्ञान में निरन्तर वृद्धि से हम आज की जनसंख्या से अधिक जनसंख्या को वहन करने में सक्षम हैं । विज्ञान को इस सीमा तक विकसित किया जा सकता है कि पदार्थ को विखंडित कर उसे उसी रूप में पुनर्निर्मित किया जा सकता है । ऐसा होने पर जनसंख्या भार वहन क्षमता सीमाहीन हो जाएगी ।

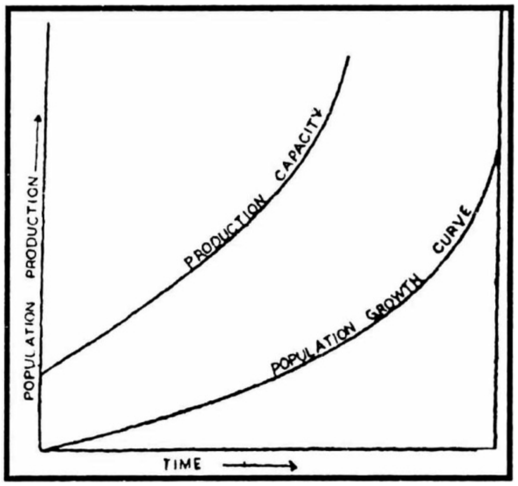

चित्र- 12.3 : तकनीकी प्रगति सिद्धान्त

नवीनतम विचारधारा के अनुसार उत्पादक क्षमता का विस्तार अनिश्चित काल तक और अनिश्चित सीमा तक नहीं हो सकता । कहीं न कहीं उसका अन्त अवश्य है । इसी प्रकार जनसंख्या वृद्धि भी अनिश्चित काल तक नही हो सकती । एक ऐसा चरम बिन्दु जहाँ जनसंख्या और उत्पादक क्षमता संतुलित होंगे और दोनों की यह एक अन्तिम सीमा होगी ।

12.2.4 जनांककीय चक्र

जनांककीय चक्र से तात्पर्य जनसंख्या वृद्धि की पृथक-पृथक अवस्थाओं से है जिनसे होकर जनसंख्या गुजरती है । इसे जनसंख्या वृद्धि की अवस्थाऐं भी कहा जाता है । यह जनसंख्या की कालिक प्रक्रिया का द्योत्तक है । जनांककीयविद् इसे "जनसंख्या चक्र तथा भूगोलवेत्ता इसे "जनसंख्या संक्रमण" की सहा देते हैं ।

जनांककीय संक्रमण सिद्धान्त संकल्पना पर आधारित है । इसके अनुसार मनुष्य जनसांख्यिकीय प्रलय का पूर्वानुमान लगा सकता है । प्रकृति उस पर प्रलय थोपे इसके पूर्व ही वह उससे बचने के यथोचित प्रबन्ध कर सकता है क्योंकि मानव बहुत लोचपूर्ण (Flexible) तथा हर जगह रह सकने वाला प्राणी है । वह इस योग्य है कि अपनी उत्पादकता को उस समय कम कर सके

जब मृत्युदर में कमी के कारण जनसंख्या वातावरण की पोषक क्षमता को पार कर जाती है । ट्रिवार्था (1969) के अनुसार जनांककीय सक्रमण (चक्र) विभिन्न प्रकार के जनसंख्या के आकड़ों को समायोजित तथा सुघटित तरीके से व्यवस्थित करता है, ताकि परिवर्तन की क्षेत्रीय प्रक्रियाओं तथा समय के पहलू को भलि- भांति समन्वित किया जा सके ।

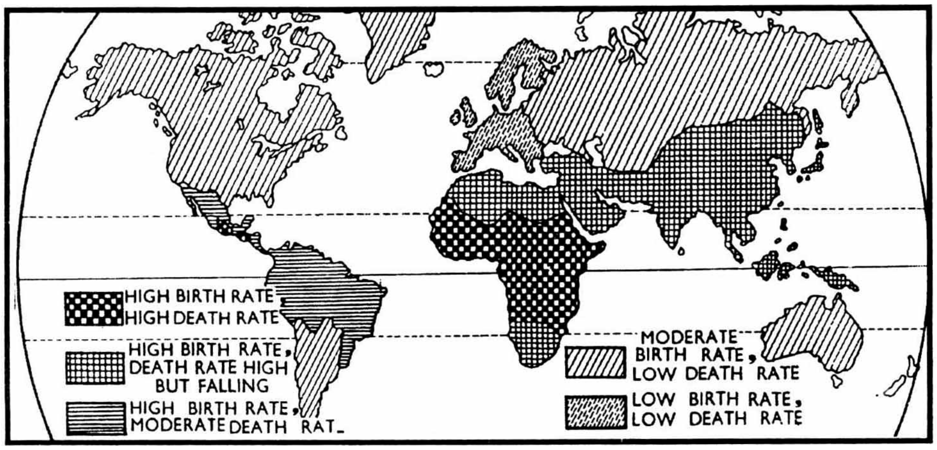

चित्र- 12.4 : जनसंख्या चक्र की अवस्था के अनुसार, संसार के विभिन्न प्रदेशों के 5 जनांककी वर्ग । (संयुक्त राष्ट्र आकड़ों पर आधारित)

आज विश्व के विभिन्न देश जंनाककीय सक्रमण की विभिन्न अवस्थाओं में हैं । ट्रिवार्था के अनुसार ऐसा मानव के द्वैतपरक (dual) स्वभाव के कारण है । जैविक दृष्टि से तो मनुष्य हर स्थान पर एक जैसा ही है तथा प्रजनन क्रिया में रत है लेकिन सांस्कृतिक दृष्टि से इनमें एक स्थान से दूसरे स्थान में अन्तर है । इस सांस्कृतिक विभेदन के कारण ही भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में उत्पादकता-दर में भी भिन्नता है; परिणाम स्वरूप विभिन्न क्षेत्र जनांककीय संक्रमण (चक्र) की विभिन्न अवस्थाओं में हैं । चूंकि सामाजिक-आर्थिक तथा जनसांख्यिकी संक्रमण क्रिया साथ-साथ चलती है इसलिए विश्व के विभिन्न देशों को इस प्रक्रिया को पूरा करने में अलग-अलग समयावधि लगेगी । यह इस बात पर निर्भर करेगा कि आर्थिक रूपान्तरण की गति कैसी है । यह भी आवश्यक नहीं है कि एक देश में जनांककीय रूपान्तरण वहां के प्रौद्योगिकी विकास के अनुरूप ही है ।

इस संक्रमण सिद्धान्त के अनुसार जनसंख्या में वृद्धि कृमिक चरणों में होती है तथा प्रत्येक देश की जनसंख्या को इन कृमिक अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है । डब्ल्यू एस.पी.ब्लेकर ने इस सिद्धान्त को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान किया है और संक्रमण के विभिन्न जनसंख्या प्रारूपों को समझने का प्रयास किया है । यह सिद्धान्त पश्चिमी देशों के द्वारा अनुभूत जनसंख्या विकास पर आधारित है इसलिए अधिक ग्राह्य है । यह जनसंख्या के कालिक अनुक्रमण पर जोर देता है तथा देश और काल को परस्पर सम्बद्ध करता है ।

एक परम्परागत पशुपालक और कृषक समाज जब एक औद्योगिक तथा नगरीय संस्कृति की क्रमिक अवस्थाओं में विकसित होता है तब उसकी जनांककीय संरचना में अनेक परिवर्तन आते हैं । संसार के विभिन्न देश किसी विशिष्ट समय में जनांककी संक्रमण के विभिन्न चरणों में पाए जाते हैं । यह सिद्धान्त दो अभिग्रहीतों (Postulations) पर आधारित है -

(i) जैव-शारीरिक दृष्टि से मानव एक समान है जो पुनरूत्पादन (Reproduction) की प्रक्रिया में संलग्न रहता है ।

(ii) जनसंख्या की सांस्कृतिक विविधताऐ तथा आर्थिक विकास की अवस्था जन्म एवं मृत्यु दर के प्रतिरूपों को जन्म देती है जिससे जनांककीय संक्रमण के विभिन्न चरण निर्धारित होते हैं ।

12.2.4.1 जनांककीय चक्र की अवस्थाऐं

जनसंख्या विकास में सामान्यत: तीन या चार अवस्थाऐं होती हैं । इनकी नामावलियों पर मतभेद है । ट्रिवार्था ने इन अवस्थाओं को क्रमश: पूर्व औद्योगिक (pre-industrial), पूर्व पश्चिमी (Early-western) तथा आधुनिक पश्चिमी (Modern western) नाम दिए हैं, जबकि नोटेस्टीन ने इन्हें संक्रमण पूर्व (Pre - Transitions) तथा संक्रमण पश्चात् (Post - Transitions) नाम दिए हैं । ब्लेकर ने जनांककी चक्र पांच अवस्थाऐं बताई हैं- (चित्र- 12.5B)

12.2.4.2 उच्च स्थिरता (High Stationary)

इस अवस्था में जन्म दर तथा मृत्युदर दोनों ऊँचे होते हैं । जन्म दर 45 प्रति हजार से अधिक तथा मृत्यु दर 40 प्रति हजार से अधिक होती है । दोनों दरों के अनियन्त्रित तथा उच्च होने के कारण जनसंख्या के आकार में कोई वृद्धि अथवा हास नहीं होता । जनसंख्या लगभग स्थिर रहती है । ट्रिवार्था ने इस अवस्था को 'पूर्व औद्योगिक' (pre-industrial) कहा है, जबकि नोटेस्टीन ने 'पूर्व संक्रमण अवस्था' (pre Transitional) बताई है । इस अवस्था में स्थित देश कृषि प्रधान तथा आर्थिक रूप से पिछड़े होते हैं । स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी के कारण शिशु मृत्यु दर उच्च होती है तथा जीवन प्रत्याशा के लिए बड़े परिवार को पसन्द किया जाता है । दुर्भिक्ष (Drought), संक्रामक रोग (Infection diseases), युद्ध, बाढ़, भूकम्प आदि के प्रकोपों के कारण मृत्यु दर ऊँची होती है ।अफ्रीका रण पूर्वी द्वीप समूहों के कुछ भागों में आज भी यही अवस्था विद्यमान है । 1921 से पूर्व भारत, चीन तथा दक्षिणी पूर्वी एशियाई देशों में जनसंख्या संक्रमण की यही अवस्था रही है ।

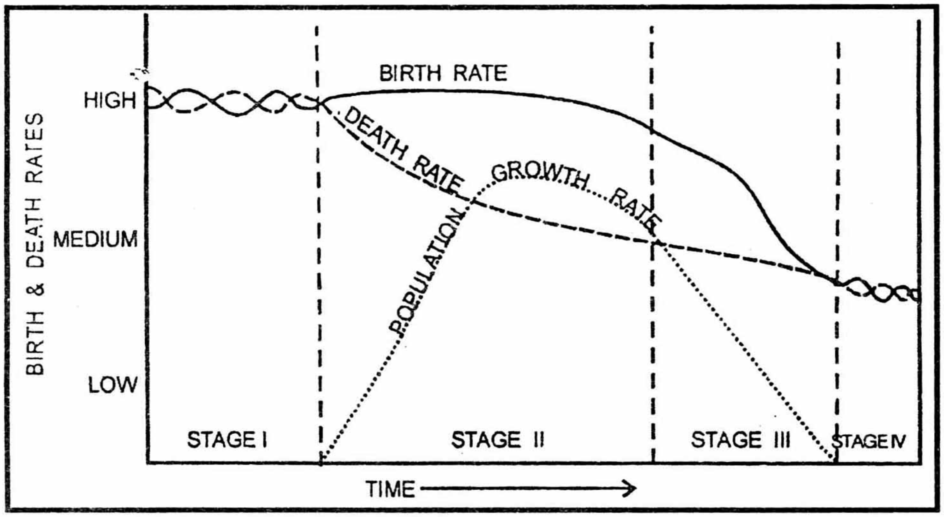

(A)

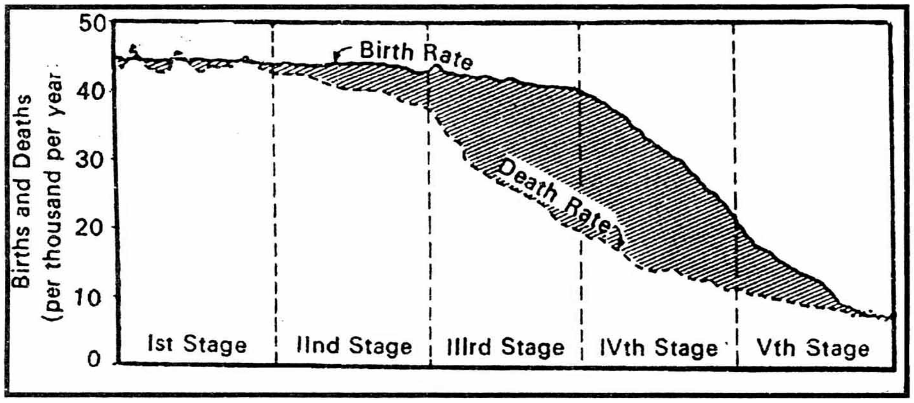

(B)

चित्र - 12.5A-b : जनसंख्या चक्र सिद्धान्त

12.2.4.3 शीघ्र बढ़ने वाली स्थिति (Early Expanding)

इस अवस्था में जन्मदर (30 - 40 प्रति हजार) ऊँची बनी रहती है, किन्तु मृत्यु दर तेजी से (15 - 20 प्रति हजार) घटती जाती है । परिणामत : जनसंख्या में तेजी से वृद्धि होने लगती है । जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर 2 से 3 प्रतिशत के बीच अथवा इससे अधिक होती है । एक औसत परिवार में 4 से 6 बच्चे होते हैं । इस श्रेणी के राष्ट्रों में वृद्धि तथा औद्योगिकरण के कारण आर्थिक विकास बढ़ता है । स्वास्थय सुविधाओं में विस्तार से संक्रामक रोगों पर नियन्त्रण होता है । कृषि उत्पादन में वृद्धि के कारण दुर्भिक्षों एवं भूखमरी की कमी हो जाती है । अधिकांश दक्षिणी, पूर्वी एवं दक्षिणी - पूर्वी एशियाई देश, ईरान, अल्जीरिया, मोरक्को आदि देश इसी अवस्था में हैं ।

12.2.4.4 विलम्ब से वृद्धि वाली स्थिति (Late Expanding)

जनांककीय चक्र की इस तीसरी अवस्था में जन्म तथा मृत्यु दोनों दरों में प्रशंसनीय कमी आती है । जनसंख्या या तो फिर से स्थिर होती है अथवा धीरे - धीरे बढ़ती है । यद्‌यपि जनसंख्या प्रथम तथा अन्तिम अवस्था में धीरे -धीरे बढ़ती है तथापि यह बिल्कुल एक दूसरे के विपरीत अवस्थाओं का परिणाम है । जहाँ प्रथम अवस्था में जनसंख्या की धीमा परिवर्तन, उच्च उत्पादकता तथा उच्च मृत्युदर के कारण है, वहीं तृतीय अवस्था में धीमी जनसंख्या वृद्धि के कारण निम्न उत्पादकता तथा निम्न मर्त्यता है । प्रथम अवस्था में समाज परम्परागत कृषि प्रधान होता है जबकि तीसरी अवस्था में औद्‌योगिकरण के कारण नगरीकरण में भारी वृद्धि होती है । तकनीकी ज्ञान भरपूर होता है, परिवार नियोजन उपायों का प्रयोग सामान्य बात होती है तथा श्रम कुशलता उच्च होती है । मध्य अमरीकी देश, ब्राजील, वेनेजुएला, कोलम्बिया, इक्वाडोर, चिली, पीरू, अर्जेन्टाइना, रूस, इटली, स्पेन, रोमानिया, बल्गेरिया आदि देशों ने इस अवस्था को प्राप्त कर लिया है । उपरोक्त दो चरणों को ट्रीवार्था ने 'पूर्व-पश्चिमी' (Early Western) तथा नोटेस्टनी ने संक्रमण पश्चात कहा है ।

12.2.4.5 निम्न स्थिरता (Law Stationary)

इस अवस्था में जन्म दर तथा मृत्युदर दोनों क्रमश: 15 प्रति हजार से कम तथा 12 प्रति हजार से कम, अति निम्न तथा संतुलित होती हैं । अत: जनसंख्या प्राय: स्थिर होती है अथवा उसमें नगण्य सी वृद्धि होती है । यह उन्नत अवस्था का द्‌योत्तक है । संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया न्यूजीलैण्ड तथा अधिकांश पश्चिमी यूरोपीय देश इसी अवस्था में हैं । इस अवस्था के परिवारों में दो बच्चों का लक्ष्य होता है । परिवार नियोजन के साधन व्यापक रूप से अपनाए जाते हैं । जनसंख्या शिक्षित, उच्च आय वर्ग तथा उन्नत जीवन स्तर वाली होती है । ट्रीवार्थ ने इसे आधुनिक पश्चिमी (Modern Western) नाम दिया है ।

12.2.4.6 घटने वाली अवस्था (Declining Stage)

ब्लेकर ने जनसंख्या परिवर्तन की पांचवी अवस्था को घटाने वाली जनसंख्या (Declining) नाम दिया है । जिसमें जन्मदर मृत्युदर से कम होने लगती है, अतएव जनसंख्या घटने लगती हैं । परिवार नियोजन के साधन इतने व्यापक रूप से अपनाए जाते हैं कि जन्म दर घटकर मृत्यु दर से नीचे होने लगती है । युगलों का लक्ष्य दो बच्चों की बजाय एक ही बच्चा रहता है । फ्रांस, जर्मनी, स्वीडन आदि देश इसी अवस्था में आते है जहां जनसंख्या घटने की समस्या उठ खड़ी हुई है किन्तु विद्‌वानों ने इस अवस्था की वास्तविकता पर सन्देह व्यक्त किया है ।

ब्लेकर के अनुसार दूसरी तथा तीसरी अवस्थाऐं जनसंख्या विस्फोट (Population Explosion) की है क्योंकि जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्धि इसी काल में होती है । प्रो. कागबिल के अनुसार जनसंख्या अंग्रेजी वर्णमाला के 'S' वर्ग के रूप में बढ़ती है । जनसंख्या वृद्धि का क्रम प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि से सम्बंधित होता है । यह जन्म दर तथा मृत्यु दर से क्रमिक परिवर्तनों में

आता है जो उच्च से निम्न की ओर गतिमान रहते हैं । इसके विपरीत यदि मृत्युदर, जन्मदर से अधिक होने लगती है तो यह क्रम समाप्त हो जाता है (सन्दर्भ चित्र- 12. 5)

12.2.5 जनांककीय चक्र के लक्षण

आर्थिक विकास की अवस्था तथा जनांककीय चक्र में गहरा सम्बंध है । अत : विभिन्न देशों को चक्र पूरा करने में अलग -अलग समय लगता है । यह उनके आर्थिक -सामाजिक विकास की दर तथा अवस्था पर निर्भर करता है । जिन देशों की सामाजिक - आर्थिक विकास की दर ऊँची है और यदि वे जनसंख्या चक्र के द्वितीय अथवा तृतीय अवस्था में हैं, वे शीघ्र ही चक्र को पूरा कर सकते हैं । विकास की गति मन्द होने पर यह प्रक्रिया विलम्बित हो सकती है । वर्तमान समय में एक देश में हुए विज्ञान तथा तकनीकी विकास वहीं तक सीमित नहीं होते दूसरे देशों में इनका प्रसार भी होता है । उदाहरण के लिए उन्नत देशों में विकसित दवाऐं, परिवार नियोजन के साधन, कृषि, यातायात तथा औद्योगिक तकनीक शीघ्र ही विकासशील देशों में अपनाई जाने लगती हैं । अत : मंद गति से चलने वाले जनांककीय चक्र में तीव्रता आती हैं । इस सिद्धान्त के कुछ प्रमुख लक्षण निम्नानुसार हैं -

1. जनसंख्या के प्राकृतिक वृद्धि दर में क्रमिक अवस्थाओं से परिवर्तन होता है ।
2. इस प्रक्रिया में जनसंख्या की आयु संरचना में भी परिवर्तन आता है । प्रथम तथा द्वितीय अवस्था में 0 - 14 आयु वर्ग के बच्चों की संख्या कुल जनसंख्या का 40 प्रतिशत से अधिक होती है । तीसरी अवस्था में यह 30 प्रतिशत से 35 प्रतिशत के बीच तथा चौथी अवस्था में यह 25 प्रतिशत से कम होती है । इसी प्रकार 65 प्लस आयु वर्ग के लोगों की संख्या प्रथम एवं द्वितीय चरण में कुल जनसंख्या का 4 प्रतिशत से कम, तीसरे चरण में 4 प्रतिशत से 8 प्रतिशत तथा चौथे चरण में 8 प्रतिशत से 12 प्रतिशत के बीच अथवा इससे अधिक होती है । पश्चिमी यूरोप में तो यह 14 से 16 प्रतिशत तक है । तात्पर्य यह है कि प्रथम तथा द्वितीय चरण में बच्चों का बाहुल्य और तीसरे एवं चौथे चरणों में वृद्ध जनों का बाहुल्य होता है ।
3. जनांककीय चक्र के विकास से ग्रामीण-नगरीय जनसंख्या के अनुपात में भी भारी परिवर्तन होता है । औद्योगिक विकास के कारण नगरीय जनसंख्या का अनुपात भी बढ़ता जाता है ।
4. संक्रमण के साथ जनसंख्या व संसाधनों के बीच के संतुलन में भी परिवर्तन होता है । आर्थिक विकास से संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग होने लगता है तथा नये संसाधन विकसित होने लगते हैं ।
5. जनसंख्या चक्र के साथ-साथ जनसंख्या की संरचना में भारी गुणात्मक परिवर्तन होते हैं । एक पिछड़ा और अशिक्षित ग्रामीण समाज एक उन्नत - शिक्षित अर्थव्यवस्था वाले नगरीय समाज में परिर्वतन होता जाता है और इससे जीवन मूल्यों में भी वृद्धि होती है ।

जनांककीय सिद्धान्त जनसंख्या विकास की प्रवृतियों तथा विभित्र देशों के संक्रमण की अवस्था को समझने में भी सहायक है जिससे जनसंख्या प्रारूपों को निर्धारित करने में काफी मदद मिलती है ।

जनांककीय चक्र के आधुनिक विचारकों में जे. आई. क्लार्क के विचार उल्लेखनीय है । जे आई.क्लार्क के अनुसार जनांककीय चक्र की विभिन्न अवस्थाओं में जन्म तथा मृत्युदर की कुछ सीमाऐं होती हैं जैसे-

अवस्था	मृत्यु दर%	जन्म दर%
प्रथम	>15.0	>30.0
द्वितीय	<15.0	>30.0
तृतीय	<15.0	<30.0

विश्व के लगभग 200 देशों के जनांककी चक्र की अवस्था का अध्ययन कर उन्हें निम्नांकित वर्गो में बांटा है -

जनांककीय चक्र एवं जनसंख्या का आकार

देशों की जनसंख्या (दस लाख में)	जनांककीय I	चक्र II	अवस्था III	कुल देश
>100	-	4-	3	7
10-100	15	17	15	47
1-10	40	18	14	72
<1	15	38	21	74
	70	**77**	**53**	**200**

क्लार्क ने 100 छोटे देशों में जनांककीय चक्र के एक अध्ययन में पाया कि छोटे देशों में (< 01 करोड़ से कम) जनसंख्या तथा निवास क्षेत्र छोटा होने के कारण जन्म दर, मृत्युदर तथा प्रवास पर शीघ्र नियंत्रण पाया जा सकता है । इनमें व्यवसायिक भिन्नता कम होती है । सामाजिक, आर्थिक परिवर्तनों में तीव्रता के साथ-साथ जनांककीय परिवर्तन भी तीव्र गति से होने लगते है । सीमित स्थान पर रहने का भय, महिलाओं की अच्छी सामाजिक स्थिति, जनाधिक्य से प्रति व्यक्ति आय घटने का डर, विधि, जातीय संरचना तथा शासकीय नीतियों के कारण विशेषत : द्वीपीय देशों में जनांककीय चक्र तेजी से तीसरे चरण में पहुँच सकता है । छोटे देशों में परिवार नियोजन कार्यक्रमों को भी अधिक सफलता प्राप्त होती है । अत : बड़े देशों को भी जनसंख्या नियन्त्रण के लिए द्वीपीय उपागम (Island Approach) को अपनाने की सलाह दी जाती है ।

क्लार्क के अनुसार चक्र को तेजी से पूरा करने में राज्य का छोटा आकार ही पर्याप्त नहीं है वरन् उसकी स्थिति, जनांककी इतिहास, जातीय संरचना, पारिवारिक संघटन तथा उन्नत देशों से सम्बन्ध भी अति महत्वपूर्ण है । यूरोप के छोटे देशों में जनांककीय संक्रमण अवस्था तेजी से हुई है जबकि अफ्रीका के छोटे देश अधिकतर प्रथम अवस्था में हैं । एशिया तथा लेटिन अमेरिका के अधिकांश छोटे द्वीपीय देश जनांककी चक्र के द्वितीय चरण में है । आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलेंड जनांककी चक्र के तृतीय अवस्था में हैं किन्तु इनके उत्तर में स्थित पापुआ तथा न्यूगिनी चक्र की प्रथम अवस्था में ही हैं ।

2.2.6 जनांककीय चक्र की आलोचना

जनांककीय चक्र की प्रमुखतया दो तरीकों से अलोचना की जाती है :

(1) यह सिद्धान्त यूरोपीय देशों के अनुभव पर आधारित है इसलिए विकासशील देशों में जनसंख्या विश्लेषण में उपयोगी नहीं है । औद्योगिकरण के पूर्व यूरोपीय देशों में जनसंख्या कम थी परन्तु आज विकासशील देशों में जनसंख्या अधिक है । इसलिए उन देशों के अनुभव आज के लिए प्रासंगिक नहीं हो सकते हैं ।

(2) इस सिद्धान्त के आधार पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिए पहले आर्थिक विकास होने चाहिए । वास्तविकता तो यह है कि विकासशील देशों के तीव्र विकास के लिए पहले जनसंख्या की तीव्र वृद्धि पर नियन्त्रण लगाया जाए ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यूरोप के देशों में लोगों के रहन -सहन के स्तर बढ़ जाने से उन्हें पौष्टिक आहार मिलने लगा जिससे मृत्युदर में कमी आने लगी, लेकिन आज के विकासशील देशों में चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं से मृत्यु दर को घटाया गया है । इस प्रकार दोनों तरह के देशों में मृत्युदर की गिरावट के कारण एक से नहीं हैं ।

12.3 जनांककीय चक्र के क्षेत्रीय प्रारूप

इस संक्रमण सिद्धान्त का विकास पश्चिमी देशों में हुए जनांककीय विकास को ध्यान में रखते हुए ही किया गया था और वहीं से इसका प्रसार आरम्भ हुआ । यह कहना कठिन है कि उन सभी देशों में जहाँ संक्रमण का उद्भव हुआ उच्च उत्पादकता तथा मर्त्यता से निम्न उत्पादकता तथा मर्त्यता की प्रवृतियों में साधारणतया तथा समानताऐं थीं । वास्तव में उत्पादकता और मर्त्यता के प्रारूपों का सिलसिला और उनमें हास की गति जनांकिकी चक्र की अवधि पश्चिम में भी एक देश से दूसरे देश में भिन्न रही है । इसी प्रकार यद्यपि संक्रमण का प्रारूप ठीक से पहचाना तो जा सकता है तथापि यह बताना कठिन है कि किन भिन्न-भिन्न सामाजिक व आर्थिक परिर्वतन की परिस्थितियों में इसका एक देश से दूसरे देश में प्रसार हुआ । जब इसका प्रसार एक देश से दूसरे देशों में हुआ तो इसमें कुछ सुधार भी हुये । प्रारूप तथा समय की अवधि पश्चिमी यूरोप, पूर्वी यूरोप और तीसरी दुनिया में कभी भी समान नहीं थी । इनमें बहुत अन्तर रहा है । इन तीनों प्रकार के विश्व के अनुभवों को विस्तार से कहा जा सकता है ।

12.3.1 प्रथम विश्व

प्रथम विश्व में उत्तरी पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड तथा दक्षिणी अफ्रीका को सम्मलित किया जाता है । इन्होंने जनांककीय संक्रमण मॉडल के विशिष्ट प्रारूपों का अनुभव किया है । व्यक्तिगत देशों में जनांककीय अनुभवों में कुछ अन्तर अवश्य रहा है । यहाँ संक्रमण 1 9वीं सदी के अन्त में या 20 वीं सदी के प्रारम्भ में पूर्ण भी हो चुका था । जबकि शेष विश्व अभी प्रथम अवस्था में ही था । प्रथम संसार के बारे में यह आमतौर पर कहा जाता है कि उत्पादकता के स्तर विश्व के अन्य भागों जितने उच्च कभी नहीं थे । यहां जनांककीय रूपान्तरण सामाजिक -आर्थिक रूपान्तरण और प्राद्योगिक विकास के साथ जुड़ा था ।

12.3.2 द्‌वितीय विश्व

द्‌वितीय विश्व में मुख्यत: पूर्वी यूरोप को सम्मिलित किया जाता है जहाँ संक्रमण काल का आरम्भ 20 वीं सदी के आरम्भिक दशकों में हुआ जिसमें आस्ट्रिया एवं चेकोस्लेवाकिया ने सबसे पहले कदम बढ़ाए । यह रूचिकर है कि द्‌वितीय विश्व के देशों ने कभी भी जनसंख्या की उस विस्फोटक परिवर्तन को नहीं देखा, जिस विस्फोटक परिवर्तन का जिक्र मूल संक्रमण मॉडल में किया गया है । 1940 तक दूसरे विश्व के अधिकांश देशों जैसे आस्ट्रिया, चैकोस्लोवाकिया, आयरलैण्ड, स्विटजरलैण्ड, फिनलैण्ड तथा दक्षिणी व दक्षिणी पूर्वी यूरोप के देशों ने संक्रमण की तीसरी अवस्था को पार कर लिया था ।

12.3.3 तृतीय विश्व

तृतीय विश्व, जिसमें शेष सभी देश आते हैं, का अनुभव प्रथम तथा द्‌वितीय विश्व के अनुभवों से बहुत अलग है । तीसरी दुनिया के विशेषत: छोटे देश विस्फोटक अवस्था का अनुभव करने वाले राष्ट्र थे । सुरीनाम ने 1930 के आरम्भ में द्‌वितीय अवस्था में प्रवेश किया । धीरे-धीरे विस्फोटक का प्रसार लेटिन अमेरिका, अफ्रीका तथा एशिया के छोटे देशों में भी हुआ । चीन, भारत, इण्डोनेशिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश जैसे बड़े राष्ट्रों ने 1950 में संक्रमण की द्‌वितीय अवस्था में प्रवेश किया ।

तृतीय विश्व के बारे में अक्सर यह भय बना रहता है कि आयातीत दवाओं तथा जन स्वास्थ्य सुविधाओं की प्राद्‌योगिकी से वहां की मृत्यु दर तीव्रता से कम हुई है । किन्तु उसके साथ -साथ उत्पादकता हास के लिए अवस्थाओं की आवश्यकता भी थी ऐसे सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन वहां नहीं आए । मर्त्यता तथा उत्पादकता के हाल ही के तृतीय विश्व के अनुमानित आकड़ों से ऐसा लगता है कि चीन जनांककी चक्र की तीसरी अवस्था में पहुँचने वाला है । आलोचनात्मक विवरण स्पष्ट दर्शाता है कि इसमें कुछ अनिश्चितता अवश्य है । संकल्पना की परिदृष्टि अनिवर्यता समयानुसार है लेकिन इसका क्षेत्रीय विस्तार जनसंख्या भूगोलवेत्ताओं के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है । यह संकल्पना यद्‌यपि यूरोप, अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया के अनुभवों पर आधारित है तथापि इसकी प्रकृति अनुगामी (Inductive) है । बहुत से विद्‌वान इस संकल्पना के सांस्कृतिक स्थानान्तरण पर प्रश्न चिन्ह अवश्य लगाते है । (वुड्स, 1979 पृ. 5) शैक्षिक जगत के कुछ आधारभूत प्रश्न भी है जैसे क्या जनांककीय चक्र कम विकसित देशों में बिना यूरोपीय प्रारूप के किसी सुधार के स्थान लेगा? क्या संकल्पना की अवस्थाऐं उसी प्रकार क्रमानुसार (Sequential) है, तथा क्या उसकी किसी अवस्था से बचा जा सकता है?

लास्की तथा विल कॉक्स (1974, पृ. 215 - 25) का मत है कि जनांककी चक्र संकल्पना न तो भविष्य सूचक (Predictive) है और न इसकी क्रमानुसार (sequential) अवस्थाऐं हैं । उसकी किसी अवस्था से बचा भी नहीं जा सकता । मनुष्य के औद्‌योगिक अनुसंधानों का कम करके मूल्यांकन करना उचित नहीं है, विशेषकर दवाओं के क्षेत्र में, जो मर्त्यता की प्रवृत्तियों में सुधार कर प्राकृतिक वृद्धि में आशातीत परिवर्तन ला सकते हैं ।

जैसे -जैसे जनांककीय चक्र का विकास होता है, प्राकृतिक परिवर्तन में महान परिवर्तन होते है । चक्र के प्रारम्भ में यह निम्न है तथा चक्र की पूर्ण अवस्था में यह फिर से कम होना आरम्भ होता है और चक्र की पूर्णता पर यह निम्न स्तर पर आ जाता है । फलस्वरूप, जनसंख्या के आयु संघटन में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आता है । चक्र की विस्फोटक अवस्था के दौरान देशों की जनसंख्या का आधार विशाल हो जाता है जिसमें युवा वर्ग के लोगों की प्रधानता होती है । द्वितीय अवस्था के अन्तिम चरण में जब उत्पादकता नियंत्रण शुरू हो जाता है, तो जनसंख्या के आयु संघटन में फिर से सुधार आता है लेकिन इस समय तक व्यस्क आयु वर्ग के लोगों की बहुतायत हो जाती है । जैसे -जैसे चक्र का विकास होता है, जीवन सम्भाव्यता में भी परिवर्तन आता है । मानव मूल्य बढ़ते हैं, रहने के स्तर में सुधार आता है तथा साधारण सामाजिक, आर्थिक एवं प्रौद्योगिक क्रांति आती है ।

12.3.4 विकासशील देशों में जनांककीय चक्र अवस्था

जनांककीय चक्र एक सामान्य मॉडल है जो जन्मदर और मृत्युदर के परिवर्तनों को समय के परिप्रेक्ष्य में प्रदर्शित करता है । यह मॉडल -विकसित देशों में जनसंख्या के जन्मदर और मृत्युदर में हुए क्रमिक परिवर्तनों को एक प्रणाली में सम्बद्ध करता है । यह जनसंख्या के सामाजिक विकास की अवस्थाओं का भी द्योत्तक है । ब्रून्स पशुपालक तथा कृषि प्रधान ग्रामीण समाज जिन क्रमिक अवस्थाओं से गुजरते हुए अंत में एक नगरीकृत एवं उद्योग प्रधान समाज में बदलता है । वह भी जनांकिकीय संक्रमण की अवस्थाओं को दर्शाता है ।

विकसित देशों के जंनाककीय के क्रमिक विकास का यह अत्यधिक सरलीकृत मॉडल है जिसे विकासशील देशों के लिए भी लागू किया जाता है अत: इस संबंध में कुछ तथ्यों की जानकारी भी आवश्यक है -

1. सभी विकासशील देश एक ही श्रेणी के नहीं हैं उनके जनांककीय इतिहास, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण अंतर पाए जाते हैं ।
2. एक ही देश के विभिन्न भागों की जनसंख्या के जन्मदर अथवा मृत्युदर या वृद्धि दर में भी सार्थक अंतर पाए जाते हैं । जैसे भारत के केरल व तमिलनाडु प्रदेश की जनसंख्या जहां शून्य वृद्धि दर की ओर अग्रसर हो रही है वहीं बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा राज्यों में वृद्धि दर अभी भी ऊँची बनी हुई हैं ।
3. इसी प्रकार एक ही राज्य के विभिन्न समुदायों के मध्य जन्म, मृत्यु एवं वृद्धि दर में अंतर पाया जाता है जैसे भारत में हिन्दू मुस्लिम और इसाइयों के बीच सामान्य जनसंख्या और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के बीच, अल्प आय, मध्यम आय और उच्च आय वर्गों के बीच भी अन्तर स्पष्ट देखे जा सकते हैं । श्रीलंका में सिंहली और तमिल भाषी जनसंख्या में जनांकिकी सक्रमण की अलग- अलग अवस्थाऐं पाई गई हैं । इसी प्रकार दक्षिणी अफीका मूल के समुदायों के जन्मदर और मृत्यु दरों में भारी अन्तर दखे जा सकते हैं ।
4. जनसंख्या वृद्धि पर कुछ देश काफी चिन्तित हैं और नियंत्रण हेतु गम्भीर प्रयास भी कर रहे हैं जैसे भारत, चीन, मैक्सिको आदि देश । दूसरी और कुछ ऐसे देश भी हैं जो इसे स्वयं

नियंत्रित होने वाली प्राकृतिक प्रक्रिया मान कर कुछ भी प्रयास नहीं करते हैं । जिनमें नाईजीरिया, पाकिस्तान, बंगलादेश आदि प्रमुख देश हैं । इन देशों में धार्मिक कारण भी प्रभावी है । फिर भी शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार ने जन्मदर को नीचे करने में योगदान किया है ।

5. सहारा रेगिस्तान के दक्षिण में स्थित देशों तथा पूर्वी अफ्रीका देशों में (दक्षिणी अफ्रीका के अतिरिक्त) गरीबी तथा अशिक्षा इतनी व्यापक है और स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति चेतना भी नहीं है इसलिए ये देश अभी भी जनांककीय चक्र की प्रथम अवस्था से ऊपर नहीं उठ पाए हैं । सामान्य मृत्युदर तथा शिशु मृत्युदर इतनी अधिक है कि उच्च जन्मदर होने के बावजूद जनसंख्या वृद्धि अधिक नहीं हो पा रही है । जीवन स्तर भी अति निम्न है और समय-समय पर गृह युद्ध भी इनकी संख्या को कम करते हैं ।

अत: विकासशील देशों की जनांककीय चक्र को उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में देखा जाना अधिक सार्थक होगा ।

बोध प्रश्न - 1

1. माल्थस के अनुसार जनसंख्या में वृद्धि किस अनुपात में और खाद्यान्न उत्पादन किस अनुपात में बढ़ता है?

   ....

   ....

2. जनसंख्या वृद्धि पर स्वैच्छिक विरोध न लगाया जाये तो कौनसा रोक जनसंख्या में कमी करेगा?

   ....

   ....

3. जनसंख्या को नियन्त्रित करने के लिए माल्थस ने कौनसे दो उपाय सुझाऐं?

   ....

   ....

4. एडविन केनन द्वारा विकसित जनसंख्या सिद्धान्त का नाम बताइए?

   ....

   ....

5. जनांककीय संक्रमण (चक्र) का विचार सर्वप्रथम किसने प्रस्तुत किया?

   ....

   ....

6. विकासशील देश जनांककीय संक्रमण की कौनसी अवस्था में है?

   ....

   ....

7. ट्रीवार्था ने जनांककीय संक्रमण की अवस्थाओं के कौनसे तीन नाम दिए?

   ....

....

8. ब्लेकर ने जंनाककीय संक्रमण (चक्र) की कितनी अवस्थाऐं दर्शाई हैं ?

....

....

12.4 सारांश (Summary)

मूलत : नोटेस्टीन (F.W.Notestein) द्वारा प्रतिपादित मॉडल जो जन्मदर और मृत्युदर में होने वाले क्रमिक परिवर्तन को सामान्यकृत करता है । जनसंख्या भूगोल में प्रयुक्त यह सिद्धान्त उच्च जन्मदर और उच्च मृत्युदर वाली अल्प जनसंख्या से लेकर निम्न जन्मदर और निम्न मृत्युदर वृहद् जनसंख्या तक की विभिन्न अवस्थाओं में होने वाले जनसंख्या परिवर्तन का विश्लेषण करता है । यह सिद्धान्त मुख्यत : पश्चिमी यूरोप के अनुभवों एवं ओप के लगभग 1700 ई. से लेकर वर्तमान समय तक के जनसंख्या परिवर्तनों के प्रतिरूप पर आधारित है । इस सिद्धान्त के अनुसार जनसंख्या परिवर्तन की प्रक्रिया में चार प्रधान अवस्थाऐं हैं ।

1. अधिक उतार चढाव वाली (पूर्व औद्योगिक) अवस्था जिसमें जन्म और मृत्युदर दोनों उच्च होती हैं तथा जनसंख्या के आकार में नैसर्गिक वृद्धि कम होती है ।
2. प्रारम्भिक विस्तारशील अवस्था जिसमें मृत्युदर में हास होता है किन्तु जन्मदर अभी भी उच्च रहती है जिसके परिणाम स्वरूप उच्च दर से जनसंख्या में वृद्धि होती है ।
3. उच्च विस्तारशील अवस्था जिसमें मृत्युदर की तुलना में जन्म दर में अधिक कमी आ जाती है जिसमें जनसंख्या वृद्धि धीरे -धीरे होती है ।
4. अल्प उतार चढ़ाव वाली (औद्योगिक) अवस्था जिसमें जन्मदर तथा मृत्युदर दोनों ही निम्न या मध्यम प्रकार की होती है, फलस्वरूप जनसंख्या की नैसर्गिक वृद्धि अत्यन्त मन्द होती है और कभी-कभी जनसंख्या में हास भी होने लगता है ।
5. जन्मदर कम होने वाली अवस्था जिसमें जन्मदर, मृत्युदर से कम होने लगती है अर्थात जनसंख्या घटने लगती है ।

12.5 शब्दावली (Glossary)

- **जंनाककीय संक्रमण (Demographic Transition) :** जनसंख्या वृद्धि (graph) की पृथक-पृथक अवस्थाऐं जिनसे होकर जनसंख्या गुजरती है ।
- **जनांककी या जनसंख्या की :** जनसंख्या का आनुभविक, सांख्यिकीय एवं गणितीय अध्ययन।
- **जनसंख्या चक्र (Demographic Cycle) :** एक कालावधि जिसमें किसी प्रदेश या क्षेत्र की स्थिर जनसंख्या कालिक परिवर्तन की विभिन्न अवस्थाओं से होती हुई पुन : अपनी पूर्व अवस्था (स्थिर जनसंख्या) को प्राप्त कर लेती है ।
- **विकासशील देश (Developing Country) :** वे देश या क्षेत्र जो पहले अल्पविकसित थे किन्तु वर्तमान में विकसित होने की प्रक्रिया में हैं ।
- **विकसित देश (Developed country) :** वह देश जिनके संसाधनों का पर्याप्त विकास हो चुका हो और जहां प्रति व्यक्ति आय अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है ।

- **संसाधन (Resource) :** पृथ्वी पर अथवा अन्य ग्रहों एवं उपग्रहों पर पाए जाने वाले जैविक तथा अजैविक पदार्थ जो मानव के लिए और संसाधनों के लिए उपयोगी हो ।

12.6 संदर्भ ग्रंथ (Reference books)

1. मामोरिया रख माहेश्वरी : **मानव भूगोल**, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स 2006.
2. एस डी कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ, 2006.
3. बी. पी. पंडा : **जनसंख्या भूगोल,** मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 2004.
4. आर सी चान्दना : **जनसंख्या भूगोल,** कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना 2005.
5. एस. डी मौर्य : **मानव भूगोल,** शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद, 2005.
6. रामदेव त्रिपाठी : **जनसंख्या भूगोल**, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर 2005.
7. Goh -Cheng and Morgan : **Human and Economic Geography,**Oxford university Press, NY 1982

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. माल्थस के अनुसार जनसंख्या वृद्धि ज्यामितिक दर (Geometrical Ratio) से तथा खाद्यान्न उत्पादन गणितीय अनुपात (Mathematical Ratio) में बढ़ते है ।
2. सकारात्मक या प्राकृतिक रोक (Positive or Natural Checks) ।
3. माल्थस ने जनसंख्या को नियन्त्रित करने के दो उपाय, यथा निवारक उपाय (Preventive Checks) और सकारात्मक रोक (Positive Checks) सुझाए ।
4. अनुकूलतम जनसंख्या का सिद्धान्त (Optimum Population Theory) ।
5. थाम्पसन नोटेस्टीन ।
6. सक्रमण की तीसरी अवस्था में ।
7. पूर्व औद्योगिक ,पूर्व पश्चिमी (Early Western) तथा आधुनिक पश्चिमी ।
8. ब्लेकर ने जनांककीय संक्रमण की पाँच अवस्थाऐं दर्शायी हैं ।

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए ।
2. अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त क्या है? क्या यह सिद्धान्त माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त के ऊपर सुधार है?
3. जनांककीय सक्रमण (चक्र) की अवस्थाओं का वर्णन कीजिए?
4. विकासशील देशों में जनांककीय संक्रमण अवस्था की विवेचना कीजिए?
5. जनांककीय संक्रमण के क्षेत्रीय प्रारूप का विश्लेषण कीजिए?

इकाई 13 : ग्रामीण अधिवास (Rural Settlements)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 स्थिति एवं अवस्थिति

13.2.1 स्थिति को प्रभावित करने वाले कारक

13.2.2 स्थिति के प्रकार

13.3 ग्रामीण अधिवासों के आकार

13.3.1 भौतिक आकार

13.3.2 कार्यात्मक आकार

13.3.3 सामाजिक आकार

13.4 ग्रामीण अधिवासों के प्रकार

13.4.1 प्रकीर्ण या एकाकी अधिवास

13.4.2 सघन अथवा अभिकेन्द्रित अधिवास

13.4.3 अर्द्ध-सघन अथवा अपखण्डित अधिवास

13.5 ग्रामीण अधिवासों के प्रतिरूप

13.6 भारत में गृह एवं उनके प्रकार

13.6.1 गृह प्रकार

13.7 अधिवास एवं उनका प्रादेशिक वितरण

13.8 सारांश

13.9 शब्दावली

13.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन से आप समझ सकेंगे :

- अधिवासों के बसाव में स्थिति का महत्व
- अनेक संघटक मिलकर अधिवासों के आकार तथा प्रतिरूप का निर्धारण करते हैं
- गृह निर्माण सामग्री गृह निर्माण में विशेष महत्व रखती है ।
- अधिवास के प्रकार तथा प्रतिरूप में अन्तर
- भारत में गृह तथा उनका प्रादेशिक वितरण
- ग्रामीण अधिवास का सामाजिक -सांस्कृतिक महत्व

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

ऐसे अधिवास जिनमें अधिकांश मनुष्य कृषि, वानिकी, पशुपालन, खनन और मछुवाही कार्य में लगे होते हैं, ग्रामीण अधिवास कहलाते हैं । विश्व के अधिकांश ग्रामीण अधिवास स्थायी तथा चिर- स्थायी हैं । ग्रामीण क्षेत्र में खुले देहात, व्यापक भू -उपयोग अपेक्षाकृत निम्न जनसंख्या घनत्व और सरल जीवन शैली पाई जाती हैं । विश्व के अधिकांश अधिवास ग्रामीण हैं ।

भोजन के पश्चात् आश्रय मानव की अत्यन्त महत्वपूर्ण आवश्यकता है । मौसम की विषमताओं से अपनी सुरक्षा तथा सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक व्यवसायों के सम्पादन आदि के लिए मनुष्य घरों तथा अधिवासों का विकास करता है । वास्तव में अधिवास मानव का भौतिक पर्यावरण में अपने आपको अनुकूल बनाने की ओर एक महत्वपूर्ण कदम है । यद्यपि पृथ्वी का बहुत छोटा प्रतिशत इन अप्रधिवासों से घिरा है किन्तु इनके द्वारा विश्व संस्कृति अत्यधिक प्रभावित है । सांस्कृतिक कार्यो के कारण ही अधिवासों का अध्ययन मानव भूगोल का मुख्य आधार रहा है । यथार्थ में अधिवास प्राकृतिक पर्यावरण के साथ मानव के सम्बन्धों को प्रतिबिम्बित करते हैं ।

ग्रामीण बस्तियों की अपेक्षा नगरीय बस्तियाँ प्राय : बड़ी होती है तथा नगरों में जनसंख्या का घनत्व गांवों से अधिक होता है । परन्तु केवल जनसंख्या अथवा घनत्व के आधार पर गांव अथवा नगर नहीं कहे जा सकते । कुछ खेती हर गाँवों मई आबादी छोटे नगरों की तुलना में बड़ी हो सकती है । जैसे - गंगा के ऊपरी मैदान में कुछ कृषक गांव 6000 या 8000 जनसंख्या वाले हैं परन्तु कृषि प्रधान होने के कारण वे गाँव कहलाते हैं जबकि दिल्ली-हापुड़ सड़क मार्ग पर कई नगरीय बस्तियाँ ऐसी हैं जिनकी आबादी 4000 से भी कम है । अब चूंकि उन बस्तियों के निवासी कृषि अथवा पशुपालन जैसे - धन्धे नहीं करते हैं वरन् निर्माण, परिवहन तथा व्यापारिक कार्यो में लगे हुए हैं इसलिए वे बस्तियों नगरों की श्रेणी में गिनी जाती है । अर्थात् व्यावसायिक पक्ष के द्वारा बस्तियों का ग्रामीण अथवा नगरीय होना निर्धारित किया जाता है । अत : नगरीय बस्तियों में जनघनत्व की अधिकता के साथ गतिशीलता (Mobility) का होना भी आवश्यक है । गतिशीलता का सम्बन्ध टेक्नॉलाजी से होता है जिससे जीवन की लय (Tempo of life) बढ़ जाती है । इसके अलावा नगरीय जीवन में सामाजिक विषमताएँ भी अधिक उग्र होती हैं जबकि ग्रामीण जीवन सरल-सीधा होता है ।

13.2 स्थिति एवं अवस्थिति (Site and Location)

स्थिति एवं अवस्थिति में दोनों पद एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं । स्थिति बहुधा अधिक विस्तृत क्षेत्र की भौतिक तथा सांस्कृतिक दशाओं से सम्बन्धित है । यह संलग्रता (Linkages) के जरिए किसी एक अधिवास तथा उसके चतुर्दिक अधिवासों के सम्बन्ध को भी इंगित करती है जबकि अवस्थिति उस स्थान को दर्शाती है जहाँ अधिवास स्थित हों जैसे - अक्षांश-देशान्तर के सम्बन्ध में उसका भौगोलिक विस्तार एव सम्बोधन ।

ब्लाश ने मानव अधिवास वितरण के अध्ययन में स्थिति को अधिक महत्व दिया है किन्तु उसका यह कथन कि ' 'प्रकृति अधिवास के लिए स्थिति तैयार करती है और मनुष्य अपनी इच्छाओं तथा जरूरतों की संतुष्टि के अनुरूप उसका संगठन करता है । " यह इस बात का

घोतक है कि स्थिति के चयन में भौतिक दशाओं की अपेक्षा सांस्कृतिक प्रभाव अधिक रहता है क्योंकि आदर्श तथा अच्छी स्थिति के चयन में चाहे वह झील, नदी, पहाड़ अथवा तट हो इसी सांस्कृतिक परिभाषा का महत्व रहता है । किसी भी अधिवास का प्रथम निवासी अपने अर्जित ज्ञान तथा विवेक से अपने अधिवास के लिए स्थिति के चयन में सदैव आन्तरिक अर्थ-तन्त्र एवं बाह्य लेन-देन को ध्यान में रखकर ही निर्णय लेता है । ब्लाश, ब्रून्श तथा सावर (Sauer) आदि भूगोलवेत्ताओं के लिए स्थिति शब्द सांस्कृतिक समूह द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के दोहन का निर्देशन भी करता है । एम. चिशोम महोदय ने चारागाह भूमि, कृषि-भूमि, जलापूर्ति, भवन निर्माण सामग्री तथा ईंधन आदि को स्थिति चयन में नियतकारी घटक मानने पर बल दिया है । इस प्रकार स्थिति, प्रकृति तथा संस्कृति के सतत् परिवर्तनशील सम्बन्धों को ठोस अभिव्यक्ति प्रदान करती है ।

अर्थात् मोटे तौर पर स्थिति से तात्पर्य घर अथवा घरों के समूह और उनके निकटवर्ती भौतिक वातावरण के सम्बन्ध से है । यह स्थिति अनेक भौगोलिक प्रभावों की अभिव्यंजना होती है जिसमें भूमि का धरातत्व, ढाल और भूगर्भिक जल-स्तर तथा जिसमें फसल के पौधों का साहचर्य पाया जाता है ।

धरातल के अन्तर्गत सामान्यत: ऐसे क्षेत्र (स्थान) चुने जाते हैं जो नदियों की बाढ़ की सीमा से कुछ ऊँचे हों ताकि अधिवास बाढ़ से सुरक्षित रह सकें । गाँव की प्रथम आवश्यकता जलापूर्ति की रहती है और कृषि के लिए समान धरातत्व तथा उपयुक्त जल प्रवाह वाला ढाल होना अत्यन्त आवश्यक है ।

मछुओं के गाँव समुद्रतटों पर सुरक्षित खाड़ियों के निकटवर्ती स्थान पर होते हैं जहाँ तेज तूफानों, आँधियों और समुद्री लुटेरों से सुरक्षा मिल सके साथ ही जहाँ मछलियाँ भी अधिक मात्रा में पाई जाती हों । खनन गाँव मुख्यत: किसी खनिज स्रोतों के मुहाने पर बसाए जाते है जबकि औद्योगिक गाँव औद्योगिक नगरों के निकट । घाटियों के गाँव (valley villages) की स्थिति प्राय: कुछ ऊँचे भागों पर होती है जहाँ कृषि योग्य भूमि, पर्याप्त जलापूर्ति, चारागाह क्षेत्र मिल सके । बाढ़ों से बचने के लिए अधिकतर अधिवास तटबन्धों पर अथवा सीढ़ीदार ढालों पर बसाए जाते हैं जिनका ढाल सूर्योन्मुखी होता है । मरूस्थल गाँव तथा दलदली भूभागों के गाँव उच्च भागों में सूखी भूमि पर बसाए जाते हैं ।अर्थात् अधिवास (बस्ती) की उत्पत्ति एवं उसके प्रादुर्भाव में बसाव स्थल तथा बसाव स्थिति दोनों का सम्मिलित प्रभाव पड़ता है ।

13.2.1 स्थिति को प्रभावित करने वाले कारक

अनुकूल परिस्थिति तथा स्थिति के अभाव में अधिवास का विकास अवरूद्ध हो जाता है । अधिवासों के स्थल और स्थिति में परस्पर इतनी समानता और सम्बद्धता पाई जाती है कि कभी -कभी दोनों को समान अर्थ में भी प्रयोग किया जाता है । उत्तम स्थिति के लिए निम्नांकित कारकों पर विशेष ध्यान दिया जाता है -

1. प्राकृतिक कारक - (i) स्थलाकृति (भूमि की बनावट), (ii) जलवायु, (iii) जलापूर्ति, (iv) वनस्पति, (v) मिट्टी उर्वरता, (vi) सूर्य प्रकाश, (vii) पशु इत्यादि ।

2. मानवीय कारक - (i) आर्थिक, (ii) सामाजिक, (iii) सांस्कृतिक, (iv) राजनीतिक, (v) धार्मिक

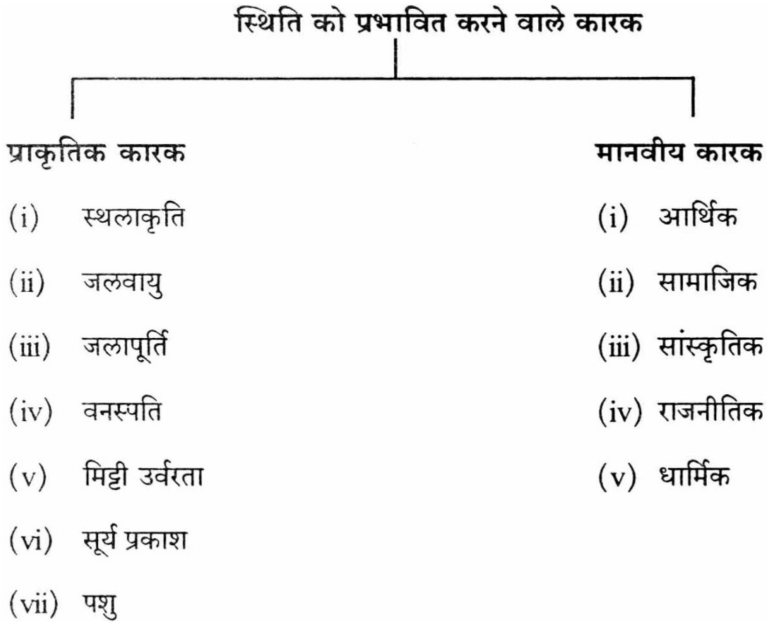

13.2.2 स्थिति के प्रकार

उत्तम स्थिति के लिए उत्तरदायी उपर्युक्त कारकों के अनुसार निम्नांकित स्थितियाँ (sites) अधिवासों के विकास में सहायक होती हैं -

1. मैदानी स्थिति अधिवास (plan site settlements)
2. पर्वतीय स्थिति अधिवास (Montane site settlements)
   (i) अंत : पर्वतीय (inter montane)
   (ii) गिरिपद (piedmont)
3. पहाड़ी स्थिति अधिवास (Plateau site settlements)
4. जल -स्रोत स्थिति अधिवास (Water source site settlements)
   (i) सागर तटीय (Sea Coast)
   (ii) नदी तटीय (River bank)
   (iii) झील तटीय (lake sites)
   (iv) नहर तटीय (Canal bank)
5. मार्ग संगम स्थिति (Nodal settlements)
   (i) यातायात मार्गो, सड़क तथा रेल जंक्शन
   (ii) नदियों के संगम -स्थल स्थिति
6. वन -स्थलीय स्थिति (Forest site settlements)
7. दलदली क्षेत्रों के शुष्क भाग स्थिति (Dry point settlements)

13.3 ग्रामीण अधिवासों के आकार (Forms of Rural Settlements)

ग्रामीण अधिवासों की उल्लेखनीय विशेषताएँ उनके आकार के रूप में प्रकट होती हैं । अत : भूगोलवेत्ता के लिए अधिवासों के आकारकीय अध्ययन का विशेष महत्व है । सामान्यत : अधिवास सीमा के अन्तर्गत विद्‌यमान सभी भौतिक, कार्यात्मक एवं जनांककीय लक्षण ग्राम आकार के संघटक होते हैं । आकारिकी (morphology) शब्द का शाब्दिक अर्थ आकार (forms) से है । अधिवास भूगोल में प्रकार से तात्पर्य सामान्यत : गांव की आंतीरक संरचना तथा उसके बाह्य आकार से है । अध्ययन की सुविधा के लिए ग्राम्य आकार को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

1. **भौतिक आकार (Physical Forms) :** जिसके अन्तर्गत ग्राम्य विन्यास (village layout) और उसके बाह्य स्वरूप(outer shape) को समाहित किया जाता है ।
2. **कार्यात्मक आकार (Functional Forms) :** इसमें ग्राम की सीमा के अन्तर्गत स्थित ग्राम के विभिन्न भागों में सम्पन्न होने वाले कार्यो तथा भू -उपयोग (Land use) को सम्मिलित किया जाता है ।
3. **जनांककीय आकार (Damographic Forms) :** इसमें गाँव में निवास करने वाली जनसंख्या के विविध जनांककीय पक्षों को समाहित किया जाता है । जनांककीय संरचना भी ग्रामीण आकार का एक महत्वपूर्ण पक्ष है ।

13.3.1 भौतिक आकार

भौतिक आकार का अभिप्राय गाँवों की ठोस रचना या निर्मित क्षेत्र से है जो घरों और गलियों के संग्रहण या विन्यास से उत्पन्न होते हैं । इसे प्रकट करने वाले तथ्य सर्वाधिक स्पष्ट होते हैं और दूर से ही दिखाई पड़ते हैं । मार्ग, गलियाँ, घर आदि भौतिक आकार के संघटक होते हैं । गाँवों में गलियों तथा मार्गो के सहारे घर बनाए जाते हैं । अत : गलियों की स्थिति तथा आकृति के अनुसार गांवों की आंतीरक संरचना तथा बाहरी स्वरूप का निर्धारण होता है । गाँवों के भौतिक आकार के निर्धारण में स्थानीय स्थलाकृति के साथ सामाजिक, आर्थिक एवं ऐतिहासिक तथ्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है । आकृतियों के अनुसार गाँवों की प्रमुख भौतिक आकारिकी या प्रकार निम्नलिखित प्रकार के होते हैं -

1. **आयताकार या वर्गाकार (Rectangular or square Forms) :** इस प्रकार के ग्रामीण आकार विश्व के अनेक भागों में मिलते हैं किन्तु इनकी सर्वाधिक आवृत्ति समतल मैदानी भागों में पाई जाती है । अधिवासों की लम्बाई तथा चौड़ाई बराबर होने पर आकृति वर्गाकार बन जाती है किन्तु जब किसी एक ही दिशा में विस्तार से लम्बाई अपेक्षाकृत अधिक हो जाती है तब इसका आकार आयताकार हो जाता है । इन दोनों दशाओं में गलियाँ प्राय: सीधी होती हैं । उत्तर भारत, पूर्वी चीन, रूस आदि देशों के मैदानी भागों में इस प्रकार के अधिवास अधिक पाए जाते हैं ।
2. **रेखीय आकार (Linear Forms) :** जब किसी ग्रामीण अधिवास का विकास सड़क, नदी, नहर आदि के सहारे पंक्तिबद्ध रूप में होता है, उसका आकार रेखीय हो जाता है । ऐसे

अधिवासों की उत्पत्ति प्राय : किसी प्राकृतिक अवरोध (जैसे - संकीर्ण घाटी में नदियों के तटबन्धों पर या कटक के सहारे) अथवा सड़क, नहर आदि के सहारे होती है । ऐसे आकार के अधिवासों के घरों के द्वार (gate) मार्ग की ओर होते हैं । यदि सड़क के दोनों ओर घर बने होते हैं तो दोनों पंक्तियों के घरों के प्रवेश द्वार आमने-सामने स्थित होते हैं । भारत, चीन, जापान, बांग्लादेश आदि देशों में रेखीय आकार वाले अधिवासों की संख्या अधिक है । ब्रह्मपुत्र, हवांग्हो आदि नदियों के तटबंधों पर बाढ़ से सुरक्षा के कारण पंक्तिनुमा बस्तियाँ बसी हुई हैं । ग्रेट ब्रिटेन में गलियों के सहारे पक्तिनुमा बसी ग्रामीण बस्तियों गली ग्राम (street village) कहते हैं ।

3. **शतरंजी आकार (Chessboard Forms) :** समतल मैदानी भागों में ऐसे ग्रामीण आकार देखे जा सकते हैं । इसमें समानान्तर गलियों को अन्य समानांतर गलियाँ लम्बवत् एक दूसरे को काटती हैं जिसमें सम्पूर्ण गाँव का आवासी क्षेत्र वर्गाकार भूखण्डों में विभाजित हो जाता है और प्रत्येक भूखण्ड के चारों ओर गलियाँ पाई जाती हैं जिनके किनारे -किनारे घर बने होते हैं । नियोजित ढंग से मैदानी भागों में बसाए गए गाँव इसी आकार के होते हैं ।
4. **वृत्ताकार आकृति (Circular Forms) :** जब किसी गोलाकृति सार्वजनिक स्थल, झील, तालाब आदि के किनारे -किनारे घर बनाए जाते हैं तो गलियों का आकार भी वृत्ताकार या अण्डाकार (Oval shape) बन जाता है । ऐसे गाँव का विकास मुख्यत : दो प्रकार से होता है - (i) जब किसी सार्वजनिक भवन, जमींदार या मुखिया के भवन, धार्मिक स्थल आदि के चारों ओर बसी बस्ती नाभिकीय (inducted) नाम से भी पुकारी जाती है, (ii) जलाशय के चारों ओर से बने घरों की बस्ती का आकार निहारिका (nebular) के समान बन जाता है । ऐसे अधिवास एशिया और यूरोप के अनेक भागे। में पाए जाते हैं ।
5. **त्रिकोणीय आकार (Triangular Forms):** जब किसी स्थलीय अथवा जलीय खण्ड के कारण सड़क के एक ही ओर बस्ती का विस्तार होता है तथा उस सड़क में मिलने वाली लम्बवत् सड़क के किनारे भी घर बन जाते हैं और इन दोनों बसाव क्षेत्रों के मध्य की भूमि पर भी घर बन जाते हैं तब इस विशिष्ट बस्ती का आकार लगभग त्रिभुजाकार हो जाता है।
6. **अरीय आकार (Radial Forms) :** यह ग्राम्याकृति का एक विशेष प्रकार है जिसमें गाँव के केन्द्र से विभिन्न दिशाओं में मार्ग जाते हैं । अधिवास का मध्यभाग गांठ के रूप में सघन बसा हुआ होता है और उसके बाहर अरीय (त्रिज्या) मार्गो के सहारे कुछ दूरी तक घर बनाए जाते हैं । इस प्रकार गाँव का आकार पहिए की तीलियों के समान हो जाता है ।
7. **अन्य आकार (Other Forms) :** (i) जहाँ किसी मुख्य सड़क में किसी एक ओर से कोई अन्य मार्ग आकर मिलता है किन्तु उसे काटता (Cross) नहीं है, ऐसी तिमुहनी पर मार्ग के किनारे-किनारे बसाव 1 आकृति ग्रहण कर लेता है । (ii) जब दो मार्गो के संगम पर किसी अवरोध के कारण दोनों मार्गो के केवल एक ही ओर किनारे -किनारे घर बन जाते हैं तब गांव का आकार अंग्रेजी वर्णमाला के' L जैसा बन जाता है (iii) किसी अंतरीप के छोर अथवा नदी, झील आदि के मोड़ पर बसे हुए अधिवास का आकार तीर (arrow) की भांति

बन जाता है । (iv) नदियों के डेल्टाई भूमि, पर्वत पदीय प्रदेश में निर्मित जलोढ़ पंख पर बसी बस्तियों का आकार पंखे की भांति दिखाई देता है । अत : इसे पंखा आकृति वाला अधिवास कहा जाता है ।

13.3.2 कार्यात्मक आकार (Functional Form)

प्रत्येक अधिवास के कार्यो में काफी विविधता पाई जाती है । फलस्वरूप इन्हीं विविधता के आधार पर अधिवासों के कार्यात्मक क्षेत्रों का निर्धारण किया जाता है । गाँवों का कार्यात्मक आकार मुख्यत : ग्रामीण भू-उपयोग से सम्बन्धित होता है । इसलिए इसे भू-उपयोग आकारिकी (Landuse morphology) भी कहा जाता है । गाँवों में अधिकांश जनसंख्या कृषि कार्यो में संलग्र रहती है और अन्य क्रियाएँ प्राय: कृषि की पूरक होती हैं । अत : गाँव के कार्यात्मक आकार को निम्नलिखित कार्यात्मक पेटियों में विभक्त कर सकते हैं -

1. **निर्मित क्षेत्र (Builtup Area) :** यह अधिवास का बसा हुआ क्षेत्र होता है जिसके बाहर किसानों के खलिहान, बाग-बगीचे और कृषि भूमि पाई जाती है । बसे हुए भाग में भूस्वामी, किसान, खेतीहर मजदूर तथा विभिन्न सेवी जातियों के घर अलग-अलग प्रखण्डों में स्थित होते हैं ।
2. **अकृषित भूमि (Uncultivated Land) :** बसाव क्षेत्र के संलग्र प्राय: ऐसी भूमि की मेखला पाई जाती है जिसमें किसानों के खलिहान, कम्पोस्ट खाद के गड्ढे, सार्वजनिक भूमि आदि स्थित रहती है ।
3. **आंतरिक कृषि भूमि (inner Agricultural Land) :** संलग्न कृषि भूमि की यह आंतीरक पेटी होती है जो सामान्यत : दो या अधिक फसलों वाली होती है । इसे ही 'गोयड़' के नाम से पुकारा जाता है । यह भूमि मुख्यत: साग-सब्जी, चारा, फल-फूल आदि की खेती के काम आती है ।
4. **सीमांत कृषि भूमि (Marginal Agricultural Land) :** गाँव से काफी दूर अर्थात् सीमावर्ती भाग में स्थित यह पेटी अपेक्षाकृत कम उत्पादन वाली होती है । इस भूमि पर प्राय : वर्ष में खाद्यान्न की एक या दो फसलें प्राप्त होती हैं ।

13.3.3 सामाजिक आकार (Social Form)

अधिवास के सामाजिक आकार से तात्पर्य गाँव के विभिन्न सामाजिक वर्गो का विभिन्न खण्डों में बसाव से है । कुछ गाँव किसी विशिष्ट सामाजिक वर्गो अथवा जाति के लोगों द्वारा ही बसे हो सकते हैं किन्तु सघन गाँवों में अनेक जाति वर्ग के लोग भी रहते हैं । भारत, चीन, दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों तथा भूमध्य सागरीय देशों के विभिन्न धार्मिक एवं जातीय वर्ग गाँव के विभिन्न मोहल्लों अथवा पुरवों में पाए जाते हैं । यद्यपि ये सामाजिक वर्ग जातीय, व्यवसाय आदि आधार पर बंटे होते हैं किन्तु वे परस्पर सहयोग तथा सहकारिता के आधार पर एक साथ मिल-जुलकर गाँव का आकार बनाते है ।

सामान्यत : प्रत्येक गाँव के आकार में धर्म, वर्ण, जाति, वंश, गौत्र, व्यवसाय आदि प्रमुख होते हैं क्योंकि इन्हीं घटकों के अनुसार बसाव का आकार निर्धारित होता है । समान सामाजिक वर्ग के लोग गाँव के एक निश्चित प्रखण्ड (sector) में साथ-साथ रहते हैं । जमींदार, भूस्वामी तथा सवर्ण जातियों के घर प्राय: गाँव के मध्य भाग में स्थित होते हैं । किसानों तथा सेवी जातियों के घर गाँव की बाह्य पेटी में होते है । खेतीहर जातियाँ गाँव के किनारे खेतों के समीप रहना पसंद करती हैं जबकि सफाई का कार्य करने वाली जातियाँ गाँव के बाहरी भाग या अलग क्षेत्र में बसी होती हैं । अत : स्पष्ट है कि अधिवासों के प्रकार में सामाजिक संरचना अपना महत्वपूर्ण योगदान रखती हैं ।

13.4 ग्रामीण अधिवासों के प्रकार (Types of Rural Settlements)

ग्रामीण क्षेत्रों में घरों की स्थिति, संख्या तथा उनके मध्य पाई जाने वाली दूरी आदि के आधार पर अधिवासों को वर्गीकृत किया जाता है । ग्रामीण अधिवासों के मुख्य प्रकार निम्नांकित हैं -

1. प्रकीर्ण या एकाकी अधिवास (Dispersed or isolated settlement)
2. सघन या अभिकेन्द्रित अधिवास (Compact or nucleated settlement) और
3. अर्द्ध-सघन या अपखण्डित (Semi compact or fragmented Settlement)

13.4.1 प्रकीर्ण या एकाकी अधिवास

यह ग्रामीण अधिवास का लघुत्तम रूप है जिसमें गृहों की संख्या अत्यल्प होती है और कहीं-कहीं पर एकाकी गृह भी अधिवास के रूप में पाए जाते हैं । प्रकीर्ण अधिवास यंत्र-तंत्र बिखरे हुए दिखाई पड़ते हैं । अत: इन्हें बिखरे हुए अधिवास (scattered) भी कहते हैं । एकाकीपन इनकी प्रमुख विशेषताएँ होती हैं । बड़े-बड़े कृषि फार्मों या खेतों पर बनाए गए फार्म हाऊस अथवा वासगृह (home stead) प्रकीर्ण अधिवासों के उत्कृष्ट उदाहरण हैं ।

प्रकीर्ण अधिवास प्राय: विषम जलवायु प्रदेशों, पहाड़ी क्षेत्रों, सघन वनों, घास के मैदानों अनउपजाऊ कृषि क्षेत्रों जैसे उन प्रदेशों में पाए जाते हैं जहाँ किसान किसी दूर गाँव में निवास करने के बनिस्पद अपने खेत पर ही बसना आवश्यक समझता है । इस प्रकार के प्रकीर्ण अधिवास अपेक्षाकृत आधुनिक काल में ही विकसित हुए हैं । रूस के यूराल पर्वतों के पूर्व में कजाकिस्तान, उजबेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान और खिरगिस्तान के घास के मैदानों में पाए जाने वाले अधिवास प्रकीर्ण अधिवासों के उत्तम उदाहरण हैं जो 19वीं शताब्दी के अंत में तथा 20 वी शताब्दी के प्रारम्भ में अस्तित्व में आए । संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा के प्रेयरी प्रदेश, अर्जेन्टाइना के पम्पाज, दक्षिणी अफ्रीका के वेल्डस और आस्ट्रेलिया के डाउन्स में पाए जाने वाले अधिकांश प्रकीर्ण अधिवास पिछले 200 वर्षो में विकसित हुए हैं । राजस्थान के मरूस्थल तथा अर्द्धमरूस्थलीय प्रदेशों, भारत के उत्तरी-पूर्वी वन क्षेत्रों, शिवालिक हिमालय के ऊँचाई वाले भागों में प्रकीर्ण अधिवासों का उदय मध्यकाल में होना प्रारम्भ हो गया था ।

उत्तरी भारत के मैदानी भागों में दो सघन अधिवासों के मध्य इस प्रकार के अधिवास देखे जा सकते हैं । नदियों के दलदली क्षेत्र, खादर अथवा सीमान्त उच्च भूमि पर सामान्यत : सघन

अधिवास के स्थान पर एकाकी फार्म हाऊस दिखाई देते हैं क्योंकि अनउपजाऊ भूमि क्षेत्रों में भरण-पोषण के लिए बड़े आकार के खेतों की आवश्यकता होती हैं (चित्र- 13. 1) ।

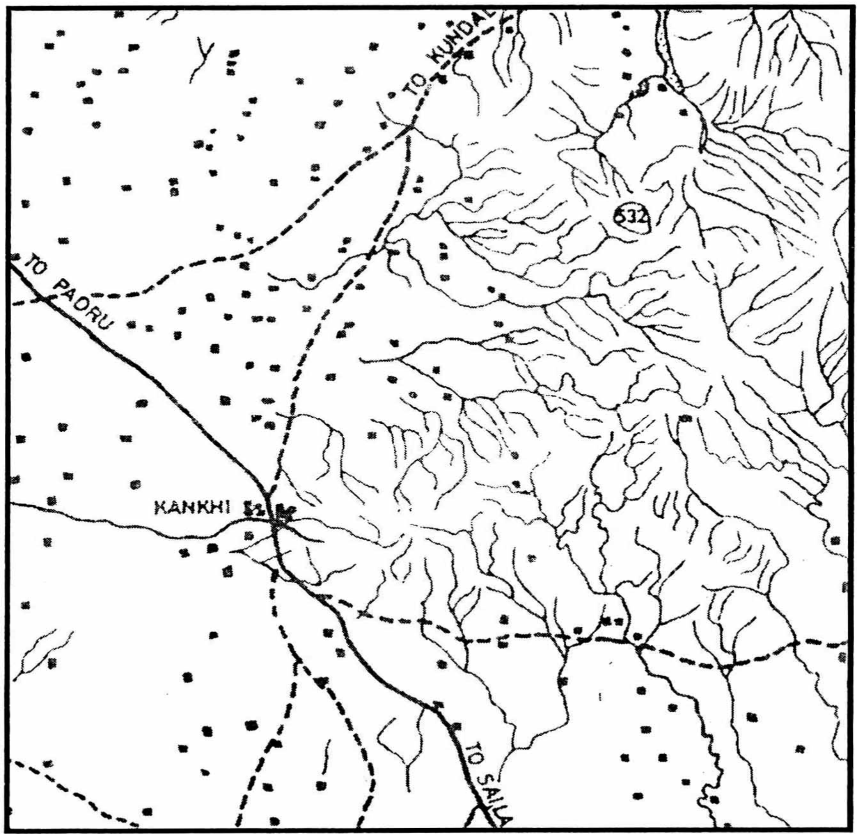

चित्र- 13.1 : प्रकीर्ण अधिवास

13.4.2 सघन अथवा अभिकेन्द्रित अधिवास

सघन ग्रामीण अधिवास अपेक्षाकृत पास -पास स्थित अनेक घरों के समूह होते हैं जिनका क्षेत्रीय आकार प्रकीर्ण अधिवासों से बड़ा होता है । ऐसे अधिवासों में अनेक कृषक परिवार रहते हैं । ये अधिवास कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था के द्योतक होते हैं जो एक जगह समूह में पाए जाते हैं । अधिकांश सघन अधिवास उपजाऊ कछारी मैदानों में पाए जाते हैं । इन उपजाऊ मैदानों में खेतीहर समुदाय स्थायी रूप से बस जाते हैं । आज से लगभग 8000 वर्ष पूर्व, जब मनुष्य ने पौधों और पशुओं को घरेलू बनाना आरम्भ किया था, अस्थाई अधिवासों की शुरूआत हुई ।

सिन्धुगंगा मैदान, ह्वांगहों घाटी, नील नदी घाटी आदि के उपजाऊ कछारी मैदानों में, पूर्व -ऐतिहासिक काल में सघन अधिवासों की स्थापना हुई । ये विश्व के सबसे अधिक घनी आबादी वाले कुछ क्षेत्र हैं । यहाँ के भूदृश्यों पर सघन अथवा अभिकेन्द्रित अधिवासों की प्रधानता देखी जा सकती हैं । भारत में इन अनियोजित अधिवासों का एक प्रमुख लक्षण उच्च एव निम्न जातियों में पृथक्करण (segregation) और विभेदीकरण का होना आम बात है । बाजार एव दुकानें बस्ती के मध्य में स्थित होती हैं । फिरोजपुर और श्रीगंगापुर के नवीन सिंचित नहरी

क्षेत्रों में नियोजित गाँव स्थापित किए गए हैं । इन नये सघन अधिवासों की बनावट आयताकार हैं जिनमें मन्दिर, गुरूद्वारा, मस्जिद और दुकानें खुले स्थान पर पाई जाती हैं ।

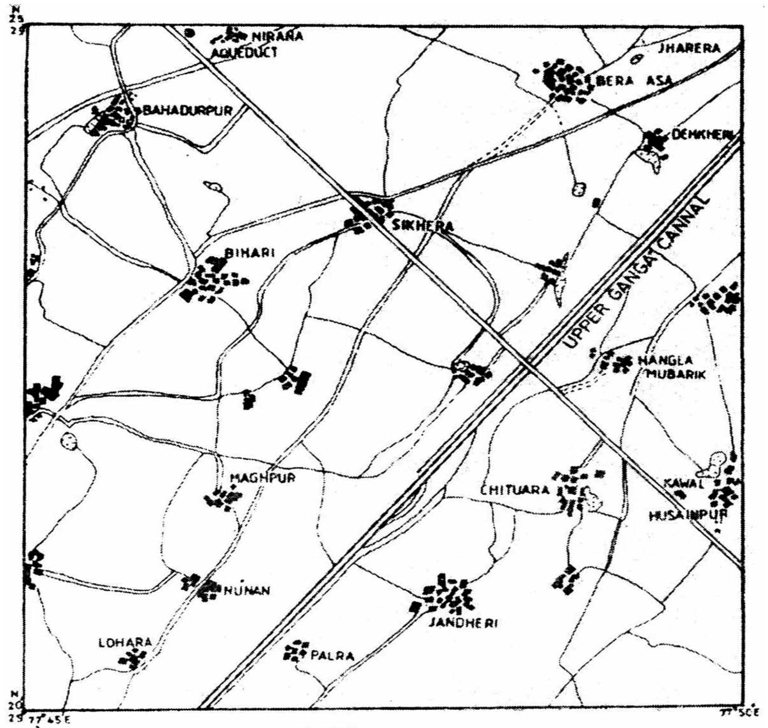

स्रोत : Survey of India, Sheet No. 53 G/15

चित्र - 13.2 : सघन अधिवास

सघन कृषि तथा कृषि की वैज्ञानिक तकनीक ने सघनता बढ़ाने में सहयोग दिया है । अधिवासों का इतिहास यह दर्शाता है कि कृषक समुदाय में जनसंख्या वृद्धि और इसके अनुरूप भोजन की मांग सघन कृषि के विकास का मूल कारण होता है । कम स्थान पर अधिक लोगों को समायोजित करने के लिए ग्रामीण अधिवास सघन हो जाते हैं और जब पर्याप्त स्थल नहीं बचता है तब इनमें से अनेक लोग उपयुक्त स्थान पर अपने आवास बना लेते हैं । इस प्रकार पुराने गाँव की बसावट के समान नए अधिवासों की रचना होने लगती है । ऐसी प्रक्रिया सतलज -गंगा के मैदान में सर्वत्र देखी जा सकती है (चित्र- 13. 2) ।

कृषकों के अतिरिक्त अनेक आखेटक और मछुवाही समुदाय भी सघन अधिवासों में रहते हैं । जैसे आखेटक और मछुवाही अमरीकन रेड-इण्डियन बड़े गाँवों में निवास करते हैं क्योंकि मछली पकड़ने वाली नौकाओं को बनाने, उनके रख-रखाव और संचालन के लिए सघनता की आवश्यकता होती है । ब्रह्मपुत्र तथा हुगली नदियों के सहारे अनेक मछुवाहो बड़े गांव स्थित हैं । नागालैण्ड की पहाड़ियों और कटकों पर (Ridges) स्थित सघन अधिवास प्राचीन समय में नरमुण्डों के आखेट का परिणाम हैं । अत: प्रत्येक निवासियों की सुरक्षा के लिए सघन बसाव आवश्यक था । इसके अतिरिक्त अनेक प्राकृतिक आपदाओं तथा बाहरी आक्रमणों से रक्षा के दृष्टिकोण से मानव समूह में रहना अधिक आवश्यक समझते थे जिसके कारण सघन अधिवासों का उद्भव एवं विकास हुआ ।

गृहों की सघनता तथा समूहन की प्रकृति के आधार पर सघन अधिवासों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है

1. **सघन या पुंजित अधिवास :** यह एकल केन्द्रीय (uninuclear) सघन बसा हुआ ग्रामीण अधिवास होता है जिसमें घर एक दूसरे से सटे हुए होते हैं । पुंजित गाँव के बाहर खेत, खलिहान, चारागाह, जलाशय आदि स्थित होते हैं किन्तु घरों के बीच में प्राय : खाली स्थान छोड़ा जाता है । उत्तर भारत के विशाल मैदान में ऐसे गांवों की बहुलता पाई जाती है ।
2. **संयुक्त गाँव :** जब किसी गाँव के बाहर, राजस्व सीमा के भीतर कुछ छोटे-छोटे पुरवे (hamlets) विकसित होते हैं जो मुख्य गाँव के ही अंग माने जाते हैं, तब ऐसे अधिवासों को संयुक्त गांव की संज्ञा दी जाती है । गंगा घाटी में ऐसे अधिवास बड़ी संख्या में देखे जा सकते है ।
3. **गाँव (villages) :** गाँव, नगले या पुरवे (hamlets) का बड़ा रूप होते हैं, जिनमें मुख्यत: कृषक वर्ग रहते हैं । इसके अतिरिक्त कृषि कार्य से सम्बन्धित लोग जैसे लुहार, बढ़ई, नाई, जुलाहे, मोची आदि रहते हैं; जो किसानों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं । गाँव में घरों की संख्या अधिक होती है ।

13.4.3 अर्द्धसघन अथवा अपखण्डित अधिवास

जब एक राजस्व गाँव के अन्तर्गत घर एक दूसरे से अलग स्थित होते हैं और सभी मिलकर एक अधिवास का स्वरूप प्रदान करते हैं तब ऐसे गाँव को अर्द्ध-सघन या अपखण्डित गाँव कहा जाता है यह गाँव प्रकीर्ण अधिवास और सघन अधिवास की संक्रमण स्थिति (transitional positions) को प्रकट करता है । ऐसे गाँव न तो पूर्णत: एकाकी होते हैं और न पूर्णत : सघन ही कहे जा सकते हैं । विश्व की अधिकतर ऐसी बस्तियाँ अनउपजाऊ कृषि भूमि, बाढ़ग्रस्त, डेल्टाई आदि क्षेत्रों में पाई जाती हैं । ऐसे घरों के बीच थोड़ा - थोड़ा अन्तराल पाया जाता है । राजस्थान में अरावली पर्वत के पूर्व, मध्यप्रदेश के पहाड़ी भाग, शिवालिक पहाड़ी क्षेत्र और ब्रह्मपुत्र घाटी में अपखण्डित अधिवास देखे जा सकते हैं । गंगा -नदी के खादर क्षेत्र में भी अर्द्धसघन अधिवास देखे जा सकते हैं । (चित्र - 13. 3) ।

सारांश में ग्रामीण अधिवासों के प्रकार किसी बस्ती में घरों की संख्या और घरों के मध्य पारस्परिक दूरी के आधार पर निश्चित किए जाते हैं । अस्तु अलग - अलग बसे हुए एकाकी गृह, झोपड़ी , वासगृह, फार्म हाऊस को प्रकीर्ण अधिवास कहते हैं । जिस बस्ती में घर पास - पास सटे हुए होते हैं वे सघन प्रकार के अधिवास कहलाते हैं चाहे वह दो -चार घरों का छोटा पुरवा हो या गाँव हो । अलग - अलग परन्तु निकट स्थित घरों की बस्ती अपखण्डित प्रकार की होती हैं ।

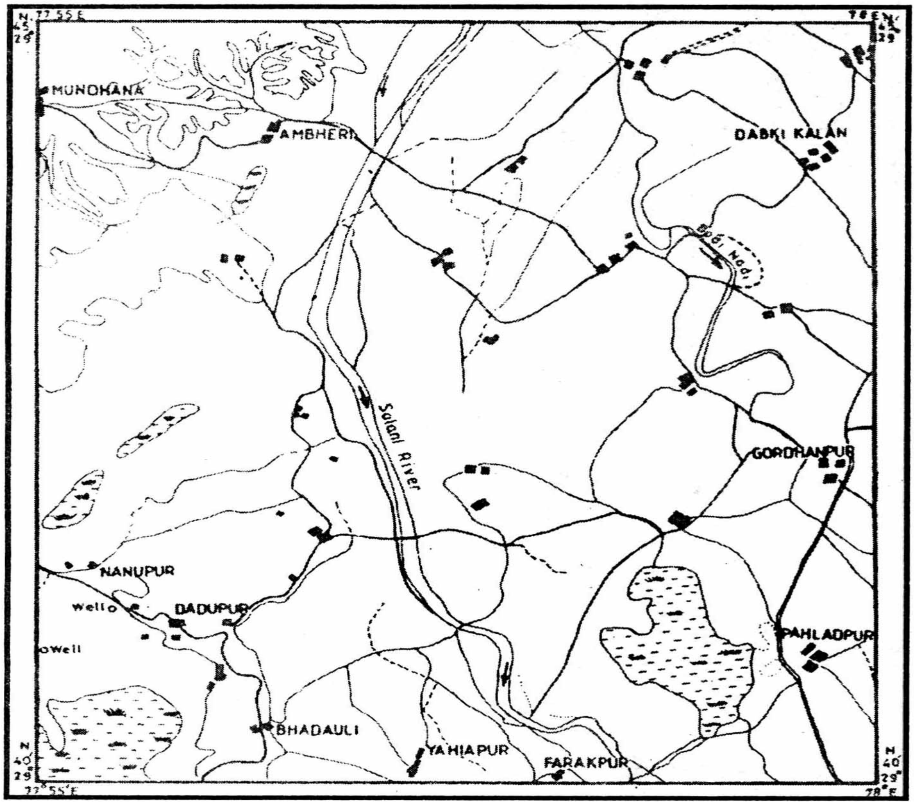

चित्र - 13.3 : अर्द्ध - सघन अधिवास (गंगा नदी का खादर क्षेत्र)

13.5 ग्रामीण अधिवासों के प्रतिरूप (Pattern of rural settlements)

अधिवास के प्रतिरूपों को एक घर से दूसरे घर के बीच के सम्बन्ध द्‌वारा परिभाषित किया जाता रहा है । वास्तव में अधिवासों के प्रतिरूप का आशय गाँवों के बाह्य स्वरूप से लगाया जाता है जो गांवों के निर्मित क्षेत्र (builtup area) की आकृति को व्यक्त करता है । गाँवों की बाह्य आकृति की तुलना प्राय: ज्यामितीय आकृतियों से की जाती है और तदनुसार गाँवों के प्रतिरूप निर्धारित किए जाते हैं । ग्रामीण बस्तियों के उच्च प्रतिरूप निम्नांकित पाए जाते हैं (संदर्भ चित्र- 13. 4)

1. **आयताकार या वर्गाकार प्रतिरूप (Rectangular or square pattern) :** विश्व की 60 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या ग्रामीण अधिवासों में निवास करती है और इनमें से अधिकांश लोग आयताकार प्रतिरूप के अधिवासों में निवास करते हैं । आयताकार अधिवास मुख्यत: उपजाऊ कछारी मैदानों तथा अन्तपर्वतीय चौड़ी घाटियों में देखे जा सकते हैं । इन अधिवासों के मार्ग प्राय: सीधे होते हैं और एक दूसरे से समकोण पर मिलते हैं । सतलज-गंगा के ग्रामीण अधिवास विशेषत: जो सडकों के चौराहों पर विकसित हुए हैं, इस श्रेणी में आते हैं । जर्मनी, इजराइल और फ्रांस के सुनियोजित ग्रामीण अधिवासों को भी इसी श्रेणी

में रखा जाता हैं । गंगा-घाघरा दो आब में अधिकांश ग्रामीण अधिवासों का प्रतिरूप आयताकार अथवा वर्गाकार है ।

2. **रेखीय प्रतिरूप (linear pattern) :** इस प्रकार के ग्रामीण प्रतिरूप का विकास किसी प्रमुख सड़क, नहर या तटबंध के सहारे लम्बाई में दूर तक होता है । इसके अन्तर्गत सड़क के एक किनारे या दोनों किनारों पर पंक्तिबद्ध घर बने होते हैं जिससे अधिवास की आकृति सीधी रेखा के समान दिखाई पड़ती है । पर्वतीय क्षेत्रों में घाटी के किनारे, बाढ़ के ऊपरी स्थल पर और समुद्री तट के सहारे भी रेखीय अधिवास विकसित होते हैं । घाघरा, सही, कोसी, सोन आदि नदियों के बाढ़ से सुरक्षित प्राकृतिक तटबंधों पर पंक्तिबद्ध घर वाले गाँव पाए जाते हैं जिनसे रेखीय प्रतिरूप का निर्माण होता है (चित्र- 13. 4) ।

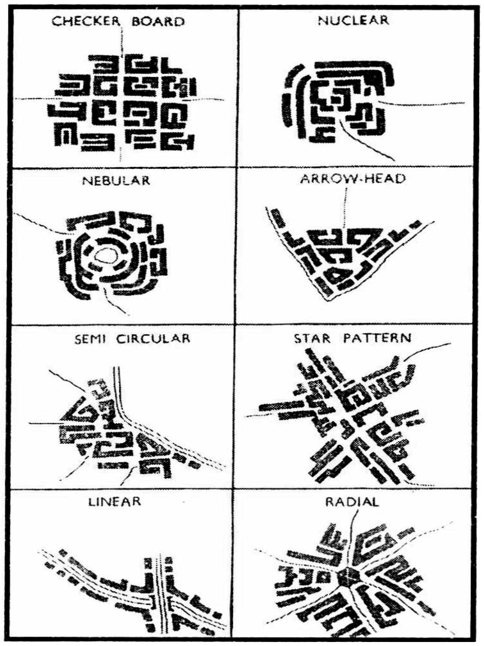

चित्र 13.4 : ग्रामीण बस्तियों के मुख्य प्रतिरूप

3. **वृत्ताकार और अर्द्धवृत्ताकार प्रतिरूप (Circular and semi circular pattern) :** किसी झील, तालाब अथवा सार्वजनिक स्थल के चारों और बसी बस्तियों की आकृति वृत्ताकार प्रतिरूप ग्रहण कर लेती है । मछुआ और नमक उत्पादन करने वाले अपने अधिवास क्रमश : सागर तटों और खारे पानी की झीलों के सहारे विकसित करते हैं जो वृत्ताकार अथवा अर्द्धवृत्ताकार आकृति प्राप्त कर लेते हैं । क्रेटर झीलों के निकट तथा गोखुर (Oxbo lakes) झीलों तटबन्धों पर इस प्रकार के प्रतिरूप देखे जा सकते हैं । वृत्ताकार अधिवासों के निवासियों का मुख्य व्यवसाय अथवा आजीविका जल से सम्बन्धित रहती है । वे या तो मछली पकड़ने के कार्य के द्वारा अथवा नौका विहार करने वालों को अपनी सेवा प्रदान कर आजीविका अर्जित करते हैं । उत्तर प्रदेश की हिन्दन नदी के किनारे बसी ग्रामीण बस्तियाँ अर्द्धवृत्ताकार प्रतिरूप का उत्तम उदाहरण है । नदियों के दो आबों के उच्चवर्ती बांगर क्षेत्रों में वृत्ताकार झील या तालाब के किसी एक ओर बसे गाँव की आकृति भी अर्द्धवृत्ताकार

दिखाई पड़ती है । इस प्रकार के अधिकांश ग्रामीण अधिवास नदियों के विसर्पो के सहारे बसे हुए हैं ।

4. **तीर प्रतिरूप (Arrow pattern) :** ऐसे प्रतिरूपी अधिवास किसी अन्तरीप के सिरे पर अथवा नदी के नुकीले मोड़ पर और जहाँ कई पक्की -कच्ची सड़कें आकर मिलती हैं, देखे जा सकते हैं । आगे के भाग में घरों की संख्या कम किन्तु पृष्ट भाग में इनकी संख्या बढ़ती जाती है । उदाहरणार्थ (i) दक्षिणी भारत के सिरे पर कन्याकुमारी गांव, (ii) उड़ीसा की चिलका झील प्रदेश में साना नैंसी गाँव, (iii) खम्भात की खाड़ी में गोध, कुंडा, गोपनाथ इत्यादि गाँव, (iv) मध्य प्रदेश की सोनार नदी के मोड़ पर असलाना तथा बामनेर नदी पर सिंहपुर गाँव, (v) बिहार में बूढ़ी गंडक नदी के मोड़ों पर मंझोल, सिवारी, आहो तथा (vi) केरल में मुत्तमतुरा आदि गाँव ।
5. **तारा-समान प्रतिरूप (star-like pattern) :** इस प्रकार के प्रतिरूप प्राय : उन स्थानों पर विकसित होते हैं जहाँ कई कच्ची-पक्की सड़कें आकर मिलती हैं । इस आकार के अधिवास में सभी दिशाओं में सडकों के सहारे घरों का निर्माण किया होता है । प्रारम्भ में तो घर त्रिज्या प्रतिरूप लिए होते हैं किन्तु बाद में उनसे बाहर की ओर जाने वाले मार्गो पर घर बसते जाते हैं और तारा प्रतिरूप ग्रहण कर लेते हैं । इस प्रकार के अधिवास मुख्य सडकों के सहारे फैलाव लिए हुए होते हैं । उत्तर -पश्चिमी यूरोप के देहात, यांग्ट्सीक्यांग के मैदान, पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त, मध्य गंगा मैदान के बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों में तथा उत्तर प्रदेश के तराई प्रदेश में ऐसे प्रतिरूपी अधिवास देखे जा सकते हैं ।
6. **त्रिकोणीय प्रतिरूप (Triangular pattern) :** जब कोई सड़क अथवा नहर दूसरी सड़क या नहर से आकर मिलती है किन्तु उसको पार (cross) नहीं कर पाती है, ऐसे स्थानों पर त्रिकोणीय प्रतिरूप विकसित हो जाते हैं । ऐसे गाँवों को नहर या सड़क के पार जाकर बसने के बजाय एक ही ओर फैलते रहने की सुविधा रहती है । नदियों के संगम स्थल पर भी घरों का पार्श्विक फैलाव, नदियों द्वारा नियंत्रित कर दिया जाता है, परिणामस्वरूप अधिवास एक त्रिकोणीय आकृति प्राप्त कर लेता है । पंजाब-हरियाणा में ऐसी बस्तियां पाई जाती हैं ।
7. **नाभकीय प्रतिरूप (Nebular pattern) :** जिस गाँव के मध्य में कोई सार्वजनिक स्थल अथवा मुखिया का घर हो तथा चारों ओर से मार्ग वृताकार रुप में बाहर की ओर जाते हों, इन मार्गो के दोनों ओर ग्रामीण बस्तियाँ विकसित हो जाती हैं । ऐसे आकृति को नाभकीय प्रतिरूप कहते हैं । गंगा-यमुना नदियों द्वारा निर्मित मैदानी भागों में गाँवों के ऐसे प्रतिरूप देखे जा सकते हैं ।
8. **चौकपट्टी प्रतिरूप (checker board pattern):** अधिकांश समतल मैदानी भागों में विभिन्न मार्ग एक दूसरे को समकोण पर काटते हैं जहाँ छोटी-छोटी चौकोर आकृति की बस्तियों का विकास होता रहता है । ऐसे अधिवासों के मध्य छोटी-छोटी गलियाँ पाई जाती हैं । यह प्रतिरूप रखने वाले गाँव बड़े आकार ग्रहण कर लेते हैं । उत्तर भारत में बड़ी संख्या में इस प्रतिरूप के गाँव पाए जाते हैं जिनमें से अधिकांश धीरे - धीरे कस्बे बनते जा रहे हैं । गंगा- यमुना के ऊपरी दो-आब में ऐसे अधिवास बड़ी संख्या में स्थित हैं । कर्नाटक

तथा दक्षिणी आम्र प्रदेश में भी ऐसे गाव पाए जाते हैं । उत्तरी चीन में ऐसे अधिवास देखे जा सकते हैं । शतरंजी प्रतिरूपी अधिवास अधिकतर नियोजित ग्रामीण क्षेत्रों में ही पाए जाते हैं ।

9. **अरीय या त्रिज्या प्रतिरूप (Radial pattern):** भारतीय गांवों में ऐसे प्रतिरूप प्रमुख रूप से पाये जाते हैं । ऐसे प्रतिरूपी गांवों में कई दिशाओं से या तो मार्ग आकर मिलते हैं अथवा अन्य गांवों के लिए मार्ग जाते हैं । ऐसे गांवों में गलियां भीतरी भाग में अर्थात केन्द्रीय स्थल में आकर मिलती है । इन गलियों के सहारे घर बनते -बनते केन्द्र से बाहर की ओर बढ़ते जाते हैं । इस केन्द्रीय स्थल में बाजार अथवा मीठे पानी के कुए के कारण अरीय प्रतिरूप का विकास होता है । तमिलनाडू उत्तर प्रदेश के पश्चिमी मैदानी भाग में ऐसे प्रतिरूपी अधिवास विशेष रूप से पाए जाते हैं । मेरठ तथा गाजियाबाद जनपद में निवाड़ी, सिवाल, खुराना, नरसिंहपुर इसी प्रकार के गांवों के उदाहरण हैं । चीन तथा पाकिस्तान में कुल गांवों का एक तिहाई भाग अरीय प्रतिरूपी गांवों का है ।
10. **सीढ़ीनुमा प्रतिरूप (Terrace pattern):** इस प्रतिरूप के अधिवास पर्वतीय ढालों की विशेषता है । यहाँ घरों की पंक्तियाँ सीढ़ीनुमा दिखाई देती हैं क्योंकि घर कई स्तरों (Tiers) में बने होते है । हिमालय पर्वतीय ढालों, नदियों की घाटियों, पर्वतकूटों पर तथा ढाल के अर्द्ध- भागों पर ऐसे अधिवास बसे हैं । इस प्रतिरूप को समोच्च रेखीय प्रतिरूप (Contour pattern) भी कहा जाता है क्योंकि ये समोच्च रेखा का अनुसरण करते हैं । बस्ती इस सीढीनुमा भूमि के ऊपरी भाग पर बस जाती है तथा सीढीदार खेत के सामानान्तर फैल जाती है । बस्ती की आकृति घाटी की ओर उन्नतोदर (convex) प्रकार की होती है तथा जब किसी उभार (concave) पर बनी होती है, तब इसकी आकृति नतोदर प्रकार की होती है । चित्र- 13. 5 हिमालय पर्वतीय ढालों पर बसे अधिवास के सीढ़ीनुमा प्रतिरूप को स्पष्ट करता है ।

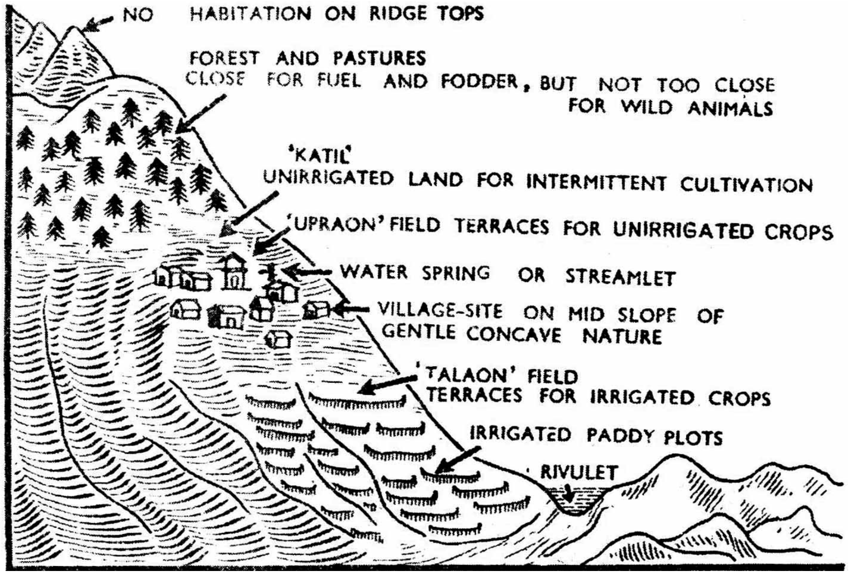

चित्र - 13.5 : हिमालय पर्वतीय ढालों पर बसे अधिवास के सीढ़ीनुमा प्रतिरूप

11. **मालानुमा प्रतिरूप (string pattern) :** जब किसी बाढ़ के मैदान या नहर के किनारे - किनारे काफी स्त्री तक लम्बाई में बस्ती बस जाती हैं तो वह मालानुमा प्रतिरूप ग्रहण कर लेती हैं । वास्तव में ऐसी बस्तियां लम्बी तथा पंक्तिनुमा है, जो नहर, नदी या सड़क के किनारे - किनारे एक रेखा में बस जाती है । आन्ध्र प्रदेश के नहरी सिंचित क्षेत्र में ऐसे गांव विशेष रूप से पाये जाते हैं । यहॉ रन्ध्रदार शुष्क भूमि होती है अत : लोग नहर के सामने ही बसना पसन्द करते हैं । बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों, नदियों के ऊँचे किनारों पर भी लम्बी पंक्तिनुमा बस्तियां बस जाती हैं । बिहार के सहरसा और पूर्णिया जिलों के बाढ़ - प्रभावित नदीतटों पर ऐसी बस्तियां पाई जाती हैं । दक्षिण पश्चिम बंगाल, केरल और पश्चिमी तटीय मैदान के पुराने समुद्री किनारों (beaches) तथा डेल्टाई भाग में नदियों की शाखाओं के किनारे भू- भागों पर मालानुमा प्रतिरूप वाली बस्तियां मिलती हैं ।

13.6 भारत में गृह एवं उनके प्रकार (House and House Type of India)

गृहों का एकत्रिकरण अधिवास की उत्पत्ति का सूचक है, जो उस प्रदेश की प्रकृति का परिचय देते हैं । इनकी विशेषता वहाँ के लोगों की सांस्कृतिक धरोहर और वातावरण से सम्बन्धित होती है । ऐसा इसलिए कहा जाता है कि ग्रामीण गृह साधारण संरचना वाले होते हैं र जो किसानों के परिवारों के रहने, औजार एवं अनाज रखने तथा पशुओं को रखने की सुविधा प्रदान करते हैं । गृह सांस्कृतिक वातावरण का सजीव अंग है । यह वातावरण व मानव के बीच विविध सम्बन्धों का प्रतीक है । भारतीय ग्रामीण अधिवासों के गृह स्थानीय वातावरण की झांकी प्रस्तुत करते है । कृषकों की आवश्यकताएँ सीमित होती है । धनाभाव भी होता है । अत : वे स्थानीय गृह निर्माण सामग्री से गृह बना लेते हैं । किन्तु गृह निर्माण में केवल स्थानीय निर्माण सामग्री ही पर्याप्त नहीं होती वरन् भौतिक एवं सांस्कृतिक घटक भी गृह प्रकार पर अपना प्रभाव डालते हैं । अत : गृह एवं उनके प्रकार को निम्नांकित घटक नियन्त्रित करते हैं जैसे - (i) भौतिक घटक (भूमि की बनावट तथा ढाल की समाकृति, जलवायु, तापमान, वर्षा की मात्रा, हिमपात, पवनों की दिशा, सूर्य प्रकाश, जल प्राप्ति की दशा आदि), (ii) आर्थिक घटक, (iii) सामाजिक प्रथाऐं, परम्पराऐं तथा समाज के नियम, (iv) संस्कृति एवं धार्मिक विश्वास, (v) प्रशासन के नियम, (vi) गृह निर्माण सामग्री एव उनकी उपलब्धता, (vii) पार्श्वीय शक्तियाँ (lateral forces) (viii) अपक्षरण (weathering) इत्यादि ।

गृह निर्माण सामग्री एवं उनका प्रभाव (Effect of building materials on the houses): गृह निर्माण कार्य में अनेक प्रकार की सामग्रियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं । इनका प्रयोग उनकी उपलब्धि पर निर्भर करता है । कुछ प्रमुख सामग्रियाँ इस प्रकार हैं जैसे- मिट्टी, घास एव लकड़ी, पत्थर, सीमेन्ट, लोहा आदि । बहुधा लोग उन्हीं पदार्थो से गृह बनाते हैं जो स्थानीय भौतिक वातावरण उन्हें प्रदान कर देता है । जिन क्षेत्रों में लकड़ी का बाहुल्य है, वहाँ लकड़ी के घर बनाये जाते हैं जैसे भूमध्य- रेखीय प्रदेश, भारत के तटवर्ती प्रदेश पर्वतीय प्रदेश । जहाँ पत्थर उपलब्ध हैं, वहाँ पत्थरों को लोकप्रियता प्राप्त है, जैसे मध्य व पश्चिम भारत में इसका प्रयोग

काफी समय से होता आ रहा है । मिट्टी प्राप्ति वाले क्षेत्रों में कच्ची मिट्टी तथा मिट्टी से बनी ईंटों को पकाकर काम में लाया जाता है । भारत के विशाल मैदान में ऐसे गृहों का बाहुल्य है । एस्किमों लोग किसी भी उपरोक्त पदार्थ के अभाव में बर्फ व सील की चर्बी का प्रयोग अपने गृह बनाने में करते हैं । चरवाहक जातियाँ अपने गृह पशुओं की खाल द्वारा बनाते हैं । खिरगीज व बद्दू लोगों के तम्बू इस बात के प्रमाण हैं ।

पर्वतीय व पठारी क्षेत्रों में गृहों को बनाने में पत्थर का प्रयोग किया जाता है । इन क्षेत्रों में पत्थर की सहज उपलब्धता एव इनके मज़बूती के गुण के कारण इनका प्रयोग सर्वाधिक पाया जाता है । भारत में पत्थरों का प्रयोग हिमाचल प्रदेश, दक्षिणी उत्तर प्रदेश, यू पी. हिमालय, राजस्थान, मध्यप्रदेश व महाराष्ट्र, विन्ध्याचल, सतपुड़ा एवं पश्चिमी घाट पर पाया जाता है । मध्य हिमालय में गृहों की छतों पर स्लेट पत्थर का प्रयोग किया जाता है । राजस्थान, मध्यप्रदेश व पश्चिमी उत्तर प्रदेश की इमारतों में लाल पत्थर का प्रयोग बहुत होता है । पत्थरों से बने गृह में वास्तुशिल्प कला अपनी चरम सीमा पर होती है ।

शुष्क, अर्द्धशुष्क जलवायु वाले मैदानी भागों में मिट्टी का सर्वाधिक प्रयोग होता है । इसलिये पश्चिमी भारत से लेकर नील नदी घाटी तक फैले क्षेत्र में मिट्टी के गृहों की ब्रून्स विस्तृत पेटी पाई जाती है । भारत के विशाल मैदान में कच्ची मिट्टी व मिट्टी की पक्की ईंटों का प्रयोग बड़े पैमाने पर किया जाता है । शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में कम वर्षा होने के कारण पानी से इटईं विघटित नही होती है । मिट्टी से बने गृह ग्रीष्म में ठण्डे तथा शीत ऋतु में गर्म रहते हैं । अत : इन प्रदेशों के लिए यह आदर्श सिद्ध होते हैं । इन क्षेत्रों में लकड़ी तथा पत्थर का अभाव होने के कारण मिट्टी का प्रयोग अधिक किया जाता है । मिट्टी तथा ईंटें, बनाने के सस्ते पदार्थ हैं । अत: इनका प्रयोग विश्वव्यापक है । भारतीय गांवों में ऐसे गृहों की संख्या सबसे अधिक पाई जाती हैं ।

जिन क्षेत्रों में वर्षा अधिक होती है वहाँ वनस्पति की अधिकता के कारण लकड़ी, टहनी, पत्ते घास -फूँस आदि गृह निर्माण सामग्रियों का प्रयोग अधिक पाया जाता है । भारत में पूर्वांचल, अरूणाचल प्रदेश, तराई, भाभर एव तटवर्ती क्षेत्रों में अधिक वन क्षेत्र एवं वनस्पति होने के कारण गृह निर्माण में इनका योगदान अधिक मिलता है । नगर व कस्बों के समीप तथा सडकों के किनारे स्थित गांवों में ईंट, सीमेन्ट, लोहे का प्रयोग गृह बनाने में किया जाता है ।

13.6.1 गृह प्रकार (Houses types)

ग्रामीण गृहों को उनकी बाह्य एव आंतीरक विशेषता के आधार पर अधोलिखित वर्गो में रखे जा सकते हैं -

1. **आकृति के अनुसार :** इस वर्गीकरण में बाह्य आकृति तथा साथ ही तल आकार (Floor shape) को भी दृष्टिगत रखा जाता है । बाह्य आकृति के अनुसार ग्रामीण ग्रहों के सात मुख्य प्रकार हो सकते हैं - जैसे (i) ढलवां छत वाले गृह जो अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों जैसे - बंगाल, असम, उड़ीसा, केरल, तमिलनाडु के तटीय प्रदेश में पाये जाते हैं, (ii) ढलवां, सपाट तथा मिश्रित छत वाले गृह प्राय : मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों में मिलते हैं । पूर्वी उत्तर प्रदेश

में कानपुर से वाराणसी तक, मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग, आन्ध्र प्रदेश के मध्यवर्ती क्षेत्र में ऐसी आकृति वाले गृह देखे जा सकते हैं, (iii) सपाट छत वाले गृह कम वर्षा वाले क्षेत्रों जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, उत्तरी मध्य प्रदेश में पाए जाते हैं, (iv) ढलवां छत तथा छोटे द्वार वाले गृह हिमाचल प्रदेश की विशेषता है, (v) दोहरी छतों के गृह (double roof houses), (vi)आहते से घिरे गृह(vii) दो दिशाओं से खुले गृह ।

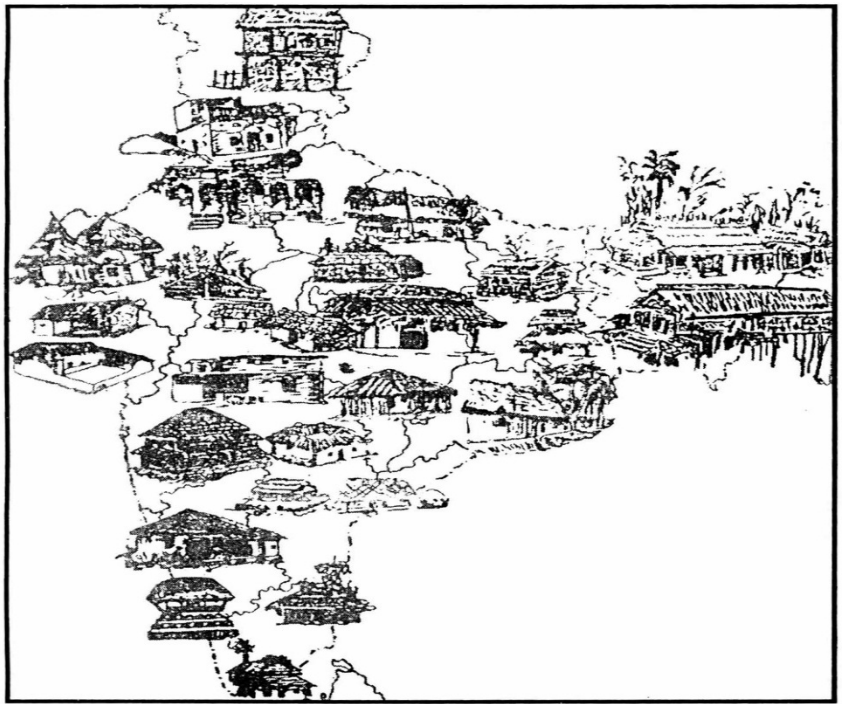

चित्र - 13.6 : भारत में ग्रामीण -गृहों के प्रतिरूप

2. **बाह्य एवं तलाकृति गृह :** इनको आगे तीन वर्गों में रखा गया है - (i) आयताकार गृह प्राय : देश के सभी भागों में देखे जा सकते हैं जो बहुधा 60 से मी. से कम वर्षा वाले भागों में पाए जाते हैं । राजस्थान, मध्य महाराष्ट्र, पूर्वी कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि इस आकार के मुख्य उदाहरण हैं । (ii) ढालू छत वाले आयताकार गृह 60 से मी. से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों की विशेषता है । अधिक वर्षा तथा तेज आधी के कारण गृहों की छतें कुछ झुकी हुई होती हैं और खपरैल तथा घास -फूँस से निर्मित होती हैं । उत्तर प्रदेश के उप-हिमालय, तराई तथा सीमावर्ती भागों में ऐसी आकृति वाले गृह बहुतायत में मिलते हैं । पश्चिमी बंगाल, आसाम, उड़ीसा, केरल के गांवों में भी ऐसे गृह देखे जा सकते हैं । (iii) शंकाकार, त्रिभुजाकार एवं शंकाकार छत वाले गृह तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, बिहार, कर्नाटक के उत्तरी भाग में गोलाकार झोपड़ियों के आकार में पाए जाते हैं । इन गृहों की छतें फूंस के छप्पर से निर्मित शंकाकार होती हैं । इनके प्रवेश द्वार एक मीटर ऊँचा तथा आधा मीटर चौड़ा रखा जाता है ।
3. **आकार के अनुसार :** ग्रामीण ग्रहों को मुख्यत : पाँच वर्गों में रखा जा सकता है - (i) छोटे आश्रय गृह, (ii) झोपड़ियों, (iii) एक मंजिला गृह; (अ) एक कोठरी और छप्पर के गृह, (ब)

एक कोठरीमय बरामदे के गृह, (स) एक कोठा, बरामदा और आँगन वाले गृह, (द) दो कोठरी, एक दालान तथा ऑगन वाले और (व) बैठक, रसोई, कमरा व आँगन वाले गृह, (iv) दो मंजिला गृह, (v) तीन मंजिला गृह ।

4. **निर्माण सामग्री के अनुसार ग्रहों का वर्गीकरण :** ऐसे गृहों में दो प्रमुख तत्वों की प्रधानता रहती हैं - एक, निर्माण सामग्री की उपलब्धता एवं उपयुक्ता तथा दूसरा निवासियों का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक स्तर । निर्माण सामग्री के आधार पर दो वर्गो में रखा जा सकता है : (i) पत्थर, संगमरमर, स्लेट, लाल पत्थर, गोलाश्म पत्थर, मिट्टी, चिकनी मिट्टी, रेत आदि, (ii) खनन एवं कृत्रिम सामग्री अर्थात् लोहा, चूना पत्थर, जिन्क व सीमेन्ट चादर, ईंट, कंकरीट, सीमेन्ट, राख आदि ।

ऐसे ग्रहों को आगे छ : वर्गो में बांटा जाता है - (i) छप्पर की बनी झोपड़ी, (ii) घास की झोपड़ी,(iii) बांस तथा लकड़ी से निर्मित गृह, (iv) कच्ची मिट्टी के गृह, (vi) ईंट, पत्थर, सीमेन्ट, लोहे आदि सामग्री से बने गृह, (vii) पहाड़ी क्षेत्रों में लकड़ी तथा स्लेट पत्थर के गृह ।
निम्न गंगा-यमुना दो आब में निर्माण सामग्री के अनुसार गृहों को छ : वर्गो में रखा जाता हैं, (i) कच्ची दीवार एवं कच्चे सपाट छत वाले गृह, (ii) कच्ची दीवार तथा खपरैल के छत वाले गृह, (iii) सपाट कच्ची छतों एवं छप्पर वाले कच्ची दीवारों से बने गृह, (iv) ईंटों से बने पक्के गृह, (v) कच्ची और पक्की दीवार तथा सपाट छत वाले गृह, (vi) कच्ची दीवारों से निर्मित छप्पर वाले गृह ।

अधिवासों का निर्माण जहां एक ओर रिहायशी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है, वहां दूसरी ओर अन्य कार्यो के लिए भी किया जाता है जैसे - कृषि वस्तुओं के संग्रह, पशुशाला, सामुदायिक कार्य आदि के लिए । सामान्यत: गृहों के निम्न प्रकार भी होते हैं जैसे - (i) शुद्ध रिहायशी गृह, (ii) पशुशाला गृह (iii) कृषि उपज तथा यन्त्र रखने हेतु गृह, (iv) कृषि श्रमिकों के छोटे तथा कच्चे गृह, (v) धार्मिक स्थल वाले गृह, (vi) सार्वजनिक भवन जैसे पंचायत घर आदि ।

13.7 भारत में अधिवास एवं उनका प्रादेशिक वितरण (Settlements and their Regional distribution)

भारत जैसे विशाल देश में अधिवासों (गृहों) की संरचना में अनेक प्रादेशिक भिन्नताएँ देखी जा सकती है । ग्रामीण गृह निर्माण में प्रयुक्त सामग्री, प्राकृति एवं वास्तुकला आदि पर भौतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एव सामाजिक घटकों का विशेष प्रभाव रहता है । ग्रामीण अधिवास को इनकी दीवार, छत आदि में प्रयुक्त निर्माण सामग्री के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है । अत : भिन्न -भिन्न प्रदेशों में अधिवासों के निम्नलिखित विभेद देखे जा सकते हैं -

1. **हिमाचल प्रदेश :** यहाँ के अधिवास (गृह) में भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । निर्माण सामग्री स्थानीय होती है, पत्थरों से दीवारें बनाई जाती है किन्तु उन्हें तराशा नहीं जाता है अधिक वर्षा वाले भागों में ढालूदार छपरों का प्रयोग अधिक किया जाता

है किन्तु अब खपरैल तथा टिन की चादरें अधिक लोकप्रिय होती जा रही हैं । जहाँ पत्थर अधिक मिलते हैं वहाँ पत्थरों की छतें बनाई जाती हैं । भाभर प्रदेश में छत निर्माण में घास का अधिक प्रयोग होता है । लकड़ी का प्रयोग भी दिखाई देता है । लकड़ी का घेरा पहाड़ी गृहों का विशेष गुण होता है । ढालू भूमि पर अधिवास दो या तीन मंजिल के भी होते हैं जो सीढीनुमा खेतों द्वारा चारों ओर से घिरे होते हैं । प्रत्येक मंजिल का प्रयोग अलग - अलग कार्यो के लिए किया जाता है जैसे - भूमि तल पर पशुओं को रखने की व्यवस्था, बीच की मंजिल में रहने की और ऊपरी मंजिल सामान रखने को छोड़ी जाती है । कांगड़ा घाटी में दीवारें लकड़ी या पत्थर की तथा छतें स्लेट से ढकी रहती हैं ।

2. **पंजाब-हरियाणा प्रदेश :** यहाँ के अधिकांश ग्रामीण गृहों (अधिवासों) में दीवारें कच्ची या पक्की ईंटों से बनाई जाती हैं । और उनकी छतें चौरस लकड़ियों से बनाकर उनको मिट्टी तथा गोबर से लीप दिया जाता है । इसके अतिरिक्त कुछ मकान झोपड़ियों के रूप में भी होते ।
3. **गंगा का मैदान :** पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ग्रामीण गृहों की छतें प्राय: समतल होती हैं तथा कच्ची मिट्टी की ईंटों से बनाई जाती हैं । पश्चिम से पूर्व की ओर बढ़ने पर जैसे -जैसे वर्षा की मात्रा बढ़ती है वैसे -वैसे अधिवासों की संरचना में अन्तर पाया जाता है । घरों की छतों का ढाल का अंग धीरे -धीरे बढ़ जाता है जो पश्चिमी बंगाल में अधिकतम हो जाता है । यहाँ के ग्रामीण गृहों की दीवारें मिट्टी से निर्मित होती है और उनकी छतें खपरैल से बनी ढालदार रखी जाती है यहाँ की झोपड़ियाँ बहुधा नारियल, केला तथा बाँस के पेड़ों में छिपी हुई रहती हैं । बांस के जाल का बना छप्पर चारों ओर काफी झुका हुआ रहता है । इनकी दीवारें बाँस के खपाचों अथवा बेंत पर मिट्टी के लेप द्वारा तैयार की जाती हैं । अधिकांश घरों में एक ही कमरा होता है जिसके आगे -पीछे बरामदे होते हैं । कमरों तथा बरामदों के फर्श एक मीटर ऊँचे रखे जाते हैं । धनी किसानों के गृह दो या अधिक कमरों वाले पाए जाते हैं । मध्य मैदानी भाग में छप्परों तथा खपरैल का अधिक मिश्रण मिलता है । पश्चिम की ओर आयताकार तथा वर्गाकार सपाट छत वाले गृह देखे जा सकते हैं । इन गृहों के मध्य में स्थित आँगन चारों ओर छप्परों से निर्मित कमरों से घिरा होता है । घरों की दीवारों को बनाने में मिट्टी का प्रयोग किया जाता है ।
4. **मध्य प्रदेश :** बुन्दैल खण्ड व बघेलखण्ड के पठारी भाग में कच्ची मिट्टी की दीवारें, खपरैल के छत तथा मध्य में आँगन घर का प्रमुख अंग होते हैं । प्राय : द्वार पर बरामदा न होकर एक खुला चबूतरा बना होता है । गृह निर्माण में पत्थर का अधिक उपयोग होता है । दीवार बनाने के लिए लकड़ी का ढाँचा तैयार किया जाता है जिसमें पत्थर अथवा ईंटों पर मिट्टी से लिपाई कर दी जाती है । घरों के पिछवाड़े सब्जी, तम्बाकू, सरसों, मक्का जैसी फसलें उगाने के लिए खुले स्थान की व्यवस्था की जाती हैं ।
5. **उड़ीसा :** यहाँ के ग्रामीण क्षेत्रों में मुण्डा जाति के लोग बड़े गृहों में निवास करते हैं । यहाँ बस्ती में सामूहिक कार्यो के निष्पादन हेतु खुले स्थान की व्यवस्था भी रखी जाती है । अधिकांश ग्रामीण झोपड़ियों में निवास करते हैं । उत्तरी उड़ीसा के ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क किनारे घर एक पंक्ति में बने नजर आते हैं जहाँ खपरैल तथा छप्पर के घरों की अधिकता

है । यहाँ अच्छे घरों में दोहरी छत डाली जाती है । मिट्टी से निर्मित छत का निचला हिस्सा, घास द्वारा निर्मित ऊपरी हिस्से में आग लगने की स्थिति में पूरे मकान को आग से सुरक्षित रख पाता है ।

6. **दक्षिण के पठारी तथा तटीय प्रदेश :** दक्कन लावा प्रदेश में चौरस एवं सपाट छत वाले घर अधिक संख्या में पाए जाते हैं । घरों के मुख्य द्वार दक्षिणवर्ती नहीं रखे जाते । सुरक्षा की दृष्टि से सम्पूर्ण गृह चाहर दीवारी से घिरा रहता है । घरों के निर्माण साल की लकड़ी का अधिक प्रयोग किया जाता है महाराष्ट्र, गुजरात में पत्थर, मिट्टी, ईंट तथा खपरैल से बने सुन्दर घर पाए जाते हैं । कर्नाटक में ग्रामीण घरों की दीवारें मिट्टी द्वारा बनाकर उनकी छतों को छप्पर या खपरैल से ढक दिया जाता है । तमिलनाडू में मिट्टी की दीवारें घास - फूँस के शंकाकार छप्परों से ढकी होती हैं । नीलगिरी पहाड़ियों पर पशुचारक जनजाति अर्द्ध-गोलाकार झोपड़ियों में रहते हैं । ये झोपड़ियां छः मीटर लम्बी, तीन मीटर चौड़ी तथा तीन मीटर ऊँची होती हैं । झोपड़ियों के प्रवेश द्वार एक मीटर से कम ऊँचे रखे जाते हैं । सोने के लिए मिट्टी के चबूतरे बनाए जाते हैं । झोपड़ी के बाहर एक मीटर ऊँची दीवार पशुओं के लिए बनाई जाती है । यहां एक पंक्ति में निर्मित कई घरों का छप्पर एक साथ भी बना लिए जाते हैं । इलाईची पहाड़ियों पर आदिम जाति के लोग 2000 मीटर की ऊँचाई पर पहाड़ी ढाल के सहारे आयताकार झोपड़ी बनाते हैं । झोपड़ी का पिछला हिस्सा पहाड़ी पर टिका होता है इसलिए उस ओर दीवार बनाने की आवश्यकता नहीं होती है । पश्चिमी तटीय प्रदेश में पाए जाने वाले ग्रामीण गृह अपना अलग स्वरूप रखते हैं । मलाबार तट के गृहों को स्थानीय भाषा में 'नांडू -मित्तन ' अथवा 'नालपुरा' नाम से पुकारते हैं । जो अधिवास मन्दिर के चारों ओर बसे होते हैं उन्हें 'इल्लम ' या 'माना' नाम से पुकारते हैं । अधिवास के चारों ओर सुपारी, नारियल, केला, पान, काली मिर्च आदि उगाने के लिए खाली स्थान रखा जाता है । गृह की दीवार मिट्टी की तथा छतें नारियल के पत्तों से ढकी ढालू होती है । गृह के मध्य अर्थात् चौक में पानी का टांका भी बनाया जाता है ।

7. **उत्तर प्रदेश :** भौतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से यह प्रदेश विस्तृत तथा विषमताओं वाला क्षेत्र है । इसलिए यहाँ के ग्रामीण अधिवास अपनी विभिन्न विशेषताओं से युक्त है । इस प्रदेश में पूर्व से पश्चिम की ओर जाने पर ग्रहों की बनावट में क्रमिक परिवर्तन देखने को मिलता है । पूर्वी उत्तर प्रदेश में ढालू छत वाले गृह तथा पश्चिम एवं दक्षिण-पश्चिम में सपाट व चौरस छत वाले गृह पाए जाते हैं । बुन्देलखण्ड की ओर सपाट छत वाले गृह बनाए जाते हैं । पश्चिमी तथा मध्यवर्ती प्रदेश में गृहों की दीवारों का निर्माण मिट्टी, कच्ची ईंटों तथा चूने पत्थर से होता है । गंगा-यमुना दो आब में गृह निर्माण में चीका मिट्टी का प्रयोग बहुतायत में किया जाता है । मिट्टी के चौकोर टुकड़े बनाकर छतों पर रख दिए जाते हैं अथवा ईंटों से निर्मित छत को मिट्टी की परत से ढक दिया जाता है । उत्तराखण्ड में पत्थर, स्केट, लकड़ी का प्रयोग किया जाता है । तराई-भाभर क्षेत्र में ग्रामीण घरों की बनावट में बांस तथा टहनियों को काम में लिया जाता है जबकि दक्षिणी उत्तर प्रदेश में

मिट्टी व भूसे का मिश्रण गृह -निर्माण में लिया जाता है । सामान्यतया उत्तर प्रदेश के ग्रामीण गृहों में निम्न विशेषताएँ पाई जाती हैं -

(i) गृह निर्माण में प्रमुख सामग्री मिट्टी तथा वनस्पति है जो स्थानीय रूप से उपलब्ध है ।

(ii) ग्रहों की छतों का ढाल पूर्व से पश्चिम की ओर घटता जाता है । परन्तु दून, तराई व भाभर क्षेत्र अधिक वर्षा के कारण इसके अपवाद हैं ।

(iii) यहाँ के ग्रहों में आँगन का होना वातावरण के साथ अनुकूलन क्षमता को दर्शाता है । यह हवादार स्थान गर्मियों की रात में सोने तथा शीत ऋतु में धूप में बैठने की सुविधा प्रदान करता है ।

(iv) अधिकांश मकानों में सुरक्षा एवं एकांत-प्रियता के कारण खिड़कियों का अभाव दिखाई देता है

8. **राजस्थान एवं मरुस्थली प्रदेश :** राजस्थान का मरुस्थली प्रदेश विस्तृत है किन्तु यहाँ की जलवायु शुष्क, कठोर, विषम तथा धरातल बालू एवं बालुका स्तूपो (sand dunes) से घिरा रहता हैं । कहीं-कहीं चट्टानी स्वरूप भी दिखाई देता है । जलवायु की विषमता के कारण वनस्पति का अभाव पाया जाता है । कहीं-कहीं पर खींप घास, खेजडी, केर आदि वनस्पति के रूप दृष्टिगोचर होते हैं । गृह निर्माण में प्रमुख सामग्री मिट्टी तथा वनस्पति है जो स्थानीय रूप से उपलब्ध है । यहाँ के गृह मिट्टी तथा गोबर लीपी दीवारों से निर्मित गोलाकार होते हें जिनकी छतें खींप घास की शंकु आकृति की बनी होती हैं ताकि धूल भरी आँधियों के समय बालू घरों के ईद-गिर्द तथा छतों पर एकत्रित न हो सके बल्कि फिसल कर दूर जा सके और गृह सुरक्षित बने रहें । इस प्रकार के घरों को झोंपा या था कहा जाता है । यहाँ के अधिवास विस्तृत विकीर्ण प्रकार के होते हैं । चट्टानी धरातलीय क्षेत्र में दीवार बनाने हेतु बालुका पत्थरों का उपयोग किया जाता है तथा छतें पत्थर की पट्टियों के द्‌वारा ढकी जाती हैं । मरूस्थली भागों में अधिवास के साथ-साथ जल का सार्वजनिक टांका बनाया जाता हैं जिसमें साल भर के लिये वर्षा जल एकत्रित किया जाता है । समान जाति के लोग पास -पास समूह में रहते हैं । आजकल सड़क किनारे सुरक्षित व पानी प्राप्ति के स्थानों पर अधिवास विकसित होने लगे

मरूस्थली प्रदेश के पूर्वी भाग में मिट्टी तथा गोबर से लीपे चौरस तथा केलू से ढकी छत वाले अधिवास पाए जाते हैं जबकि पूर्वी भाग में मिट्टी की दीवार तथा चौरस छत वाले अधिवास पाए जाते हैं यहाँ पर पत्थरों का प्रयोग किया जाता है । अरावली पर्वतीय क्षेत्र में पहाड़ी ढालों पर अधिवास बनाए जाते हैं ।

बोध प्रश्न - 1

1. एम. चिशोम (M. Chisolm) ने अधिवास की स्थिति (site) चयन में कौन से कारकों को नियतकारी घटक माना हें?

 ....

 ....

2. प्रथम निवासी अपने अधिवास की स्थिति निर्धारण में कौन सी दो बातों का विशेष ध्यान रखता है?

....

....

3. ग्राम्य आकार को कितने वर्गों में रखा जा सकता है? ग्रामीण अधिवास के मुख्य प्रकार बताइए ।

....

....

4. ग्रामीण बस्तियों के मुख्य प्रतिरूप बताइये ।

....

....

5. भारत के ग्रामीण ग्रहों के वर्गीकरण में कौन से दो मुख्य आधार हैं?

....

....

6. राजस्थान के मरुस्थली प्रदेश में गृहों की आकृति गोलाकार क्यों रखी जाती है?

....

....

13.8 सारांश (summary)

जिन बस्तियों के निवासी कृषि और पशुपालन द्‌वारा जीविका उपार्जन करते हैं, उन बस्तियों को ग्रामीण अधिवास कहते हैं । ग्रामीण अधिवासों की स्थिति, आकार, प्रकार, प्रतिरूप तथा कातो का नियन्त्रण, उस प्रदेश की पारिस्थितिक घटकों द्‌वारा होता है । इसी प्रकार अधिवासों में गृहों की परस्पर दूरी, निवासियों के स्थानिक प्रतिरूप, प्रयुक्त की गई निर्माण सामग्री आदि का निर्धारण उस क्षेत्र के प्राकृतिक और सांस्कृतिक वातावरण के जटिल प्रभावों से होता है ।

अधिवास के बसाव में स्थिति अनेक भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटकों के प्रभाव की अभिव्यंजना होती है जिसमें धरातल रख ढाल एवं क्षर्भिक तथा धरातलीय जल-सोत मुख्य हैं तथा जिसमें कृषि फसलों का साहचर्य पाया जाता है । इस दृष्टि से अधिवासों की स्थिति कई प्रकार की हो सकती है जैसे मैदानी, पर्वतीय, पठारी, जल-स्रोतों के समीपक, म संगम, नदियों के संगम वाली स्थिति इत्यादि ।

किसी अधिवास का आकार अनेक घटकों से प्रभावित रहता है जिसमें कुछ भौगोलिक, आर्थिक तथा कुछ सामाजिक घटक मुख्य होते हैं जो अधिवासों के आकार का निर्धारण करते हैं । इस दृष्टि से ग्राम्य आकार को प्राय : तीन वर्गो में रखा जाता है, यथा - भौतिक आकार, कार्यात्मक आकार तथा जनांककीय आकार ।

प्रकार की दृष्टि से ग्रामीण अधिवास मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं । इन प्रकारों को किसी बस्ती में घरों का अथवा झोपड़ियों आदि की पारस्परिक दूरी के आधार पर निश्चित किया जाता है अस्तु, अलग -अलग बसे एकाकी गृह, झोपड़ी, वास-गृह (homstead) और फार्म हाउस को प्रकीर्ण या एकाकी प्रकार का अधिवास कहते हैं । जिस बस्ती में घर पास-पास निर्मित होते हैं

वह सघन प्रकार का अधिवास है, अब चाहे वह दो-चार घरों का छोटा पुरवा (hamlet) हो अथवा गाँव हो । दूसरी ओर अलग - अलग अथवा निकट स्थित घरों की बस्ती अर्द्ध -सघन अथवा अपखण्डित (fragmentary) प्रकार का अधिवास कहलाता है ।

अधिवासों के प्रकार तो किसी बस्ती के घरों की संख्या और घरों के मध्य पारस्परिक दूरी आदि के आधार पर निश्चित किए जाते हैं जबकि अधिवासों के प्रतिरूप उस अधिवास की आकृति के अनुसार होते हैं जिनको घरों और मार्गो की स्थिति के क्रम और व्यवस्था से निश्चित किया जाता है । उदाहरणार्थ- किसी सड़क, नदी, नहर के किनारे बसे हुए घरों की बस्ती रेखीय प्रतिरूप की होती है, सडकों के चौराहों पर बसी हुई बस्ती चौकपट्टी प्रतिरूप की होती है, किसी अंतरीप के सिरे पर बसी हुई बस्ती तीर प्रतिरूप की होती है । इसी प्रकार सीढ़ीनुमा प्रतिरूप, वृत्ताकार प्रतिरूप आदि कई प्रकार के प्रतिरूप देखे जा सकते हैं ।

भारत में गृह एवं उनके नाना प्रकार के लिए अनेक घटक उत्तरदायी हैं जिनमें धरातलीय स्वरूप, जलवायु दशाएँ, देश की युगों पुरानी सामाजिक एवं जाति व्यवस्था, जल-प्राप्ति के स्थल, कृषि आवश्यकताएँ, गृह -निर्माण सामग्री, सुरक्षा प्रबन्ध, आर्थिक घटक इत्यादि उल्लेखनीय हैं । परिणामस्वरूप ग्रामीण अधिवासों को उनके बाह्य तथा आन्तरिक आकृति एवं प्रकार में विभेद देखे जा सकते है । प्रमुख गृह प्रकारों में आयताकार, त्रिभुजाकार, शंकाकार, ढालू तथा सपाट छतवाले, स्थानीय स्तर पर उपलब्ध निर्माण सामग्री से निर्मित गृह महत्वपूर्ण हैं ।

अधिवासों के प्रादेशिक वितरण में गृहों के प्रकार तथा प्रतिरूप अधिक स्पष्ट हुए हैं । ये प्रतिरूप किसी एक प्रदेश तक सीमित नहीं है अपितु एक ही प्रदेश में अनेक गृह प्रकार एक दूसरे से मिलते -जुलते भी देखे जा सकते हैं । मध्य प्रदेश ऐसे मिले-जुले अधिवास वितरण प्रतिरूपों का अच्छा उदाहरण है ।

अंत में यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि वर्तमान समय में गांवों में गृह प्रकार तथा उनके रूप में परिवर्तन भी दिखाई देने लगा है । भारत के सभी गांवों में विशेषत: पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश के गांवों में बिजली तथा मशीनीकरण के प्रभाव दिखाई पड़ने लगे हैं । गृह निर्माण में आधुनिक सामग्री के प्रयोग का प्रचलन आरम्भ हो चुका है । इनमें विशेष रूप से ऐसे गांवों के गृह प्रभावित है जो मुख्य सड़क, रेल मार्गो से जुड़े है तथा नगरों के समीप स्थित हैं ।

13.9 शब्दावली (glossary)

- **कार्यात्मक आकार :** कार्यो एवं प्रक्रियाओं के सन्दर्भ में अधिवासों का आकार ।
- **जनांककीय आकार :** जनसंख्या के सन्दर्भ में अधिवासों का आकार ।
- **प्रकीर्ण अधिवास :** एकाकी अधिवास जिसमें वासगृह एक दूसरे से दूर-दूर स्थित होते हैं और उनके बीच में कृषि भूमि रहती है ।
- **नाभकीय :** क्षेत्र का केन्द्रीय भाग ।
- **भाभर :** हिमालय के पदस्थली में कंकड़ पत्थर के निक्षेप से निर्मित संकरी पट्टी ।

- **तटबंध :** मैदानी भाग में नदी के किनारे जलोढ़ के निक्षेप से निर्मित प्राकृतिक बांध जिसे बाढ़ का जल प्राय: पार नहीं कर पाता है । समीप्य भागों से ऊँची होने तथा बाढ़ से सुरक्षित होने के कारण तटबंध की भूमि पर मानव अधिवास बनाए जाते हैं ।

13.10 सन्दर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. एस. सी. बंसल. **ग्रामीण बस्ती भूगोल,** मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1998
2. सी. बी. मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2000
3. एल. एन. वर्मा : **अधिवास भूगोल,** राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1997
4. रामयज्ञ सिंह : **अधिवास भूगोल,** रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर / दिल्ली, 2005
5. एस. डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2006
6. A.R. Desai : **Rural India in Transitions** , popular book depot , Bombay, 1961
7. F.S. Hudson :**A Geography of settlements** ,Macdonald and Evans, London, 1970
8. M.Chisholam :**Rural settlements and land Use,** Hillary House, new York, 1962.

13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. चारागाह भूमि, कृषि - भूमि, जलापूर्ति, भवन -निर्माण सामग्री तथा ईंधन ।
2. आन्तरिक अर्थतन्त्र तथा बाह्य लेन -देन ।
3. भौतिक, कार्यात्मक तथा जनांकिकीय आकार ।
4. प्रकीर्ण या एकाकी, सघन या अभिकेन्द्रित तथा अर्द्ध -सघन या अपखण्डित ।
5. आयताकार या वर्गाकार, रेखीय, वृत्ताकार, तीर प्रतिरूप, तारा -समान, त्रिकोणीय, नाभकीय, चौकट -पट्टी, अरीय या त्रिज्या, सीढ़ीनुमा प्रतिरूप आदि ।
6. आकृति, (बाह्य तथा आन्तरिक) तथा गृह -निर्माण सामग्री ।
7. बालू जमाव से गृह सुरक्षित रह सके तथा अधिक गर्मी तथा अधिक सर्दी से बचा जा सके ।

13.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अधिवासों के प्रकार तथा प्रतिरूप के भेदों को उदाहरण सहित समझाइए ।
2. ग्रामीण अधिवासों के आकार, प्रकार तथा प्रतिरूप की व्याख्या गंगा के मैदान के उदाहरणों द्वारा समझाइए ।
3. "गृह निर्माण सामग्री गृह प्रकार को निर्धारित करने वाला एक प्रमुख कारक है । " उदाहरण सहित इस कथन की व्याख्या कीजिए।
4. वातावरण के कौन से कारक गृह-निर्माण सामग्री को निर्धारित करते हैं? भारत में किसी एक मुख्य निर्माण-सामग्री के वितरण का सकारण वर्णन कीजिए ।

5. भारत में अधिवासों के प्रादेशिक वितरण की गृहों के प्रकार तथा प्रतिरूप के सन्दर्भ में व्याख्या कीजिए ।
6. उत्तम स्थिति के निर्धारण में कौन से कारक उत्तरदायी होते हैं? उदाहरण सहित समझाइए।
7. राजस्थान के मरुस्थली प्रदेश के ग्रामीण अधिवासों पर स्व टिप्पणी लिखिए?

इकाई 14 : नगरीकरण - विकास, कारण एवं परिणाम; नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण (Urbanisation :Growth , Causes and Consequences; Functional Classification of Cities)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 नगरीकरण

14.2.2 नगरीकरण से जुड़ी अवधारणाएँ

14.2.1.2 जनसांख्यिकीय तथ्य

14.2.1.2 समाज में संरचनात्मक परिवर्तन

14.2.1.3 नगरीकरण एक व्यावहारिक प्रक्रिया के रूप में

14.3 नगरीकरण का विकास

14.4 नगरीकरण के कारण

14.4.1 उद्योगों की स्थापना

14.4.2 कृषि में यंत्रीकरण

14.4.3 प्रशासनिक इकाइयों की स्थापना

14.4.4 परिवहन मार्ग

14.4.5 सांस्कृतिक केन्द्र

14.5 नगरीकरण के लाभकारी परिणाम

14.5.1 औद्योगिक प्रगति

14.5.2 यातायात के साधनों का विकास

14.5.3 कृषि व्यवसाय पर कम निर्भरता

14.5.4 शिक्षा की प्रगति

14.6 नगरीकरण के विनाशकारी परिणाम

14.6.1 स्थान की समस्या

14.6.2 आवासीय समस्या

14.6.3 परिवहन की समस्या

14.6.4 जलापूर्ति की समस्या

14.6.5 नगरीय प्रदूषण की समस्या

14.6.6 मल निकास तथा जल निकास समस्या

14.6.7 ईधन तथा विद्युत आपूर्ति समस्या

14.6.8 प्रशासनिक समस्या
14.6.9 नगरों में निर्धनता की समस्या
14.6.10 नैतिक व सामाजिक प्रभाव
14.7 नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण
14.7.1 नगरीय कार्य
14.8 नगरीय कार्यो के प्रकार
14.9 नगरों का वर्गीकरण
14.10 नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण की विधियाँ
14.10.1 गुणात्मक विधि
14.10.2 परिमाणात्मक विधियाँ
14.10. 2.1 हैरिस विधि
14.10. 2.1 नेल्सन की विधि
14.10. 2.3 वेब विधि
14.10.2.4 बहुचरीय विश्लेषण विधि
14.11 भारत में नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण
14.12 नगरों के कार्यात्मक समूह
14.12.1 उत्पादन केन्द्र
14.12.2 व्यापार व वाणिज्य केन्द्र
14.12.3 प्रशासनिक केन्द्र
14.12.4 सांस्कृतिक केन्द्र
14.12.5 परिवहन तथा संचार केन्द्र
14.12.6 पर्यटन व मनोरंजन केन्द्र
14.12.7 सैन्य अथवा सुरक्षा केन्द्र
14.12.8 मिश्रित नगर
14.13 सारांश
14.14 शब्दावली
14.15 संदर्भ ग्रंथ
14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.17 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप समझ सकेगें कि : -

- नगरीकरण क्या है?
- नगरीकरण का विकास
- नगरीकरण के लाभकारी व विनाशकारी परिणाम

14.1 प्रस्तावना (Objective)

जनसंख्या जमाव के दो रूप होते हैं । प्रथम-नगर में जनसंख्या का जमाव जिले कस्बा, नगर, महानगर आदि कह सकते हैं तथा हरा ग्रामीण जमाव जिसमें पुरवा, नगला तथा गाँव आते हैं । मानव सभ्यता तथा संस्कृति से ज्ञात होता है कि पृथ्वी पर प्राचीन समय से ही दोनों रूप पाये जाते हैं । प्रारम्भ में सभ्य मानव ने ग्रामीण जीवन बिताना प्रारम्भ किया होगा फिर भी नगरों का इतिहास भी पुराना है; इसके प्रमाण सिंधु घाटी सीयता के नगर व बेवीलोन नगर में मिलते हैं । सही अर्थों में हमेशा से नगर ने ग्रामीण जनसंख्या को अपनी ओर आकर्षित किया है । इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्र में बदलने से बनी नगरीय जनसंख्या का इतिहास ही नगरीकरण है ।

14.2 नगरीकरण

14.2.1 नगरीकरण से जुड़ी अवधारणा

औद्योगिक एवं आर्थिक विकास का नगरीकरण से सीधा समानुपात सम्बन्ध है, अर्थात् जिस देश में औद्योगिक व आर्थिक विकास जितनी द्रुत गति से होता है, उस देश में उतनी ही द्रुत गति से नगरीकरण भी होता है । नगरीकरण से जुड़ी तीन अवधारणाएँ हैं -

14.2.1.1 जनसांख्यिकीय तथ्य (Demographic Facts)

14.2.1.2 समाज में संरचनात्मक परिवर्तन (Structural changes in the society)

14.2.1.3 नगरीकरण एक व्यावहारिक प्रक्रिया के रूप में (Urbanization in the form of behavioural Process)

जनसांख्यिकीय तथ्य के रूप में नगरीकरण को निर्धारित क्षेत्रों में कस्बों और नगरों की विशुद्ध और सापेक्षिक वृद्धि की एक प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है । इसे बहुधा दो स्तरों में प्रदर्शित किया जाता है - (1) जनसंख्या का बढ़ता हुआ भाग नगरीय स्थानों पर रहता है; (2) बड़े स्थानों पर रहने वालों के अनुपात में वृद्धि होती है । इस प्रकार बढ़ी हुई आबादी वाले बड़े स्थान को पूर्णत : नगरीकृत समाज के रूप में प्रदर्शित किया जाता है ।

पूँजीवादी औद्योगिक विकास के साथ-साथ जब नगरों में आबादी का घनत्व बढ़ा तो समाज में एक संरचनात्मक बदलाव भी आया । मशीनीकरण के युग में उत्पादों की वृद्धि हुई तो नगरों को विनिमय प्रतिक्रियाओं के केन्द्र के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा । आधुनिक अर्थव्यवस्था से लाभ उठाने के लिए कारखानों के मालिक पूँजीपति श्रमिक व व्यापारी सभी ने नगरों मे निवास करना अपने लिए श्रेयस्कर समझा । इस प्रकार हर वर्ग के लोग शहरों में रहने लगे अन्यथा' औद्योगीकरण के पूर्व श्रमिक वर्ग मुख्यत : देहातों में रहकर खेतिहर मजदूरों का कार्य करते थे। नगरीकरण से सम्बन्धित तीसरी संकल्पना यह है कि नगरीकरण एक प्रकार की व्यावहारिक प्रक्रिया है । बड़े नगरों को सामाजिक परिवर्तन के केन्द्र के रूप में भी देखा जाता है ।

14.3 नगरीकरण का विकास (growth of Urbanization)

नगरीकरण विकास की प्रक्रिया अत्यन्त पुरानी है । नगरीकरण का उद्भव आज से लगभग 10, 000 वर्ष पूर्व प्रागैतिहासिक युग में हुआ था इस समय में मानव ने पौधों और पशुओं को घरेलू बनाना प्रारम्भ किया था । कृषि व उसके तरीके ने मानव को अर्थव्यवस्था में परिवर्तन करने, भोजन उत्पन्न करने और स्थायी निवास के लायक बना दिया । स्थायी अधिवासों का विकास मिस, मैसोपोटामिया, सिंधुघाटी, चीन तथा मध्य अमेरिका में हुआ था । इस प्रकार के उदाहरणों में कृषक समुदायों ने नगरीय समुदायों और नगरीय अधिवासों का विकास किया । मैसोपोटामिया (वर्तमान में ईराक) के उर (ur) इसका प्रमाण है । यह ई पू 1900 में केनन (cannon) की यात्रा से पूर्व अब्राहम के द्वारा बसाया अधिवास था ।

नगरीय बस्तियों के विकास के कारणों में पौधों का घरेलू बनाना, कृषक संग्रहण करने की अपेक्षा अधिक भोजन पैदा करने से जनसंख्या में वृद्धि सम्भव हुई । सिंचाई की कला, शक्ति, श्रम विभाजन समय की आवश्यकता थी जिससे सुसंगठित समाज का निर्माण संभव हुआ । जब कृषक अधिक अन्न उत्पादन करने लगे तो उनके पास न केवल अतिरिक्त भोजन था वरन् अतिरिक्त समय, शक्ति तथा श्रम और श्रम विभाजन की विविधता के लिए जन समूह आदि पूर्वापेक्षाएँ भी थी । समाज के कुछ सदस्यों को अन्नोत्पादन या कृषिकार्य से मुक्त रखा गया और प्रथम बार भूमि से विच्छेद किया गया । इस प्रकार अलग हुआ समुदाय अन्य समाजोपयोगी गैर कृषीय कार्यों में एक सुगठित समाज के रूप में लग गया और उन्हीं लोगों ने नगरों का विकास किया ।

मध्यकाल में कस्बों और नगरों का पुनर्निर्माण हुआ । 11वीं शताब्दी के बाद यूरोपीय देशों की समुद्रपार व्यापार में अधिक वृद्धि हुई । इस काल में व्यापारिक यात्राओं की भूमिका के साथ-साथ अधिकांश पश्चिमी यूरोप व्यापार से जुडे । कृषि क्षेत्र में अधिक सफलता प्राप्त हुई । नगरीय बस्तियों का आकस्किम विकास हुआ । 12 वी शताब्दी के अंत तक पेरिस नगर की आबादी एक लाख थी जो कि तेरहवीं शताब्दी के अंत तक बढ़ कर 2 ,40, 000 हो गई थी । जिनेवा, लंदन, वेनिस, मिलान उस समय के महत्वपूर्ण नगर थे । ये नगरीय केन्द्र स्थानीय बाजार नगर थे, जो बाजार व गिरजाघर पर स्थित थे ।

इसके बाद अनेक राजधानी नगरों का विकास हुआ । राजधानी में राष्ट्र के मुखिया का निवास होने से इस काल में अतिरिक्त धन तथा शक्ति का उपयोग विशाल राज प्रसादों के निर्माण में होने लगा । भारत में तो मध्यकाल के ऐतिहासिक भवन इसके उदाहरण हैं जैसे - ताजमहल, लाल किला, कुतुबमीनार जामा मस्जिद (दिल्ली) शाही मस्जिद (लाहौर) मुगल उद्यान इसी काल में निर्मित हुए थे

तालिका 14.1 : विश्व में नगरीकरण

वर्ष	कुल जनसंख्या का प्रतिशत	
	+ 5000 जनसंख्या नगरों में	+ 2000 जनसंख्या के नगरों में
1800	3	2.4

1850	6	4.3
1900	14	9.2
1950	30	20.9
1980	37	31.9
2000 अनुमानित	48	38.3

तालिका 14.2 विश्व में नगरीकरण की प्रवृति - 1960-80

प्रदेश	**कुल जनसंख्या मेन नगरीकरण का प्रतिशत**	
	1960	1980
अफ्रीका	18	28
उत्तरी अफ्रीका		43
पश्चिमी अफ्रीका		22
पूर्वी अफ्रीका		15
मध्य अफ्रीका		30
दक्षिण अफ्रीका		47
एशिया	21	23
दक्षिण पश्चिमी एशिया		52
दक्षिण एशिया		22
दक्षिण पूर्वी एशिया		23
पूर्वी एशिया		22
उत्तरी अमेरिका	70	74
लैटिन अमेरिका	49	63
मध्य अमेरिका		60
कैरिबियन		52
उष्ण कटिबंधीय द. अमेरिका		62
शीतोष्ण कटि. द. अमेरिका		82
यूरोप		69
उत्तरी यूरोप	58	74
पश्चिमी यूरोप		81
पूर्वी यूरोप		61
सोवियत संघ	49	62
ओसेनिया	64	72
विश्व	33	47

स्रोत : United Nations Dept of Economic and Social Affairs , N.Y

तालिका - 14. 2 में विश्व के महाद्वीपों में 1960 से 1982 के आकड़ों के आधार पर नगरीकरण का प्रतिशत दिखाया गया है । इससे उ. अमेरिका, यूरोप ओसेनिया के अधिक नगरीकरण का पता चल रहा है ।

यूरोप में, जहाँ आधुनिक आर्थिक क्रांति का जन्म व विकास हुआ, नगरों का विस्तार 19 वीं शताब्दी के आरम्भ से ही तेज रहा । सन् 1900 तक इंग्लैण्ड, वेल्स तथा जर्मनी में अधिकांश जनसंख्या नगरीय थी । फ्रांस और स्वीडन सहित यूरोप के शेष देशों में 50 प्रतिशत से कम जनसंख्या नगरीय थी ।

उत्तरी अमेरिका व आस्ट्रेलिया में जहाँ 19 वी शताब्दी तथा बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में यूरोप से बहुत अधिक लोग आये, नगरीकरण विलम्ब से अवश्य हुआ, लेकिन इसकी गति तीव्र रही । जैसा कि तालिका- 1 से स्पष्ट हैं । यह क्रिया यूरोप की अपेक्षा अधिक तीव्र थी । आस्ट्रेलिया में 100, 000 से अधिक आबादी वाले नगरों में 1900 से 1950 के मध्य चार गुना आबादी में वृद्धि हुई जबकि यूरोप में यह वृद्धि दो गुनी ही रही । संयुक्त राज्य अमेरिका 1910- 1920 के दशक में ही नगरीय बना ।

एशिया के अधिकतर देशों में नगरीकरण 50 प्रतिशत से कम है । भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग अभी भी ग्रामीण है । प. यूरोप के नगरों की विशेषताऐं (औद्योगिक व व्यापारिक) भारतीय नगरों में नहीं रही । भारत के नगरों की विशिष्टता स्पष्ट नहीं हैं जैसा कि प. यूरोप के नगरों में पाई जाती है । यहाँ ग्रामीण और नगरीय विशिष्टताएँ एक साथ दिखाई देती है । बहुत से नगरों और कस्बों के निवासी अभी भी कृषि कार्य में संलग्न हैं । कुरूक्षेत्र रोहतक (हरियाणा) हापुड़ मुजफ्फर नगर (उ प्र) मुंगेर (बिहार) न्यूबागई गाव, कोकराझार (आसाम) नगरों की जनसंख्या का 10 प्रतिशत कृषि में संलग्न है ।

यूरोप आस्ट्रेलिया न्यूजीलैण्ड, जापान, सिंगापुर, हांगकांग, द.कोरिया के देश अधिक नगरीकृत हैं । चीन की' 52 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय है । अफ्रीका एशियाई तथा लेटिन अमेरिका शेष देशों की जनसंख्या का 50 प्रतिशत से कम नगरीय है । हम कह सकते है कि उष्ण प्रदेशों की अपेक्षा शीतोष्ण अक्षांशों के देशों का नगरीकरण अधिक हुआ है । विकासशील देशों में नगरीय जनसंख्या के प्रतिशत में तेजी से वृद्धि हो रही हैं । विगत कुछ वर्षो में विकासशील देशों में नगरीकरण की गति तीव्र हुई है । यह आश्चर्य की बात नहीं कि विश्व के अधिक विकसित क्षेत्रों की तुलना में कम विकसित क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्रों में अधिक व्यक्ति निवास करते हैं ।

भारत उन देशों में से एक है जिनमें नगरीकरण बहुत पहले प्रारम्भ हो गया था । इसकी शुरूआत भारत में 3000 ई .पू में ही हो गयी थी । मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के नगरीय केन्द्रों को भारत में प्रागैतिहासिक नगरीकरण के उदाहरण के रूप में जाना जाता हैं । भारतीय इतिहास के प्राचीन और मध्य युगीन युग में कस्बों और नगरों का विकास मुख्यत : सामाजिक- आर्थिक भौगोलिक -राजनैतिक और सांस्कृतिक कारणों से हुआ ।

अंग्रेजों के आने के कारण बहुत से नगरों व कस्बों के विकास को बढ़ावा मिला । ब्रिटिश काल में कुछ नगर औद्योगिक केन्द्रों रूप में विकसित हो गये थे । उन्होंने भारत से कच्चे माल को निर्यात करने तथा ब्रिटेन में निर्मित माल तथा उत्पादित वस्तुओं को भारत व विस्तृत बाजार में

बेचने के लिए व्यापारिक केन्द्रों की स्थापना की । ब्रिटेन ने भारत को अपना सुदृढ़ उपनिवेश बनाने के उद्देश्य से देश के सामरिक महत्व के स्थानों पर सैनिक छावनियाँ भी स्थापित की । अम्बाला, अहमदाबाद, आगरा, झाँसी, शिमला, मसूरी, मेरठ, रुड़की, महू (मध्यप्रदेश) तथा जालन्धर की वृद्धि और विकास इसका उदाहरण है ।

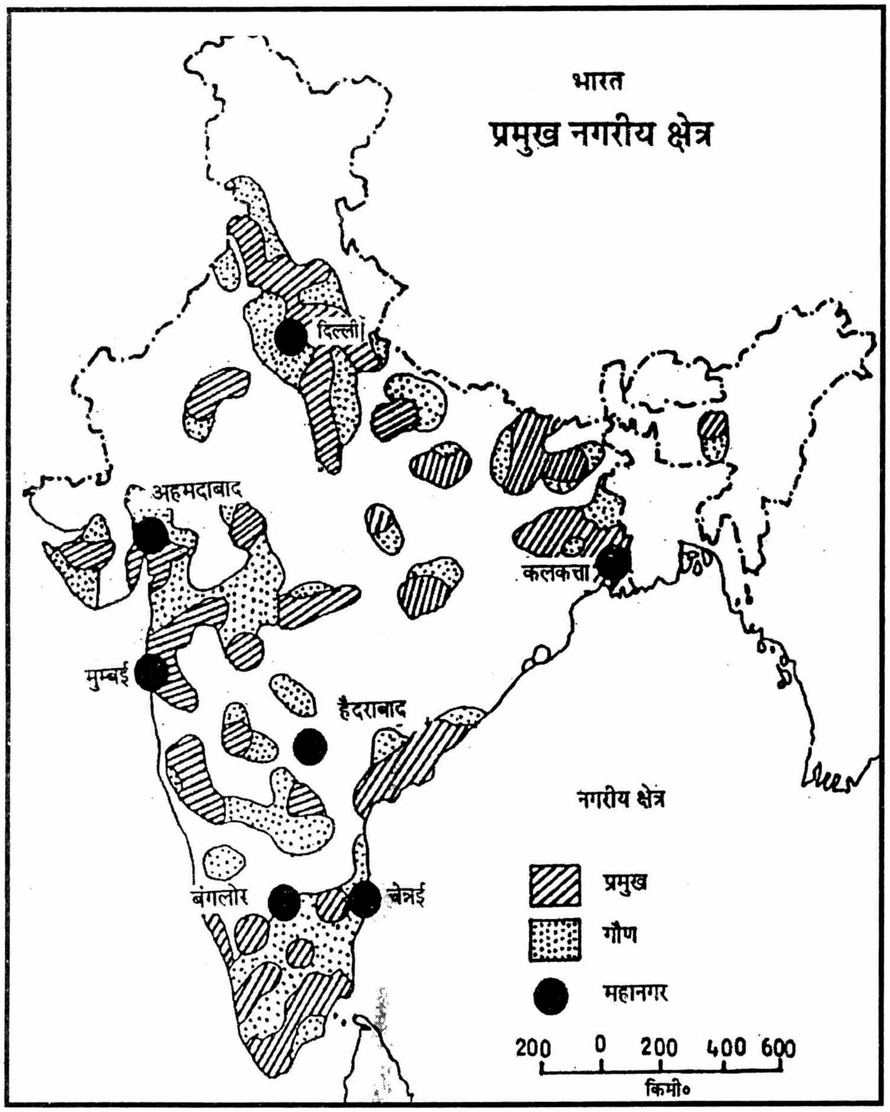

14.1: भारत के प्रमुख नगरीय क्षेत्र

यद्यपि सन् 1921 के बाद हमारे देश मे नगरीकरण प्रक्रिया की वृद्धि बहुत धीमी रही है, किन्तु सर 1947 में स्वतन्त्रता के बाद इसमें वृद्धि हुई । पिछले 60 वर्षों में न केवल पुराने नगरों और कस्बों की जनसंख्या आकार, घनत्व और क्षेत्रफल में विस्तार हुआ है बल्कि सैकड़ों नये नगर भी बसाये और विकसित किए गये हैं । चण्डीगढ़, पंचकुल, कांगजनगर, यमुनानगर, ईटानगर, मौंकाक चुंग विराटनगर, नोएडा , न्यूबोगाई गाँव ,आदि नगर नये विकसित नगरों के कुछ उदाहरण हैं ।

तालिका-14.3 से स्पष्ट है कि वर्ष 1961-2001 के दौरान नगरीकरण सर्वाधिक महाराष्ट्र मे हुआ । इसके बाद उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, प बंगाल, गुजरात का स्थान है ।

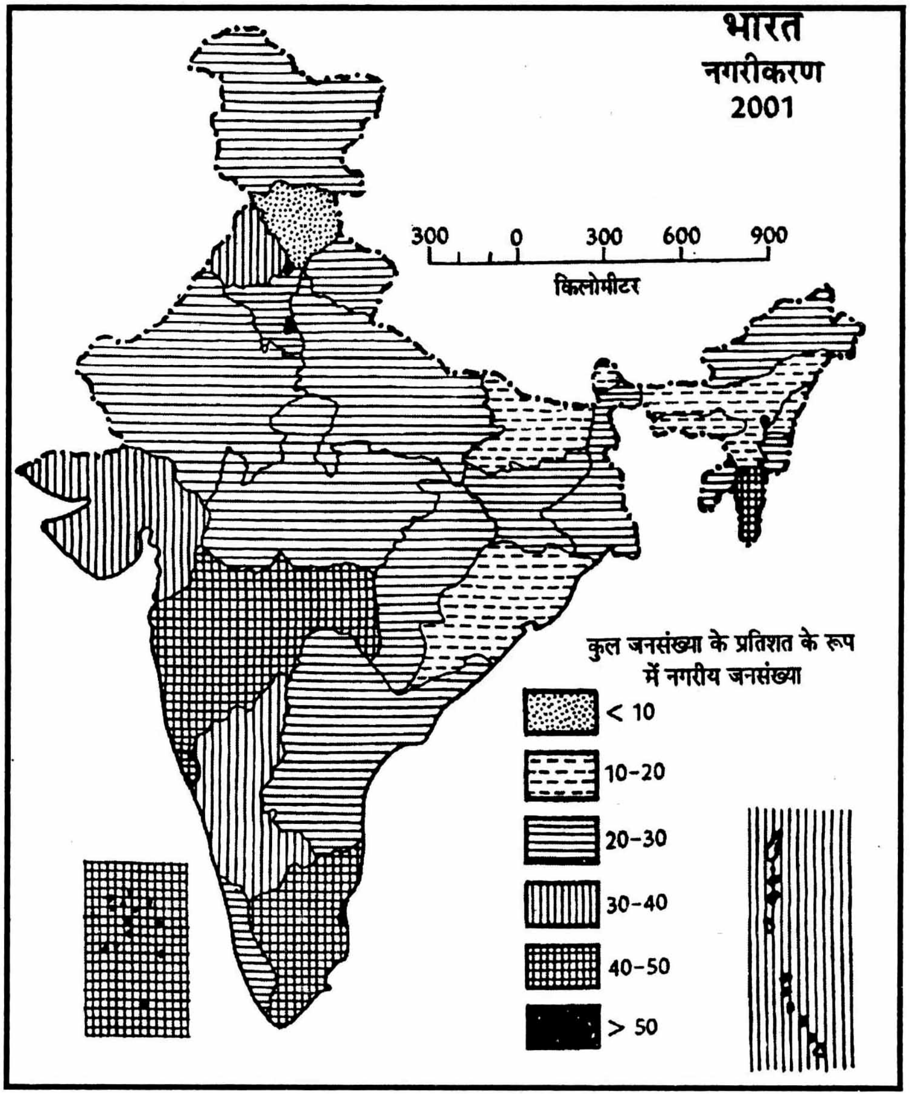

मानचित्र-14.2 : भारत में नगरीकरण 2001

तालिका-14.3 : भारत में नगरीकरण की प्रगति , 1961-2001

भारत/ राज्य	नगरीय जनसंख्या (लाखों में)				नगरीकरण प्रतिशत		अन्तर 1961-2001
	1961	2001	वृद्धि	%	1961	2001	
भारत	789	2845	2065	262	18.30	27.78	9.48
आन्ध्र प्रदेश	63	205	142	225	17.44	27.08	9.64
असम	8	34	26	325	7.37	12.72	5.35
अरुणाचल प्रदेश		2				20.41	

बिहार	39	87	48	123	8.42	10.47	2.05
छत्तीसगढ़		42				20.08	
गोवा		7				49.77	
गुजरात	53	189	136	257	25.77	37.35	11.58
हरियाणा	13	61	48	369	17.23	29.00	11.77
हिमांचल प्रदेश	2	6	4	200	6.34	9.79	3.45
जम्मू-कश्मीर	6	25	19	317	16.66	24.88	8.22
झारखण्ड		60				22.25	
कर्नाटक	53	179	126	238	22.33	33.98	11.65
केरल	25	83	58	232	15.11	25.97	10.86
मध्य प्रदेश	46	161	115	250	14.29	26.67	12.38
महाराष्ट्र	112	410	298	266	28.22	42.20	14.18
मणिपुर	0.7	5.7	5	714	8.69	23.88	15.20
मेघालय	1	4.5	3.5	350	13.31	19.63	6.32
मिजोरम		4				49.50	
नागालैण्ड	0.2	3.5	3.3	16.50	5.19	17.74	12.55
उड़ीसा	11	55	44	400	6.32	14.97	8.65
पंजाब	25.7	82	56.3	219	23.06	33.95	10.89
राजस्थान	33	132	99	300	16.28	23.38	7.10
सिक्किम		0.6			4.22	11.10	6.88
तमिलनाडु	90	272	182	202	26.69	43.86	17.17
त्रिपुरा	1	5	4	400	9.02	17.02	8.00
उत्तर प्रदेश	95	345	250	263	12.85	20.78	7.93
उत्तरांचल		22				25.59	
प. बंगाल	85	225	140	165	24.45	28.03	3.58
दिल्ली	23.6	128	104.4	442		93.01	
दमन दीव	0.6				36.26		
अंडमान निकोबार	0.1	1.2	1.1	1100		32.67	
चंडीगढ़	1	8	7	700		89.78	
पांडिचेरी	0.9	6.5	5.6	622		66.57	
लक्षद्वीप		0.3				44.57	

दादरा-नागर हवेली		0.5				22.89	

स्रोत : Census of India 1961 and 2001

14.4 नगरीकरण के कारण

नगरीकरण वर्तमान युग में एक शक्तिशाली तत्व है जो ग्रामीण जनसंख्या को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है । परिणाम स्वरूप बड़े-बड़े कस्बे नगर और महानगर बन गए है । नगरीकरण की इस प्रक्रिया के निम्न कारण हैं

14.4.1 उद्योगों की स्थापना

औद्योगिक क्रांति के पश्चात् उद्योगों की स्थापना होने लगी । ये उद्योग उन्हीं स्थानों पर स्थापित किए गए जहाँ भौगोलिक सुविधाएँ उपलब्ध थी जैसे कच्चे माल की प्राप्ति, निर्मित माल को बेचने के लिए बाजार, जल, परिवहन सुविधा व सरकारी नीति । इन औद्योगिक केन्द्रों पर श्रमिकों और वाणिज्य व्यवसाय करने वालों की आवश्यकता हुई और ग्रामीण क्षेत्रों से लोग इन केन्द्रों की ओर आकर्षित हुऐ । यही केन्द्र नगरों के रूप में बन गए । बम्बई नगर इसी कारण से भारत का प्रमुख नगर बन गया ।

14.2.2 कृषि में यन्त्रीकरण

औद्योगिक प्रगति के साथ -साथ कृषि क्षेत्र में भी आशानुकूल वृद्धि हुई है । यन्त्रीकरण के कारण मानवीय श्रम में कमी आयी है तथा उत्पादन में भी वृद्धि हुई है । यही कारण है कि शेष मानव रोजगार की तलाश में नगरों की ओर आकर्षित हुआ तथा वहाँ द्वितीय व तृतीय व्यवसाय करने लगा । परिणाम स्वरूप इन स्थानों पर जनसंख्या का जमाव होने लगा ।

14.4.3 प्रशासनिक इकाइयों की स्थापना

सुव्यवस्थित राजनीतिक प्रशासन के लिए प्रादेशिक क्षेत्रों में प्रशासनिक केन्द्र खोले जाते है जैसे भारत में तहसील, जिला, प्रांत आदि है जिन के प्रशासन का भार एक केन्द्रीय स्थान पर होता है । इन प्रशासन केन्द्रों पर जनसंख्या का जमाव होता रहता है । इसका प्रमुख कारण इन स्थानों पर नागरिक सुविधाएँ जैसे बिजली, पानी, परिवहन मार्ग, शिक्षा केन्द्र, अस्पताल आदि का होना है जिनसे मनुष्य जीवन सरल बन जाता हैं । दूसरे इन स्थानों पर सरकारी नौकरियां, गैर-सरकारी या अर्ध सरकारी व्यवसाय वाणिज्य सहायक उद्योग आदि प्राप्त करने की सुविधाएं रहती हैं इनमें मनुष्य कृषि उद्योग को छोड़ कर उच्च व्यवसायों में लग जाता है । व अधिक आसानी से धन अर्जित करता हैं । यही कारण है कि बडे प्रशासनिक केन्द्र अधिक जनसंख्या को आकर्षित करता हैं । उदाहरण के लिए दिल्ली, देश की राजधानी होने के कारण बड़ा प्रशासनिक नगर है, जबकि जयपुर राजस्थान की राजधानी है तो यहाँ जनसंख्या का जमाव दिल्ली की अपेक्षा कम है । अजमेर केवल स्व जिले का प्रशासनिक केन्द्र है और इसलिए यहाँ जनसंख्या जमाव जयपुर से भी कम है ।

14.4.4 परिवहन मार्ग

मुख्य नगरों और कस्बों में यातायात के साधनों की बहुतायत होती है । सड़कें, बैलगाड़ी मार्ग, रेलमार्ग और समुद्रों के समीप जल यातायात मार्ग भी उपलब्ध होते हैं । उपरोक्त कारणों से ही कृषि क्षेत्रों की उपज तथा उद्योगों में निर्मित माल यहाँ आता है । यही नगर और कस्बे कृषि मण्डियाँ तथा वाणिज्य के केन्द्र बन जाते हैं ।

14.4.5 सांस्कृतिक केन्द्र

बड़े नगर सभ्यता और संस्कृति के केन्द्र होते हैं अत: जनसंख्या इनकी ओर आकर्षित होती है । पेरिस, एमस्टरड़म, रोम आदि नगरों के विकास का एक कारण यह भी रहा कि ये संगीत, कला, नाटक शाला, शिक्षा के केन्द्र रहे है । इसी प्रकार का एक केन्द्र संयुक्त राज्य अमेरिका में लॉस एन्जलिस नगर है जहाँ फिल्म व्यवसाय अपने चरम पर है और यह देश का बडा नगर बन गया।

नगरीकरण के परिणाम

वर्तमान में नगरीकरण की प्रवृत्ति में भारत, पाकिस्तान इण्डोनेशिया, अफ्रीकन देशों ने प्रगति अवश्य की है लेकिन ये अमेरिका ग्रेट ब्रिटेन की भांति पूर्ण विकसित नहीं है । नगरीकरण के परिणाम वरदान स्वरूप भी हो सकते हैं तथा विनाशकारी भी । इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि नव विकसित देशों में औद्योगीकरण की प्रगति नगरीकरण के साथ-साथ होनी चाहिए अन्यथा परिणाम विनाशकारी होगें ।

14.5 नगरीकरण के लाभकारी परिणाम

14.5.1 औद्योगिक प्रगति

प्रत्येक स्थानीय नगर और कस्बे में स्थानीय कृषि व कच्चे माल की उपलब्धि पर आधारित उद्योगों की स्थापना होती हैं परिणामस्वरूप जीविकोपार्जन के साधनों का विकास होगा ।

14.5.2 यातायात के साधनों का विकास

नगरीकरण के साथ साथ यातायात के साधनों का तेजी से विकास होता है । नगर जनसंख्या के सघन केन्द्र होने के कारण खपत के केन्द्र होते हैं अत : निर्मित माल को बाजारों तक पहुँचाने तथा उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध करवाना यातायात के साधनों के द्वारा ही सम्भव है । संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तरी पूर्वी भाग में प्राकृतिक साधनों की पर्याप्त उपलब्धता तथा सघन यातायात के कारण औद्योगिक प्रगति हुई हैं अत: यहाँ जनघनत्व भी अधिक पाया जाता है ।

14.5.3 कृषि व्यवसाय पर कम निर्भरता

नारी क्षेत्रों के विकास से भारत जैसे कृषि प्रधान देशों को राहत मिल सकती है क्योंकि कृषि व्यवसाय पर बढ़ती निर्भरता नगरीकरण के कारण कम होने लगती है । सघन ग्रामीण आबादी के कारण भारत की कृषि भूमि पर जनसंख्या दबाव अत्यधिक है । इससे छुटकारा तभी पाया

जा सकता है जब आबादी को शहरों की तरफ मोड़ा जाये, जहाँ उन्हें वाणिज्य, उद्योग, व प्रशासनिक सेवाएँ व व्यवसाय मिल सकते हैं ।

14.5.4 शिक्षा की प्रगति

नगरी क्षेत्रों में शिक्षा की समुचित सुविधा होने के कारण जनसंख्या के आकर्षण का केन्द्र । इन केन्द्रों पर शिक्षित लोगों का प्रतिशत अधिक होने के कारण तथा विज्ञान और तकनीकी ज्ञान प्राप्त होने से जनसंख्या का गुणात्मक पक्ष मजबूत होता है और देश की उन्नति होती है ।

14.6 नगरीकरण के विनाशकारी परिणाम

औद्योगिक तथा प्रौद्योगिक प्रगति के साथ-साथ नगरीकरण का दौर चल रहा है । यही कारण है कि नगरों की संख्या में तीव्र वृद्धि हुई है । इस दौड़ के परिणाम अच्छे होने की संभावना नहीं है क्योंकि आने वाले समय में विकासशील विश्व की लगभग एक -तिहाई जनसंख्या महानगरों में निवास करेगी । जिनका रहन-सहन का स्तर निम्न होगा और मलिन बस्तियों का विस्तार होगा । जिनमें जीवनोपयोगी सुविधाओं का नितान्त अभाव होता है । सही अर्थों मे इन मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों की दुःख स्थिति और वेदना ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालो लोगों से भी खराब होती है, यह आने वाले समय के लिए चुनौती है । नगरीकरण के विनाशकारी परिणमों के दो रूपों में देखा जा सकता है -

1. नगर की प्रशासनिक सीमा के अन्तर्गत रहने वाले लोगों की समस्यायें
2. नगर के बाहरी क्षेत्र की समस्यायें जिनसे नगरीय उपान्त अथवा प्रभाव क्षेत्र के नागरिक प्रभावित होते है । नगर के अंदर की समस्या में स्थान अभाव, आवास समस्या, परिवहन की समस्या, जल समस्या तथा प्रदूषण की समस्या के साथ-साथ मलमूत्र त्यागने, विद्युत व ईंधन समस्या प्रमुख हैं ।

14.6.1 स्थान की समस्या

शहरीकरण के साथ-साथ आवास, उद्योग यातायात, वाणिज्य के लिए भूमि की माँग उत्तरोत्तर बढ़ती रहती है । इसका परिणाम यह होता है कि एक तरफ स्थान की समस्या उठ खडी होती हैं तो दूसरी तरफ भूमि के मूल्य बढने लगते हैं । गगनोन्मुखी इमारतों का निमार्ण नगरी घनत्व में बढोतरी व कमजोर आय वर्ग वाले नगर वासियों का सस्ती भूमि की ओर प्रवास, मलिन बस्तियों का निर्माण, भौतिक तथा सामाजिक पर्यावरण में गिरावट, कृषि भूमि में कमी, आदि प्रवृत्तियां अपना प्रभाव दिखाने लगती है इस नगर समस्या ग्रस्त हो जाते हैं । विश्व के लगभग सभी नगर इस प्रकार की समस्याओं से लड़ रहे हैं । महानगरों में तो इनका उग्र रूप देखा जा सकता

14.6.2 आवासीय समस्या

संसार के सभी वृहद नगरों में आवास की समस्या जटिल रूप धारण करती ही जा रही है । इसका प्रमुख कारण यह है कि जनसंख्या वृद्धि जिस गति से हो रही है उस गति से मकानों की संख्या में बढ़ोतरी नहीं हो रही हैं जैसे भारत में नगरों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रतिवर्ष

करीब 17 लाख मकानों की कमी देखी गई है, इसमें प्रति परिवार का 30 से 50 प्रतिशत आमदनी का भाग व्यय हो रहा है । इसका परिणाम यह होता है कि जनसंख्या का एक बड़ा भाग फुटपाथ पर, मलिन नगरीकरण- विकास, कारण बस्तियों व झुग्गी-झोपड़ियों या एक -दो कमरों के मकान में नहने के लिए मजबूर है । इसमें स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव होता है इन बातों का प्रभाव उनकी कार्यक्षमता पर पड़ता है । मलिन बस्तियों के कारण नगर नियोजकों को नियोजन में कठिनाई का सामना करना पड़ता है तथा प्रशासकों के लिए भी यह एक गंभीर समस्या है । मलिन बस्तियाँ निम्न आय वर्ग के लोगों को कम किराये पर आवासीय सुविधायें प्रदान करती है । इन में गांव से नौकरी की तलाश में शहर आने वाले लोग छोटे व गंदे मकानों में रहते है । इन मलिन बस्तियों में दिल्ली की झुग्गी-झोपड़ी, मुम्बई झोपड़ पट्टी, चेन्नई का चेरीज, कोलकत्ता में बस्ती तथा कानपुर में अहाता मुख्य है ।

14.6.3 परिवहन की समस्या

नगर के आर्थिक विकास के लिए परिवहन आवश्यक है । नगर जितना बड़ा होगा उसका परिवहन तंत्र उतना ही विकसित तथा विस्तृत क्षेत्र में फैला होगा । उचित परिवहन व्यवस्था न होने पर नगर की आर्थिक उन्नति अवरुद्ध हो जाती है । नगर के विभिन्न भागों में जाने के लिए पैसा अधिक खर्च करना पड़ता है । साथ ही उपभोक्ता वस्तुओं की आपूर्ति में बाधा उत्पन्न हो जाती है । नगर को मिलने वाले खाद्य पदार्थों के लिए कच्चा माल और श्रमिकों का आवागमन, उद्यानों के उत्पादन बिक्री में कठिनाई आ जाती है खराब परिवहन व्यवस्था से पर्यावरण तो प्रदूषित होता ही है साथ ही साथ दुर्घटनाओं की संख्या अधिक हो जाती है । नवीन अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि कष्टप्रद तथा उबाऊ परिवहन साधनों से निवासियों कि मन : स्थिति, मानसिक तनाव और उसकी कार्यक्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है । नगरों में परिवहन समस्याओं में विशेष रूप से मार्गों की कमी उनका अनुपयुक्त होना, धीमा विकास, परिवहन के साधनों में कमी, उनका रख -रखाव इत्यादि हैं ।

भारत के अधिकांश नगरों विशेषरूप से कस्बों की सड़कें खराब स्थिति में हैं । वर्षा के समय में इनकी स्थिति अधिक खराब हो जाती है । न्यूयार्क, शिकांगो, टोकिया, लंदन, मास्को आदि विकसित विश्व के नगरों में सुरंगों में रेलवे, वृत्ताकार रेलवे जैसी नवीन व्यवस्था को अपनाया गया है । भारत में धन की कमी के कारण परिवहन का विकास नहीं हो पा रहा है ।

14.6.4 जलापूर्ति की समस्या

मानव जीवन में इसका विशेष महत्व है । जल की अशुद्धि व अपर्याप्तता मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालती है । प्राचीन सभ्यताओं का विकास नदी घाटियों में होने का मुख्य कारण जल ही रहा है । शहरीकारण के कारण जल की खपत प्रति व्यक्ति अधिक हो गई है । धरातलीय जल के अधिक उपभोग के कारण विश्व के नगरों में दूरदराज के क्षेत्रों से जल की पूर्ति की जा रही है । लासऐंजिल्स में 235 किमी. दूर स्थित सियरा नेवादा से जलापूर्ति होती है । बंगलौर को जलापूर्ति 100 किमी. दूर कोवेरी नदी द्वारा होती है । चेन्नई का विकास तो जल अभाव के कारण ही बाधित हो गया है । नगर के लिए जलापूर्ति हेतु 'Water Express'

रेलगाड़ी चल रही है । अधिक जनसंख्या की जलापूर्ति दिल्ली में यमुना नदी नहीं कर पा रही और एक यमुना नदी गंदे नाले में बदल चुकी है । पेयजल पूर्ति दिल्ली में हरियाणा से हो रही है । इस प्रकार शहरीकरण के कारण प्रादेशिक जल संसाधनों में असंतुलन पैदा हो जाता है ।

14.6.5 नगरीय प्रदूषण की समस्या

नगरीकरण के साथ-साथ प्रदूषण सबसे बड़ा खतरा बन गया है । इस पर नियंत्रण आवश्यक हो गया है अन्यथा सम्पूर्ण सभ्यता को खतरा उत्पन्न हो सकता हैं । प्रदूषण, नगरों में उद्योगों का केन्द्रीयकरण, तेल व डीजल से चलने वाले वाहनों की बढ़ती संख्या, नगरी जनसंख्या की बेतहाशा वृद्धि, नगरी जनसंख्या की अपभोगता वादी संस्कृति के विकास, पेड़ पौधों का विनाश, प्लास्टिक का बढ़ता प्रयोग व आरामतलब जीवन की कामना, जनसंख्या में पर्यावरण बोध का अभाव, सरकारी व गैर सरकारी प्रदूषण नियंत्रण का विफल होना शहरीकरण के दुष प्रभाव ही हैं । इस प्रदूषण के अंतर्गत वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण ठोस अपशिष्ट प्रदूषण मुख्य हैं जिसका नगर के लोगों के जीवन पर सीधा प्रभाव पड़ता है ।

विश्व के विभिन्न नगरों में वाहनों की संख्या तीव्र गति से बढ़ रही है । इससे वायु प्रदूषण का खतरा बढ़ता ही जा रहा है । टोकियो में कारों से निकलने वाले धुएँ से बचने के लिए यातायात सिपाही को ऑक्सीजन मास्क पहनना आवश्यक है । न्यूयार्क शहर में होने वाले प्रदूषण का लगभग 6090 केवल मोटर वाहनों द्वारा होता है ।

भारत में अपेक्षाकृत वाहनों की संख्या कम है लेकिन प्रदूषण समस्या गंभीर है । इसका प्रमुख कारण यहाँ के वाहनों का पुराना होना तथा इनका रख रखाव सही नहीं होना मुख्य है । केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार वाहनों से मुम्बई में 584 टन धुआँ प्रतिदिन जबकि दिल्ली में 865 टन धुआं निकलता है ।

उद्योगों के केन्द्रीयकरण के कारण संयुक्त राज्य अमेरिका का वायुमंडल अत्यधिक प्रदूषित हो चुका है । इसका अनुमान आप इस बात से लगा सकते हैं कि अपोलो 10 के अन्तरिक्ष यात्रियों ने हजारों कि मी. दूर से औद्योगिक क्षेत्र लॉस एन्जिलस के धुएँ के बादलों के कारण पहचान लिया था ।

14.6.6 मल निकास तथा जल निकास समस्या

नगरों मे अधिक जल उपभोग किया जाता है इससे काफी मात्रा में अपशिष्ट जल बच जाता है । इस जल का निकास नगर पालिकाओं के लिए एक समस्या हो गई है उचित निकास न होने के कारण यह जल खुले स्थानों में एकत्रित होकर मच्छर व मक्खियों का प्रजनन क्षेत्र बन जाता है । बड़ोदरा नगर का 10 % क्षेत्र जल भराव समस्या से प्रभावित है । इलाहबाद नगर का अल्लापुर आइ.सी. कॉलोनी, जार्जटाउन आदि क्षेत्र इस समस्या से प्रभावित हैं ।

14.6.7 ईधन तथा विद्युत आपूर्ति समस्या

नगरों को घरेलू व्यापारिक तथा औद्योगिक आवश्यकता के लिए पर्याप्त विद्युत नहीं मिल पाती है इसका प्रभाव नगरीय क्रियाओं और अर्थव्यवस्था पर पड़ने लगता है । भारत जैसे देश में

विद्युत संकट दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है । अधिक नगरीय जनसंख्या, प्रदूषण, रोगीयों की बढती संख्या विद्युत आपूर्ति कम होने का प्रभाव अस्पतालों , दूरसंचार, पेयजल संयंत्रों पर पड़ता है घरेलू ईधन के रूप में प्रयोग आने वाली रसोई गैस शहरी क्षेत्रों में लम्बे इंतजार के बाद मिलपाती है । भारत में रसोई गैस लोकप्रिय होती जा रहा हैं तो उसकी कमी उपलब्धता में कठिनाई होती जा रही है । इस मुख्य कारण शहरीकरण ही है ।

14.6.8 प्रशासनिक समस्या

नगर पालिका के वित्तीय संसाधन बहु त सीमित होते हैं जिससे नगर का विकास नहीं हो पाता और राष्ट्रीय प्रशासन से सहायता लेनी पड़ती है । प्रशासनिक इकाइयाँ परस्पर सहयोगी न होकर एक दूसरे के काम-काज में बाधा उत्पन्न करती हैं और दोषारोपण करती रहती हैं । इसका प्रभाव नगरवासियों पर देखा जा सकता है । उदाहरण के लिए दिल्ली में MCD (दिल्ली म्युनिसिपल कारपोरेशन) DMR (दिल्ली महानगरीय प्रदेश) NCR (राष्ट्रीय राजधानी प्रदेश) DELHI STATE (दिल्ली राज्य) प्रशासनिक ईकाइयां हैं । कभी-कभी राजनीतिक कारणों से ये संस्थायें एक दूसरे का विरोध करती हैं । इससे नगरीय विकास कार्यो में व्यर्थ का विलम्ब होता है ।

14.6.9 नगरों में निर्धनता की समस्या

1977 - 78 के अनुमान के आधार पर ज्ञात होता है कि नगरीय जनसंख्या का 45. 2 % भाग गरीबी रेखा की सीमा से नीचे अपना जीवन निर्वहन करने को मजबूर है । यह भी स्पष्ट है कि वर्ष 1993 - 94 में यह प्रतिशत कम हु आ और 32. 4 % रह गया था । लेकिन जनसंख्या के संदर्भ में इसमें लगातार वृद्धि हु ई है और आज देश की लगभग 80 मिलियन जनसंख्या अभावग्रस्त व निर्धनता में जीवनयापन कर रही है । नगरीय जनसंख्या में निर्धनता सर्वाधिक उड़ीसा राज्य में (42. 83 %) तथा इसके बाद क्रमश : मध्य प्रदेश (39. 44 %) महाराष्ट्र (26. 81 %) आन्ध्र प्रदेश (26. 63 %) है । नगरीय निर्धनता सबसे कम (5. 57 %) पंजाब राज्य में है । इसी तरह से कम नगरीकृत व न्यून प्रति व्यक्ति आय वाले राज्यों में निर्धनता अधिक देखी गई है, जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, अरूणाचल प्रदेश इसके अपबाद हैं । इन प्रदेशों में कम नगरीय करण के साथ-साथ निर्धनता भी कम है । दक्षिण भारतीय राज्यों में नगरीय निर्धनता अधिक पाई जाती है । भारत के सभी राज्यों में ग्रामीण निर्धनता की तीव्रता नगरों की अपेक्षा अधिक पाई जाती है ।

14.6.10 नैतिक व सामाजिक प्रभाव

नगरीयता अर्थप्रधान होती है तथा भौतिकता की दौड़ यहाँ देखने को मिलती है । अत : इस संस्कृति के लोग अधिक धन अर्जित करने की प्रवृत्ति तथा भौतिक सुख सुविधाओं का एकत्रित करने को ही परम उद्देश्य मानते हैं । इस प्रवृत्ति के कारण एक स्पर्धा का जन्म होता है इसका प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है क्योंकि ऐसे में जीवन यांत्रिक हो जाता है, अत्यधिक व्यस्तता, भाग दौड और तनाव पूर्ण जीवन के कारण सामाजिक मूल्य समाप्त होने लगते हैं । जैसे दया,

परोपकार, दुख-सुख में सहभागिता, सामाजिक मेल मिलाप, स्वार्थी विलासपूर्ण जीवन व मानवीय गुण समाप्त होना आदि । पाश्चात्य जगत के नगरों में ये समस्याऐं तीव्रता से बढ़ रही है । बेरोजगारी तनाव पूर्ण जीवन के कारण अपराधों की संख्या बढ़ रही है । भारत में भी इसी प्रकार के नगरों का विकास हो रहा है ।

14.7 नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण (Functional Classification of Towns)

14.7.1 नगरों के कार्य

नगरीय कार्यों के द्वारा नगर का विकास संभव होता है । डिकिन्सन महोदय के अनुसार कार्य नगरीय जीवन की चालक शक्ति होते हैं, ये बड़े पैमाने पर उसके विकास और आकारिकी को प्रभावित करते है । नगर के कार्य मुख्य रूप से अप्राथमिक क्रियाएं से सम्बन्धित होते हैं जिनमें वस्तु निर्माण, व्यापार, परिवहन, संचार आदि मुख्य हैं, जिन्हें द्वितीयक व तृतीयक श्रेणी के अंतर्गत सम्मिलित किये जा सकते हैं, जैसे वस्तु निर्माण उद्योग, व्यापार, परिवहन, संचार साधन आदि मुख्य हैं । मात्र खनन कार्य ही एक ऐसा कार्य है । जो प्राथमिक व्यवसाय होते हुए भी नगरों के विकास में योगदान देता है । इन के अतिरिक्त नगर के कार्यों में निम्न कार्य सम्मिलित हैं- (1) व्यावसायिक- चिकित्सा, शिक्षा (2) व्यक्तिगत में मनोरंजन व होटल व्यवसाय (3) वित्तीय में बीमा, बैंक इत्यादि (4) सार्वजनिक प्रशासन में सैन्य सेवायें जैसे जल, सफाई, विद्युत सेवायें (6) सामाजिक तथा सांस्कृतिक सेवायें जैसे साहित्य, दर्शन, धर्म इत्यादि को सम्मिलित कर सकते हैं ।

14.8 नगरीय कार्यो के प्रकार

नगर के कार्यो को ब्रून्स रूप से तीन वर्गों में रखा जा सकता है - (1) आधरभूत कार्य तथा अनाधारभूत कार्य (2) केन्द्रीय तथा अकेन्द्रीय कार्य (3) केन्द्राभिमुखी व अपकेन्द्री कार्य ।

नगर का उसके प्रदेश के साथ गहरा आर्थिक सम्बन्ध पाया जाता है । नगर द्वारा ही नगर के बाहर रहने वाले निवासियों की आवश्यकताऐं पूर्ण की जाती है । नगर की सीमा से बाहर के लोग नगर से उत्पादित वस्तुऐं खरीदते है यह कार्य जितना भी अधिक होता है नगर की आय में वृद्धि होती हैं तथा नगर का विकास तीव्र होता हैं ।

अनाधारभूत क्रियाओं में उन वस्तुओं और सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका उत्पादन नगर के अंदर होता हैं और उन्हें नगर के अंदर ही बेचा जाता है । इस प्रकार की क्रियाओं को माध्यमिक नगर सेवा कारक की भी संज्ञा दी जा सकती हैं ।

उपर्युक्त दोनों क्रियाओं के बीच के सम्बन्ध को अनाधारभूत अनुपात के नाम से जाना जाता है । इस अनुपात का उपयोग नगरों के वर्गीकरण में किया जा सकता है । इस अनुपात में समय के साथ परिवर्तन देखा जा सकता हैं ।

14.9 नगरों का वर्गीकरण

नगरों का वर्गीकरण यद्यपि स्थिति, परिस्थितिकी, उनका आकार, आकारिकी, विकास नगरीकरण का स्तर, उद्भव, नगरों का समूहन के आधार पर किया जा सकता है, लेकिन क्षेत्रीय विकास तथा नगरीकरण- विकास, तथा नियोजन की दृष्टि से नगरों के कार्यों व सेवा केन्द्रों के रूप में वर्गीकरण का महत्व अधिक है । वास्तव में कार्य नगर का मूल हैं इनकी अनुपस्थिति में नगर की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि इन कार्यो का नगर के सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक संरचना पर प्रभाव पड़ता हैं ।

नगरों का कार्य की दृष्टि से वर्गीकरण कठिन विषय है क्योंकि नगर एकल कार्यात्मक नहीं होकर बहु कार्यात्मक होते हैं । विभिन्न नगरों के कार्यो में तीव्रता व विशिष्टीकरण के अनुसार अंतर पाया जाता हैं । इसीलिए कोई एक सर्वमान्य वर्गीकरण विधि के अभाव में कठिन हो जाता है ।

14.10 कार्यात्मक वर्गीकरण की विधियाँ

नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण में काम आने वली विधियों को दो वर्गों में रखा जा सकता है - (1) गुणात्मक विधि (2) परिमाणात्मक विधियाँ ।

14.10.1 गुणात्मक विधियों

इस दिशा में प्रथम प्रयास 1921 में अरुसों महोदय का रहा हैं । इन्होंने अनुभव के आधार पर नगरों को दो भागों में रखा पहला सक्रिय तथा दूसरा निष्क्रिय । बाद में इन्होंने मुख्य कार्यों के आधार पर सक्रिय नगरों का पुन : छ : :कार्यात्मक वर्गों में विभाजित किया । अरूसों ने नगरों को बहु कार्यिक बताते हुए प्राथमिक अथवा अधारभूत कार्यो के महत्व पर प्रकाश डाला है ।

समाजशास्त्री मैकेन्नी (अमेरिका) ने 1925 में वस्तुओं के उत्पादन तथा वितरण की अवस्था को आधार मानते हुए समुदायों को चार प्रकारों में विभक्त किया- (1) प्राथमिक सेवा समुदाय उदाहरणार्थ कृषि नगर प्राथमिक उत्पादन वाले ग्रामीण क्षेत्रों और महानगरीय केन्द्रों के बीच कड़ी के रूप में कार्य करते हैं । (2) व्यापारिक श्रेणी समुदाय जिसमें माल संग्रहण व उसके वितरण के केन्द्र के रूप में कार्य (3) औद्योगिकी समुदाय इसके अन्तर्गत पहले व दूसरे वर्ग का योग पाया जाता है । (4) सेवाओं का केन्द्र ।

इसी प्रकार जेम्स (1930) में अपने लेख में भारतीय नगरों के कुल 6 प्रकार बताये हैं । हाल (1934) ने जापान के नगरों को विकास के आधार पर चार भागों में रखा हैं ।

14.10.2 सांख्यिकीय विधियाँ

इसमें गणितीय व सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है । इनमें से कुछ विधियों इस प्रकार है -

14.10.2.1 हैरिस की विधि

हैरिस की विधि (1943) एक अर्द्धसांख्यिकीय विधि है । इस विधि को हेरिस महोदय ने कार्यात्मक विश्लेषण की सांख्यिकीय विधि की संज्ञा दी है । यह विधि नगर में रहने वाले लोगों के व्यवसाय तथा रोजगार सम्बन्धी आँकड़ो पर आधारित है । हैरिस की इस विधि के अनुसार नगर में विकसित जिस व्यवसाय में लगे व्यक्तियों की संख्या सबसे अधिक होगी वह व्यवसाय नगर का सबसे मुख्य कार्य होगा व उस नगर को उसी कवि वर्ग में रखा जायेगा । हैरिस महोदय ने अनुभव का प्रयोग करते हुए प्रत्येक कार्य के विशिष्टीकरण के लिए भिन्न-भिन्न आधार प्रस्तावित किये हैं । इस वर्गीकरण में रोजगार तथा व्यवसाय के आकड़ों का प्रतिशत के आधार पर उपयोग किया गया है । इन आकड़ों को जनगणना से प्राप्त किया गया हैं ।

हैरिस महोदय ने वर्गीकरण में कुल 9 वर्ग तथा उनके लिए मापदण्ड प्रस्तुत किये है - (1) विनिर्माण केन्द्र (2) थोक व्यापार केन्द्र (3) फुटकर व्यापार केन्द्र (4) विभिन्न प्रकार के रोजगार केन्द्र (5) यातायात केन्द्र (6) खनन व्यवसाय केन्द्र (7) विश्वविद्यालय नगर (8) पर्यटन नगर केन्द्र (9) अन्य नगर व राजनीतिक नगर ।

हैरिस वर्गीकरण को कुछ विद्वानों ने अपनाया तो कुछ ने इसकी कड़ी आलोचना की । सर्वाधिक आलोचना आँकोड़ों के स्त्रोत तथा आधार मूल्यों के चयन को लेकर की गई है । इस वर्गीकरण से सिविल, सैनिक, व्यावसायिक, वित्तीय कार्यों में अंतर स्थापित करना बहुत कठिन कार्य है । हैरिस के इस वर्गीकरण को कुछ विद्वानों ने संशोधित भी किया है जिनमें नीडलर (1949), विक्टर (1954) और हार्ट (1955) जैसे विद्वानों का नाम प्रमुख है ।

14.10.2.2 नेल्सन की विधि

नेल्सन ने प्रामाणिक विचलन विधि (Standard Deviation Method) का प्रयोग अमेरिकी नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण के लिए किया । नेल्सन द्वारा प्रतिपादित विधिक्रमिक बिंदु इस प्रकार हैं -

1. जनगणना विभाग द्वारा दिये गये सेवा वर्गीकरण में से उपयुक्त वर्गों का चयन ।
2. नगर के विभिन्न कार्यों में लगे श्रमिकों का अलग-अलग प्रतिशत ज्ञात करना ।
3. प्रत्येक कार्य वर्ग के लिए औसत ज्ञात करना ।
4. ज्ञात औसत के आधार पर सभी कार्यों का अलग-अलग प्रमाणिक विचलन निकालना ।
5. कार्य के विशेषीकरण के आधार पर तीन वर्गों में विभाजन करना (i)mean + ISD(ii)mean + 2SD तथा (iii) mean + 3SD।
6. यदि कार्य किसी वर्ग में समाहित नहीं हो रहा है तो उसे विभिन्न कृत नगरों की श्रेणी में रखना ।

विधि के गुण तथा दोष

नेल्सन विधि में प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रक्रिया सरल और वैज्ञानिक है क्योंकि इसके माध्यम से प्रत्येक सेवा वर्ग में से एक नगर में किसी कार्य की विशिष्टता को ज्ञात करना आसान है । इसी से उसका कार्यात्मक पदानुक्रम निश्चित किया जा सकता है । इनकी विधि सरल तथा

वैज्ञानिक होते हुए भी विश्व के सभी नगरों के लिए उपयुक्त हो, आवश्यक नहीं है । एक तरफ प. देशों के लिए यह विधि उपयुक्त है क्योंकि वहाँ प्रत्येक नगर में किसी एक कार्य का विशेषीकरण देखा जा सकता है तो दूसरी तरफ भारत जैसे देश जहाँ अधिकतर नगर बहुकार्यिक विशेषता रखते हैं उनके लिए यह विधि उपयोगी नहीं है । इसी विधि का दोष यह भी है कि इसमें नगर जनसंख्या के आकार को आपेक्षित स्थान नहीं दिया गया है । नेल्सन विधि नगरों की मात्रात्मक विशेषता का आकलन कम व उनकी गुणात्मक विशेषता की व्याख्या अच्छी करती हैं, जिससे भ्रान्ति उत्पन्न हो जाती है ।

14.10.2.3 वेब विधि

वेब विधि के अनुसार किसी भी नगर के विशिष्टीकरण को मापने का अच्छा तरीका वह अनुपात है जो उस नगर के कार्य विशेष में लगे लोगों के प्रतिशत तथा वहाँ के सभी नगरों के उसी काम के माध्य-प्रतिशत के बीच में होता है । इसको प्राप्त करने के लिए उन्होंने एक सूत्र का प्रतिपादन किया । इस आधार पर ही (1959) राज्य के नगरीय केन्द्रों का कार्यात्मक वर्गीकरण प्रस्तुत किया है ।

वेब द्वारा प्रस्तुत यह विधि विभिन्न कृत नगरों व अन्तर्नगरीय तुलना करने के लिए उपयुक्त नहीं है ।

14.10.2.4 बहुचरीय विश्लेषण विधि (Multi -Variate analysis method)

इस विधि के अन्तर्गत बहुत से परिवर्तनशील चरों का सांख्यिकीय विधि से विश्लेषण किया जाता है । इसके द्वारा नगरों का कार्यात्मक, आर्थिक, सामाजिक तथा जनांकिकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत कर लिया जाता है । 1961 में मोसर तथा स्कॉट का योगदान मुख्य रहा है । आपने जनसंख्या का आकार, उसकी संरचना परिवर्तन, आर्थिक विशेषता, सामाजिक वर्ग, स्वास्थ्य शिक्षा, मतदान की विशेषताऐं जैसे 57 चरों के आधार पर ब्रिटिश नगरों का सामाजिक तथा आर्थिक विविधताओं का मात्रात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है । बहुचरीय विश्लेषण की सबसे अधिक लोकप्रियता विधि गणक विश्लेषण को बताया गया है, इसके अन्तर्गत घटकों का सांख्यिकीय विश्लेषण होता है ।

उपर्युक्त बहुचरीय विश्लेषण को आधार मानकर मोसर स्काट ब्रिटिश नगरों (1961), काजी अहमद द्वारा भारतीय नगरों (1965), किंग द्वारा (1966), कनाडा के नगरों तथा हैरिस 1970 द्वारा सोवियत नगरों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है ।

14.11 भारत में नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण

नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण में भारतीय विद्वानों ने नेल्सन की विधि का उपयोग सर्वाधिक किया है । इस दिशा में सबसे पहला प्रयास 1954 में जानकी ने किया । उन्होंने केरल के नगरों को पांच मुख्य वर्गों में बांटा । काशीनाथ सिंह ने 1959 में उत्तर प्रदेश के नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण प्रस्तुत किया । यह नेल्सन की विधि पर आधारित कर किया गया था । इसी तरह प्रकाश राव ने अपना वर्गीकरण न्यूनतम वर्ग रेखिक समाश्रयण विधि द्वारा पेश किया

। इसी क्रम में गांगुली (1965) ने नेल्सन विधि को आधार मानते हुए नगरों का कार्यातमक वर्गीकरण दिया । काजी अहमद ने 1965 में कार्यात्मक विशेषताओं के विश्लेषण के लिए बहुचरीय विधि का प्रयोग किया । 1966 में एन.पी. सक्सेना, ओम प्रकाश सिंह, ओंकार सिंह (1969) पी. एस तिवारी (1968), 1976 में सिंह व साहबदीन के कार्य उल्लेखनीय रहे हैं ।

14.12 नगरों के कार्यात्मक समूह (Functional Grouping of Towns)

ऊपर दिये गये विवरण को आधार मानते हुए व्यावसायिक तथा कार्यात्मक विशेषताओं को ध्यान रखते हुए नगरों को निम्न प्रकार्यात्मक वर्गों में रखा जा सकता है - (मानचित्र - 3)

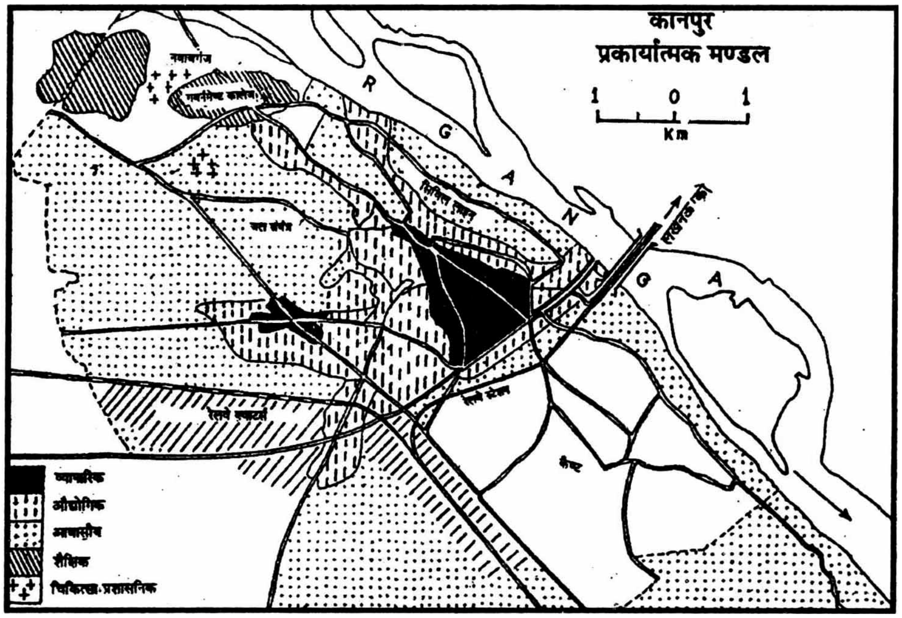

मानचित्र 14.3 कानपुर का प्रकार्यात्मक मण्डल

1. उत्पादन केन्द्र
2. व्यापार व वाणिज्य केन्द्र
3. प्रशासनिक केन्द्र
4. सांस्कृतिक केन्द्र
5. परिवहन तथा संचार केन्द्र
6. पर्यटन व मनोरंजन केन्द्र
7. सैन्य अथवा सुरक्षा केन्द्र
8. मिश्रित केन्द्र

14.12.1 उत्पादन केन्द्र

इस आधार पर नगरों को दो भागों में रखा जा सकता है (a) प्राथमिक उत्पादन केन्द्र, और (b) औद्योगिक उत्पादन केन्द्र । प्राथमिक उत्पादन केन्द्र के अन्तर्गत वे उत्पादन सम्मिलित हैं जो

कि प्रकृति प्रदत्त होते हैं । इस प्रकार के केन्द्रों में नगर जनसंख्या प्राकृतिक संसाधनों के निष्कर्षण कार्य में लगी होती है । इसके अन्तर्गत खनन, लकड़ी काटना, तेल उत्पादन, मछली पकड़ना आदि से सम्बन्ध रखने वाले नगरों को शामिल किया जाता है ।
औद्योगिक उत्पादन नगरों में कच्चे माल का उपयोग परिष्कृत करने का कार्य मशीनों की मदद से कर उसकी कीमत में वृद्धि कर ली जाती है जैसे लौह -अयस्क से स्पात, चूना पत्थर से सीमेन्ट, गन्ने से चीनी, बॉक्साइट से एल्यूमिनियम आदि । इस प्रकार के नगर यातायात तथा संचार के साधनों के माध्यम कच्चे माल के स्रोत तथा बाजारों से जुड़े रहते हैं । इस प्रकार के नगर कभी -कभी, किसी उद्योग विशेष या उद्योगों के समूह द्वारा जाने जाते हैं जैसे जमशेदपुर, भद्रावती, भिलाई, बरौनी, बरमिंघम, ओसाका, नागासाकी, शंघाई का महत्व औद्योगिक नगर के रूप में स्थापित है ।

14.12.2 व्यापार वाणिज्य केन्द्र

व्यापार नगर में वस्तुओं का क्रय-विक्रय, विनिमय, संग्रह आदि कार्य सम्पादित किये जाते हैं । रसल स्मिथ ने इस प्रकार के नगरों के विकास की दो अवस्थायें दी हैं (A) ये नगर स्थानीय क्षेत्रों के उपयोग आने वाली वस्तुओं का विनिमय तथा संग्रह करते हैं (B) ये नगर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए मध्य स्थिति के रूप में कार्य करते हैं इन्हें बन्दरगाह कहा जाता है, यहाँ से निर्यात आसान होता है ।

14.12.3 प्रशासनिक केन्द्र

औद्योगिक क्रान्ति से भी पहले सभी बड़े नगर प्रशासनिक नगर होते थे । यहाँ प्रशासनिक कार्य व व्यापारिक कार्य भी विकसित हो जाते थे लेकिन अब यह सुविधा विश्व के चुनिंदा नगरों के पास ही है । इनकी परिवहन की दृष्टि से स्थिति अनुकूलतम है । ये नगर राजनीति के भी केन्द्र होते हैं । प्रशासन के केन्द्र होने के कारण सर्वोच्च पद प्राप्त सरकारी अफसरों, शीर्षस्थ राजनयिकों आदि का निवास स्थान होता है । इन नगरों को साफ सुथरा व सुनियोजित रखा जाता है प्राचीन समय के प्रशासनिक नगर किले के नगर अथवा गढ़ होते थे, इस प्रकार के नगरों के चारों तरफ दीवार या गहरी खाई हुआ करती थी जैसे उदयपुर, जोधपुर, चित्तौड़ आदि । वर्तमान के प्रमुख प्रशासनिक नगर, दिल्ली, वाशिंगटन, मास्को, केनबरा, इस्लामाबाद मुख्य हैं।

14.12.4 सांस्कृतिक केन्द्र

इस प्रकार के नगरों में धार्मिक तथा शैक्षणिक कार्यो की प्रधानता पायी जाती है । यहाँ विश्वविद्यालय, कॉलेज, मंदिर, गिरजाघर, मस्जिद आदि स्थापित होते है । इस प्रकार के नगरों की संख्या कम होती है तथा इनका आकार छोटा ही होता है । जैसे हीरद्वार, मथुरा, पुरी, उज्जैन, मक्का, जेरुशलेम, वेटिकन सिटी आदि नगर व शैक्षणिक दृष्टि से आक्सफोर्ड, इलाहबाद, कैम्ब्रिज, हारवर्ड, रुड़की, पिलानी, अलीगढ़ नगर सम्मिलित हैं ।

14.12.5 परिवहन व संचार के केन्द्र

ये नगर उन स्थानों पर विकसित होते है जहाँ परिवहन मार्गो का मिलन स्थल हो अथवा परिवहन के माध्यम में परिवर्तन होता हो जैसे रेलमार्ग की समाप्ति और सड़क मार्ग का प्रारम्भ उदाहरणार्थ ऋषिकेश, कोटद्वारा, जम्मू काठगोदाम आदि । दूसरा समुद्र मार्ग समाप्त हो व स्थल मार्ग प्रारम्भ हो जैसे मुम्बई, कलकत्ता, चेन्नई, विशाखपट्नम् लंदन, संघाई आदि । जिस स्थान पर आन्तरिक जलमार्ग समाप्त होता हो व थलमार्ग का प्रारम्भ हो जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका का महान् झील के तट पर विकसित नगर आदि । (मानचित्र 14. 4 महान सुरक्षात्मक कार्य सहित बीजिंग एक प्रमुख मार्ग केन्द्र)

14.12.6 पर्यटन व मनोरंजन केन्द्र

इन नगरों में मनोरंजन व पर्यटन की सुविधाऐं उपलब्ध होती है । इन नगरों का चयन तथा विकास स्वास्थ्य वर्द्धक जलवायु, प्राकृतिक दृश्यों, क्रीड़ा जैसी सुविधाओं का पूरा ध्यान रखते हुए किया जाता हैं । यहाँ अच्छे होटल, बैंक, परिवहन कार्यालय आदि पाये जाते हैं । पर्यटकों के कारण यहाँ के निवासियों की आय का प्रमुख स्त्रोत होता है, जैसे आबू पर्वत, शिमला, नैनीताल, दार्जिलिंग इस प्रकार के नगर हैं ।

14.12.7 सैन्य अथवा सुरक्षा केन्द्र

मध्यकाल में सुरक्षा की दृष्टि से दुर्ग का निर्माण किया जाता था । इनकी स्थापना मूलत: प्रशासनिक कारणों से की जाती थी लेकिन समय के साथ ये समीपस्थ निवासियों को आक्रमण से सुरक्षा देना व चौकियों के रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया । इसका अच्छा उदाहरण रोम काल में स्थापित नगर वर्तमान में भी बहुत से नगरों का विकास सैनिक तथा सुरक्षा केन्द्रों के रूप में किया जाता है । ये नगर वायु सेना, नौसेना, स्थल सेना के मुख्य केन्द्र के रूप में विकसित किये गये हैं, जैसे डिगोगार्सिया (उ. हिन्द महासागार में) व जोधपुर (भारत म)ई वायुसेना के मुख्य केन्द्र के रूप में हैं ।

14.12.8 मिश्रित नगर

कुछ नगर ऐसे होते हैं जो किसी एक नगरीय कार्य में विशिष्टीकरण न प्राप्त कर बहुत से नगरीय कार्यो को सम्पन्न करते हैं । यहाँ कार्यों का इतना मिलाजुला रूप देखने को मिलता हैं कि उस नगर के प्रधान कार्य का पता लगाना असम्भव हो जाता है । इसमें मेरठ, सहारनपुर, कलकत्ता, बंगलौर आदि नगर सम्मिलित हैं ।

उपर्युक्त के अतिरिक्त भी नगरीय कार्यों के अनेक लघु वर्ग हैं जिनमें चिकित्सालय नगर जैसे वेलौर (भारत), आरोग्य केन्द्र मुआली (भारत) उष्ण निर्झर नगर सीताकुंड (मुंगेर भारत) आदि ।

14.13 सारांश (Summary)

नगरों का विकास पुराना है, इसके प्रमाण सिन्धु घाटी सभ्यता के नगर व बेबीलोन में मिलते हैं । ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्र मे बदलने की प्रक्रिया का नाम ही नगरीकरण है । जिस देश मे

औद्योगिक व आर्थिक विकास जितनी गति तीव्र होती है उन देशों में नगरीकरण भी उतना ही द्रुत गति से होता है । स्पष्ट है कि नगरीकरण की प्रक्रिया अत्यन्त पुरानी है । इसका उद्भव लगभग 10, 000 वर्ष पूर्व प्रागैतिहासिक काल में हुआ था ।

नगरीकरण की प्रक्रिया के बहुत से कारक हैं जैसे कृषि में यंत्रीकरण, उद्योगों की स्थापना, प्रशासनिक इकाइयों की स्थापना, परिवहन मार्ग, सांस्कृतिक केन्द्र इत्यादि ।

नगरीकरण के परिणाम वरदानस्वरूप तथा विनाशकारी दोनों ही तरह के हो सकते हैं । लाभकारी परिणामों में औद्योगिक प्रगति, शिक्षा में प्रगति, कृषि पर निर्भरता में कमी तथा यातायात के साधनों का विकास मुख्य है । विनाशकारी परिणामों में स्थान समस्या, आवास समस्या, पर्यावरण समस्या, परिवहन की समस्या, जलापूर्ति की समस्या मुख्य हैं ।

नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण के द्वारा हम उनकी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक स्थिति ज्ञात कर सकते हैं । यह वर्गीकरण गुणात्मक व परिमाणात्मक विधियों के द्वारा किया जा सकता है । इसी आधार पर नगरों को प्रकार्यात्मक वर्गों में रखा गया है ।

बोध प्रश्न - 1

1. नगरीकरण क्या है?

   ....

   ....

2. नगरीकरण के प्रमाण कौन सी दो सभ्यताओं में मिले हैं?

   ....

   ....

3. नगरीकरण से जुड़ी तीन अवधारणाएँ कौन सी हैं?

   ....

   ....

4. नगरीकरण के कोई दो कारक बताओ ।

   ....

   ....

5. प्रशासनिक केन्द्र अधिक जनसंख्या को आकर्षित क्यों करते हैं?

   ....

   ....

6. नगरीकरण के दो लाभकारी परिणाम लिखो ।

   ....

   ....

7. नगरीकरण के तीन विनाशकारी परिणाम बताओ ।

   ....

   ....

8. नगरीय प्रदूषण के तीन कारक लिखो ।

   ....

…………………………………………………………………………………………

9. नगर के कार्य कौन सी व्यावसायिक श्रेणी में रखे जा सकते हैं?

…………………………………………………………………………………………

…………………………………………………………………………………………

10. नगर के कार्यों को मूल रूप से कितने वर्गों में रखा जा सकता है?

…………………………………………………………………………………………

…………………………………………………………………………………………

11. नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण कितनी विधियों से किया जा सकता है?

…………………………………………………………………………………………

…………………………………………………………………………………………

12. नेल्सन ने नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण में कौन सी विधि का प्रयोग किया?

…………………………………………………………………………………………

…………………………………………………………………………………………

13. मिश्रित नगर क्या हैं?

…………………………………………………………………………………………

…………………………………………………………………………………………

14.14 शब्दावली (glossary)

- **नगरीकरण (Urbanization) :** किसी ग्राम्यप्रधान समाज के नगरीयप्रधान समाज मे रूपान्तरण की प्रक्रिया
- **जनसंख्या घनत्व (Density Of Population) :** किसी प्रदेश में निवास करने वाले नगरीकरण - विकास, कारण एवं परिणाम; नगरों का मनुष्यों की संख्या और उस प्रदेश के क्षेत्रफल का पारस्परिक अनुपात । कार्यात्मक वर्गीकरण
- **औद्योगीकरण (Industrialization) :** एक प्रदेश की अर्थव्यवस्था में औद्योगिक क्रिया की भूमिका का महत्वपूर्ण हो जाना ।
- **कस्बा (Town) :** गाँव के बराबर या गाँव से बड़ी बस्ती, जिसके निवासियों का मुख्य व्यवसाय कोई नगरीय सेवा या निर्माण उद्योग होता है ।
- **मलिन बस्ती (Slum Area) :** नगर का बेतरतीब रूप में बसा, अव्यवस्थित तौर पर विकसित रण सामान्यतया उपेक्षित ऐसा क्षेत्र 'स्लम ' कहलाता है, जो अत्यधिक प्रदूषित और घनाबसा होता है ।
- **नगर प्रभाव क्षेत्र (Umalnd) :** नगर और उसका समीपवर्ती देहात क्षेत्र ।
- **स्थितिलब्धि (Location Quotient) :** इसका प्रयोग सर्वप्रथम सन 1942 में संसाधन नियोजन बोर्ड द्वारा किया गया था । यह एक अनुपातों का अनुपात है । इससे सापेक्षित केन्द्रीकरण की जानकारी मिलती है ।
- **नगरीय नियोजन (Urban Planning) :** नगर की उपलब्ध भूमि का उत्कृष्टतम उपयोग करने की योजना ।

- **महानगर (Metropolis) :** जनसंख्या की दृष्टि से दस लाख या इससे अधिक जनसंख्या वाले नगर ।

14.15 संदर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. बंसल : **नगरीय भूगोल,** मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, 2000
2. मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन , आगरा, 2001
3. शर्मा, राजीव लोचन **: प्रादेशिक एवं नियोजन,** किताबघर कानपुर
4. Singh , Hari Har , :**A study in urban Geography ,** NGSI Varanasi , 1972
5. सिंह, काशीनाथ रंज जगदीश सिंह, : **मानव और आर्थिक भूगोल** ,तारा पब्लिकेशन्स, वाराणसी, 1975
6. सिंह ओम प्रकाश **नगरीय भूगोल,** तारा पब्लिकेशन्स, वाराणसी 1979
7. सिंह उजागर : **नगरीय भूगोल,** उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी , लखनऊ, 1974
8. वर्मा लक्ष्मी नारायण : **अधिवास भूगोल ,** राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1983

14.16 बोध प्रश्नो के उत्तर

बोध प्रश्न - 1

1. ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय क्षेत्र में बदलने की प्रक्रिया ही नगरीकरण है ।
2. सिन्धु घाटी सभ्यता व बेबीलोन में ।
3. (A) जनसांख्यिकीय तथ्य (B)समाज में संरचनात्मक परिवर्तन (C) नगरीकरण एक व्यावहारिक प्रक्रिया के रूप में ।
4. उद्योगों की स्थापना (B) प्रशासनिक इकाइयों की स्थापना ।
5. नागरिक सुविधाओं के कारण ।
6. (A) औद्योगिक प्रगति (B) यातायात के साधनों का विकास ।
7. (A) स्थान समस्या (B) परिवहन समस्या (C) जलापूर्ति समस्या ।
8. उद्योगों का केन्द्रीकरण (B)तेल, डीजल वाहनों की अधिक संख्या (C) पेड़ पौधों का विनाश।
9. द्वितीयक व तृतीयक व्यावसायिक श्रेणी में ।
10. तीन वर्गो में - (A) आधारभूत कार्य व अनाधारभूत कार्य (B) केन्द्रीय व अकेन्द्रीय (C) केन्द्राभिमुखी व अपकेन्द्री कार्य ।
11. दो विधियों से - (A) गुणात्मक विधि (B) परिमाणात्मक विधियाँ ।
12. प्रामाणिक विचलन विधि ।
13. कुछ नगरों का एक कार्य में विशिष्टीकरण न होकर बहुत से नगरीय कार्यों का सम्पादन ।

14.17 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. नगरीकरण क्या है? आधुनिक समय में नगरीकरण के तत्व बताईए ।
2. "नगरीकरण विशिष्टत: विकसित देशों के लिए विनाश और वरदान दोनों हो सकता है । " संक्षेप में व्याख्या कीजिए ।

3. नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण क्या है? विस्तार से लिखो ।
4. विश्व में नगरीकरण के विकास क्रम को समझाइए ।
5. विश्व में नगरीकरण के कारणों को स्पष्ट कीजिए ।
6. नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण की विधियों की विवेचना कीजिए ।

इकाई-15 : जनजातीय समाज द्वारा आवास तथा अर्थव्यवस्था से समानुकूलन के रूप : एस्किमो, बुशमैन , पिग्मीभील, गौण्ड तथा नागा (Modes of Adaption of habitat and Economics of Tribal Societies : Eskimoes,Bushman , Pygmies, Bhils , Gonds and Nagas)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 एस्किमो

15.2.1 निवास क्षेत्र (habitat)

15.2.1.1 निवास क्षेत्र का प्राकृतिक वातावरण

15.2.2 शारीरिक संगठन (body structure)

15.2.3 चारित्रिक विशेषताएँ

15.2.4 आखेट (Hunting)

15.2.4.1 शीतकाल में सील मछली का आखेट (Winter hunting)

15.2.4.2 बसन्तकालीन आखेट (Spring hunting)

15.2.4.3 गीष्मकाल (summer)

15.2.5 भोजन

15.2.6 वस्त्र

15.2.7 उपकरण और अस्त्र -शस्त्र

15.2.8 गृह और बस्ती

15.2.9 परिवहन तथा यातायात के साधन

15.2.10 सामाजिक व्यवस्था और संस्कृति

15.2.11 वातावरण समायोजन की दक्षता

15.2.12 आधुनिक संस्कृति से सम्पर्क

15.3 बुशमैन

15.3.1 निवास क्षेत्र (habitat)

15.3.2 प्राकृतिक वातावरण

15.3.3 शारीरिक संरचना (body structure)

15.3.4 भोजन

15.3.5 आखेट करना
15.3.6 वस्त्र
15.3.7 अधिवास
15.3.8 शस्त्र तथा सजा
15.3.9 सामाजिक व्यवस्था
15.3.10 आधुनिक समाज से सम्पर्क
15.4 पिग्मी (pygmy)
15.4.1 निवास क्षेत्र (habitat)
15.4.1.1 निवास क्षेत्र का प्राकृतिक वातावरण
15.4.1 उपजातियाँ (tribes)
15.4.2 शारीरिक संगठन (body structure)
15.4.3 भोजन (food)
15.4.4 आखेट (hunting)
15.4.5 वस्त्र (clothing)
15.4.6 निवास की झोपडियों और सजा (Shelter and Equipment)
15.4.7 व्यापार (Trade)
15.4.8 व्यवहार (Behaviour)
15.4.9 सामाजिक व्यवस्था
15.4.10 आधुनिक समाज से सम्पर्क
15.5 भील(bhils)
15.5.1 निवास क्षेत्र
15.5.2 शारीरिक लक्षण
15.5.3 अर्थव्यवस्था
15.5.4 अधिवास
15.5.5 उपकरण और अस्त्र-शस्त्र
15.5.6 वस्त्र एवं आभूषण
15.5.7 रीति-रिवाज
15.5.8 सामाजिक संगठन
15.6 गोण्ड (Gonds)
15.6.1 निवास प्रदेश
15.6.2 जीवन-पद्धति और अर्थतन्त्र
15.6.3 उद्यम
15.6.3.1 दिप्पा कृषि
15.6.3.2 पैण्डा कृषि

15.6.3.3 मत्स्य कर्म
15.6.3.4 पशुचारण
15.6.4 लघु कुटीर उद्योग
15.6.5 औजार और उपकरण
15.6.6 श्रम मजदूरी तथा कबाड़ी प्रथा
15.6.7 वस्त्र एव आभूषण
15.6.8 गृह और बस्ती
15.6.9 उपकरण और अस्त्र-शस्त्र
15.6.10 सामाजिक संगठन
15.7 नागा (Nagas)
15.7.1 निवास प्रदेश
15.7.2 अर्थव्यवस्था
15.7.2.1 आखेट
15.7.2.2 मछली पकड़ना
15.7.2.3 कृषि कार्य
15.7.3 भोजन
15.7.4 वस्त्र
15.7.5 उपकरण और अस्त्र-शस्त्र
15.7.6 अधिवास
15.7.7 सामाजिक व्यवस्था
15.7.7.1 युवा गृह
15.8 सारांश
15.9 शब्दावली
15.10 संदर्भ ग्रंथ
15.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
15.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

15.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय को अध्ययन की सुगमता की दृष्टि से निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं : -

- विश्व के विभिन्न जन-जातीय समाज के स्वरूपों का अध्ययन करना ।
- जन-जातीय समाज के विभिन्न आर्थिक उपागमों को समझना ।
- जन-जातीय समाज की विभिन्न जीवन-निर्वाह पद्धतियों का अध्ययन करना ।
- उनकी सामाजिक संगठन, अधिवास एवं विभिन्नताओं को समझना ।
- पर्यावरण के साथ सामंजस्य के विभिन्न प्रारूपों का अध्ययन करना ।

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव का जीवन पर्यावरण से सर्वाधिक प्रभावित होता हैं । पृथ्वी के विभिन्न प्रदेशों में भिन्न प्राकृतिक दिशायें व्याप्त हैं । इन विभिन्न प्रदेशों में निवास करने वाले निवासियों ने वातावरण की इन प्राकृतिक दशाओं के प्रभाव को जड़वत रहकर सहन नहीं किया है वरन् मानव ने अपनी आवश्यकतानुसार पर्यावरण की दशाओं में परिवर्तन कर उन्हें अपने अनुकूल बनाने का प्रयास कर उपयुक्त व्यवसायों का चयन किया है, लेकिन दूसरी ओर पृथ्वी के कुछ प्रदेशों के पर्यावरण की कठोर दशाओं ने मानवीय क्रिया-कलापों को अति सीमित कर दिया हैं । वस्तुतः प्रतिकूल पर्यावरणीय दशाएें रखने वाले पृथ्वी के प्रदेशों के मानवीय समूहों की अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक व्यवस्था पर पर्यावरण की दशाओं के स्पष्ट प्रभाव पड़े हैं । पृथ्वी पर प्रतिकूल पर्यावरण की दशाऐं रखने वाले इन प्रदेशों में भूमध्यरेखीय, गर्म मरूस्थल, ठण्डे मरूस्थल तथा शीतोष्ण घास के मैदान उल्लेखनीय है । इन प्रदेशों में पर्यावरण की प्रतिकूल दशाओं के कारण मानव आर्थिक व सामाजिक विकास की दौड़ में पिछड़ गया हैं । यही कारण है कि वर्तमान में विश्व की प्रमुख पिछड़ी आदिम जन-जातियाँ पृथ्वी के इन्हीं प्रदेशों में निवास करती हैं ।

15.2 एस्किमो (Eskimos)

साधारणतया एस्किमों का अभिप्राय "कच्चा माँस खाने वाला" होता हैं । इनकी सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था आखेट पर ही निर्भर हैं । एस्किमों का जीवन कठोर वातावरण, निम्न आर्थिक क्रियाऐं तथा विश्व के अन्य लोगों से सम्पर्क का अभाव आदि कठिनाइयों के बीच व्यतीत होता हैं ।

15.2.1 निवास क्षेत्र

एस्किमों के निवास स्थल अमेरिका के उत्तर -पूर्व में स्थित ध्रुव से सटे हुए ग्रीनलैण्ड के विशाल द्वीप बुशमैन से लेकर पश्चिम में अलास्का और बेरिंग जल डमरू मध्य के उस पार साइबेरिया के उत्तरी-पूर्वी छोर तक फैले हुए हैं । यह समस्त क्षेत्र कुछ जल-स्थल भागों के अतिरिक्त एक अखण्ड बर्फ की चादर से आच्छादित हैं । इनका निवास क्षेत्र मुख्यत : टुण्ड्रा प्रदेश में हैं । टुण्ड्रा प्रदेश के घुमक्कड़, नृजातीय समूह (एस्किमो) को इन्यूट (Inuit) कहते है । ये अलास्का, कनाडा, ग्रीनलैण्ड और एल्यूशियन द्वीपों में रहते हैं । एस्किमों के युइत (Yuit), चुकची (Chukchi), युकाघीर (Yukaghir) व याकूत (Yakut) साइबेरिया में तथा स्केण्डेनेविया प्रदेश (नार्वे, स्वीडन व फिनलैण्ड) व समीपवर्ती रूस में सामी या लैप्स (Sami or Lapps) रहते हैं । निम्न तापमान, बर्फीली आंधियों तथा कम रोशनीयुक्त कठोर वातावरण में आज भी लगभग 10 लाख आखेटक व खाद्य संग्राहक रहते हैं । ये टुण्ड्रा प्रदेश में विगत 10 हजार वर्षो से रहते हैं । (चित्र- 15. 1 व 15. 2)

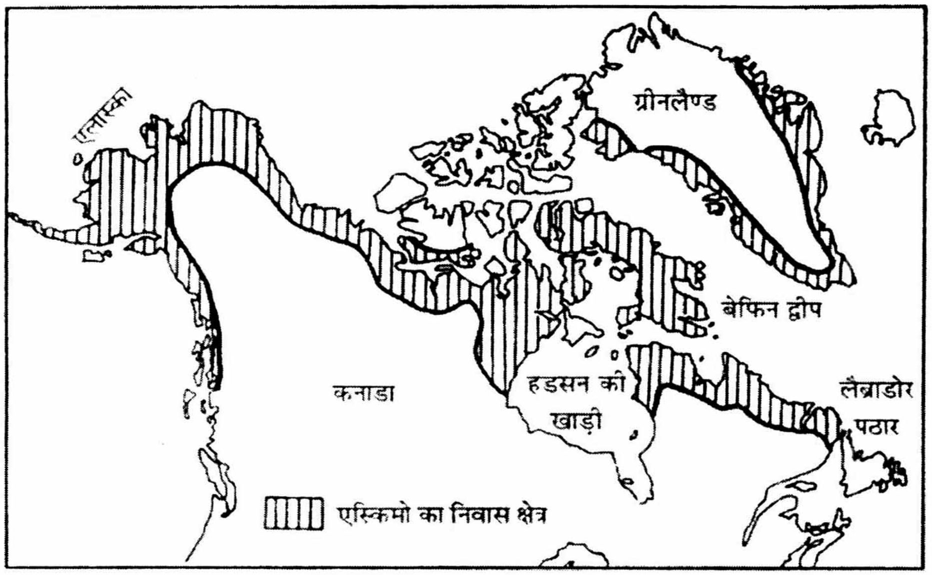

चित्र –15.1 : एस्किमों के निवास क्षेत्र

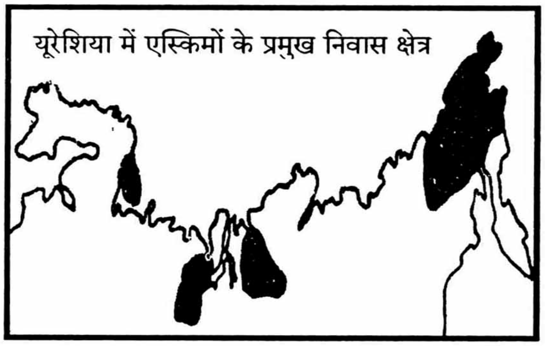

चित्र –15.2 : यूरेशिया में एस्किमों के प्रमुख निवास क्षेत्र

15.2.1.1 निवास क्षेत्र का प्राकृतिक वातावरण

एस्किमों का निवास क्षेत्र शीत प्रधान और हिमाच्छादित प्रदेश हैं । यहां वर्ष में 9 माह तापमान शून्य डिग्री से नीचे रहता हैं । जनवरी माह का तापमान - 45^0 से. ग्रे. तक हो जाता हैं । शीतकाल में वर्षा हिम के रूप में प्राप्त होती हैं । चारों ओर बर्फ ही बर्फ होती हैं । ग्रीष्म ऋतु 2 से 3 महीने की होती है, जिसमें तापमान शून्य डिग्री से कुछ ऊपर हो जाते हैं । जाड़ों के महीने लम्बे होने के साथ-साथ दिन बहुत छोटे होते हैं । तेज पवनों को रोकने के लिए पेड़ों का अभाव होने से बर्फ की आँधियाँ (blizzards) आती हैं । वर्ष के केवल दो या तीन महीने ही ऐसे होते है, जिनमें तापमान 0 से ग्रे. से ऊपर पहुँचता हैं ।

इस प्रकार की कठोर जलवायु के कारण वहां वनस्पति उत्पन्न नहीं हो पाती । केवल गर्मी के मौसम में शैवाल, काई (mosses), लाईकेन (lichens) और डेण्डलियन्स (dandelions) आदि

रंग-बिरंगे फूलों की घासें तथा छोटी-छोटी झाड़ियां उग आती हैं परन्तु गर्मी के अचानक समाप्त हो जाने पर, पुन: बर्फ की वर्षा होने लगती है और भूमि पर सर्वत्र बर्फ की चादर बिछ जाती हैं।

15.2.2 शारीरिक संगठन

एस्किमो का रंग पूरा, पीलापन लिए, चेहरा गोल और चौड़ा तथा शरीर का डील-डौल कुछ बेढंगा-सा आंखे काली छोटी, नाक चपटी, गाल गोल और मांसल, मुंह चौडा, जबड़े भारी तथा दाँत सफेद और मजबूत होते हैं । सिर लम्बा और गालों की हड्डियां ऊंची होती हैं । ये मंझले कद (150 सेमी से लेकर 160 सेमी तक) के होते हैं ।

15.2.3 चारित्रिक विशेषताएँ

एस्किमों विकट संकट का सामना करने पर भी अपनी स्थिरता, गम्भीरता एवं विवेक बुद्धि को अडिग बनाये रखते हैं । इनका जीवनयापन विश्व की अन्य सभी जातियों से कठिन हैं । एस्किमों विश्व में सबसे अधिक हंसमुख. प्रसन्नचित एवं निर्द्वन्द्व प्रकृति के लोग हैं । इनका स्वभाव बालक सदृश्य, एकदम सरल, निष्कपट और मधुर होता हैं । भूतकाल के संताप तथा भविष्य की चिन्ता से विमुक्त रहते हैं ।

15.2.4 आखेट

शिकार करना एस्किमों लोगों का प्रमुख रू एकमात्र जीविकोपार्जन का साधन हैं । शीतकाल एवं ग्रीष्मकाल दोनों ऋतुओं में ये लोग विभिन्न विधियों से मछली का शिकार करते हैं ।

15.2.4.1 शीतकाल में सील मछली का आखेट

बहते हुए हिम का इन लोगों के जाड़े के निवास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता हैं । जाड़ों के प्रारम्भ में एस्किमों लोग सखी किनारे के सहारे अथवा बहते हुए हिम पर एकत्र हो जाते हैं । यहाँ पर वे मार्च या अप्रैल तक रहते हैं । जाड़ों के दिनों में केवल सील (Seal) मछली का शिकार किया जाता हैं । सील मछली को सांस लेने के लिये बर्फ में छिद्र बनाने पड़ते हैं । इन छिद्रों में एस्किमों हड्डी की एक छड़ लगा देते हैं । जब मछली सांस लेने के लिए इन छिद्र के समीप आती है, तब छड़ हिल जाती है और एस्किमों शिकारी जान लेता है कि छिद्र से सील सांस ले रही है, तब वह हारपून (harpoon) भाला उठाकर सील के मुहँ पर ज़ोर से मारता है , जिससे भाले का अग्र भाग शील मे घुस जाता है । इस प्रकार से शिकार करने की क्रिया को माउपोक (Maupok) कहते है जिसका अर्थ है 'वह प्रतिक्षा करता हैं ' ।

15.2.4.2 बसन्तकालीन आखेट

मार्च के बाद दिन की लम्बाई बढ़ने लगती है तथा बर्फ पिघलने से खुले जल की नालियां बन जाती हैं । इस समय एस्किमों परिवार के लोग शिकार करने के लिये जाते हैं । खुले जल के अलावा इस समय सील मछलियाँ बहते हुए हिम के किनारे या धरातल पर धूप खाने के लिए भी आ जाती हैं । वहाँ उनका शिकार कर लिया जाता हैं । बसन्त के प्रारम्भ में उतोक (Utoq)

ढंग से शिकार करने की बहुत सुविधा रहती हैं । कोई चतुर शिकारी तो एक दिन में ही कई सील मछलियों मार लेता हैं ।

बेफिन द्वीप तथा हडसन की खाड़ी के उत्तरी किनारों पर शिकार करने का तरीका बदल जाता हैं । इस समय इस क्षेत्र में व्हेल (Whale) तथा वारलस (Walrus) बहुत बड़ी संख्या में आ जाती हैं । जल में उन जन्तुओं को मारने के लिये फैंके जाने वाले भालों (Throwing Harpoons) का प्रयोग किया जाता हैं । परिवहन के लिये स्लेज का प्रयोग करके खाल से मढी हुई नाव कयाक (Kayak) का प्रयोग किया जाता है, तथा इसी से हारपून द्वारा मारा गया शिकार ढोया जाता हैं । बसन्त काल में ध्रुवीय भालू का भी शिकार किया जाता हैं ।

15.2.4.3 ग्रीष्म काल

गर्मी के मौसम के मध्यकाल तक धरातल का हिम पिघल जाता है तब स्थलीय पशुओं का शिकार किया जाता हैं । इस काल में स्थल की ओर आते समय एस्किमों लोग कैरिबों (Caribou) बारहसिंगों की तलाश करता हैं । ये कैरिबों अमेरिकन नस्ल के रेनडियर (Reindeer) होते हैं । खरगोश, बतख, हंस तथा अन्य चिड़ियों का शिकार हल्के भाले फेंक कर किया जाता हैं । गर्मी के क्रिया-कलापों में मछली का स्थान बराबर महत्वपूर्ण हैं ।

15.2.5 भोजन

इनके भोजन का प्रमुख तत्व कच्चा माँस हैं । ये ताजा माँस खाने के शौकीन होते हैं । शीत प्रधान जलवायु होने के कारण माँस कई दिनों तक खराब नहीं होता । माँस के समस्त भोज्य आखेट द्वारा प्राप्त होते हैं । कुछ माँस सुखाकर आपातकालीन स्थिति के लिए भी रखा जाता हैं।

15.2.6 वस्त्र

ग्रीष्मकाल के शिकार से प्राप्त खाल ही एस्किमों का मुख्य वस्त्र हैं । कैरीबों का चमड़ा सील के चमड़े की अपेक्षा अधिक हल्का, गर्म एवं लचीला होता हैं । जहां कैरीबों नहीं पाये जाते, वहां ध्रुवीय भालू के बालों से वस्त्र बनाकर शीतकालीन कठोर परिस्थितियों से लोग अपने शरीर की रक्षा करते ई । पुरूष बदन पर आधुनिक ऊनी जर्सी से मिलता-जुलता बाँहवाला वस्त्र पहनते है जो तिमियाक कहलाता हैं । यह सील मछली की खाल से बनाया जाता हैं । यह सील मछली की खाल से बनाया जाता है । तिमियाक के_ ऊपर पहने जाने वाले कपड़े को अनोहाक कहते है ,चमड़े से बनाए गए जुतें को कार्मिक कहते है ।स्त्रियों भी पुरूषों के समान ही वस्त्र पहनती हैं । स्त्रियों के पायजामे पुरूषों की अपेक्षा छोटे होते है तथा इनके जूते बड़े होते है तथा घुटनों तक होते हैं ।

15.2.7 उपकरण और अस्त्र -शस्त्र

एस्किमों शिकार के लिए हड्डी और चमड़े की नाव बनाते है जिसे कयाक कहा जाता हैं । बर्फ पर चलने के लिए स्लेज गाड़ी प्रयोग करते हैं जिसे कुत्ते या रेन्डियर खींचते हैं । हारपून और तीर-धनुष शिकार के प्रमुख अस्त्र हैं । इनका निर्माण ये हड्डी और चमड़ा से करते हैं ।

15.2.8 गृह और बस्ती

एस्किमों के घर को इग्लू कहते हैं जिसका निर्माण ये चट्टानों के टुकड़ों ओर चमड़े से करते हैं (चित्र- 3) । अपने घरों में ये रेंग कर प्रवेश करते है क्योंकि सर्दी से बचने के लिए छोटा दरवाजा रखते है । घर को गर्म करने के लिए ये मछलियों की चर्बी जलाते हैं । गर्मी के दिनों में चमड़े से बने तम्बू का प्रयोग करते हैं जो सील और भालू के खाल से बना होता है । इसे सुपिक्स (Tsupics) कहा जाता है । कैरीबों के खाल से बना सुपिक्स बहुत अच्छा माना जाता है ।

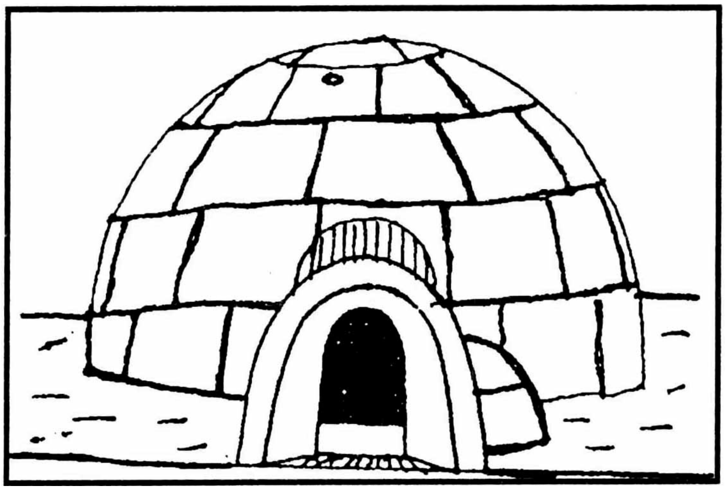

चित्र - 15.3 : एस्किमों का घर 'इग्लू

15.2.9 परिवहन तथा यातायात के साधन

1. **स्लेज (sledge) :** जाड़ों मे बर्फ पर चलने के लिए एस्किमों लोग स्लेज गाड़ी का प्रयोग करते है । वह स्लेज व्हेल की हड्डियों से बनाई जाती है । इस गाड़ी मे पहिये नहीं होते और इसे कुत्ते खिचते है ।
2. **कयाक (Kayak) :** गर्मियों में खुले जल में शिकार करने के लिये नावें प्रयोग में लाई जात जनजातीय समाज द्वारा आवास हैं, जिन्हें कयाक कहते हैं । ये नावें भी व्हेल की हड्डीयों या लकड़ी की बनी होती हैं । इनका ऊपरी भाग सील मछली की खाल से ढका होता हैं ।. बुशमैन, पिग्मी, भील, गौण्ड तथा नागा
3. **उमियाक (Umiak) :** अलास्का तथा ग्रीनलैण्ड में बड़े जन्तुओं का शिकार करने के लिये उमियाक (Umiak) नाव का प्रयोग किया जाता है । विशेषत : व्हेल (Whale) का शिकार उमियाक द्वारा किया जाता हैं । उमियाक खाल से मढ़ी हुई चौड़ी नाव होती हैं ।

4. **ईंधन (Fuel) -** लकड़ी के अभाव के कारण इस भाग में सील मछली की चर्बी जलाई जाती है, जो इन लोगों को काफी मात्रा में प्राप्त हो जाती हैं ।

15.2.10 सामाजिक व्यवस्था और संस्कृति

इनके समाज में विवाह पूर्व यौन सम्बन्धों को बुरा नहीं माना जाता । शादी के लिए कहीं-कहीं अपहरण प्रथा भी प्रचलित हैं । बहुपत्नी प्रथा भी मिलती हैं । एस्किमों में आपसी लड़ाई-झगड़े बहुत कम मिलते हैं । इनमें आपस में सहयोग एवं भाई चारे की भावना बलवती होती हैं ।
मध्य तथा पूर्वी भागों में एस्किमों लोगों की एक देवी होती है, जिसे वे सेदना (sedna) कहते हैं । यह देवी समुद्र तल में रहती है तथा जन्तुओं पर इनका नियन्त्रण माना जाता हैं ।

15.2.11 वातावरण समायोजन की दक्षता

संसार में शायद ही ऐसे लोग हो जो एस्किमो की तरह कठोर जीवन बिता सकते हो और प्रकृति की इतनी क्रुर दशाओं में रहते हों । फिर भी उन्होंने प्राकृतिक वातावरण के साथ अपना पूर्ण सामंजस्य स्थापित कर लिया हैं । उनके निवास गृह, नावें, स्लेज गाडियाँ, हारपून, तीर कमान, वस्त्र आदि सब प्रकृति के साथ अद्भुत अनुकूलन प्रदर्शित करते हैं ।
अपने निकट की सामग्री का उपयोग कर गुम्बदाकार हिम निवास (इग्लू) बनाते हैं । प्रौद्योगिकी अभियान्त्रिकी के प्रभाव व्यवहार का उदाहरण यह प्रकट करता है कि किस सुगमता से इग्लू का निर्माण किया जाता हैं । स्लेज गाड़ी बनाने में वालरस की अस्थियों का उपयोग तथा हिम-झंझाओं और हिम पर सूर्य की किरणों के पड़ने से होने वाली चमक से आँखों को बचाने के लिए आँख कवच (Eye-shield) का उपयोग अनुकूलन के अन्य उदाहरण हैं । यूरोपीय देशों से जो वैज्ञानिक आर्कटिक या अण्टार्कटिक क्षेत्रों की खोज करने के लिये आते हैं, वे एस्किमो के वस्त्रों को अपनाते है ।

15.2.12 आधुनिक संस्कृति से सम्पर्क

एस्किमो वर्तमान में जैसे -जैसे यूरोपवासियों तथा अमेरिकनों के सम्पर्क में आते रहे हैं, वैसे - वैसे इनकी जीवनशैली में परिर्वतन आता जा रहा हैं । इनकी परम्परागत जीवनशैली तीव्रता से बदल रहीं हैं । ये लोग भरण-पोषण अर्थव्यवस्था से तंग आने लगे हैं और समूर का व्यापार करने लगे है तथा अपनी आवश्यकताओं से अधिक समूर वाले पशुओं की खाल का उत्पादन करते हैं । इनके प्रदेश में खनिजों के भण्डारों का पता चलने के पश्चात् ये लोग खदानों, हवाई-क्षेत्र और राडार स्टेशनों के निकट पूर्व निर्मित भवनों में निवास करने लगे हैं । यद्यपि इनका जीवन परिवर्तित हो रहा हैं, फिर भी आर्कटिक प्रदेश में भौतिक पर्यावरण की भूमिका असाधारण रूप से महत्वपूर्ण हैं ।

बोध प्रश्न - 1

1. टुण्ड्रा प्रदेश की जनजाति कौन सी है?

   ....

   ....

2. इग्लू किस प्रजाति के घर है?

....

....

3. टुण्ड्रा प्रदेश के ग्रीष्मकालीन शिविरों का नाम बताइये?

....

....

4. एस्किमों द्वारा शिकार के प्रयुक्त विशेष भाले का नाम बताइये?

....

....

5. लकड़ी से बनी, बर्फ पर चलने वाली और कुत्तों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी का नाम बताइये?

....

....

15.3 बुशमैन (Bushman)

बुशमैन शब्द सत्रहवीं शताब्दी में डच अप्रवासियों द्वारा दक्षिण अफ्रीका के आखेटक मनुष्यों को दिया गया था । आज बुशमैन मुख्यत : कालाहारी मरूस्थल के उजाड़ और अशरण्य पर्यावरण और दक्षिणी -पश्चिमी अफ्रीका के उपोष्ण घास के मैदानी भागों तक सीमित हैं । बुशमैन को 'सान ' के नाम से भी जाता हैं ।

15.3.1 निवास क्षेत्र

कुछ शताब्दियों पूर्व ये लोग दक्षिणी अफ्रीका के अधिक विस्तृत भूभाग में निवास करते थे । बसुटोलैंड (Basutoland), नैटाल, दक्षिणी रोडेशिय (Rhodesia), पूर्वी टंगान्यिका (Tanganyika) तथा पूर्वी अफ्रीका की उच्च भूमि पर ये लोग फैले हुए थे । वर्तमान में इनकी संख्या 10 हजार से भी कम है । (चित्र - 154)

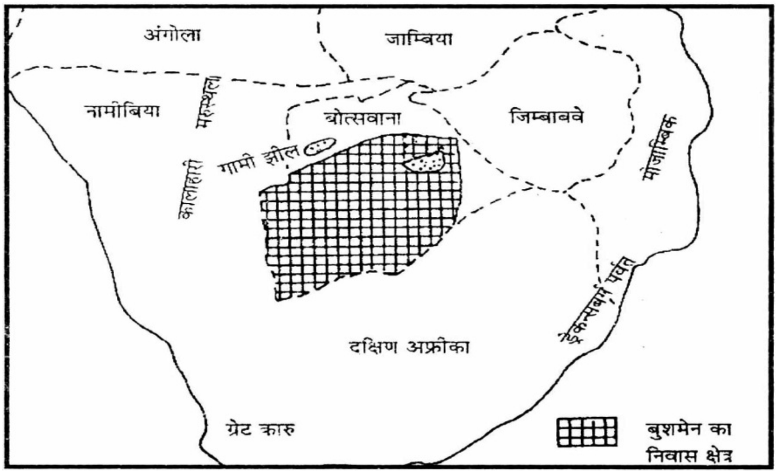

चित्र - 15.4 - बुशमैन के निवास क्षेत्र

बुशमैन लोगों का प्रदेश 18^0 द. अक्षांश से 24^0 द. अक्षांश के मध्य बेचुआनालैंड (Bechuanaland) में स्थित हैं । यहां ओकावांगों (Okavango river) नदी के तथा गामी झील (Ngmi lake) के दलदली क्षेत्रों में और लिम्पोपो नदी (Limpopo river) तथा नोसोब नदी (Nossob river) के क्षेत्रों में, बुशमैन विरल (Sparse) है ।

15.3.2 प्राकृतिक वातावरण

इस प्रदेश की जलवायु उष्ण मरूस्थली (hot desert) प्रकार की हैं । तापमान वर्ष भर प्राय : ऊंचा रहता है, परन्तु रातें ठण्डी होती हैं । सबसे अधिक गर्म महीना जनवरी का है; जब तापमान 30^0 से ग्रे. से 33^0 से. ग्रे. तक रहता हैं । सबसे ठण्डा महीना जुलाई है जब तापमान औसतन 22^0 से. ग्रे. रहता हैं । शीत ऋतु में रातें और भी ठण्डी होती हैं । वार्षिक वर्षा 50 से 85 सेमी तक होती हैं । यह वर्षा केवल तीन महीनों में दिसम्बर से फरवरी तक होती हैं ।
नदियों में जल बहुत कम रहता हैं । खारे पानी की झीलों 'प्लायाज ' (Playas) में तथा नमकीन तालों (salt pans) में वर्षाकाल में जल भर जाता हैं । कालाहारी में पीने के जल का कुछ अभाव सा रहता हैं । मलेरिया, काला ज्वर, पेचिश, आंत्र ज्वर (enteric fever) आदि रोग फैल जाते हैं । न्यूमोनिया तथा इन्फ्लुएन्जा भी खूब होते हैं ।

15.3.3 शारीरिक संरचना

सामान्य दृष्टि में बुशमैन नाटे कद के होते हैं । इनकी लम्बाई लगभग 5 फीट होती हैं । स्त्रियों की लम्बाई इससे भी कम पाई जाती हैं । बुशमैन जाति की महिलाओं में उनकी शारीरिक विशेषता यह है कि उनके नितम्बों पर चर्बी के जमा होने की प्रवृति पाई जाती है । बुशमैन के सिर के बाल घुंघराले गुच्छेदार होते हैं ।

15.3.4 भोजन

बुशमैन लोगों का भोजन आखेट के जन्तुओं और पक्षियों से, मछलियों से तथा जंगली वनस्पति के कन्दमूल (roots), गांठों (tubers), फलों तथा शहद से प्राप्त होता हैं । बुशमैन लोग सर्वभक्षी (omnivorous) होते है । ये लोग बड़े चतुर शिकारी होते हैं । स्त्रियाँ जंगल से कन्दमूल, बेर, कीड़े- मकोड़े इकट्ठा करती है; वे छोटे जन्तुओं को जैसे - मेंढक, कछुए, गिरगिट, छिपकली आदि को मार लाती हैं । वे जंगली तरबूज त्सामा (tsama) भी लाती है; इससे भोजन और पेय दोनों मिलते हैं ।
भविष्य के लिये भोजन को संचित रखने पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता । उष्ण जलवायु में माँस को इकट्ठा करके भी नहीं रखा जा सकता, क्योंकि गर्मी में माँस सड़ जाता हैं ।
शुष्क ऋतु में पशु अन्य क्षेत्रों की चरागाहों को चले जाते है; अत : उस मौसम में भोजन की कमी हो जाती हैं । अगस्त में भूमि के तल के ऊपर का जल सूख जाता है; तब त्सामा (tsama) तरबूज और गाँठदार जडें, जैसे - 'बी' (Bi) तथा 'गा' (Ga) से इन लोगों को भोजन और जल दोनों मिलते हैं ।

15.3.5 आखेट करना

कालाहारी एक महान आखेट प्रधान प्रदेश हैं । गामी क्षेत्र तथा ओकावागों के कीचड़ में वर्षा के जल की अधिकता हो जाती है तो यहाँ बहुत से पौधे उग आते हैं जो पशुओं के भोजन की पूर्ति करते हैं । इस प्रदेश में शाकाहारी तथा मांसाहारी, जैसे - जेब्रा, जिराफ, एन्टीलोप, शुतुरमुर्ग, हाथी, गैंडे, दरियाई घोड़ा, क्केगा, सिंह, चीता, जंगली बिलाव, गीदड़ आदि दोनों प्रकार के पशु पाये जाते हैं । इनके अतिरिक्त कई छोटे जीव, जैसे -चींटी, छिपकली, मेंढक, मधुमक्खी, खरगोश, चमगादड़, बतख, हँस, गिद्ध, बाज तथा रेंगने वाले कीड़े भी पाये जाते हैं । यहाँ एक प्रकार की दीमक जिसे बुशमैन राईस (Bushmen's Rice) कहा जाता है, मिलती है, जिसको ये खाते हैं । शिकार करना इनकी मुख्य एवं महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया मानी जाती हैं ।

15.3.6 वस्त्र

पुरूष एक तिकोनी लंगोट पहनता है जो पीछे की ओर नुकीली होती है तथा औरतें भी चमड़े का उपयोग अपने गुप्तांगों को ढकने के लिए करती हैं ।

चोगा बुशमैन का प्रधान वस्त्र होता है इसे केरोस (Keros) कहा जाता हैं । यह एक ऐसा वस्त्र होता हैं जिसे वस्त्र तथा बिस्तर दोनों की तरह प्रयोग किया जाता हैं ।

गर्म जलवायु के कारण बुशमैन वस्त्र बहुत कम पहनते हैं । सिर सभी के नंगे रहते हैं । पैरों में खाल या छाल की जूतों तथा चमड़े की टोपी का प्रयोग भी करते हैं ।

15.3.7 अधिवास

खानाबदोश जीवन व्यतीत करने के कारण बुशमैन के पास कोई स्थायी निवास नहीं होता हैं । इनके क़ाफिले में कई परिवार रहते हैं । प्रत्येक की अपनी झोपड़ी रहती है । झोंपड़े का दरवाजा सुरक्षा के जनजातीय समाज द्वारा आवास तथा अर्थव्यवस्था से उद्देश्य से छोटा रखा जाता हैं । सर्दियों में ठण्ड से बचने के लिए बुशमैन गुफाओं तथा कन्दराओं मे रहते है । बुशमैन लोगों के एक निवास या अल्पकालीन गाँव (werf) में, लगभग 8 या 10 झोंपड़ियां (scherms) होती है । इनमे वे रात्रि के समय सोते है

15.3.8 शस्त्र तथा सजा

शस्त्र और औजारों में तीर-कमान, फैंक कर मारने वाली लाठियाँ, चाकू, बर्छियों और भूमि खोदने की लकड़ियाँ होती हैं । कमान से लकड़ी रगड़ कर अग्नि उत्पन्न करने के लिये अग्नि-काष्ठ fire-sticks) भी होती हैं । तीर-कमान से लगभग 60 मीटर की मार कारगर होती हैं ।

भोजन प्राय : कच्चा खाया जाता है या खुली आग पर भून लिया जाता हैं, इसलिए बर्तनों की आवश्यकता नहीं होती हैं ।

15.3.9 सामाजिक व्यवस्था

बुशमैन लोगों की समाज व्यवस्था, अति साधारण आदिमकालीन हैं । एक वर्ग में प्राय : 20 व्यक्तियों से भी कम होते हैं, जो परस्पर सम्बन्धित होते हैं । शुष्क ऋतु में, अल्पकाल के

लिये, स्व वर्ग में कुछ अधिक व्यक्ति सम्मिलित हो जाते है; परन्तु प्रत्येक परिवार अपना-अपना डेरा अलग -अलग लगाते है ।

ये लोग कठिन परिश्रमी, उत्साही, देखने में तीव्र दृष्टि और स्मृतिवान व्यक्ति होते हैं । शिकार का काम प्राय : पुरूष करते हैं ।

विषम भौतिक परिस्थितियों में निवास करने वाले और आखेट से जीवन यापन करने वाले कालाहारी के बुशमैन कला प्रिय भी होते हैं । लकड़ी से ये गोरा नामक वाद्य यन्त्र बनाते हैं और भोज आदि अवसरों पर बजाते और नाचते हैं ।

15.3.10 आधुनिक समाज से सम्पर्क

वर्तमान समय में कालाहारी बुशमैन की जीवन शैली पर धीरे - धीरे पाश्चात्य वातावरण का प्रभाव पड़ रहा हैं । इनकी आर्थिक क्रियाओं में आखेट के साथ -साथ जहाँ जल प्राप्ति होती हैं । वहाँ कुछ मात्रा में कृषि भी करते हैं । बुशमैन एक ऐसी प्रजाति है जो गर्म व शुष्क कठोर वातावरण में भी अपना जीवन यापन करते हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. बुशमैन कहाँ पाये जाते हे?

   ....

   ....

2. लकड़ी से बुशमैन कौनसा वाद्य यन्त्र बनाते हैं?

   ....

   ....

3. बुशमैन के प्रधान वस्त्र का नाम बताइये?

   ....

   ....

4. कालाहारी मरूस्थल की समुद्र सतह से ऊँचाई बताइये?

   ....

   ....

5. वर्तमान में बुशमैन की जनसंख्या कितनी हैं?

   ....

   ....

15.4 पिग्मी (Pigmy)

पिग्मी मानव जाति के अत्यन्त सरल लोग हैं । इन्हें प्राय: सर्वाधिक आदिकालीन मानव कहा जाता है और आरम्भिक विकासवादियों द्वारा इन मानवों को पशुओं के अधिक निकट माना गया है तथा ये लोग कन्दमूल, बेर, फल खाने योग्य पत्तियों, कीड़े-मकोड़े, मेंढक, छिपकलियाँ तथा अन्य प्रकार के पशुओं को, जिनको पकड़ सकते हैं, जंगलों से एकत्रित करते हैं । पिग्मियों

का मुख्य वर्ग उष्ण कटिबन्धीय अफ्रीका में निवास करते हैं । अफ्रीका महाद्वीप के पिग्मियों को पूर्वी, केन्द्रीय तथा पश्चिमी वर्गों में विभाजित किया जाता हैं ।

15.4.1 निवास क्षेत्र (Habitat)

मुख्य रूप से पिग्मी जाति के लोगों का निवास क्षेत्र अफ्रीका महाद्वीप के कांगों गणराज्य के भू- भाग में फैले हुए हैं तथा पश्चिमी वर्ग के पिग्मी बोन्गों गैबान में निवास करते हैं । अफ्रीका के पूर्वी पिग्मी मबूती जायरे के इतुरी वन प्रदेश में निवास करते हैं । अफ्रीका के अतिरिक्त अमेजन बेसिन के रेड इंडियन्स, श्रीलंका के वेद्दा, न्यूगिनी में पापुआन और बोर्नियों के पूनन भी पिग्मी नीग्रीटो प्रजाति से संबन्धित है ।

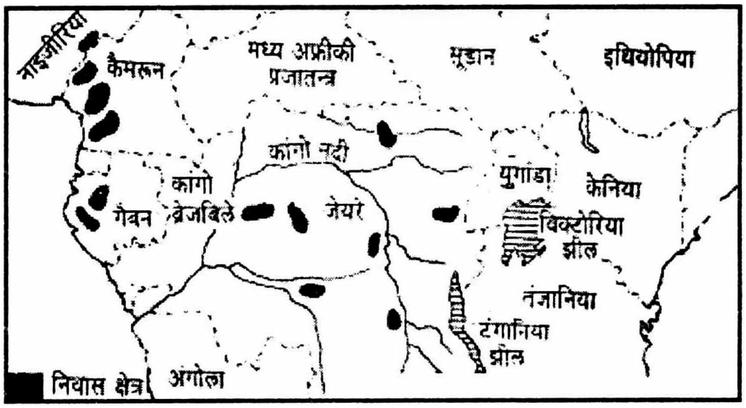

चित्र - 15.5 : पिग्मी के निवास क्षेत्र

15.4.1.1 निवास क्षेत्र का प्राकृतिक वातावरण

कांगो बेसिन की जलवायु अति उष्ण एवं आर्द्र हैं यहाँ वर्ष-पर्यन्त तापमान 26^0 से 30^0 से. ग्रे. के मध्य रहता हैं । वार्षिक तापान्तर 4^0 से. ग्रे. से अधिक नहीं हो पाता । वार्षिक वर्षा का औसत 200 सेमी से 250 सेमी के मध्य रहता हैं । यहाँ वन इतने सघन होते हैं कि वृक्षों के नीचे प्रकाश न पहुँच पाने के कारण प्राय: अंधेरा रहता हैं । वृक्षों के नीचे दलदली भागों में असंख्य मच्छर, जानवर तथा जहरीले कीड़े -मकोड़े मिलते हैं । स्वास्थ्य की दृष्टि से यह निम्न स्तर की जलवायु है, जहाँ बिमारियों का प्रकोप अधिक रहता हैं ।

15.4.1.2 उपजातियां

ईसा पूर्व पांचवी शताब्दी में हैरोडोट्स ने पिग्मी के बारे में लिखा था कि ये लोग छोटे-नाटे कद के और प्राय : वृक्ष के पत्तों से तन को ढकने वाले आदिवासी हैं जो आदिमकालीन जाति के हैं। मध्य कांगों के जिलों में इनको बात्वा (Batwa) कहते है, लुंगलुलुक नदी के बेसिन में लोग इनको वात्वा (Watwa) कहते हैं, वाबोद नदी के बेसिन में इनको बालिया (Balia) कहते हैं । ये सभी लोग नाटे कद के होते हैं । यह मानव प्रजाति निग्रिटो (Negrito) प्रकार की हैं । दक्षिणी एशिया में फिलीपाईन के वनों में आएटा (Aeta) नामक नैग्रिटो तथा न्यूगिनी में तापिरो

(Tapiro) नामक पिग्मी लोग रहते हैं । अफ्रीका, अमेरिका, दक्षिणी एशिया आदि देशों में इन नाटे कद के, नैगीरटो मानव प्रजाति के सभी लोगों को नैगरिल्लो (Negrillo) कहते हैं ।

15.4.2 शारीरिक संगठन

पिग्मीयों का कद छोटा होता हैं । पिग्मी पुरुष औसत लम्बाई 4. 5 फीट तथा औसत वजन 35 से 40 किग्रा. के मध्य मिलता हैं । पिग्मी महिलाओं की लम्बाई तथा वजन पुरूषों की अपेक्षा कम मिलता हैं । इनकी चमड़ी का रग पीलापन अथवा ललाई लिए हुए भूरे रंग से गहरे भूरे या काले रंग का होता हैं । इनके जबड़े बाहर की ओर निकले हुए, होंठ मोटे एवं लटकते हुए, नथुने चौड़े और नाक चपटी, ठोडी पतली, आँखे बड़ी तथा बाल छोटे व छल्लेदार गुच्छे (Pepper Corn) होते हैं ।

15.4.3 भोजन

पिग्मी लोगों का भोजन आखेट किये गये जन्तुओं का माँस तथा जंगली फल, कन्द-मूल आदि हैं । नदियों, झीलों आदि से मछलियाँ भी पकड़ते हैं ।
ये लोग न तो भूमि जोतते -बोते है और न ही पशु पालते हैं । यहाँ तक कि कुत्ता भी बहुत कम पाला जाता हैं परन्तु आखेट करने में ये लोग बहुत दक्ष होते हैं और बड़े से बड़े भीमकाय जन्तु हाथी तक को ये घेर कर मार डालते हैं । बड़े जन्तुओं के अलावा, दीमक, चींटियों, गुबरैलों (Beetles) के ।डिम्ब या लारवों (Larvae) तथा मधुमक्खियों की सूंडियों (grubs) और शहद को बड़े चाव से खाया जाता हैं । मछली पकड़ने में भी ये बड़े चतुर होते है, केवल एक डोरी में माँस का टुकड़ा, बाँधकर पानी में फेंकते हैं और उसका लालच देकर बड़ी-बड़ी मछलियों को किनारे पर ले आते हैं । केला इन लोगो का बहुत ही प्रिय भोजन है।

15.4.4 आखेट

इन लोगों का मुख्य उद्यम पशुओं का शिकार करना तथा नदियों में मछलियाँ पकड़ना है । छोटे जीवों का शिकार प्राय: अकेला व्यक्ति कर लेता हैं । मछलियों को पकड़ने के लिए बंसी में माँस बाँधकर जल में डाला जाता है और फिर जालों में फँस जाने पर उन्हें पकड़ लेते हैं । पिग्मी सतर्क, जागरूक और चालाक होता है । इनकी घ्राण और प्रेक्षण शक्ति अति तीव्र होती है जिस कारण ये शिकारी जानवरों का तुरन्त पता लगा लेता है ।

15.4.5 वस्त्र

अत्यधिक ऊँचे तापमान तथा अति आर्द्रता के कारण इन लोगों को अधिक वस्त्रों की आवश्यकता नहीं पड़ती । अतएव ये लोग प्राय: नंगे बदन ही रहते हैं । स्त्रियाँ और पुरूष केवल गुप्तांगों को ही किसी छाल या डोरी या ताड़ की पत्तियों या किसी वृक्ष की छाल से ढके रहते हैं । शेष सारा शरीर बिल्कुल निर्वस्त्र रहता है ।

15.4.6 निवास की झोंपड़ियों और सजा

पिग्मी लोगों को आखेट तथा मछलियों और जंगली खाद्य पदार्थो की खोज में घूमना पड़ता है, इसलिए वे कोई स्थायी गाँव बसा कर नहीं रह सकते । झोपड़ी का प्रवेश द्वार एक छिद्र के समान होता है, जिसमें चारों हाथ पैरों से घुटनों के बल रेंगकर अन्दर बाहर आते जाते है ।
एक तो चलवासी (nomadic) लोगों का घुमक्कड़ जीवन, जिसमें अधिक साज सजा या घरेलु सामान रखना भार रूप होता है, दूसरे उष्ण आर्द्र वन जहाँ साज-सजा की आवश्यकता ही कम होती है, तीसरे पिग्मी का आदिमकालीन जीवन । पानी के लिये तूम्बी (gourd) पर्याप्त होती है।

15.4.7 व्यापार

पिग्मी अपने कृषक पड़ौसियों से मौन व्यापार (silent trade) करते है । ये लोग रात्रि में अपने बन्टु कृषक पड़ौसियों की बस्ती में जाकर निश्चित स्थान पर पत्तियों में लपेट कर माँस रख आते हैं, दूसरे दिन उसी स्थान पर इनकी आवश्यकता की कृषि उपज रखी जाती है, उसे ये लोग उठा लेते है ।

15.4.8 व्यवहार

कद में नाटे और शरीर से वजन में हल्के होते हुए भी पिग्मी लोग बलवान, निर्भीक और उत्साही होते हैं । वृक्षों पर तेजी से चढ़ जाने में ये लोग बड़े दक्ष होते हैं, क्योंकि इनको पेड़ों पर चढ़ने की बारम्बार आवश्यकता होती है और उनमें से कोई बिरले ही तैर सकते हैं ।
पिग्मी की प्रेक्षण (observation) शक्ति बहुत ही तीव्र होती हैं । जंगली जन्तुओं से उसकी स्वयं की सुरक्षा और उसका दैनिक भोजन उसकी दृष्टि की तीव्रता पर ही निर्भर करते हैं । वह हर समय सतर्क और जागरूक रहता हैं । वह एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर तेजी से चुपचाप पहुँच जाता है । पिग्मी कुशाग्र बुद्धि होता है ।

15.4.9 सामाजिक व्यवस्था

ये लोग प्रकृति से डरते हैं । सामाजिक व्यवस्था नाम की कोई व्यवस्था नहीं पाई जाती हैं । पिग्मीयों की संस्कृति आदिकालीन अवस्था में है, यद्यपि इनमें ऊँची जन्मदर पाई जाती है, किन्तु महामारियों के कारण जनसंख्या दर में वृद्धि नहीं हो पाती हैं । इनका जीवन परस्पर सहयोगशील नहीं है तथा प्रत्येक परिवार अपनी ही आवश्यकताओं की पूर्ति में लगा रहता हैं ।

15.4.10 आधुनिक समाज से सम्पर्क

पिग्मी जाति के लोग शंकालु प्रकृति के होते हैं । ये लोग बाहर के लोगों को देखकर घने जंगलों में भाग जाते है तथा उनसे सम्पर्क स्थापित नहीं करना चाहते हैं । ये लोग सभ्य मनुष्यों के साथ परस्पर वार्तालाप नहीं करते हैं । पिग्मी केवल अपने पड़ौसी बंटु कृषक जाति से ही व्यापार के रूप में सम्पर्क रखते है, लेकिन इनका व्यापार भी मौन व्यापार होता है, जिसमें पिग्मी और बंटु दोनों जाति के लोग आपस में मिल नहीं पाते हैं, केवल वस्तुएं निश्चित स्थान पर रख दी

जाती है जिन्हें ये आपस में ले जाते हैं । अत : पिग्मी बाहरी सभ्य और शिक्षित जातियों से सम्पर्क करना ही नहीं चाहते हैं ।

सघन वनों के कारण तथा अति उष्ण व आर्द्र जलवायु के कारण इनके पास कृषि योग्य भूमि का भी अभाव हैं । पिग्मी लोग वनों में छिपे रहते है, और वर्तमान सभ्यता के साथ तालमेल न बैठा सकने के कारण कम होते जा रहे हैं ।

बोध प्रश्न - 3

1. पिग्मी कहाँ पाये जाते हे?

   ....

   ....

2. कांगो बेसिन की जलवायु कैसी है?

   ....

   ....

3. पिग्मी का प्रिय भोजन कौनसा है ?

   ....

   ....

15.5 भील (Bhils)

भारत की आदिम प्रजातियों में भील का उल्लेख अनेक प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है । भील द्रविड़ शब्द 'विल' से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है कमान या तीर चलाने वाला।

राजस्थान के भील अपने को 'उजला' अर्थात् शुद्ध भील मानते हैं । 'कालिया भील ' मिश्रित होता है । इनकी सर्वाधिक संख्या मध्यप्रदेश में हैं । भारत के अन्य राज्यों में गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र उल्लेखनीय है ।

15.5.1 निवास क्षेत्र

भील मध्य भारत की प्रमुख जनजाति है, जो उत्तर पूर्व में चम्बल नदी से दक्षिण में नर्मदा नदी के मध्य मुख्य रूप से मिलते हैं । राजस्थान के भीलवाड़ा, बूंदी, कोटा, चित्तौडगढ, बांसवाड़ा, मध्यप्रदेश में राजगढ, गुना, रतलाम, झाबुआ, धार, खरगौन, इन्दौर तथा गुजरात के गोधरा तथा बड़ौदा जिलों में भील मुख्य रूप से रहते हैं । मध्यप्रदेश के पश्चिमी जिलों में भील जनसंख्या सर्वाधिक हैं । स्पष्ट है कि भील प्राचीनकाल से पश्चिमी भागों के आदि निवासी रहे हैं । (चित्र- 15. 6)

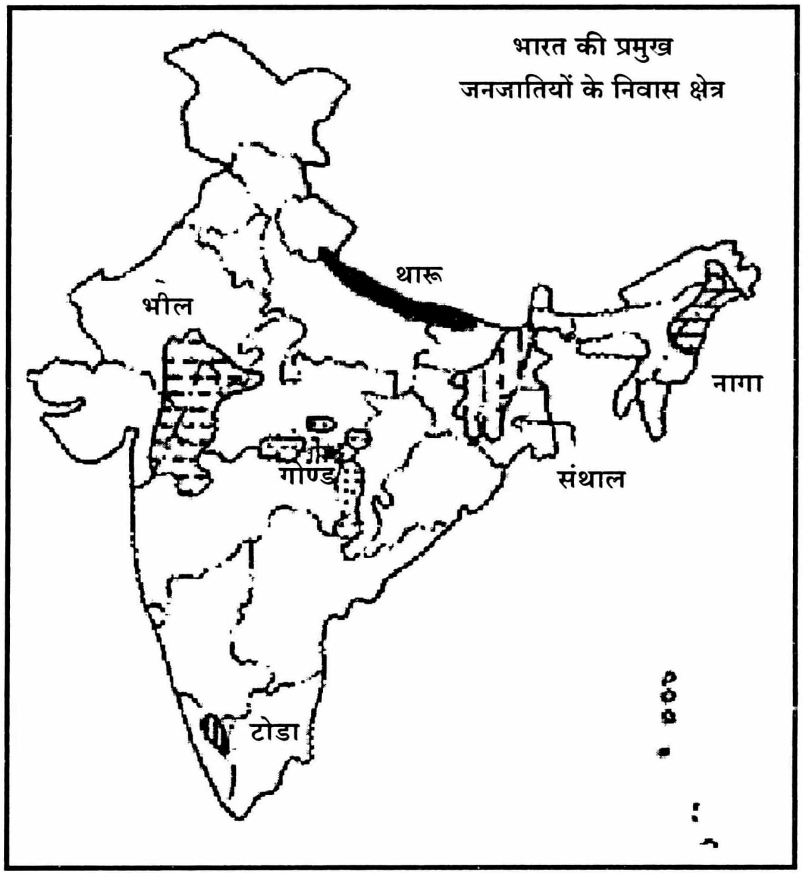

चित्र - 15.6 : प्रमुख जनजातियों के निवास क्षेत्र

15.5.2 शारीरिक लक्षण

भील लोग छोटे कद के होते हैं । इनका रंग गहरा काला तथा नाक चौड़ी होती है तथा बाल रूखे, आंखें लाल, जबड़ा कुछ बाहर निकला हुआ । हाथ-पैरों की हड्डी मोटी होती हैं । पुरूषों की अपेक्षा स्त्री सुन्दर होती हैं । इनका शरीर सुगठित एवं सुडौल होता हैं ।

15.5.3 भोजन सामग्री

भील प्रधानत : मोटा अनाज, सज़ा -सब्जी, माँस और कन्दमूल खाते हैं । शराब के ये बहुत शौकिन होते हैं । जंगली पशुओं व मछली का माँस ये बड़े चाव से खाते हैं ।

15.5.4 अर्थव्यवस्था

भील जनजाति का मुख्य व्यवसाय शिकार करना, कृषि करना, पशुपालन, टोकरियाँ तथा चटाईयाँ बुनना हैं । कृषि के साथ-साथ पशुपालन व मुर्गीपालन भी किया जाता हैं । अरावली तथा विंध्याचल पहाड़ियों पर रहने वाले भील शिकार करने के साथ-साथ वनों से लकड़ी काटना, शहद इकट्टा करना, छाल, जड़ी-बूटी तथा फल-फूल एकत्रित करने के कार्य करते हैं ।

कुछ भील चलवासी पशुचारण भी करते हैं । कृषि कार्य वर्षा ऋतु में मुख्य रूप से किया जाता है । मक्का, ज्वार, तथा बाजरा यहां उगायी जाने वाली वर्षा ऋतु की प्रमुख फसलें हैं । शीतकाल में सिंचाई के अभाव में प्राय: कृषि कार्य नहीं किये जाते हैं किन्तु 'भगत भील' माँस व मदिरा से परहेज करते हैं । भीलों का अर्थतन्त्र कृषि आधारित है लेकिन कृषि अति प्राचीन पद्धति से करने के कारण इनकी आर्थिक स्थिति दयनीय हैं ।

15.5.6 अधिवास

भीलों का आवास प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं पर आधारित होता है । बाँस व लकड़ी की दीवार और फूस का छाजन सामान्यत : भील गृह का स्वरूप होता है । अधिकांश ऐसी झोपड़ियों ऊँचे स्थानों पर बनाई जाती है । एक गोत्र के भीलों की झोंपड़ियाँ स्व साथ बनी होती है, जिसे 'फना' कहते है । फना का सामूहिक नाम 'पाल' (गाँव) है । भीलों के घर को 'कू (koo) कहा जाता है । गाँव के स्थल का चयन गाँव का मुखिया करता है । इस प्रकार के चुनाव में जल स्त्रोत, सुरक्षा, कृषि भूमि, वन और स्वास्थ्य सम्बन्धी तत्व प्रमुख होते हैं ।

15.5.7 उपकरण और अस्त्र -शस्त्र

भील कृषि के लिए लकड़ी का हल, कुदाल, खुरपी और कुल्हाड़ी का प्रयोग करते हैं । वनों से लकड़ी काटने, गृह निर्माण और शिकार करने में कुल्हाड़ी का प्रयोग बहुत करते हैं । तीर-धनुष शिकार के प्रमुख साधन हैं ।

15.5.8 वस्त्र एवं आभूषण

भील न्यूनतम वस्त्र धारण करते हैं । वस्त्रों को आधार मानकर इन्हें दो वर्गों में विभक्त किया गया हैं -

(1) लंगोटिया भील और (2) पोतीद्दा भील । लंगोटिया भील केवल कमर में एक लंगोटी पहनते है और स्त्रियाँ लहंगा पहनती हैं जबकि पोतीद्दा भील कमीज और धोती पहनते हैं और इनकी स्त्रियाँ घाघरा पहनती हैं । लगभग सभी पुरुष साफा बांधते हैं ।

15.5.9 रीति-रिवाज

भीलों की रीति-रिवाज में कई अच्छी बातें हैं । ये लोग परिश्रमी और ईमानदार होते हैं । ये चोरी करना धार्मिक पाप मानते हैं ।

विवाह बड़ी अवस्था में होते हैं । इनके यहां बाल विवाह की कुप्रथा नहीं है, विवाह से पूर्व लड़के - लड़कियों का पारस्परिक प्रेम समाज में वर्जित हैं ।

इन लोगों में मदिरा पान का प्रचार है । जंगल से प्राप्त हुई भाँग, आदि की पत्तियों को सड़ाकर घरेलू मदिरा बनाई जाती है, जिसे ये पीते है ।

भारत सरकार की ओर से अब इनके क्षेत्रों में स्कूल खोले गये हैं, कुछ दस्तकारियां सिखाई जा रही है और शिक्षा का प्रचार किया जा रहा हैं ।

15.5.10 सामाजिक संगठन

भील समाज विविधता का प्रतीक है क्योंकि इन पर मित्रों और शत्रुओं दोनों का प्रभाव पड़ा हैं । हिन्दू राजाओं के प्रभाव में आने के कारण ये हिन्दू समाज की प्रथाओं को अपनाते रहे हैं जबकि मुसलमानों के कोपभाजन के कारण मुसलमान तो बन गये लेकिन हिन्दुत्व के मोह को बनाये रखा हैं । इनमें पिता-प्रधान व्यवस्था होती हैं ।

बोध प्रश्न - 4

1. भील का शाब्दिक अर्थ क्या हैं?

   ....

   ....

2. भीलों का राजस्थान में कहाँ-कहाँ वितरण हैं?

   ....

   ....

3. सगोत्री भीलों की झोंपड़ीयों का नाम बताइये?

   ....

   ....

15.6 गौण्ड

भारत की जनजातियों में गौण्ड आदिवासी संख्या के दृष्टिकोण से सबसे अधिक हैं । अनुमानत : इनकी संख्या 20 से 25 लाख के मध्य बताई जाती है । इनका राजनीतिक और ऐतिहासिक विरासत भी अन्य जनजातियों से श्रेष्ठ है । गोण्डों ने दण्डकारण्य, छत्तीसगढ़, विन्ध्यप्रदेश, बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड के विस्तृत क्षेत्रों पर 15 वीं से 1 8वीं सदी तक शासन किया । फुक्स के अनुसार गौण्डों का सामाजिक संगठन दो प्रणालियों पर आधारित है -कुलगत एवं क्षेत्रीय । कुलगत प्रणाली वाले गौण्ड क्षेत्रीय राजाओं के प्रभाव से अपने को विकसित कर शासक स्तर तक पहुँच गये जबकि क्षेत्रीय प्रणाली के लोग या धुर -गौण्ड कृषक आदि के रूप में बने रहे और जाति प्रथा के अनुसार निचले वर्ग में गिने गये । राज गौण्ड चार वर्गो में बंटे हैं । देवगौण्ड, सूर्यवंशी गौण्ड, देवगढी गौण्ड और रावणवंशी गोण्ड, सामान्य गौण्डों की एक दर्जन से अधिक उपजातियां हैं । इसी आदिवासी गौण्ड जाति के नाम पर दक्षिण भारत के आदि भूखण्ड को गोंडवाना लैण्ड (gondwana land) कहा जाता हैं । जिसमें द्रविड़ और आर्य प्रजाति का मिश्रण हैं ।

15.6.1 निवास प्रदेश

गौण्ड जनजाति के कई वर्ग मध्य प्रदेश और आन्ध्र प्रदेश के पठारी भाग में रहते हैं । उड़ीसा के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में भी कुछ गौण्ड रहते हैं । मध्यप्रदेश में, विशेषकर बस्तर पठार में इनके

मुख्य वर्ग मारिया (Maria), मुरिया (Muria), परजा (Parja), भटरा (Bhatra), गडाबा (Gadaba), हालवा (Halba) और ढाकर (Dhakar) हैं ।

आन्ध्रप्रदेश के गंजम और विशाखापटनम जिलों मे साओरा (Saora) वर्ग तथा कुरूश (Kurush) और केवट (Kewat) वर्ग के गौण्ड रहते हैं ।

15.6.2 भोजन सामग्री

गौण्ड के भोजन में मोटे अनाज, कई प्रकार के माँस, जंगली कन्दमूल, फल-फूल, मछलियाँ और शहद की प्रधानता होती है । चावल और कुटकी इनके भोजन में सबसे प्रधान हैं । बन्दर, गोमाँस और भैसे का माँस नहीं खाते हैं । ये महुआ से बनी शराब का सेवन करते हैं । ये चावल की शराब भी पीते हैं जिसे 'पेज' कहते हैं ।

15.6.3 जीवन-पद्धति और अर्थतन्त्र

ये स्वावलम्बी आदिवासी हैं । इनकी सीमित आवश्यकताएँ कृषि और जंगल से पूरी हो जाती हैं । ये स्थाई और अस्थाई दोनों प्रकार की कृषि करते हैं । स्थाई कृषि को ये 'दिप्पी' कृषि और परिवर्तनशील कृषि 'पोढा' कहते हैं । इनकी कृषि प्रणाली परम्परागत ढंग से की जाती है जो किसी प्रकार इनके भोजन और सीमित आवश्यकता के लिए पर्याप्त होती हैं । प्रमुख फसलों में कुटकी, कोदो, सावां, बाजरा, उड़द, मूँग और धान उल्लेखनीय हैं । कृषि के अतिरिक्त वन - वस्तु संग्रह तथा घास की टोकरी, चटाई, रस्सी बनाना और कुछ अन्य कार्य इनके आर्थिक क्रिया-कलाप के अंग हैं । जंगलों से लकड़ी के अतिरिक्त ये शहद, चिरौंजी, गूलर, महुआ, तेन्दू के पले, विविध जड़ी बूटियाँ और लाख एकत्र करते हैं । पशुपालन में प्रधानत : मूर्गी और सुअर पालते हैं ।

15.6.4 उद्‌यम

1. दिप्पा कृषि (Dippa Cultivation) और पैण्डा (Penda Cultivation) कृषि ।
2. आखेट ।
3. मत्स्य कर्म ।
4. वनों की उपज इकड्डा करना ।
5. पशुचारण (केवल थोड़ी मात्रा में) ।

15.6.4.1 दिप्पा कृषि

जंगली जातियां अभी तक बहुत कुछ घुमक्कड़ बन्जारा जीवन व्यतीत करती हैं, और जंगल में इकड्डी की गई लकड़ी, कन्दमूल और जड़ी बूटियों से जीविका निर्वाह न होने के कारण विवर्त कृषि (shifting cultivation) करती हैं । इसमें नई साफ की गई भूमि को कुछ वर्षो तक जोतने बोने के बाद छोड. देते हैं और दूसरी भूमि को साफ करके जोतने बोने लगते हैं । कृषि का यह ढंग दिप्पा (Dippa) कहलाता है, जो साधारणत : असम की कूकी (Koki) जाति की

झूमिंग (Jhumming) कृषि के समान हैं । दिप्पा कृषि में भी भूमि के किसी भाग के जंगलों को काट डालते हैं तब उनमें कस्सी या फावड़े से भूमि को साफ कर लेते हैं । इस प्रकार जब खेत तैयार हो जाते हैं तब उनमें कस्सी या फावड़े से भूमि को खोद खोदकर बीज बो दिये जाते हैं । कहीं कहीं पर बहुत छोटे हल से भूमि को कुरेदकर बीजों को छिटक कर बोया जाता हैं ।

15.6.4.2 पैण्डा कृषि

बस्तर के उन पहाड़ी भागों में जहाँ ढालों पर वन खड़े हैं पैण्डा कृषि की जाती है, जिससे सीढीदार खेतों पर कृषि (terraced cultivation) होती है । खेतों में मिट्टी को आर्द्रता को बनाये रखने के लिए ढाल के नीचे भागों में लकड़ी के लट्ठे रख दिये जाते है, जिनके द्वारा बहता हुआ जल मिट्टी में ही रूका रहता हैं । भूमि संरक्षण (soil conservation) की यह विधि मानव द्वारा वातावरण समायोजन का एक बुद्धिपूर्ण उदाहरण है, जिसे मनुष्य ने शताब्दियों के अनुभव के बाद सीखा हैं ।

15.6.4.3 मत्स्य कर्म

कुरूख (Kurukh), केवट तथा धींमर वर्ग के गौंड लोग मत्स्य कर्म द्वारा जीवन बिताते हैं । बस्तर की सभी आदिम जातियाँ मत्स्य कर्म थोड़ी बहुत मात्रा में अवश्य करती हैं परन्तु कुरूख वर्ग ने मत्स्य कर्म को अपना स्थाई पेशा बना लिया हैं । ये लोग कृषि नहीं करते, इसी कारण ये मारियाँ वर्ग से पूर्णत: भिन्न हो गये हैं ।

15.6.4.4 पशुचारण

रावत वर्ग भी गौण्ड जाति का एक उपवर्ग हैं । रावत वर्ग का पेशा पशुपालन हैं । ये लोग गाय, बैल आदि दूसरे कृषकों को बेच देते हैं । अत : समाज में इन्हें धीवर आदि से अधिक पवित्र माना जाता हैं । इनका मुख्य उद्यम कृषि और लकड़ी काटना हैं । रावत लोग कस्बों में जाकर दूध -दही बेच देते

15.6.5 लघु कुटीर उद्योग

प्रत्येक गाँव या दो-तीन गाँवों के लिये एक लोहार परिवार होता है, जो खेती के बहुत साधारण औजार बनाता हैं । आन्ध्रप्रदेश में गंजम और विशाखापट्नम जिलों में सावरा वर्ग के बहुत से गौण्ड परिवार छोटे कुटीर उद्योग में लगे रहते हैं जैसे अरीसी (Arisi) वर्ग के लोग हाथ करघों से कपड़ा बुनते है, कुन्दाल वर्ग के लोग टोकरियाँ बनाते हैं ओर बहुत से परिवार लोहार हैं ।

15.6.6 औजार और उपकरण

गौण्ड लोगों के औजार बहुत ही साधारण किस्म के होते हैं । स्थानीय लोहार कृषि के हलों की फालियाँ, फसल निराने (weeding) के खुरपे, सिंचाई के फावड़े, फसल काटने की दरातियाँ और हंसिये, लकड़ी काटने की दरातियां और हंसिये, लकड़ी काटने की कुल्हाड़ी और आखेट करने के तीरों के सिरे बनाते हैं ।

15.6.7 श्रम मजदूरी तथा कबाड़ी प्रथा

मजदूरी के बदले में प्राय : अनाज और कुछ रुपया दिया जाता है । जब कोई मजदूर अपनी बेटी की शादी करता है या गाँव पंचायत को जुर्माना देता है तो वह रुपयों की जरूरत समझता है और वह तब कर्जा लेता है । इस कर्ज को वह कृषि सेवा के द्वारा चुकाता है । इस प्रथा को 'कबाड़ी ' मजदूर प्रथा कहते हैं । जब कोई कबाड़ी मरते समय तक अपने स्वामी किसान का कर्जा नहीं चुका पाता है तब उस ऋण का भार उसके बेटों के कंधो पर आता हैं ।
भारत के स्वतन्त्र होने के बाद आदिवासी जीवन के आर्थिक स्तर को ऊंचा उठाने का प्रयास किया गया है, और कबाड़ी प्रथा बन्द की गई हैं ।

15.6.9 वस्त्र और आभूषण

गौण्ड लोग प्राय : सूती वस्त्र पहनते हैं । सूत के वस्त्र अपने गाँव में तैयार कर लेते हैं कभी कभी कोई घुमक्कड़ सौदागर भी कपड़ा बेच आते हैं । अपनी चराई हुई भेड़ -बकरियों से इन्हें ऊन और बाल मिल जाते हैं, उनसे ऊनी कम्बल या कपड़ा स्वयं गाँव में ही तैयार कर लेते हैं । स्त्रियाँ मूंगे और नकली मोतियों के बने आभूषण गले और हाथों में पहनती है, और मूंगे और कोड़ियों को गूंथकर हार बनाती है । लड़कियां अपने बालों के जूड़े में सफेद बाँस के बने आधे दर्जन तक कंघे रखती हैं । शरीर पर चित्र गोदने (tattoo) का भी बहुत प्रचलन हैं ।

15.6.10 गृह एवं बस्ती

इनके मकान वन से प्राप्त लकड़ी बाँस घास और मिट्टी तथा पत्थर के बने होते हैं झौंपडियों के समूह को गाँव कहते है। नवयुवकों और नवयुवतियों के लिए अलग झोपड़ी होती है जिसे ये लोग 'घोटुल या घोटालू कहते हैं । मकान के तीन भाग होते है रसोई, शयन, और अन्न कक्ष । जब गौण्ड किसी हिन्दू बहुल गाँव में बसते हैं तो उन्हें मुख्य गाँव के कुछ फासले पर बसाया जाता है जिसे 'गोण्डपारा' कहते हैं । गाँवों की भूमि का चुनाव जल स्त्रोत, कृषि भूमि और सुरक्षा को ध्यान में रखकर किया जाता हैं । विवाह के पूर्व लड़के -लड़कियाँ 'घोटालू में स्वच्छन्दता से मिलते हैं और यौन सम्बन्ध स्थापित करते हैं । जब युवक-युवती एक दूसरे को पसन्द करते हैं तो लड़का कंघा देता है जो प्रणय निवेदन का प्रतीक हैं । यदि युवती कंघा स्वीकार करती है तो मान लिया जाता है कि प्रणय सफल हैं । अपनी स्वीकृति के रूप में लड़की लड़के को तम्बाकू देती हैं ।

15.6.11 उपकरण और अस्त्र-शस्त्र

कृषि के लिए हल, कुदाल, खुरपी आदि का प्रयोग करते हैं । शिकार के लिये तीर-धनुष, कुल्हाड़ी और डण्डा उपयोग करते हैं । ये अच्छे तीरंदाज होते हैं जो इनका पुश्तैनी गुण है । सामान ढोने के लिए बांस की बनी बहगी का प्रयोग एक सामान्य बात हैं ।

15.6.12 सामाजिक संगठन

गौण्डो का समाज अर्द्ध संगठित हैं । राज-गौण्ड कृषक होते हैं जो शासन व्यवस्था भी देखते हैं । घुरगौण्ड मूलत: कृषक हैं । गोण्डों के सामाजिक संगठन की सबसे बड़ी विशेषता इनमें विविध

संगठन या ' अर्द्धक' की व्यवस्था हैं । प्रत्येक अर्द्धक अनेक गोत्रों का होता है जिन्हें वे 'भाई गोत्र' कहते हैं । मड़ियाओं वर्ग के गोण्डो में प्रत्येक ' अर्द्धक ' की व्यवस्था हैं । सगोत्रीय विवाह अधिकांश गौण्ड समूहों में वर्जित है ।

गौण्डो का सामाजिक संगठन मुख्यत: दो प्रणालियों पर आधारित होता हैं- 1. कुलगत प्रणाली और 2. क्षेत्रीय प्रणाली । कुलगत प्रणाली में कुल की व्यवस्था परम्परागत होती हैं । राजगौण्ड और खटोलिया गौण्ड इसी व्यवस्था से अपना काम चलाते हैं, जबकि बस्तर के गौण्ड आदिवासी परम्पराओं को अपनाये हुए हैं, जैसे दल्हादेव, ठाकुर देव, वाघेश्वर देव आदि की पूजा-अर्चना पारम्परिक ढंग से करना ।

बोध प्रश्न - 5

1. गौण्डों की जनसंख्या कितनी हें?

   ....

   ....

2. किस वर्ग के गौंड लोग मत्स्य कर्म द्वारा जीवन बिताते हैं?

   ....

   ....

3. गौण्डो का सामाजिक संगठन कितनी दो प्रणालियों पर आधारित होता हैं? नाम बताइये ।

   ....

   ....

15.7 नागा (Nagas)

भारत की आदिवासी जातियों में नागालैण्ड के आदिवासी अपनी विशिष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं । वर्तमान में नागा पहाड़ी क्षेत्र का समस्त भाग नागालैण्ड राज्य में सम्मिलित हैं । नागालैण्ड के अतिरिक्त मणिपुर, मेघालय, अरूणाचल तथा मिजोरम प्रदेशों के पहाड़ी भागों में भी कुछ नागा जनजातियाँ निवास करती हैं ।

नागा शब्द की व्युत्पति 'नामा' शब्द से हुई, जिसका अर्थ है - 'बहादुर ' । ये मूलत : मंगोल प्रजाति से सम्बन्धित है तथा तिब्बती बर्मी भाषा का प्रयोग करते हैं । डॉ. सुनीत कुमार चटर्जी के शब्दों में 'विभिन्न नागा आदिम जातियाँ साधारणतया ब्रून्स दूसरे की बोलियाँ नहीं समझते हैं।'

15.7.1 निवास क्षेत्र

नागा जातियों का मुख्य निवास प्रदेश नागालैण्ड हैं, परन्तु नागालैण्ड के बाहर भी ये जनजातियाँ रहती हैं । नागालैण्ड का बहुत बड़ा भाग नागा पहाड़ियों (Naga hills) से घिरा है । इसके

अतिरिक्त पटकोई पहाड़ियों में, मनीपुर तथा मिजोरम के पठारी भागों में, असम तथा अरूणाचल में नागा जातियों के कुछ लोग रहते हैं ।

मणिपुर, त्रिपुरा, मिजोरम के पर्वतीय प्रदेशों से लेकर म्यांमार की अराकान पहाड़ियों तक विस्तृत नागा पहाड़ियों के दक्षिण में कूकी, लुशाई, लाखेर, चिन, आदि जनजातियाँ रहती हैं, जिनमें से बहुत सी जनजातियाँ यथार्थ में सीमान्त पार के प्रदेशों से आई हैं । (चित्र- 15. 6)

मिशमी आदिम जातियाँ डिबंग और लोहित नदियों के बीच की ऊँची पहाड़ियों में रहती है । पूर्व की ओर के क्षेत्र में घमटी और सिंहपो जातियाँ पाई जाती है; और उसके आगे दक्षिण में पटकोई के दोनों ओर की पर्वत घाटियों में विभिन्न नागा आदि जातियाँ रहती हैं । यह घाटियाँ भारतीय सीमान्त प्रदेशों से आगे बढ़कर म्यांमार की हुकबांग घाटी तक फैली हुई हैं ।

नागालैण्ड एक पर्वतीय प्रदेश हैं । इसके उत्तर पूर्व में पटकोई पहाड़ियाँ तथा दक्षिण में मणिपुर और अराकान की पर्वत श्रेणियां हैं । नदियाँ तीव्रगामी, गहरी तथा संकड़ी घाटियों वाली हैं । इस प्रदेश की जलवायु गर्मतर (topical humid) प्रकार की हैं । पहाड़ी के निचले ढालों पर वर्षा ऋतु में मलेरिया का प्रकोप रहता हैं । 2, 500 मीटर से अधिक ऊँचे भाग में ठण्डी रख शुष्क (cool temperate) जलवायु रहती हैं, जिसमें शीत ऋतु में अधिक ठण्ड पड़ती है । इसलिये नागा जातियाँ पहाड़ों के अधिक उँचे और नीचे भागों को छोड़कर 1500 मीटर से 2, 500 मीटर तक की ऊँचाई में रहती, हें । वहाँ की औसत वार्षिक वर्षा 250 सेमी है तथा सामान्य तापमान 26^0 से ग्रे. रहता है ।

15.7.2 अर्थव्यवस्था

नागा लोगों के मुख्य पेशे आखेट (hunting) तथा झूम कृषि (jhumming cultivation) हैं ।

15.7.2.1 आखेट

पहाड़ी तथा मैदानी नागाओं की शिकार करने की विधियाँ विभिन्न हैं । जंगली जानवरों को खदेड़कर नदियों के खादर में लाकर, भालों से मारना सभी नागाओं में प्रचलित हैं । शिकार में तीर कमान, भालों तथा दाव (hand axe) का प्रयोग करते हैं ।

15.7.2.2 मछली पकड़ना

मछलियाँ पकड़ने का काम पहाड़ के निचले भागों में, नदियों और तालाबों के किनारे, जाली, टोकरों और भालों की सहायता से होता हैं ।

15.7.2.3 कृषि कार्य

मणिपुर और नागा पहाड़ियों में रहने वाली पूर्वी वर्ग की आदिम जातियों ने पहाड़ों की ऊँची नीची सीढ़ीनुमा पट्टियों में खेती करने में काफी प्रगति कर ली है, परन्तु उत्तर पश्चिम क्षेत्र में अभी तक स्थान-परिवर्ती कृषि की ही प्रथा प्रचलित है जिसे झूमिंग कृषि (jhumming cultivation) कहते हैं । सीढ़ीदार खेत बनाने से भूमि अपरदन या कटाव (soil erosion) रूक जाता हैं । इनका अर्थतन्त्र प्रधानत : आजीविका प्रधान कृषि पर आधारित हैं ।

इस प्रदेश की मुख्य फसलें पहाड़ी धान, मंडवा, कोट्र तथा पहाड़ी मोटे अनाज हैं । चाय की झाड़ियां जंगली रूप में मिलती हैं ।

15.7.3 भोजन

नागाओं का मुख्य भोजन चावल हैं । अत : ये लोग शिकार और जंगल से प्राप्त होने वाले कन्दमूल- फल आदि पर निर्भर रहते हैं । ये लोग बकरी, भेड़, साँप, मेंढक आदि का माँस भोजन में प्रयोग करते हैं । वनों से प्राप्त शिकार का प्रयोग खाने में किया जाता हैं ।

15.7.4 वस्त्र

नागा पुरूष एवं महिलाएँ वस्त्रों का चुनाव गाँव के मुखिया के आदेशानुसार करते हैं । नागा पुरूष प्राय: लंगोटी, पाजामा, कुर्ता तथा लम्बे कपड़े को सिर पर बांधने के साथ -साथ सिर पर पशुओं के सींग या पक्षियों के पंख लगाते हैं । गर्म एवं आर्द्र जलवायु के कारण प्राय: नागा शरीर पर कम वस्त्र धारण करते हैं । अंगामी महिलाएं कानों में बड़ी-बड़ी बालियाँ, गले में कौड़ियों का तथा मोतियों जनजातीय समाज द्वारा आवास की मालाएँ हाथों, पैरों एवं छाती पर गोदना गुदवाने का शौक भी रखती हैं ।

15.7.5 उपकरण एवं अस्त्र-शस्त्र

ये बहुत साधारण उपकरणों का प्रयोग करते हैं । इनका सबसे प्रमुख उपकरण दाओं होता है जो लोहे का मूठ वाला हंसिया सदृश्य होता हैं । इसका विविध उपयोग करते हैं जैसे पेड़ काटना, घास काटना, फसल काटना और माँस काटना आदि । पानी, शराब आदि रखने के लिए बाँस की नलिका बनाते हैं । कृषि कार्य के लिए खुरपी, कुदाल और दाओं प्रमुख उपकरण है ।

15.7.6 अधिवास

नागा लोगों की बस्तियाँ प्राय: ऐसी पहाड़ियों के कटकों पर पायी जाती हैं, जहां पीने योग्य जल की उपलब्धता के साथ-साथ कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता हो । छप्परों को पाइन वृक्षों के तने पर टिकाया जाता है । दीवारें प्राय: बाँस के लटठों तथा पत्तियों से निर्मित होती है । मकानों में खिड़की नहीं होती हैं । मकान के बाहर सींग और तुर्रे लगाने की प्रथा हैं ।

15.7.7 सामाजिक व्यवस्था

नागा गाँवों में प्रमुख मुखिया माना जाता हैं । मुखिया का आदेश सर्वोपरि होता है तथा आपसी लड़ाई-झगड़ों को मुखिया ही हल करना हैं । नागाओं में सम्मिलित परिवार मिलते हैं । शिकार केवल पुरूष करते हैं, जबकि कृषि कार्यों में महिलाएं भी पुरूषों का साथ देती हैं ।

नागा जनजाति में शादी की दो प्रथाएं प्रमुख रूप से प्रचलित हैं । पहली प्रथा में विवाह नियमानुसार तथा उत्सवों के साथ सम्पन्न होते हैं । सम्मानित तथा धनी व्यक्ति इसी प्रकार के विवाह प्राय : करते हैं । दूसरी प्रथा में विवाह नियम विरूद्ध होने के साथ-साथ उत्सव रहित होते हैं । इस प्रकार के विवाह प्राय: गरीब व्यक्ति युगल प्रेमी इस प्रकार के विवाह करते हैं ।

15.7.7.1 युवा गृह

नागाओं के युवा गृहों को 'मोराँग' कहा जाता हैं । मोराँग नागा बस्ती से दूर गाँव के प्रदेश मार्ग पर बनाये जाते हैं । मोराँग का उद्देश्य रात्रि में गाँव की दुश्मनों की रक्षा तथा युवा लड़के - लड़कियों को व्यावहारिक चरित्र निर्माण की शिक्षा देना हैं । मोराँग में प्रवेश कुँआरे लड़के - लड़कियों को ही मिलता है ।

बोध प्रश्न - 6

1. नागाओं का मुख्य भोजन क्या हैं?

   ....

   ....

2. मिशमी आदिम जातियाँ का वितरण कहाँ हैं?

   ....

   ....

3. नागाओं के युवा गृहों का नाम बताइये ?

   ....

   ....

15.8 सारांश (summary)

सभ्यता की चकाचौध से दूर अपनी आदिम जीवन पद्धति, भाषा, रुचिगत संस्कार, प्राथमिक उद्यम और छोटे-छोटे समूहों में बटे लोग सभी महाद्वीपों में विद्यमान है जिन्हें आदिवासी या आदिम जाती कहा जाता हैं । अपनी सांस्कृतिक विरासत को बनाये रखने के लिए इसके सामाजिक प्रतिबन्ध कठोर हैं । स्पष्ट है कि प्राथमिक व्यवसायों जैसे आखेट, मछली मारना, पशुपालन, वन-वस्तु संग्रह और आदिम कृषि से भरण-पोषण करना, भौतिक पर्यावरण के अनुरुप निवास स्थान बनाना, विशिष्ट आचार-विचार के अनुसार सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना तथा आधुनिकता से यथा सम्भव दूरी बनाये रखना इन जनजातियों की प्रमुख विशिष्टतायें हैं । वस्तुत : ये सभी आदिम जातियाँ ऐसे दुरूह भौतिक पर्यावरणों से घिरे हुए हैं, जहां प्रगति की सम्भावनाएं न्यूनतम है तथा मानव समुदाय का पिछड़ापन स्वाभाविक हैं । ऐसे लोग प्रकृति के साथ समायोजन में अनेक स्तरों पर पाये जाते हैं क्योंकि इनका प्रकृति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता हैं । इनका रहन-सहन, व्यवसाय, सामाजिक संगठन और मानवीय मूल्य पर्यावरण जनित होते हैं।

विश्व में हजारों आदिवासी जातियाँ है और कोई भी महाद्वीप इनसे अछूता नहीं हैं । फिर भी इनकी सर्वाधिक संख्या अफ्रीका महाद्वीप में पाई जाती हैं । सभ्य लोगों द्वारा उपेक्षित क्षेत्र जैसे घने जंगल, घास के मैदान, शीत एवं उष्ण मरूस्थल और पहाड़ी-पठारी क्षेत्र इनके प्रमुख शरणगाह हैं । ऐसे प्राकृतिक अतिरेक वाले क्षेत्रों में आदिवासी अपने को सुरक्षित समझते हैं । इस प्रकार के दुरूह और उपेक्षित क्षेत्र आदिवासी जातियों के प्रमुख क्षेत्र हैं । उपर्युक्त विवेचन में

कुछ प्रमुख जातियों का प्रतीकात्मक रूप से उल्लेख किया गया है, जैसे उष्ण मरूस्थलों में रहने वाले कालाहारी के बुशमैन, टुण्ड्रा के एस्किमों, भूमध्यरेखीय\ वनों में रहने वाले या पिग्मी आदि। भारत में भी अनेक आदिवासी जातियाँ हैं, जिन्हें जनजाति के नाम से सम्बोधित किया जाता है । इनमें नागा, भील और गौण्ड की विवेचना की गई हैं । इनके अतिरिक्त भी सैकड़ों जनजातियां भारत में निवासित हैं ।

सारांशत: भारत या विश्व के किसी भी भाग में विकसित आदिवासी या जनजाति अपने प्रजातिगत गुणों, वंशावलियों, पारम्परिक जीवन पद्धतियों, विशिष्ट रीति -रिवाज और प्राकृतिक पर्यावरण के अनुकूल समायोजन से अपनी पहचान बनाने में सफल हुए हैं ।

15.9 शब्दावली (Glossary)

- **कयाक (Kayak):** सिल मछली का शिकार करने के लिए एस्किमों पुरुषों द्वारा प्रयोग में ली जाने वाली नाव ।इसकी लम्बाई 5-6 मीटर होती है ।
- **उमियाक (Umiyak) :** एस्किमों स्त्रियों द्वारा उपयोग में ली जाने वाली नाव ।
- **स्लेज गाड़ी (Sledge) :** शीत ऋतु में बर्फ पर यात्रा करने हेतु तथा ग्रीष्म ऋतु में चिकने, दलदली टुण्ड्रा क्षेत्र में प्रयोग करने के लिए एस्किमों स्लेज गाड़ी तथा कुत्तों के दल का उपयोग करते हैं । स्लेज व्हेल की हडिड्यों अथवा लकड़ीयों से बनाई जाती हैं । इसे खींचने के लिए 5 - 6 कुत्तों का दल होता हैं ।
- **इग्लू (Igloo) :** एस्किमों का शीतकालीन घर । अन्दर का भाग समूर की खाल से ढका रहता है और अन्दर रोशनी के लिए जानवरों की चर्बी को जमाया जाता हैं ।
- **सुपिक्स (Tsupics) :** एस्किमों का ग्रीष्मकालीन घर जो केरीबों तथा ध्रुवीय भालू की से खाल बने होते हैं।
- केरोस (Keros) : बुशमैन का चौंगानुमा वस्त्र जिसे वस्त्र तथा बिस्तर दोनों की तरह प्रयोग किया जाता हैं ।
- **मौराँग (Morang) :** नागाओं के युवा गृहों को मोराँग कहते हैं । मोरांग का उद्देश्य युवा लड़के -लड़कियों को व्यावहारिक चरित्र निर्माण की शिक्षा देना हैं । इसमें प्रवेश कुँआरे लड़के - लड़कियों को ही मिलता हैं ।

15.10 संदर्भ ग्रंथ (Reference books)

1. एस. डी. कौशिक : **मानव भूगोल,** रस्तोगी पब्लीकेशन्स, मेरठ, 2006
2. जगदीश सिंह एवं काशीनाथ सिंह : **मानव एवं आर्थिक भूगोल,** ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर, 1997
3. सी. बी. मामोरिया : **मानव भूगोल,** साहित्य भवन, आगरा, 2004
4. सी. बी. मामोरिया ब्रून्स प्रीतम सिंह : **मानव भूगोल के मूल सिद्धान्त,** किताब महल, इलाहाबाद, 2004
5. एच. एस. गर्ग : **मानव भूगोल,** प्रगति प्रकाशन, मेरठ, 2000

6. माजिद हुसैन : **मानव भूगोल,** रावत प्रकाशन, जयपुर, 2002
7. बी. एस. नेगी : **मानव भूगोल,** केदारनाथ रामनाथ, 2004
8. C.D.Forde : **Habitat, Economy and Society** . London 1953
9. H.Walter : " **Remarks on the environmental adaptation of man "in international Journal of human genetics.** Springer Berlin / Heidelberg Volume 13, number 2 / june 1971
10. Peter Haggett : Geography -A Global synthesis , pearson Education , New Delhi, 2001
11. Vida de la Blache : **Principles of Human Geography** , Orient Longmans. Bombay 1956
12. David N.Livingstone : John Agnew and Alasdair Rogers (Ed): **Human Geography**, Blackwell Publishing,May 1996

15.11 बोध प्रश्नों के हल

बोध प्रश्न -1

1. एस्किमों ।
2. एस्किमो ।
3. स्यूपिक्स ।
4. हारपून ।
5. स्लेज

बोध प्रश्न -2

1. कालाहारी मरुस्थल ।
2. गोरा ।
3. चौंगा ।
4. 1000 से 2000 मीटर के मध्य ।
5. 10,000 से कुछ कम ।

बोध प्रश्न -3

1. अफ्रीका महाद्वीप के कांगों गणराज्य के भू-भाग में ।
2. अति उष्ण एवं आर्द्र ।
3. 3 केला ।

बोध प्रश्न -4

1. कमान या तीर चलाने वाला।
2. भीलवाड़ा, बूंदी, कोटा, चित्तौडगढ, बाँसवाड़ा जिलों में ।
3. फना ।

बोध प्रश्न - 5

1. लगभग 20 से 25 लाख ।
2. कुरुख, केवट तथा धीमर ।
3. दो ।

बोध प्रश्न - 6

1. चावल ।
2. डिबंग और लोहित नदियों के बीच की ऊँची पहाड़ियों में ।
3. मोराँग ।

15.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. बुशमैन के जीवन का वर्णन उसके प्राकृतिक वातावरण के सन्दर्भ में कीजिये?
2. एस्किमों के जीवन पर भौगोलिक वातावरण के प्रभावों का उल्लेख कीजिये?
3. भील जनजाति के आवास और अर्थव्यवस्था पर एक भौगोलिक विवरण लिखिये?
4. पिग्मी लोग के निवास क्षेत्र, अर्थव्यवस्था तथा प्राकृतिक वातावरण से सामंजस्य पर विवरण प्रस्तुत कीजिये?
5. नागा जनजाति के निवास क्षेत्र तथा प्राकृतिक वातावरण से समायोजन पर भौगोलिक विवरण लिखिये?
6. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये-

   अ. दिप्पा कृषि　　　　ब. पैण्डा कृषि

   स. मोराँग　　　　द. सी

   य. भीलों के रीति-रिवाज
7. नागा लोगों के व्यवसायों का वर्णन कीजिये?
8. मीलों की बस्तियों का वर्णन कीजिये?
9. बुशमैन के जीवन पर भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव स्पष्ट कीजिये?

ISBN - 13/978-81-8496-183-6